मासिक

RNI No. MPHIN/2004/14249

अक्षर वार्ता

वर्ष - 21 अंक - 3
(जनवरी - 2025)
Vol - XXI, Issue No - III
(January - 2025)

मूल्यः 100 /- रूपये

डाक पंजीयन क्र. मालवा डिवीजन - L2/65/RNP/399/2024-2026

कला-मानविकी-समाजविज्ञान-जनंसचार-वाणिज्य-विज्ञान-वैचारिकी
की अंतरराष्ट्रीय रेफर्ड एवं पियर रिव्यूड शोध पत्रिका

Indexed In International, Impact Factor Services (IIFS) Database and Indexed with IIJIF
Indexed In the International, Institute of Organized Research, (I2OR) Database

Monthly International, Refereed Journal & Peer Reviewed

ISSN 2349 - 7521 , IMPACT FACTOR - 8.0

» aksharwartajournal@gmail.com » https://www.aksharwartajournal.page/ » +918989547427

AKSHARWARTA IS registered MSME with Ministry of MSME, Government of India
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021

ISSN 2349 - 7521
RNI No. MPHIN/2004/14249

मासिक

अक्षर वार्ता

मूल्यः 100 /- रूपये

MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021

वर्ष-21 अंक - 3 , जनवरी - 2025
Vol - XXI, Issue No. III
January - 2025
Impact Factor - 8.0

aksharwartajournal@gmail.com

Monthly International Refereed & Peer Reviewed Journal

प्रधान संपादक
प्रो. शैलेन्द्रकुमार शर्मा
कुलानुशासक एवं हिन्दी विभागाध्यक्ष
विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.

संपादक
डॉ. मोहन बैरागी
अक्षरवार्ता अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिका

संपादक मंडल

प्रो. जगदीशचन्द्र शर्मा, प्राध्यापक
विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.
प्रो. राजश्री शर्मा, प्राध्यापक
माधव महाविद्यालय, उज्जैन, मप्र.
प्रो. डी. डी. बेदिया, विभागाध्यक्ष
पं. जवाहर लाल नेहरू व्यवसाय प्रबंध
संस्थान, एवं निदेशक, आईक्यूएसी,
विक्रम युनिवर्सिटी, उज्जैन, मप्र.
डॉ. शशि रंजन 'अकेला' जनसंपर्क
अधिकारी, आरजीपीवी, भोपाल, मप्र.
प्रो. उमापति दिक्षित, प्राध्यापक
केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, उप्र.
प्रो. मोहसिन खान, विभागाध्यक्ष
शासकीय महाविद्यालय, रायगढ़, महाराष्ट्र
डॉ. दिग्विजय शर्मा, सहायक प्राध्यापक
केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, उप्र.
डॉ. भेरूलाल मालवीय, सहायक प्राध्यापक
शा. नवीन महाविद्यालय, शाजापुर, मप्र.
डॉ. उपेन्द्र भार्गव, सहायक प्राध्यापक
महर्षि पाणिनि विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.
डॉ. रूपाली सारये, सहा.प्राध्यापक
भाषा विभाग, देवी अहिल्या वि.वि., इंदौर
डॉ. अवनीश कुमार अस्थाना, एसो. प्रोफेसर,
डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम वि.वि, इंदौर, मप्र.
डॉ. पराक्रम सिंह, के.हि.सं., दिल्ली

विशेषज्ञ समिति

डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक' (नार्वे), श्री शेर बहादुर सिंह (यूएसए), डॉ. रामदेव धुरंधर (मॉरीशस),
डॉ. स्नेह ठाकुर (कनाडा) डॉ. जय वर्मा (यू.के.), प्रो. गुणशेखर गंगाप्रसाद शर्मा (चीन), डॉ. अलका धनपत (मॉरीशस),
प्रो. टी. जी. प्रभाशंकर प्रेमी (बैंगलुरू), प्रो. अब्दुल अलीम (अलीगढ़), प्रो. आरसु (कालिकट), डॉ. रवि शर्मा (दिल्ली),
डॉ. सुधीर सोनी (जयपुर), डॉ. अनिल सिंह (मुंबई), डॉ. तुलसीदास परौहा, महर्षि पाणिनि संस्कृत विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.

सह संपादक

डॉ. उषा श्रीवास्तव (कर्नाटक), डॉ. मधुकांता समाधिया (उत्तर प्रदेश), डॉ. अनिल जूनवाल (मप्र), डॉ. प्रणु शुक्ला (राजस्थान),
डॉ. मनीष कुमार मिश्रा (मुम्बई/वाराणसी), डॉ. पवन व्यास (उड़ीसा), डॉ. गोविंद नंदाणिया (गुजरात), डॉ. रत्ना कुशवाह, (अंडमान निकोबाद),
प्रो. डॉ. किरण खन्ना (अमृतसर, पंजाब)

आवरण चित्र - इंटरनेट से साभार

विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र. से शोध, प्रकाशन, सेमीनार, संगोष्ठी, अवार्ड आदि के लिए अक्षर वार्ता अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिका एवं संस्था कृष्ण बसंती शैक्षणिक एवं सामाजिक जनकल्याण समिति, उज्जैन, मप्र. एम ओ यू हस्ताक्षरित।

नोट:- अक्षरवार्ता में सभी पद मानद व अवैतनिक है।/ शोध पत्रिका में प्रकाशित सभी लेखों में लेखकों के अपने विचार है, संपादक मंडल का इससे सहमत होना आवश्यक नही हैं।

Peer Review Board/Committee

1. **Dr. Anamika Dwivedi, Associate Professor, Hindi, A.K.P (PG) College, Khurja, U.P.**
2. **Dr. Deepshikha, Assistant Professor, Sanskrit Manyawar Kanshiram Rajkiya Mahavidhyalaya, Gabhana, Aligadh, U.P.**
3. **Dr. Roshni, Guest Feculty, Hindi Maharana Pratap Govt. PG College, Gadawara, Narsinghpur, M.P.**
4. **Dr. Rashmi (Raikumar), Assistant Professor, English, Y.B.N. University, Namkum, Ranchi, Jharkhand**
5. **Dr. Arun Kumar Singh, Associate Professor DAV PG College, Azamgadh, U.P.**
6. **Dr. Neetu Tiwari, Professor M.B. Khalsa Law College, Indore, M.P.**
7. **Dr. Santosh Patidar, Lecturer Chameli Devi Institute of Law, Indore, M.P.**
8. **Dr. Sanjay Kumar, HoD, English Department Y. B. N. University, Ranchi, Jharkhand**
9. **Dr. Krishna Raj SIngh, Assistant Professor Shrimati Gomati devi bind PG College, Prayagraj, U.P.**

11. **Dr. Meenu Shukla, Assistant Professor Navsamvat Law College, Ujjain, M.P.**
12. **Dr. Soniya Rani, Associate Professor Y. B. N. University, Ranchi, Jharkhand**
13. **Dr. Shahanaz Mahemudsha Sayyad, Associate Professor Balwant College, Vita, Distt - Sangli, Maharashtra**
14. **Dr. Umesh kumar Sharma, Assistant Professor, Hindi Department Shri Radha Krishna Goenka college, Sitamarhi (Bihar)**
15. **Dr. Dinesh Ram, Assistant Teacher LT Hindi Govt H. S.S, Kalakot, Uttarakhand**
16. **Dr. Nilamadhab Pradhan, Assistant Professor (Guest), Department of Sanskrit Rama Devi Women's University, Bhoi Nagar, Bhubaneswar, Odisha**
17. **Dr. Manju, Assistant Professor Govt. College, Kishangarh Renwal, Jaipur, Rajasthan**
18. **Dr. Manju Chouhan, Assistant Professor, Sanskrit, Govt. Girls College Shri Kolayat, Bikaner, Rajasthan**
19. **Dr. Priyanka Bhatewara Jain, Assistant Professor, (Guest Feculty) Govt. College, Manawar, Dhar, M.P.**
20. **Dr. Brajesh Kher, Ex. Assistant Professor Bhartiya College, Ujjain, M.P.**
21. **Dr. ShriKant Mishra,Assistant Professor Govt. Maharaja Martand College, Kotma, Distt-Anuppur, M.P.**
22. **Dr. Babita Yadav, Assistant Professor, HoD of Art's Department Navsamvat Law College, Ujjain, M.P.**
23. **Dr. Preeti, Assistant Professor, Hindi Department, Motihari Degree Evening College, Muzaffarpur**
24. **Dr. Rita Kumari, Assistant Professor Kishori Sinha Mahila College, Aurangabad, Bihar**
25. **Dr. Shaileshkumar Chhatrasingh Chaudhari, Teacher, Genius Educational Academy (CBSE) School, Mohani Village, Surat, Gujrat**
26. **Dr. Poonam Pandey, Ex. Research Scholar, English,Dr. Rammanohar Lohia avadh University, Faizabad Ayodhya, U.P**

शोध आलेख प्रकाशन संबंधी नियम

शोध आलेख 2000 से 3000 शब्दों का होकर यूनिकोड मंगल अथवा कृतिदेव 10 में 12 के फॉन्ट साइज में ही भेजें। शोध आलेख एपीए एमएलए फार्मेट में होना आवश्यक होकर फुटनोट व रिफ्रेंसेस के साथ भेजना आवश्यक है। अंग्रेजी माध्यम के शोध-पत्र टाईम्स न्यु रोमन (Times New Roman) ,एरियल फोंट (Arial) में टाईप करवाकर माईक्रोसॉफ्ट वर्ड में अधिकतम 2000 की शब्द संख्या के साथ अक्षरवार्ता के ईमेल पर भेजने के बाद हार्ड कॉपी तथा शोध-पत्र मौलिक होने के घोषणा-पत्र के साथ हस्ताक्षर कर अक्षरवार्ता के कार्यालय को प्रेषित करें। शोध आलेख का प्रकाशन रिव्यू कमेटी द्वारा अनुसंशा के आधार पर किया जावेगा।

पुस्तकों से संदर्भ देने के लिए क्रम

लेखक का अंतिम नाम (सरनेम), पहला नाम; पुस्तक का शीर्षक (इटैलिक्स में; प्रकाशक का नाम और पूरा पता (प्रकाशन का वर्ष) कोष्ठक में; पृष्ठ संख्या ....।

द्विवेदी,हजारी प्रसाद, कबीर, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, चौदहवीं आवृति, 2014, पृ. 108

पत्रिकाओं के संदर्भ

लेखक का अंतिम नाम (सरनेम), पहला नाम। लेख का शीर्षक। जर्नल का शीर्षक/नाम (इटैलिक्स में)। वॉल्यूम। संस्करण (महिना, वर्ष): पृष्ठ संख्या। प्रकाशन मीडिया।

वेबसाइट के उद्धरण का प्रारूप

लेखक का अंतिम नाम (सरनेम), पहला नाम। ''पृष्ठ का शीर्षक।''

क्षेत्र शीर्षक। (साईट) प्रकाशित करने वाली कंपनी। (युआरएल) तथा सर्च डेट (अभिगमन तिथि)।

पुस्तक, पत्रिका, आवधिक, वेबसाइट आदि) के शीर्षक को इटैलिक में लिखें।

शोध आलेख के साथ प्लेगरिज़्म रिपोर्ट / स्व घोषणा पत्र (आलेख की मौलिकता व अप्रकाशित होने के संदर्भ में) अवश्य भेजें।

आलेख की वर्ड और पीडीएफ दोनों फाइल् अनिवार्य रूप से भेजें।

शोध आलेख प्रत्येक माह की 7 तारीख तक आगामी माह के अंक के लिए स्वीकार्य होंगे।

शोध आलेख का प्रकाशन रिव्यू कमेटी द्वारा अनुसंशा के आधार पर किया जावेगा।

I/ We wish to subscribe the Journals. Total Amount : 1200/- (Twelve hundred only)(INR), (Normal Post) and/or 1800/- (Eighteen Hundres) for (Registerd Post) Registration Fee. All fee and Subscriptions are payable in advance and all rates include postage and taxes. Subscribers are requested to send payment with their order whenever possible. Issues will be sent on receipt of payment. Subscriptions are entered on an annual basis and are subject to renewal in subsequent years.

Subscription from:..............to..............SUBSCRIBER TYPE:(Check One) Institution( )/Personal ()Date:..............Name/Institution and Address :..City : ....State :.........................PinCode................................ Country .... PhoneNo .:............. MobNo.:............................. Mail id...

PAYMENT OPTION:

DD in the favor of "AKSHARWARTA" payable at UJJAIN.

DD No.: ....Dated : ....for Rupees (in words) ....Drawn on ....Any other option Specify :..........................

शोध-पत्र भेजने संबंधी नियम

शोध-पत्र 2000-3000 शब्दों से अधिक नही होना चाहिये। ०. हिन्दी माध्यम के शोध पत्रों को कृतिदेव 010 (Kruti Dev 010) या युनिकोड मंगल फोंट में टाईप करवाकर माईक्रोसॉफ्ट वर्ड में भेजें। ०. अंग्रेजी माध्यम के शोध-पत्र टाईम्स न्यु रोमन (Times New Roman) ,एरियल फोंट (Arial) में टाईप करवाकर माईक्रोसॉफ्ट वर्ड में अक्षरवार्ता के ईमेल पर भेजने के बाद हार्ड कॉपी तथा शोध-पत्र मौलिक होने के घोषणा-पत्र के साथ हस्ताक्षर कर अक्षरवार्ता के कार्यालय को प्रेषित करें। ०. Please Follow- APA/MLA Style for formatting अक्षरवार्ता का वार्षिक सदस्यता शुल्क रूपये 1200/-रूपये साधारण डाक से एवं 1800/- रूपये रजिस्टर्ड डाक से एवं प्रकाशन पंजीयन शुल्क रूपये 1500/- का भुगतान बैंक द्वारा सीधे ट्रांसफर या जमा किया जा सकता है।

बैंक विवरण निम्नानुसार है-

Union Bank of India,

Account Holder- **Aksharwarta**
Current A/c. No- **510101003522430**
IFSC- **UBIN0907626**
Branch- **Rishi Nagar, Ujjain, MP, India**

UPI
Phone Pay,
Google Pay
PayTM, BHIM
9424014366

गुगल पे, फोन पे, पेटीएम, भीम आदि युपीआई से भुगतान के लिए मोबाईल नं. 9424014366 का अथवा स्केनर का उपयोग करें तथा भुगतान की मूल रसीद,शोध-पत्र एवं सीडी के साथ कार्यालय के पते पर भेजना अनिवार्य है।

संस्कृति किसी भी देश, जाति और समुदाय की आत्मा होती है। संस्कृति से ही देश, जाति या समुदाय के उन समस्त संस्कारों का बोध होता है जिनके सहारे वह अपने आदर्शों, जीवन मूल्यों, आदि का निर्धारण करता है। अतः संस्कृति का साधारण अर्थ होता है–संस्कार, सुधार, परिष्कार, शुद्धि, सजावट आदि। संस्कृति का क्षेत्र सभ्यता से कहीं अधिक व्यापक और गहन होता है। सभ्यता का अनुकरण किया जा सकता है लेकिन संस्कृति का अनुकरण नहीं किया जा सकता है । सभ्यता वह है जो हम बनाते हैं तथा संस्कृति वह है जो हम हैं।

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है। यह माना जाता है कि भारतीय संस्कृति यूनान, रोम, मिस्र, सुमेर और चीन की संस्कृतियों के समान ही प्राचीन है। कई भारतीय विद्वान तो भारतीय संस्कृति को विश्व की सर्वाधिक प्राचीन संस्कृति मानते हैं।

भारतीय संस्कृति का सर्वाधिक व्यवस्थित रूप हमें सर्वप्रथम वैदिक युग में प्राप्त होता है। वेद विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ माने जाते हैं। प्रारंभ से ही भारतीय संस्कृति अत्यंत उदात्त, समन्वयवादी, सशक्त एवं जीवंत रही हैं, जिसमें जीवन के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा आध्यात्मिक प्रवृत्ति का अद्भुत समन्वय पाया जाता है। भारतीय विचारक आदिकाल से ही संपूर्ण विश्व को एक परिवार के रूप में मानते रहे हैं इसका कारण उनका उदार दृष्टिकोण है।

हमारे विचारकों की 'उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुंबकम' के सिद्धांत में गहरी आस्था रही है। ववस्तुतः शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियों का विकास ही संस्कृति की कसौटी है। इस कसौटी पर भारतीय संस्कृति पूर्ण रूप से उतरती है। प्राचीन भारत में शारीरिक विकास के लिये व्यायाम, यम, नियम, प्राणायाम, आसन ब्रह्मचर्य आदि के द्वारा शरीर को पुष्ट किया जाता था । लोग दीर्घ जीवी होते थे।

आश्रम व्यवस्था का पालन करते हुए धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र रहा है।

प्राचीन भारत के धर्म, दर्शन, शास्त्र, विद्या, कला, साहित्य, राजनीति, समाजशास्त्र इत्यादि में भारतीय संस्कृति के सच्चे स्वरुप को देखा जा सकता है।

यह संस्कृति ऐसे सिद्धांतों पर आश्रित है जो प्राचीन होते हुए भी नये हैं। ये सिद्धांत किसी देश या जाति के लिये नहीं अपितु समस्त मानव जाति के कल्याण के लिये हैं। इस दृष्टि से भारतीय संस्कृति को सच्चे अर्थ में मानव संस्कृति कहा जा सकता है। मानवता के सिद्धांतों पर स्थित होने के कारण ही तमाम आघातों के बावजूद भी यह संस्कृति अपने अस्तित्व को सुरक्षित रख सकी है।

भारतीय संस्कृति का वर्तमान स्वरूप और महत्त्वः

भारतीय संस्कृति का नूतन आयाम ब्रिटिश साम्राज्य की नींव के साथ प्रारंभ हुआ। इस काल में सभ्यता ने संस्कृति को दबाने की चेष्टा की अतः संस्कृति का यथार्थ स्वरूप उभर नहीं सका। इस युग में सामाजिक आचार–विचार पर पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव पड़ा। संयुक्त कुटुंब प्रथा के स्थान पर परिवारों का पृथक्करण होने लगा। धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांत ने धर्म को पीछे धकेल दिया। विज्ञान ने ज्ञान के अपेक्षित स्वरूप की अपेक्षा कर दी भौतिकवाद उभरकर सामने आया और भारतीयों का सांस्कृतिक दृष्टिकोण अपने मूल लक्ष्य से भटक गया।

आधुनिकतावाद की अवधारणा का समाज में आना आसान हो गया। वैश्वीकरण और आधुनिकरण के मध्य में गहरा संबंध है। जब भारतीय संस्कृति का स्वरूप आधुनिक हो गया तब निश्चित दिशा में होने वाले परिवर्तन भी दिखाई देने लगे।

बुद्धिवाद, विवेकीकरण और उपयोगितावाद आदि दर्शन का उदय संस्कृति का नया स्वरूप बन गया जिसमें प्रगति की आकांक्षा, विकास की आशा और परिवर्तन के अनुरूप अपने आपको ढालने का गुण होता है।

आधुनिकता की जड़े यूरोपीय पुनर्जागरण से जुड़ी हैं। यूरोपीय पुनर्जागरण में नए–नए अन्वेषण और अविष्कार हुए, धर्म और दर्शन का नया संस्करण सामने आया।

कला और विज्ञान के नवीन साधना का श्रीगणेश हुआ, राजनीतिक तथा समाज व्यवस्था में मौलिक क्रांति का सूत्रपात हुआ। अतः इसके परिणामस्वरूप पश्चिमी यूरोप एवं एशिया (भारत) में एक नवीन चेतना का संचार हुआ।

प्रौद्योगिकी विकास, विवेकीकरण एक तर्मणा आदि द्वारा सभी क्षेत्रों में बुनियादी परिवर्तन हुए जिसके परिणामस्वरूप समाज की एक विशिष्ट स्थिति को प्रदर्शित करने वाली अवधारणा बनी।

बदली हुई संस्कृति में महिलाओं के प्रति सोच बदली अब उसे सशक्तिकरण की ओर ले जाने के प्रयास किये जाने लगे। कई आंदोलन व चर्चाओं का सहारा लिया गया। इस प्रकार सांस्कृतिक, मानववादी व व्यक्तिवादी स्वरूप देखने को मिला।

मानव के विकासशील एवं सृजनात्मक स्वभाव पर बल देते हुए धर्म एवं तर्क, विज्ञान एवं धर्म का ही नहीं, वरन एवं प्राच्य एवं पाश्चात्य विचारधाराओं के समन्वय का प्रयास किया गया।

संस्कृति के नए स्वरूप में गाँवों की संस्कृति को छोड़कर शहरीकरण देखा गया। इस पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। शहरीकरण से पलायन भी देखा गया। इस प्रकार लोग पुरानी संस्कृति को छोड़कर आधुनिक संस्कृति को अपनाने लगे ।

निष्कर्षतः भारत में कभी भी एक ही संस्कृति पूर्ण रूप से व्याप्त नहीं रही और न ही शायद किसी भी बड़े प्रदेश में कभी एक ही संस्कृति रही है। इस देश में आध्यात्मिक संस्कृति की प्रमुखता रही है। अतः संस्कृति में बदलाव निरंतर रहेगा।

» एकांत श्रीवास्तव के काव्य में अभिव्यक्त लोकजीवन
टिकेन्द्र कुमार यदु, डॉ. डी. बी. तिवारी 08
» मोहम्मद सलीम : एक प्रयोगवादी चित्रकार
कौशल कुमार 12
» त्रिभुवन पांडेय के साहित्य में सामाजिक चेतना
नीरज कुमार शर्मा, डॉ. वर्षा वर्मा 16
» 'अज्ञेय' निबंधकार : एक अध्ययन
जावेद खां पठान, डॉ. अनुकूल सोलंकी 19
» एकांत श्रीवास्तव की कविताओं में नारी-चेतना
दीपक तिवारी 21
» मुकुंद कौशल की ग़ज़लों में सामाजिक चेतना
नरोत्तम कुमार साहू, डॉ. यशवन्त कुमार साव 24
» दस महाविद्या का गूढ़ रहस्य
आरती सिंह, डॉ. मौसमी परिहार 27
» महादेवी वर्मा के रेखाचित्र में स्त्री की दयनीय स्थिति
प्रमोद कुमार साहनी,
डॉ. मौसमी मधुबाला श्रीवास्तव 30
» लोकगीतों में नर्मदा
शुभम चौहान 32
» एकविंशशतके संस्कृतगद्यसाहित्ये ज्योतिषं पर्यावरणचिन्तनश्च
रक्षा भारद्वाज, डॉ. धर्मेन्द्रकुमारसिंह देवः 35
» वैश्विक संस्कृति के सामाजिक संदर्भ : भारतीय परिप्रेक्ष्य में
राजश्री भारद्वाज 37
» मालवी लोककथाओं के अनुशीलन में डॉ. प्रहलाद चंद्र जोशी का अवदान
मधु मालवीय 39
» डॉ. श्याम परमार का व्यक्तित्व और कृतित्व
पारस परमार, डॉ. भेरूलाल मालवीय 41
» हरि भटनागर की कहानियों में बाल मजदूर : एक विश्लेषण
एस. हसीना 44
» साहित्य और समाज का अर्न्तसंबंध : वर्तमान सन्दर्भ में
डॉ. दिव्या मिश्रा 47
» यमुना के बागी बेटे उपन्यास में अभिव्यक्त सामाजिक - राजनैतिक बोध
ऐपिन सिंह, डॉ. बचन लाल 50
» केदारनाथ 'शब्द मसीहा' के लघुकथा और व्यंग्य में दाम्पत्य प्रेम का मार्मिक चित्रण
योगेश कुमार तारक, डॉ. अभिनेष सुराना 53
» आदिग्रंथ में संगीत तत्त्व और प्रासंगिकता
सपना अरोरा 56
» सल्तनत कालीन समाज
डॉ. राजीव कुमार 58
» भूमंडलीय अर्थव्यवस्था में गांधी जी के दर्शन की प्रासंगिकता
देशराज यादव 61
» स्त्री विमर्श के परिप्रेक्ष्य में सावित्रीबाई फुले का प्रतिरोध
कुणाल भारती 64
» राजेन्द्र दानी की कहानियों में नगरीय जीवन का संत्रास
तरूण कुमार साहू, डॉ. प्रेम लता गौरे 68
» अनुवाद और उसकी विश्वव्यापी उपादेयता
डॉ. अनिल कुमार पाण्डेय 71
» गढ़वा जिले में शुष्क कृषि की संभावनाएँ और चुनौतियाँ - एक भौगोलिक अध्ययन
शिवपूजन प्रजापति, डॉ. उमेश चन्द्र नाथ तिवारी 74
» पत्नी प्रेम से दीक्षित : कवि शिरोमणि तुलसीदास
अशोक कुमार प्रमाणिक 80
» निर्मल वर्मा और उनके परिंदे
डॉ. प्रशांत गौरव 83
» भारतीय लोकतंत्र के विकास एवं उसकी प्रगति में दलबदल विरोधी कानून का एक विश्लेषण
रोशनी खातून 87
» मंजूर एहतेशाम के कथा साहित्य में धार्मिक रूढ़ियाँ अंधविश्वास
नन्दिनी तिवारी 91
» हिन्दी कथा साहित्य में विनोद कुमार शुक्ल का योगदान
मृत्युंजय द्विवेदी, डॉ. आस्था तिवारी 93
» विकसित भारत के संदर्भ में बालिकाओं की माध्यमिक शिक्षा की वर्तमान स्थिति का अध्ययन
सानू सुभांगी 96
» लोक-जीवन में स्त्री-चरित्र के वैमर्शिक विवेचन
डॉ. दीपा सिंह सिकरवार 101
» वर्तमान में भारत-अमेरिका संबंधः वैश्विक शांति और स्थिरता के लिए प्रयास
जबरूल रब्बानी 103
» शरद सिंह के कथा साहित्य में सामाजिक चेतना
प्रीति, डॉ. नमिता जैन 106
» महाविद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों की भावनात्मक परिपक्वता का अध्ययन
एकता वर्मा 109
» जनचेतना की कसौटियों पर हिन्दी के लोक नाट्य
नन्दिता देवी, डॉ. रागिनी राय 112
» विजय रंजन के साहित्य का वैचारिक पक्ष
डॉ. शिवम् तिवारी 114
» दर्शन की वैज्ञानिकता - एक चिन्तन
डॉ. प्रीतिरञ्जन माझी 118

» कुमाऊँ की अर्थव्यवस्था में सिंचाई सुविधाओं की स्थिति (हवलबाग विकास खण्ड के विशेष संदर्भ में)
डॉ. श्वेता आर्य 121
» दिनकर की दृष्टि में आधुनिकता
डॉ. आरती कुमारी 124
» मानवाधिकारों के लिए महात्मा गांधी के चिंतन की प्रासंगिकता
शैलेष मिश्रा 127
» शिवलीलामृतमहाकाव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन
डॉ. देवाशिषशमिश्रः 130
» यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' के उपन्यासों में लोकगीत
किरण बाला कराड़ा 136
» गोवा के लोकनृत्यों में ग्रामीण संस्कृति की झलक
डॉ. श्रीमती वैशाली नाईक 139
» रामायण काव्यों में सीता और अन्य स्त्री चरित्रों का आधुनिक संदर्भ
डॉ. वर प्रसाद वासाला 143
» दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना
डॉ. रीना स्वामी 145
» एक देश एक चुनाव : एक समसामयिक अध्ययन
मनोज अहिरवार 147
» मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में स्त्री के सामाजिक और पारिवारिक परिदृश्य का यथार्थ चित्रण
ज्ञानेश्वर दयाल, डॉ. अमित कुमार 149
» मुंशी फकीर बख्श 'विनीत' व्यक्तित्व एवं कृतित्व
डॉ. अनामिका द्विवेदी 152
» National Education Policy 2020 and Higher Education
Dr. Vibhuti Yadav 155
» Scenario of Kisan Credit Card with Special References of Bihar
Anil Kumar Bharti 158
» India-China Trade Relations in FY 2023-24 : A Focused Analysis Under Foreign Trade Policy (FTP) 2023
Abhishek Shukla.
Dr. Smriti Jain 161
» "Digital Marketing Trends in the Advancement of Todays Era"
Suman Rani 163
» Exploring Tribal Tourism Potential in Shivpuri District : A Culture and Sustainable Perpective on the sahariya Tribal
Dr. Ajay Kumar Yadav 167

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

एकांत श्रीवास्तव के काव्य में अभिव्यक्त लोकजीवन

टिकेन्द्र कुमार यदु
डॉ. डी. बी. तिवारी

1. शा. वि. या. ता. स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दुर्ग, छत्तीसगढ़
2. शोध निर्देशक एवं प्राचार्य, सांई महाविद्यालय, सेक्टर 7, भिलाई, छत्तीसगढ़

समकालीन कविता के सशक्त हस्ताक्षर लोक सौंदर्य और लोक संवेदना के समर्थ कवि के रूप में एकांत श्रीवास्तव हिंदी साहित्य संसार में जाने जाते है। उनकी कविताओं में अपने समय के लोक समाज के सुख-दुख,करुणा,संवेदना, आशा-निराशा,संघर्ष आदि भावों की अभिव्यक्ति हुई है। एक सहज लोकोन्मुखता और लोक-चित्त का उजला संस्कार से ओतप्रोत कविता में शैलीगत नयापन है। एकांत की कविताएं आधुनिकता की टकराव से छिन्न -भिन्न हो रहे मानवीय भावों का इस्पाती दस्तावेज हैं।

कवि की अपार संवेदना हमेशा शोषितों के साथ रहती है। एकांत पर लोकधर्मी काव्य परंपरा का गहरा प्रभाव दिखता है। वें वैविध्यमय जीवन तत्वों एवं सकारात्मक पहलुओं को आत्मसात करते है। उनकी कविता सामाजिक विषमता पर सीधे प्रहार करती है और जीवन के यथार्थ रूप का दर्शन कराती हैं। एकांत श्रीवास्तव उन विरले समकालीन कवियों में से हैं जिनके बिना हिन्दी कविता संसार पूरा नहीं हो सकता। एकांत श्रीवास्तव ने समकालीन कविता में नए अर्थ सौंदर्य का विधान किया और कविता की शक्ति को बढ़ाया है। उनका अनुभव-संसार हिंदी कविता के भविष्य के प्रति एक अच्छा संकेत माना जा सकता है। लोक में स्थानीयता का पुट विशेष रूप से पाया जाता है। लोक का अपना साहित्य होता है उसमें उत्सव, त्यौहार, राग-तत्व, रीति- रिवाज, रहन-सहन,वेष-भूषा, बोली-बानी आदि की अभिव्यक्ति होती है यह लोक द्वारा रचित और संरक्षित होती है। समय के साथ-साथ लोक साहित्य में भी परिवर्तन होता रहता है। लोक के विश्वास और जातिय स्मृतियां आश्चर्यजनक तरीके से हमें आकर्षित करती हैं। लोक- अख्यान हैं,जीवन है और जीवन का सच भी है। इससे आंखें फेर कर कोई बहुत आगे की यात्रा नहीं कर पाएगा। इसका अंतरंग जितना समृद्ध,जीवंत और वैभवशाली है,बहिरंग उतना ही विपन्न है। लोक स्वार्थपरता, आधुनिकता, बाजारवाद और राजनीतिक खेलों से निरंतर जूझ रहा है। एकांत श्रीवास्तव की कविता लोक सौंदर्य और लोक संवेदना से समृद्ध है। लोक सौंदर्य और लोक संवेदना उनकी कविता और जीवन दोनों के ही पूरक हैं। एकांत अपनी कविता में जन की संवेदना को आत्मसात कर उनके जीवन की गहराई में उतरकर उनकी भाषा, संस्कृति, संवेदना और संघर्ष को चित्रित करते हैं। एकांत की कविताओं में केवल जन जीवन के उत्सव- उल्लास का ही चित्रण नहीं है वरन कटु यथार्थ का भी मुखर चित्रण मिलता है। उनकी कविताओं में गांव की जिंदगी की वास्तविकता और महत्वाकांक्षा हैं, ग्रामीण जीवन के अभाव, दुख, संघर्ष पर आधारित उनकी अनेक कविताएं हैं लेकिन उसमें भावुकता का अतिरेक कहीं नहीं है। उनकी कविता का चरित्र परिश्रम करके अभाव में जीवन यापन करता है किंतु अभाव में भी स्वाभिमान बचाए रखता है-

'कुछ चीजें कभी बिकाऊ नहीं होतीं
जैसे मेरा प्यार, मेरा गुस्सा
जैसे मेरे आंसू
जैसे फूलचुहकी के कण्ठ में
उतरता फूल का रस
जैसे मोंगरे की जड़ों में सहेजकर रखी हुई
चींटियों की नींद।'[1]

लोक काव्य की आत्मा उसकी सरलता, स्वाभाविकता और सरसता है। लोक-साहित्य में रस की प्राप्ति ही नहीं होती अपितु यह तो रस से ओत-प्रोत होता है। परंतु रस की सृष्टि के लिए जिन विभाव,अनुभाव और संचारीयों की आवश्यकता होती है उनका इसमें अभाव है। इसमें रस की उत्पत्ति स्वत- होती है। लोक काव्य में अलंकार कहीं-कहीं अवश्य पाए जाते हैं परंतु उसकी योजना सयास नहीं की जाती है। वें स्वत- आ जाते हैं?। हिंदी समकालीन कविता लोक के इंद्रधनुषी रंगों से सुसज्जित है। नागार्जुन, त्रिलोचन, केदारनाथ अग्रवाल,शमशेर बहादुर समकालीन काव्य के सशक्त हस्ताक्षर हैं। इसी परंपरा के सशक्त कवि है एकांत श्रीवास्तव। इनका गहरा संबंध भारतीय लोक से बना हुआ है। सही अर्थों में ये लोकधर्मी कवि हैं। 'यह एक विख्यात तथ्य है कि लोक के केंद्र में मनुष्य और समूची प्रकृति है। लोक है तो हम-आप हैं। प्रकृति और मनुष्य ही लोक के सर्जक हैं। प्रकृति हमारी सांसों में लगातार विद्यमान हैं? दुनिया लोक से सजती-संवरती है।लोक को कोई मार नहीं सकता। समय नखरे दिखाता है, खासकर इस समय हम पिघल और दग्ध हो रहे हैं।'[2] हिंदी साहित्य के समकालीन कविता में लोक की सशक्त छवि अभिव्यक्त हुई हैं। लोक वह जन समुदाय या समूह है जो आधुनिक तकनीकी से अनभिज्ञ हैं। वह अभी भी आधुनिक तकनीकी सुविधाओं से अलग अपने समूह या रिश्तो में जीवन का रस खोजता है। यह लोक समुदाय जानबूझकर सुविधाओं से दूर नहीं है, इन्हें षड्यंत्र के तहत विकास की परिधि से दूर रखा है। किसी विशेष स्थान या भौगोलिक सीमाओं, रूढ़ियों,रीति-रिवाजों, संस्कारों, सांस्कृतिक उपलब्धियों और जीवन के अनुकूल-प्रतिकूल प्रभाव को ग्रहण करने वाली सामान्य जनता ही लोक हैं। इस लोक की अभिव्यक्ति में जो तत्व मिलते हैं वह लोक तत्व कहलाता हैं। लोक जीवन में प्रतिरोध की चेतना लगातार विकसित होती है। लोक में जड़ता का कोई स्थान नहीं है। वह सदैव जागृत है और विकृतियों से जूझता रहता है। प्रतिरोध की शब्दावली समाज के चुप्पी के बीच भी व्यापकता पाती है। बद्री

नारायण की पंक्ति है, 'कोई जरूरी नहीं कि हर रूलाई में आंसू आए' प्रतिरोध की आवाजें सदैव सुनाई दें, यह जरूरी नहीं है।

लोक भाषा में जो अभिव्यक्तियां होती हैं उनमें सहज ही लोक तत्व उपस्थित होता है। सत्येंद्र ने सच कहा है, लोक समाज मनुष्य का वह वर्ग है जो अभिजात संस्कार, शास्त्रीयता और पारंपारिक चेतना अथवा अहंकार से शून्य हैं और जो एक परंपरा के प्रवाह में जीवित रहता है। 'जाहिर है कि हम लोक में समूचा संसार देखने की ख्वाहिश रखते हैं। लोक में ही आलोक है, उसका परिप्रेक्ष्य और विस्तार है।'[3] एकांत श्रीवास्तव का लोक से गहरा जुड़ाव है उसके पात्र लोक जीवन से उभरे हैं,जो जनमानस की दर्द को व्यक्त करते हैं। खाली खेतों में धान की कटाई के बाद छूटे हुए धान की बालियां जिसे स्थानीय बोली में सिला कहते हैं, गरीब भूमिहीन घरों की लड़कियां धान के बिखरे बालियों को तिनका-तिनका खोज कर इकट्ठा करती है सुबह से शाम तक मेहनत कर जब उन्हें यह अनुमान हो जाता है कि एक जून के लिए भोजन तैयार हो जाएगा तो वह शाम होते-होते घर लौट जाती है।एकांत श्रीवास्तव ने अपने प्रथम काव्य संग्रह 'अन्न है मेरे शब्द' में 'सिला बीनती लड़कियां' कविता में शब्दबद्ध किया है-

'धान कटाई के बाद
खाली खेतों में
वे रंगीन चिड़ियों की तरह उतरती है
सिला बीनने झुंड की झुंड
और एक खेत से दूसरे खेत में उड़ती फिरती है।'[4]

इस कविता में दुबराज, विष्णु भोग, नागकेसर धान के किस्म, मौसम, संगीत, चिड़ियों के गीत आदि का अंकन है। एक जून भोजन का इंतजाम हो जाने में जितनी खुशी है, उनके जीवन में छोटी-छोटी जरूरतों के लिए बड़ा संघर्ष भी है। एकांत श्रीवास्तव की लोक विषयक कविताओं के अनेक रंग है उन रंगों में लोक के जीवन संघर्ष, उत्सव, रहन-सहन मेला-मंडाई, गांव, घर, कुटुम्ब का फलक बहुत बड़ा है। लोक हमारा वास्तविक घर है। आधुनिक जीवन शैली एक तरह से हमारा परदेश है। हिंदी कविता को नई लोक-उर्जा आविष्ट करने वाले कवियों में एकांत अग्रगण्य हैं। एकांत वस्तुतः लोक जीवन के चितेरा हैं उनकी कविताओं में कृषक, गांव, घर,खेत स्वभाविक रूप से उपस्थित है। 'दीया-बाती के बेर' कविता में छत्तीसगढ़ के लोक-कथा के संदर्भ में कौआ के घर पर आकर बोलना और उड़ जाना मेहमान आगमन की सूचना माना जाता है इसी के बहाने कवि की जिज्ञासा बढ़ जाती है क्योंकि शाम ढल जाने के समय कौन मेहमान आने वाला है-

'बोलता है कौआ
तुम उड़ जाओ
अगर कोई आने वाला हो
वह उड़ गया
उम्मीद का कंकड़ गिरा
हुलस गया जल मन का
क्या पाहुन आएंगे।'[5]

कवि आशंकित है क्या कोई मेहमान आएंगे सुबह के निकले अभी शाम ढलते 'दीया बाती के बेर' समकालीन हिंदी कविता की भाषा सामान्य बोलचाल की भाषा है, यह कहना गलत न होगा कि समकालीन हिंदी कविता की भाषा अपने सहजपन में यथार्थ की उलझन और संघर्ष से भरे आम आदमी के अनुभवों को पूरी ताकत के साथ अभिव्यक्त करती है। लोक की आवाजों को बिना गहन संवेदना के नहीं सुना जा सकता। शिवकुमार मिश्र ने लिखा है, 'लोक अपनी ऊर्जा से ऊर्जावान रहा है और रहेगा। वह अपनी अंतर्निहित शक्ति से शक्तिमान रहा है और रहेगा। चुनौतियां गंभीर है, विश्वव्यापी हैं। लोक जहां भी है, उन चुनौतियों की गिरफ्त में है। प्रतिरोध भी लोक में रहा है और ;रहेगा। लोक चूंकि कोई जड़ या स्थिर इयत्ता नहीं है, प्रवाहमान इयत्ता है। इसी नाते हर समय में लोक अपने आज रूपांतरण किया है। अपने को समय के अनुरूप में ढाला और संस्कारित किया है। लोक प्रायः शास्त्र पर भारी पड़ता है। शास्त्र ने लोक को नहीं गढ़ा, अपितु लोक से निकलकर शास्त्र आया है। एकांत की कविताओं के वृत्तकेन्द्र में गांव,गरीब, किसान,मजदूर उसी तरह से हैं जैसे सूरजमुखी सूर्य की वृत्तकेंद्र में होता है। उनकी कविता संग्रह के नाम मिट्टी,बीज, फूल,धरती,नागकेसर से सहज स्पष्ट हो जाता है कि उनकी कविताएं भारतीय गांव, किसान और मजदूरों को समर्पित है। आज हमारे गांव, प्रकृति, ग्रामीण आदिवासी जन की उपेक्षा की गई है।लोक जीवन में प्रतिरोध की चेतना निरंतर विकसित और मुखर होती जा रही है। लोक में जड़ता के लिए कोई जगह ही नहीं है-

'कौन है?
कौन है?
कौन है यह अंतिम आदमी ?
कहीं आप तो नहीं?
कहीं मैं तो नहीं?
अरे!यह तो आप हैं
अरे! यह तो मैं हूं
रास्ते में घेर लेती है अंतिम आदमी को
मारे गए लोगों की अंतिम इच्छाएं।'[6]

एकांत की कविताएं अन्याय और असमानता के प्रतिरोधी है और उनमें जो कुछ भी रागमय, ललित है उसके यशोगान और समर्थन उनकी कविताओं में देखने को मिलता है। 'पसहर झड़ाने वाली स्त्रियां' कविता में लोक जीवन की संवेदना और संघर्ष का दर्शन होता है-

'घुटनों तक पानी में
खड़ी हुई
वह बूढ़ी मां गांव की
तोड़ रही सुनसुनिया भाजी
बेच आएगी
गांव के हाट में
दो-चार रूपयों में'[7]

एकांत यही नहीं रुकते वें यह भी बताते हैं कि उनके दिन भर के दुख संघर्ष की कीमत दो-चार रूपए में रसोई का कोई सामान नमक तेल या हल्दी बस खरीद खरीदी जा सकती है। यह है उनके दिन भर के परिश्रम का फल। एकांत की कविताओं में लोक जीवन जीवंत हो उठता है। उनकी कविताएं पढ़कर महसूस होता है कि वे समाज में हर व्यक्ति और गतिविधि को बहुत ही बारीकी से देखते और महसूस करते हैं। 'धूप गाढ़ी हो गई है' या 'पक रहा है शहद' जैसी कविताओं में लोक जीवन जितना मूर्त है उतना ही अमूर्त भी। वह ऐन्द्रिक भी है और भाव प्रवण भी। लोक की ताकत और आहट को समझने के लिए उनकी निष्ठा और कृतित्व को रेखांकित करना चाहिए एकांत श्रीवास्तव की कविताओं में 'एक साड़ी में जीवन बिताने की तकनीक, ढोलक बजाती लड़की, पुराने कपड़ों का बाजार, अनाज गोदाम के मार्ग से दाने चुनती स्त्रियां,गोंद इकट्ठा करने वाली बच्चियां,खंडहर में घर, धान-गंध, गेंदे के फूल, करेले बेचने आई बच्चियां, ऐसी मर्मस्पर्शी कविताएं हैं जो दैन्य

जीवन को प्रकट करते हुए भी मनुष्य की गरिमा का सम्मान करती है।प्रकृति के सौंदर्य को बिल्कुल नए,अछूते,प्रसंगों, दृश्यों,चरित्रों, प्रतीकोंऔर बिंबों में व्यक्त किया है,ऐसी ही एक कविता है। 'करेले बेचने आई बच्चियां' कविता की पंक्तियों में जो रूपक बांधा गया है वह पाठकों का विशेष रूप से ध्यान खींचता है?। इस कविता में बच्चियों के संघर्ष की जो रूपक बांधा है वह मौलिक, खूबसूरत, और पीड़ादायक कटु सत्य है –

'सड़क किनारे घूरों में उगी है जो लताएं
जंगली करेले की
वहीं से तोड़ कर लाती है तीन बच्चियां
छोटे-छोटे करेले गहरे हरे
कुछ काई जैसे रंग के
और मोल-भाव के बाद तीन रुपए में
बेच जाती है
मगर उनकी कडुवाहट लौट आती है वापस
उन्ही बच्चियों के साथ
उनके जीवन में।'[8]

आज भी देश के अधिकांश लोगों के जीवन में करेले की कड़वाहट बनी हुई है रोजी-रोटी, आवास, पानी, शिक्षा और चिकित्सा जैसी बुनियादी जरूरतों के लिए रोज जूझना पड़ता है, उनकी जीवन में कड़वाहट बाकी है। कृषक जीवन का मुख्य तत्व लोक है। फसल की बुवाई का प्रारंभ किसान और बैल के परिश्रम से होता है। हमारे घरों में भरे अनाज के दाने-दाने में इनके मेहनत की खुशबू समाई होती है, लेकिन इसका एहसास हम कब कर पाते हैं? आधुनिक जीवन शैली ने किसान,बैल और उनके श्रम को खारिज कर दिया है। कवि का किसान के प्रति चिंता कविता में स्पष्ट दिखाई देता है।किसान जीवन के कुछ बिम्ब पहले कभी ऐसी तन्मयता से कविता में नहीं आए जैसे गुडाई करते समय,लुवाई के दिन, खेत सुने पड़ गए हैं, आदि कविताओं में देखने को मिलता है। 'जिन कविताओं में लोक जीवन का राग,जीवन की प्रगाढ़ता और वृहत्तर आशयों का संधान मिलता है वें एकांत के काव्य का शिखर मानी जा सकती है।'[9] एकांत श्रीवास्तव नवीनतम पीढ़ी के प्रतिनिधि कवि हैं इनकी कविताओं में गांव, रिश्ते-नाते, नदी, तालाब, बगीचा,धान,मिट्टी,लोहा,प्रकृति,पशु-पक्षी,लोरी,उत्सव,मेला के साथ-साथ छत्तीसगढ़ के ग्रामीण अंचल की झलक लोकतत्व के साथ दिखता है। लोक एकांत के भीतर जैसे पानी की तरह बहता है। लोक जीवन में विलुप्त अधिकांश चीजों के अवशेष उनके हृदय के तहखाने में खुबसूरती के साथ बंद हैं, जो अनुकूल समय पर हमारे मध्य कविताओं के रूप में प्रकट होता है। लोक जीवन की सुगंध ही एकांत श्रीवास्तव का जीवन धन है।ग्रामीण जीवन की श्रम संस्कृति एकांत के कुछ कविताओं का केन्द्रीय विषय हैं जिसमें ग्रामीण अंचल के श्रम को रेखांकित किया गया है –

'इस निर्जन में
तोड़ रहे हैं बबूल की टहनियां
पेड़ पर चढ़े
दातून बेचने वाले बच्चे
खुशी एक फूल का नाम है जिसके लिए वे दोपहर भर
जूझते रहते हैं कांटों से।'[10]

छत्तीसगढ़ी लोक से एकांत का गहरा और आत्मीय नाता है। उनकी धड़कन की आवाज छत्तीसगढ़ी लोक में सुनी जा सकती है किंतु एकांत को केवल आंचलिक या छत्तीसगढ़ी लोक का कवि कहना एकांत के साथ अन्याय होगा। यह कहना अनुचित न होगा कि एकांत की कविताओं का फलक बहुत बड़ा है राष्ट्रीय अथवा अंतर्राष्ट्रीय। वैसे भी काव्य और कवियों को सीमा में बांधना कठिन के साथ-साथ अनुचित भी है।' एकांत वस्तुतः छत्तीसगढ़ के 'कन्हार' के कवि हैं और कन्हार केवल मिट्टी का नाम नहीं है, और यह केवल एक छोटा सा 'अंचल'भी नहीं है क्योंकि देश के किसी भी हिस्से में मिल जाएगा छत्तीसगढ़। इस दृष्टि से एकांत को कोरा आंचलिक कवि कहना भी ठीक न होगा।'[11] एकांत की छत्तीसगढ़ी कविता संग्रह 'अंजोर' जो स्वयं एकांत द्वारा हिंदी में अनुदित है, जिनमें छत्तीसगढ़ के लोक जीवन की झांकी है। हिंदी कविता में लोक की प्रतिष्ठा में एकांत की भूमिका महत्वपूर्ण है। लोक के अनुभव संसार को लोक भाषा में रचना एकांत के लिए प्रीतिकर अनुभव रहा। अंजोर की कविताएं छत्तीसगढ़ के बहाने भारतीय गांव की कविताएं हैं क्योंकि सब जगह त्रासदी , विडंबनाए और तकलीफें एक समान है। 'धरती के फूल' कविता में कुम्हार और किसानों के संघर्ष और परिश्रम के प्रति कवि कृतज्ञता और संवेदना व्यक्त करते है–

काली मिट्टी में उगा है कपास का पेड़
उसकी रूई से बनी है बाती
कुम्हार के चाक में बना है पका है भट्ठी में दिया।[12]

लोकजीवन के दिन-रात, सुबह, दोपहर, शाम जब एकांत की कविता में आती है तो विलक्षण रूप धारण कर लेती है। उनकी कविता प्रखर वेग से गुजरने के बाद शांत, संयंत स्वर में स्वयं को प्रस्तुत करती है। परत-दर-परत पंक्तियों में अपना फलक बढ़ाते हुए निजी दर्द को सामाजिक दर्द में रूपांतरित करने की अद्भुत शक्ति एकांत की कविताओं में देखने को मिलती है। वह चाहे 'उमा की कहानी' में हो चाहे 'महेंद्र नहीं' या 'कन्हार' जैसी लंबी कविता में हो। एकांत छोटी सी बिंदी को लोक प्रसंग से जोड़ते हुए आकाश का विस्तार और ऊंचाई तक पहुंचाने की काव्य कला में निपूर्ण एवं सक्षम कवि हैं।एकांत की कविता में उनके लोक अनुभव की रचना के पीछे एक गहरी लोक दृष्टि प्रेरक शक्ति के रूप में काम करते दिखाई देती है–

'आदमी अकेला नहीं मरता
मरता है घर का एक-एक जन
थोड़ी-थोड़ी सी मौत
मर जाती है झोलों में भरकर
बाजार से आने वाली खुशी
आटे के बिना कनस्तर और रोटी के बिना
चूल्हा मर जाता है।'[13]

एकांत विषमता को तो रेखांकित करते हैं और समाज को कटघरे में खड़े भी करते हैं मगर विनम्रता नहीं छोड़ते। उनकी कविताओं में आक्रोश कम यथास्थितियों का चित्रण अधिक है।आधुनिक, बाजारवादीऔर पूंजीवादी जीवन शैली में लोक और कविता दोनों को बहुत आघात पहुंचाया है। इसका प्रभाव कविता पर स्पष्ट दिखाई देता है। लंबे समय से हम न लोक की आहटे सुन रहे हैं और न उनकी छटाएं देख पा रहे हैं। हमने अपनी एक बेहद आरोपित दुनिया बना ली है। उसमें क्या-क्या कुड़ा, कबाड़ भर डाला है।भावी पीढ़ी के लिए 'लोक', 'भूलन कादा'की तरह हो जाएगा।हम उसे वेबसाइट पर ढूंढने में जुटे होंगे। इंटरनेट के सहारे 'लोक' को कब तक बचा पाएंगे। एकांत श्रीवास्तव जैसे साहसी कवियों की लेखनी लोक को प्रासंगिक बनाए रखा हैऔर उन्हें उच्छिष्ट होने से बचाया है, उम्मीद की जानी चाहिए कि एकांत की लेखनी और धारदार और महीन होकर लोक के दर्द को उजागर करने और प्रासंगिक बनाए रखने में सार्थक प्रयास करती रहेगी।

संदर्भ सूची :-

1. श्रीवास्तव एकांत, सूरजमुखी के खेतों तक, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली,प्रथम संस्करण,2024,पृ.31
2. मासिक पत्रिका, वागर्थ, कोलकाता, वर्ष 28,अंक 323, अक्टूबर 2022, पृष्ठ 89,
3. वहीं,पृष्ठ 89,
4. श्रीवास्तव, एकांत, कवि ने कहा, किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2016, पृ.16
5. मासिक पत्रिका, वागर्थ, कोलकाता, वर्ष 29,अंक 237, फरवरी 2023, पृ. 50,
6. श्रीवास्तव एकांत, मिट्टी से कहूंगा धन्यवाद, प्रकाशन संस्थान नई दिल्ली, तृतीय सं.2016,पृ. 14
7. मासिक पत्रिका, वागर्थ, कोलकाता, वर्ष 29,अंक 237, फरवरी 2023, पृ. 50,
8. श्रीवास्तव, एकांत, कवि ने कहा, किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 20 पृ. 107,
9. मासिक पत्रिका, वागर्थ, कोलकाता, वर्ष 29,अंक 237, फरवरी 2023, पृ. 51,
10. श्रीवास्तव, एकांत, कवि ने कहा, किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2016, पृ. 16,
11. श्रीवास्तव, एकांत,बीज से फूल तक, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2003, पृ. 103,
12. श्रीवास्तव, एकांत, अंजोर, प्रकाशन संस्थान नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2022, पृ. 107,
13. श्रीवास्तव, एकांत, मिट्टी से कहूंगा, प्रकाशन संस्थान नई दिल्ली, तृतीय संस्करण 2016, पृ. 50,

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

मोहम्मद सलीम : एक प्रयोगवादी चित्रकार

कौशल कुमार

शोधार्थी, चित्रकला विभाग, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा

सारांश :– इस शोध पत्र में भारतीय चित्रकार मोहम्मद सलीम की प्रयोगवादी चित्रण तकनीक, चित्रण में प्रयुक्त माध्यम तथा विशिष्ट शैली का विश्लेषण करता है। मोहम्मद सलीम एक प्रसिद्ध चित्रकार थे, 'सलीम का एक परिचय जानना चाहे तो लखनऊ के उन दृश्य चित्रकारों में एक खास जगह बनाई जिन्होंने अपनी सृजनात्मक की पैनी धार कर इस क्षेत्र को एक नए आयाम दिया था।'[1] मोहम्मद सलीम का जन्म 1939 ई0 में अल्मोड़ा (उत्तराखंड) के दुगालखोला नामक ग्राम में हुआ था। उनकी आरंभिक शिक्षा अल्मोड़ा में ही हुई तत्पश्चात कला शिक्षा हेतु 1954 ई0 में कला एवं शिल्प विद्यालय लखनऊ में प्रवेश लिया 1959 ई0 में फाइन आर्ट में डिप्लोमा प्राप्त कर सन 1960 ई0 में फाइन आर्ट में ही पोस्ट डिप्लोमा हासिल कर पूर्ण रूप से कला के लिए समर्पित हो गए। मोहम्मद सलीम चित्रों में अद्वितीय रंग योजना, चित्रण की गहनता और यथार्थवाद के साथ–साथ अद्वितीय मिश्रण के लिए प्रख्यात थे। यह शोध पत्र उनके चित्रण के विभिन्न पहलुओं जैसे उनके द्वारा प्रयुक्त माध्यम, तकनीक, एवं शैली के साथ–साथ रंग योजना, बनावट, प्रतीकात्मक, यथार्थवाद तथा प्रयोग पर गहन अध्ययन करता है और यह भी दर्शाता है कि उन्होंने किस प्रकार अपनी संस्कृति, सामाजिक परिदृश्य और व्यक्तिगत दृष्टिकोण को अपनी कला में व्यक्त किया है। सलीम तब तक सक्रिय रहे जब तक इन पहाड़ों, पत्थरों, टेढ़े–मेढ़े रास्तों और वादियों में खुद को खोजते रहे। 22 जनवरी 2022 को उन्होंने निसर्ग के इस मधुर संगीत को गुनगुनाते हुए अपने कैनवास से रिश्ता तोड़कर अल्मोड़ा (उत्तराखंड) की सौंदर्य वादियों में अपनी अंतिम सांस ली थी।

शब्द संकेत :– जनजीवन, माध्यम, प्रकृति, आकृतियों, पद्धति, संस्कृति, चित्रण, शांति, प्रयोग, पारंपरिक, ग्रामीण।

परिकल्पना :–

ज मोहम्मद सलीम की चित्रण, तकनीक, माध्यम,शैली और प्रयोग का विश्लेषण यह दर्शाता है कि उनकी कला वर्तमान में युवा चित्रकारों के लिए प्रेरणा का स्रोत है।

ज उनके चित्रण में प्रयुक्त माध्यम, तकनीक और शैलीगत पक्ष से अपनी कला साधना का नए आयाम खोजने और अपनी चित्रों में समाविष्ट करने के लिए प्रेरित करते हैं।

ज मोहम्मद सलीम के चित्रण कार्य में पारंपरिक और आधुनिक काल शैलियों का संगम दिखाई देता है जो भारतीय कला को एक वैश्विक परिप्रेक्ष्य में स्थापित करने में सहायक है।

उद्देश्य :–

ज इस शोध पत्र का उद्देश्य चित्रकार मोहम्मद सलीम के जीवन और कला यात्रा का गहन अध्ययन करना है।

ज यह शोध पत्र उनके चित्रण शैलियों जैसे जलरंग और एक्रेलिक माध्यम में उनके प्रयोगों तथा उनकी कला में प्रकृति जनजीवन और अमूर्त चित्रण के अद्वितीय समन्वय को समझने की दिशा में एक मार्गदर्शक होगी।

ज सलीम के रंगों और तकनीकों का विशेष उपयोग जो उन्हें एक विशिष्ट स्थान दिलाता है इस अध्ययन का प्रमुख बिंदु है।

प्रस्तावना :– 'मोहम्मद सलीम एक अंतर्मुखी कलाकार रहे थे।'[2] मोहम्मद सलीम का जन्म 1939 ई0 में अल्मोड़ा (उत्तराखंड) के दुगालखोला नामक ग्राम में हुआ था। उनकी आरंभिक शिक्षा अल्मोड़ा में ही हुई तत्पश्चात कला शिक्षा हेतु 1954 ई0 में कला एवं शिल्प विद्यालय लखनऊ में प्रवेश लिया 1959 ई0 में फाइन आर्ट में डिप्लोमा प्राप्त कर सन 1960 ई0 में फाइन आर्ट में ही पोस्ट डिप्लोमा हासिल कर पूर्ण रूप से कला के लिए समर्पित हो गए, 'लखनऊ की कला अपने जिन गुड़ के लिए जानी गई उनमें वातावरण को अभिव्यक्त करने वाले धूसर रंग और संवेदनशील ताने प्रमुख रही है।'3 सलीम की कला पर लखनऊ के वीरेश्वर सेन 'जिन्होंने जीवन प्रयत्न हिमालय और मैदानी क्षेत्र के रोमांचक दृश्य में अपनी रचनात्मकता और अपने अनुभवों का रंग भरा,'[4] 'एम0 एल0 सेन के अतिरिक्त इलाहाबाद के श्रितेंद्र नाथ मजूमदार और बंगाल के अवनींद्रनाथ टैगोर की कला का गहरा असर पड़ा था। मोहम्मद सलीम ने जल रंग, एक्रेलिक रंग, तेल रंग, स्याहि, पेंसिल, चारकोल, मिश्रित माध्यम आदि में चित्रण कार्य किया था। वेस्टर्न आर्टिस्ट जॉन सिंगर सार्जेंट और सर विलियम रसेल फ्लिंट के चित्रण कार्यों से भी बहुत प्रभावित थे। सलीम ने उनके चित्रण कार्यों से बहुत सीखा है और जल रंगों के क्षेत्र में फ्लिंट को अपना सबसे बड़ा प्रेरणादायक मार्गदर्शन और अपने अंतिम समय तक सर्वोत्तम जल रंग चित्रकार मानते थे।' जल रंगों में मोहम्मद सलीम ने काम करते हुए भू दृश्य तथा उसमें कुमाऊं के वास्तविक जीवन की झलक को दिखाया है। पटालों से निर्मित छत, मिट्टी के मकान, दूर तक फैले सीढ़ीदार खेत और उनमें काम करती महिलाएं, गौशाला में गाय और भैंस, ग्रामीण मंदिर, अल्मोड़ा शहर का बाजार, घास के लुटे पारंपरिक वेशभुषाण से सुशोभित महिलाएं आदि संपूर्ण ग्रामीण परिदृश्य को सलीम ने बड़ी विशिष्टता से दर्शाया है।'[5]

(संख्या–1) मोहम्मद सलीम अपने स्टूडियो में चित्रण कार्य करते हुए।

मोहम्मद सलीम दुनिया को महसूस करना चाहते थे। अल्मोड़ा का नैसर्गिक और ठेठ संगीत वादियों की खुशबू और हिमालय की

विशाल पहाड़ी, घाटियों की गहराई सहज और निर्भय जीवन जो धारण होता है। सीमित संसाधनों और अभाव से खुले मन से जीने का उन्होंने अपने दृश्य चित्रों के अंतर्गत मौसम की भिन्नता, सूर्योदय, सूर्यास्त, पिघलती बर्फ व तूफानी हवाओं आदि के सुंदर अंकन में अद्भुत रंगों की अभाव को प्रयुक्त किया इसलिए प्राकृतिक दृश्य इन्हें रंगों और रूपकारो के साथ जीने की प्रेरणा देते थे। प्रकृति से सलीम की कला का एक बहुत गहरा संबंध रहा था जिसका स्पष्ट उदाहरण उनके कुछ चित्र में परीक्षित होता है। मोहम्मद सलीम अपने स्टूडियो में चित्रण कार्य करते हुए चित्र (संख्या-1)। चित्रकार मोहम्मद सलीम से विजय शंकर की बातचीत साक्षात्कार के द्वारा मोहम्मद सलीम का वक्तव्य प्रकृति को लेकर 'प्रकृति को मैं चुकी ब्रह्मांडीय अनंत रचना के रूप में देखता हूं और स्वयं को उसके बाहुपाश में घिरा पाता हूं, तो ऐसे सुख की अनुभूति होती हैं जैसे एक अद्भुत शिशु को अपनी मां की गोद में होती है। कभी अकेले खुले आकाश और जंगल के बीच नीरवता में बैठने पर, मन के एकाग्र होने पर, शारीरिक चेतन कम होने पर एक असीमित आनंद बाहर से अंदर की ओर आता हुआ अनुभव करता हूं मानो शक्कर पानी में घुल रही हो।'[6] सलीम ने प्रकृति को अलग-अलग परिपेक्ष में चित्रित करने की कोशिश की जिसमे इन्होंने रहस्यमय विराट दार्शनिक अद्भुत अर्थात नए आयाम में देखते हुए एक जीवित शक्ति के रूप में देखा और चित्रित किया।' आज का कलाकार कुछ नया करने की खोज में जब नया माध्यम नहीं पाता तब वह पारंपरिक सीमा को तोड़कर नहीं संभावनाओं का अनुसंधान करता है।'[7] प्रकृति का यथार्थ चित्रण करने के साथ-साथ इन्होंने अमूर्त चित्रण का समावेश अपने चित्रों में किया अमूर्त चित्रण के अंतर्गत इन्होंने अपने मन की भावनाओं को मानवीय संवेदनाओं के साथ जोड़कर बड़े ही उच्चपूर्ण ढंग से दर्शाने की कोशिश की वहीं दूसरी ओर इन्होंने यथार्थ चित्रण कर जनजीवन से संबंधित चित्रों में पहाड़ी परिवेश में रहने वाले जनसाधारण तथा उनकी वेशभूषा, पशु आकृतियों और दैनिक उपयोग में आने वाली वस्तुओं के साथ-साथ वहां के प्राचीन स्थापत्य आदि को चित्रित किया, इन सभी के चित्रण में रंग-विधान विशिष्ट है। जिसमें विभिन्न रंगों को कुशलता से सम्मिश्रण किया गया है इस रंग चयन में अतिंद्री सौंदर्य मधुरता तथा कहानी अधिक जान पड़ता है। सलीम की कला विविधताएं लिए जिसमें तकनीक कुशलता व रंगों का चमत्कार है। 'चित्रफलको पर जिस सहजता से जल रंगों व एक्रेलिक के माध्यम से उन्होंने अपनी अनुभूतियों को अपनी भावनाओं में व्यक्त किया है। वह एक दीर्घ अन्वेषण और सुदीर्घ साधन का प्रतिफल है। अपने प्रयोगधर्मी प्रवृत्ति के कारण परंपरागत लखनऊ की वॉश शैली को अपने चित्रों में प्रभाव उत्पन्न करने के लिए बड़ी दक्षता के साथ प्रयोग में लाते हैं ताकि पुरातन के प्रति शिल्प विधान में आस्था भी बन रहे और कल की विकास यात्रा में नई कल्पनाओं नए आयाम को विस्तार मिलता रहे।'[8] आकर्षित करने वाले रंगों के प्रयोग के कारण इन्हें रंगवादी के रूप में भी जाना जाता है। सलीम संयोजन में रंगों को अधिक महत्व देते हैं क्योंकि रंगों का प्रभाव प्रकृति मनोदशा संवेदना आदि से संबंधित होता है। सलीम चमत्कार रंग प्रयोग करने के बावजूद मध्य तन में ही चित्रों को फिनिश करते हैं।' जल रंग का मुख्य गुण इसकी पारदर्शिता है और यह शीघ्रता से सूखते हैं।'[9] जल के साथ एक्रेलिक रंगों का भी प्रयोग करते हैं और उनके रंगों के व्यवहार में पर्याप्त पारदर्शिता है। इसलिए सलीम ने जलरंगीय चित्रों में पारदर्शिता के साथ-साथ वह विलक्षण पोत का प्रयोग कर कला जगत में अपना विशिष्ट स्थान बनाया। कहीं-कहीं तेलीय रंगो को जल रंग की भांति प्रयुक्त किया 'संश्लेषित रंगों की एक किस्म जो जल तथा तेल दोनों माध्यमों में घुलनशील होता है इन रंगों को जलरंगी शैली में पतले से पतला लगाकर पारदर्शक प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है और तेल रंगों की तरह इसमें मोटी परतों की सतह भी बनाई जा सकती है'[10] तथा एक्रेलिक रंगों में भी वॉश पद्धति का प्रभाव दर्शाया। सलीम के प्रिय रंगों में भूरे, पीले, हरे व नीले रंगों के साथ-साथ विरोधी रंगों को भी देखा जा सकता है। इनके जलरंगीय चित्रों में भी भीगे कागज पर नमक छिड़क कर प्रभाव उत्पन्न किया गया तथा कैनवास पर चॉक का उपयोग भी किया गया और अन्य प्रकार के पोत से सृजित किए गए टेक्सचर का भरपूर प्रयोग देखने को मिलता है। क्योंकि सलीम का कला प्रशिक्षण लखनऊ से ही हुआ है उस समय वॉश पद्धति का महत्व काफी था। यह बहुत समय तक वॉश चित्रण भी करते रहे हैं इसलिए सलीम के चित्रों में वॉश चित्रण का प्रभाव अत्यधिक दिखता है।' जल रंग से चित्रण की दूसरी तकनीक जिसमें कागज को पानी में भिगोकर वार्निश की पॉलिश लगे बोर्ड पर फैलाकर गीले कागज पर ही रंगों से कार्य किया जाता है। कागज के सूखने और उठने पर नीचे तूलिका से फिर पानी लगा दिया जाता है और गीले कागज पर ही चित्रण किया जाता है। कागज को अधिक समय तक गीला रखने के लिए गीले कागज को बोर्ड पर रखने से पहले एक कपड़ा जल में भिगोकर फैला लिया जाता है इस गीले कपड़े के नीचे लगे रहने से कागज बहुत समय तक गीला और नम बना रहता है।'[11] सलीम ने जल, तेल और ऐक्रेलिक, पेस्टल, टेंपरा, चारकोल आदि माध्यमों में काम किया है । इसके अतिरिक्त यह पेंसिल ड्राइंग भी करते थे इन्होंने पेंसिल ड्राइंग में विभिन्न छोटे-बड़े आकारों को सृजित किया इन छोटे आकारों में यहां तक की विजिटिंग कार्ड के आकार में भी वह अद्भुत कार्य करते थे जैसा की (चित्र संख्या-2) में देख सकते हैं।

(चित्र संख्या-2) मोहम्मद सलीम के विजिटिंग कार्ड के आकार का चित्र। (माध्यम-एक्रेलिक, आकर- 2.2'' X 3.5'')

'कला अपने में भावों की परिभाषा है।'[12] इसलिए इन्होंने अमूर्त संयोजनों के माध्यम से प्रकृति के भावात्मक दृश्य को संवेदना के साथ बिल्कुल भिन्न और मौलिक ढंग से चित्रित किया सलीम न केवल नील, लाल, पीले मूल रंगों की आभा को निखारते थे अपितु इन रंगों के मेल से अनेक नितांत पारदर्शी रंगों की सृष्टि करते थे जो दशक के मन मस्तिष्क पर सहज ही बैठने की शक्ति रखते है। इनके पारदर्शी रंगों और कल्पना की संयोजन का अपना एक अलग अंदाज है। फलक पर वे रंगों के अनूठे विस्तार के साथ हमें अनेक स्थानों पर चकते और चमत्कृत करते हैं रंग उनके चित्रों मैं प्राण है और संयोजन उनकी पहचान सलीम के छोटे से छोटे काम में एक स्पंदन है संभवत व स्पंदन ही है। जो सलीम को रंगों के चुनाव व संयोजन में एक विशिष्ट कलात्मक और स्वाभाविकता प्रदान करता है। मोहम्मद सलीम अपने चित्रों में कुछ विशेष प्रकार के स्ट्रोक्स देने के लिए विभिन्न प्रकार के कलात्मक उपकरणों का प्रयोग करते थे जो वे स्वयं से ही निर्मित करते थे चित्रण कार्य में प्रयुक्त तकनीकी उपकरणों में भी वे भिन्न-भिन्न प्रयोग करते थे जैसा की (चित्र संख्या-3,4) में दर्शाया गया है। आज के इस भौतिकतावादी युग में जहां कलाकार थोड़ी सी ख्याति अर्जित करने हेतु गलत और सही तरीके अपनाने से छूट नहीं रहते वहीं सलीम एक ऐसे ऊर्जावान कलाकार है जो आत्म प्रदर्शन की भावना से ही हमको विरक्त कर करते हैं। मैंने(प्रो0 शेखर चंद्र जोशी) चित्रकार मोहम्मद सलीम के चित्रों में

कार्य करने के लिए विद्यार्थियों को प्रेरित किया जिसमें मेरी शोधार्थी कु0 विमला राणा ने 'मोहम्मद सलीम एवं उत्तराखंड के अन्य जल रंग चित्रकारों का तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर शोध प्रबंध को 2012 में प्रस्तुत किया था मोहम्मद सलीम के कलात्मक अध्ययन जानने के लिए कला के विद्यार्थियों में हमेशा से ही उत्सुकता रहती है जिसमें यह शोध प्रबंध सहायक है। मोहम्मद सलीम ने कला जगत की राजनीति, कला बाजार को भी अपने नजदीक नहीं आने दिया था। भारतीय कला की अपनी विशेषताओं को भी बरकरार रखने का अथक प्रयास किया था क्योंकि यह मानते है कि कला ही सदैव अपने देश, समाज. संस्कृति,परीस्थिति तथा विचारों का दर्पण होती है।

(चित्र संख्या–3,4) मोहम्मद सलीम के द्वारा स्वयं से निर्मित चित्रण में प्रयुक्त तकनीकी उपकरण

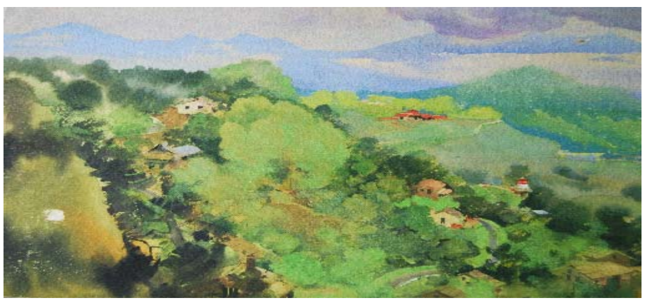

(चित्र संख्या– 5) मोहम्मद सलीम के द्वारा चित्रित जल रंग चित्रण

चित्र संख्या–5 अल्मोड़ा उत्तराखंड के नैसर्गिक सौंदर्य को दर्शाता है। जो वर्ष 2000 में बनाया गया यह चित्र कागज पर शुद्ध जल तकनीक से बना हुआ है 'शुद्ध जल रंग तकनीक में रंगों की पारदर्शिता का उपयोग ही इसकी प्रमुख विशेषता है।'[13] इस चित्र में हरे और नीले रंग का प्रयोग किया गया है। जल रंग पानी में घुलनशील तथा पानी के द्वारा चित्रभूमि पर फैलाए जाने वाले रंग है। जल रंग का मुख्य गुण इसकी पारदर्शिता है। इस चित्र में पेड़ों, पहाड़ों और आसमान का प्राकृतिक रंग संयोजन जल रंग की विशेषताओं को दर्शाता है पेड़ों, पहाड़ों और आसमान में गहराई और विस्तार का प्रभाव उत्पन्न करता है। मोहम्मद सलीम के इस चित्र में पेड़ों के आकार में रंगों का नरम मिश्रण दिखाई देता है। इससे प्राकृतिक और मृदुल वातावरण उत्पन्न होता है।मोहम्मद सलीम ने 'प्रकृति के सुंदर दृश्य का प्रत्यक्ष दर्शन कर उन्हें अपनी तूलिका के कमाल में हूबहू उतारने में महारत हासिल की है।'[14] चित्र के कुछ स्थान पर हल्के धब्बे और रंगों के फैलाव को भी देखा जा सकता है जो चित्र में जीवन का एहसास करते हैं चित्र में छोटे–छोटे आकार में ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया है बल्कि बड़े ब्रश स्ट्रोक्स और हल्के रंगों का उपयोग किया गया है। घरों पहाड़ियों और पेड़ों को सरल और संक्षिप्त रूप में दर्शाया गया है मोहम्मद सलीम ने प्रकृति के विभिन्न रूप जैसे पेड़ पहाड़ को प्राथमिकता देते हुए एक शांत और सुकून भरा दृश्य चित्रित किया है रंगों का प्रयोग इस प्रकार किया गया है कि वह देखने वालों को दृश्य की शांति और प्रकृति की सभ्यता का एहसास करते हो।

(चित्र संख्या– 6) मोहम्मद सलीम के द्वारा चित्रित एक्रेलिक माध्यम में चित्रण

चित्र संख्या–6 अल्मोड़ा ग्रामीण जीवन का है। जो वर्ष 1997 में मोहम्मद सलीम के द्वारा बनाया गया यह चित्र एक्रेलिक माध्यम में बनाया गया है। चित्र एक्रेलिक माध्यम में जल रंग का प्रभाव उत्पन्न किया गया है 'तकनीकी स्तर पर जलंगों का एक दूसरे में मिश्रण भी किया जा सकता है।'[15] जो इस चित्र में स्पष्ट रूप से परीक्षित होता है मोहम्मद सलीम ने हल्के रंगों पर कोमलता की परतों से पारदर्शिता का उपयोग कर गहराई उत्पन्न की है। चित्र में रंगों के मिश्रण का एक विशेष प्रभाव है जो एक्रेलिक रंग तकनीक ने किया गया है। इसमें पतले रंगों को परत दर परत लगाकर गहराई उत्पन्न की गई है चित्र की पृष्ठभूमि में ग्लेज़ और ड्रिपिंग तकनीक का उपयोग किया गया है। 'ऐक्रेलिक पेंट ग्लेज़ का इस्तेमाल अक्सर किसी छवि में ज्यादा गहराई पैदा करने के लिए किया जाता है। जब ग्लेज़ मीडियम को ऐक्रेलिक पेंट पर लगाया जाता है तो पेंट ज्यादा पारदर्शी हो जाता है और उसके नीचे इस्तेमाल की गई पेंट की परत दिखाई देती है जो रंग को संशोधित करती है।'[16] यह तकनीक से वातावरण में हल्के और स्वाभाविक बदलाव दर्शाया है घरों के छोटे–छोटे विवरण, खिड़कियां, दरवाजे, सीढ़ियां और महिला की पोशाक में स्पष्टता से दर्शाया है। जिसमें डिटेलिंग तथा सूक्ष्मता से ब्रश या नुकीले उपकरण के नुकीले किनारो का उपयोग किया है। मोहम्मद सलीम अक्सर अपने चित्रों के लिए नुकीले उपकरणों का प्रयोग करते थे जैसा की चित्र संख्या दर्शाया गया है इस चित्र में ग्रामीण जीवन को प्रमुख रूप से दर्शाया गया है। जिसमें पारंपरिक घरों, ग्रामीण जनजीवन को बहुत सहजता से चित्रित किया है। यह चित्र में मानव आकृति को यथार्थवादी शैली में चित्रित किया गया है परंतु रंगों के धुंधलेपन और ब्रश के उपयोग के कारण प्रभाववादी शैली का भी प्रभाव दिखाई दे रहा है पृष्ठभूमि और आकाश के हल्के रंगों में धुंधलापन और मिश्रण से वातावरण में सौम्यता उत्पन्न की गई है।

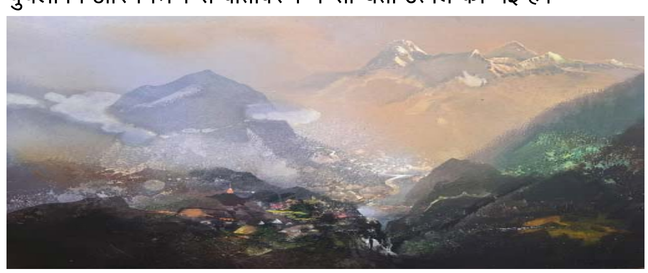

(चित्र संख्या– 7) मोहम्मद सलीम के द्वारा चित्रित मिश्रित माध्यम में चित्रण

चित्र संख्या–7 उत्तराखंड का एक हिमालय दृश्य को चित्रित किया गया है। यह चित्र चित्रकार मोहम्मद सलीम के द्वारा वर्ष 2021 मैं बनाया गया इस चित्र की विशेषता यह है। कि यह उनके जीवन के अंतिम समय के चित्रों में से एक है मोहम्मद सलीम ने यह चित्र मिश्रित माध्यम में बनाया है। जैसे कि मोहम्मद सलीम को एक चित्रण में नए–नए प्रयोग करना पसंद था उन्होंने भिन्न–भिन्न पाटिकाओं से चित्रित फलक का अद्भुत विभाजन कर नरम रंग

योजना से सुंदर अमूर्त संयोजन किया एवं आधुनिक नवीन कलाधर का बखूबी प्रदर्शन किया इस चित्र प्रक्रिया में कैनवास पर पतले रंगों का फैलाव एवं परतदार परत के प्रयोग से पहाड़ों को रूप दिया गया है। तथा हिमालय को ब्रश से डिटेल किया गया है इस चित्र में गहरे रंगों के साथ मोटे ब्रश स्ट्रोक्स का उपयोग किया गया है जो नीचे गांव और वृक्षों की बनावट को उभरते हैं साथ ही छोटे-छोटे और लहराती रेखाओं का उपयोग किया गया है। जिसमे पेड़ पौधे और नदियों का दृश्य जीवित लगता है चित्र में प्रकाश और छाया का बखूबी प्रयोग किया गया विशेष कर पहाड़ों पर गिरती रोशनी और बादलों की परतों में वातावरण में रहस्यमय्यता और सौंदर्यता का अनुभव होता है इस चित्र में यथार्थवाद व प्रभाववाद का सुंदर मिश्रण देखने को मिलता है। रंगों का संतुलित प्रयोग इस चित्र को एक विशेष आकर्षण देता है। नील हल्के भूरे और हरे रंगों का संयोजन प्रकृति वातावरण को दर्शाता है दूर के बर्फीले पहाड़ों में हल्का नीला और सफेद रंग तथा निचले हिस्से में गहरे भूरे और हरे रंगों का प्रयोग करके चित्र में गहराई और दूरी का एहसास कराया गया है।

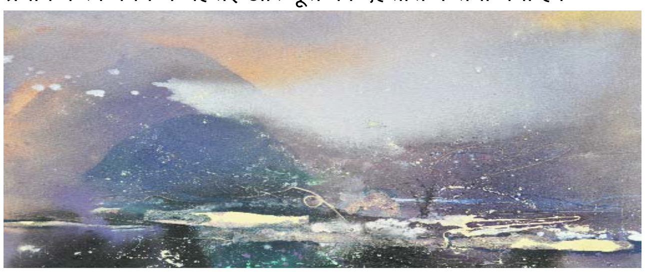

(चित्र संख्या- 8) मोहम्मद सलीम के द्वारा चित्रित मिश्रित माध्यम में चित्रण (एक्सट्रैक्ट प्रयोग)

चित्र संख्या-8 वर्ष 2008 में चित्रित किया गया था। यह चित्र मिश्रित माध्यम से बना हुआ है। जिसमें एक्रेलिक स्प्रे पेंट टेक्सचर तकनीक का उपयोग किया गया है। 'स्प्रे पेंटिंग एक पेंटिंग तकनीक है जिसमें एक उपकरण हवा के माध्यम से कोटिंग सामग्री पेंट, स्याही, वार्निश, आदि को सतह पर स्प्रे करता है।'[17] चित्र में ड्रिपिंग तकनीक में कार्य हुआ है 'ड्रिप पेंटिंग कला का एक रूप है अक्सर अमूर्त कला जिसमें पेंट को कैनवास पर टपकाया या डाला जाता है।'[18] रंगों के चटकाते और बहने का प्रभाव देखा जा सकता है। जिस कारण चित्र में एक गतिशीलता और एब्स्ट्रेक्ट रूप उत्पन्न होता है इस चित्र में लेयरिंग तकनीक का भी प्रयोग हुआ है। जिसमें रंगों की परते एक दूसरे के ऊपर लगाई गई है जिससे गहराई और टेक्सचर का प्रभाव उत्पन्न होता है विशेषका रूप से पृष्ठभूमि और अग्र भूमि के हिस्सों में देखा जा सकता है चित्र में रंगों का धुलाव बहुत सुंदर ढंग से किया गया है। हल्के और गहरे रंगों के बीच का संतुलन इस चित्र में कुछ विशेष रंग जैसे बेगनी, पीले और नीले रंगों से चित्रित में एक रहस्यमय और शांति प्रभाव उत्पन्न होता है। इस चित्र में यथार्थवादी आकृति की बजाय रंगों और टेक्सचर का एक्सट्रैक्ट प्रयोग किया गया है। यह चित्र एक विशिष्ट भू-दृश्य का एब्स्ट्रेक्ट और अभिव्यक्तिवादी शैली का अच्छा उदाहरण है। रंगों का धुलाव टेक्सचर का अद्भुत प्रयोग और रेखांकन की स्वच्छता चित्र को एक गहन और रहस्य में स्वरूप प्रदान करती है।

निष्कर्ष:-चित्रकार मोहम्मद सलीम की कला का सार उनकी गहरी प्रकृति प्रेम, मानवीय संवेदनाओं और पारंपरिक तकनीक के साथ आधुनिक प्रयोगशीलता में निहित है। उनकी कलात्मक दृष्टि ने न केवल अल्मोड़ा की प्राकृतिक सुंदरता और वहाँ के जनजीवन को जीवंत रूप में प्रस्तुत किया, बल्कि अमूर्त चित्रण के माध्यम से मानवीय भावनाओं और गहराईयों को भी अन्वेषित किया। सलीम की कला में जलरंग और एक्रेलिक के प्रयोग से रंगों की पारदर्शिता और सजीवता दिखाई देती है, जिसमें वॉश पद्धति का विशेष प्रभाव रहा है। उनके चित्रों में रंगों का संयोजन, पारदर्शिता और टेक्सचर का कुशल उपयोग उनकी सृजनशीलता का प्रमाण है। सलीम ने अपनी कला में परंपरा और नवाचार का संतुलन बनाए रखते हुए कला जगत में अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित की।

संदर्भ सूची:-

1. डॉ0 अवधेश मिश्रा, 2007, चित्रों में पहाड़ी संगीतकार स्पंदन - मोहम्मद सलीम, प्रशासन डॉ0 वीणा विद्यार्थी, पृष्ठ संख्या-3
2. डॉ0 अवधेश मिश्रा, 2007, उपरोक्त, पृष्ठ संख्या-7
3. डॉ0 अवधेश मिश्रा, वीरेश्वर सेन की कला प्रवाह का स्पंदन, समकालीन कला अंक 48 फरवरी 2016, डॉ0 संपादक डॉ0 ज्योतिष जोशी
4. डॉ0 ज्योतिष जोशी, समकालीन कला, अंक 48 फरवरी 2016 वीरेश्वर सेन की कला प्रवाह का स्पंदन डॉक्टर अवधेश मिश्र
5. प्रो0 शेखर चंद्र जोशी, उत्तराखंड का समकालीन कला- परिदृश्य, अंक- 34, नवंबर 2007 फरवरी 2008, ललित कला अकादमी नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 57
6. कल संपदा एवं वैचारिक, वर्ष 3 अंक 4 जून जुलाई 2006, संपादक- विजय शंकर, पृष्ठ संख्या 4-5
7. डॉ0 शर्मा, डॉ0 श्रोत्रीय, चित्रण विधान एवं सामग्री, प्रकाशन- प्रतियोगी प्रकाशन 2011, पृष्ठ संख्या -77
8. नवीन वर्मा,अन्वेषण और कला साधना का प्रतिफल है मोहम्मद सलीम की कला,कला संपदा एवं वैचारिक अंक -10 मैं जून 2004, संपादक- अनुराधा
9. Thomas and Hudsun The Material and Technique of Painting - Tonathan stephen son Ptd London- 1987 P.No. 68
10. बाथम रूपनारायण, पारिभाषिक कला को शिक्षा विभाग राष्ट्रीय आधुनिक संग्रहालय नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 11
11. बहादुर अविनाश वर्मा,कला एवं तकनीक, संस्करण 1998, पृष्ठ संख्या-12, पृष्ठ संख्या 110 -111
12. हिंदुस्तान, गति में जीवन ढूंढते रंग, 6 अप्रैल 1991
13. डॉ0 शर्मा, डॉ0 श्रोत्रीय, चित्रण विधान एवं सामग्री , प्रकाशन- प्रतियोगी 2011, पृष्ठ संख्या - 47-48
14. प्रो0 शेखर चंद्र जोशी, समकालीन कला ,डॉ सुधानकर शर्मा ललित कला अकादमी रविंद्र भवन नई दिल्ली, अंक34
15. समकालीन कला, ललित कला अकादमी की पत्रिका नवंबर 1689 मई 1687, पृष्ठ संख्या- 78, पृष्ठ संख्या -17
16. 'ग्लेज़िंग', वर्मीर की पेंटिंग तकनीक। 30 सितंबर 2015
17. https://en.wikipedia.org/wiki/Spray_painting
18. ड्रिप पेंटिंग तकनीक और जैक्सन पोलक का प्रभाव, स्वरेज़ द्वारा' । स्वरेज़ आर्ट। 2020-05-18

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

त्रिभुवन पांडेय के साहित्य में सामाजिक चेतना

नीरज कुमार शर्मा
डॉ. वर्षा वर्मा

1. शोधार्थी, शास. वि. या. ता. स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दुर्ग, छत्तीसगढ़
2. शोध निर्देशक एवं सहायक प्राध्यापक, सांई महाविद्यालय, सेक्टर 7 भिलाई, छत्तीसगढ़

त्रिभुवन पांडेय को अकेले याद नहीं किया जा सकता है। उनके साथ हमेशा नत्थी रहता है उनका व्यंग्य। जिन्होंने हिंदी साहित्य में अपना विशिष्ट योगदान दिया है। इनकी लेखनी में गद्य-पद्य रूपी गंगा-जमुना का अभूतपूर्व संगम है। वे जितनी सशक्तता से अपनी बातें चंद पंक्तियों की कविता और गीत के माध्यम से कहते थे, उतनी ही मुखरता से गद्य में भी अपनी बातें कहने की अद्भुत क्षमता के धनी साहित्यकार थे। उनकी कविताओं और गीतों से जुड़ने पर अनुभव होता है कि इन्होंने जीवन के हर पहलू को बड़े करीब से देखा और महसूसा है ।आम आदमी के जीवन में घटित होने वाले हर क्षण को केवल स्पर्श ही नहीं किया है बल्कि उनके दर्द को जीया भी है।

त्रिभुवन की कविताओं में प्रकृति का सौंदर्य, तथा आम आदमी की संवेदनाओं का गहन चित्रण सर्वत्र मिलता है। उन्होंने अपनी रचनाओं में देश व समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार,लूट,घूसखोरी जैसे सवालों को प्रमुखता से उठाया है। आजादी से लेकर वर्तमान राजनीतिक मूल्यों में हो रहे सतत गिरावट के वे प्रत्यक्षदर्शी रहे हैं। इन हालातों से जब उनका मन आहत और खिन्न हो जाता था।तब वे लेखनी उठाते तो उनका मन कह उठता है...

एक बार सहें आप, पांच साल हम ।
एक बार दुखी आप पांच साल हम।

उनकी अनेक रचनाएं अखिल भारतीय स्तर पर प्रसिद्ध हैं। 'भगवान विष्णु की भारत यात्रा' उपन्यास इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है।इस उपन्यास पर आधारित अथवा इससे प्रेरित अनेक नाटक, कहानी, उपन्यास, धारावाहिक और फिल्में बनीं और वर्तमान में बानाए भी जा रहें हैं। प्रसिद्ध हिन्दी फिल्म 'तकदीर वाला' जिसके नायक व्यंकटेश है और हास्य कलाकार कादर खान, असरानी मुख्य भूमिका में हैं।इसी उपन्यास पर आधारित या प्रेरित है। त्रिभुवन एक ओर अपनी कविताओं व गीतों से पाठकों का हृदय स्पर्श करते हैं,वहीं दूसरी ओर हम उनके गद्य विशेषतः व्यंग्य की बात करें तो उन्होंने अपने व्यंग्य से रोजमर्रा की जिंदगी पर तीक्ष्ण व सटीक प्रहार करते है। उन्होंने आम आदमी की रोजमर्रा की समस्याओं को बड़े करीब से देखा व स्वयं भी भोगा है। संवेदनाएं और कल्पनाएं कहीं उधार नहीं मिलती वे रचनाकार की अपनी संपदा होती है। मनुष्य अपनी प्रवृत्तियों में संवेदनशील होता है, इसलिए रचनाकार अपनी रचनाओं के जरिए हमेशा मनुष्य की उस संवेदनशीलता को जगाने का प्रयास करता रहता है। त्रिभुवन ने ऐसी ही कविताएं और गीतों की रचना की हैं, जिसमें आम आदमी की संवेदना और पीड़ा को बहुत ही गहराई से व्यक्त किया है। उनकी रचनाओं में सामाजिक चेतना का पुट देखने को मिलता है।

हास्य मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। मनुष्य और पशु के मध्य मुख्य अंतर यही है कि मनुष्य हस सकता है ,पशु में हसने की क्षमता नहीं होती है। जीवन के परम और चरम आनंद के रूप में हसी मनुष्य की अनुपम उपलब्धि है ।इसमें संदेह नहीं है कि मनुष्य के हंसने की भावना का उदय भाषा की उत्पत्ति के पूर्व हो चुका था। इसी कारण सृष्टि के प्रारंभ से आज तक हास्य वृत्ति मनुष्य के साथ संयुक्त है। पशु के पास भाषा का कौशल नहीं है जिससे वह व्यंजना का परिचय दे सके जबकि मनुष्य के पास भाषा की असीम संपदा है। वह इसी भाषा की व्यंजना शक्ति के सहारे अपनी बात मार्मिक और प्रभावी रूप से कह सकता है। यही स्थिति व्यंग्य से भी निर्मित होती है ।सीधे-सीधे किसी को अज्ञानी कहने के बदले उसे कहा जाए 'नाच न आये आंगन टेढ़ा'तो इससे उसकी अज्ञानता पर भी टिप्पणी हो जाती है और सुनने वाले को अपमान का अनुभव नहीं होता है। त्रिभुवन पाण्डेय का कथन है-'व्यंग्य मनुष्य के भीतर पाई जाने वाली स्वाभाविक प्रवृत्ति है। वह जिस सहज भाव से प्रेम करता है, उसी सहज भाव से घृणा भी करता है।'[1]

हास्य औषधी की तरह है जिससे संपूर्ण निराशा अदृश्य हो जाती है। विपरीत परिस्थितियों में हसना मनुष्य का एक ऐसा प्रतिशोधी गुण है जिससे उसमें जीवन के दुखों या परिस्थितियों से संघर्ष करने की क्षमता उत्पन्न होती है ।वास्तविकता तो यह है कि जीवन के आस्वादन के लिए हास्य अत्यंत सरलता ,सहजता और सहानुभूति की धारा प्रवाहित होती है। जीवन की जटिलताओं में उलझे मानव मस्तिष्क को हास्य ही शक्ति और शीतलता प्रदान करता है ।हास्य प्रकृति की देन है। जिसका उद्भव मनुष्य के उल्लास की सूचना देने के लिए स्वतः होता है। जैसे-जैसे मनुष्य का विकास होता गया सभ्यता और संस्कृति भी बदलती गई। इसके साथ ही हास्य का स्वरूप भी बदलता गया है। जो समाज कभी शारिरीक विषमताओं और आडंबर पर हंसता था, वह आज विसंगतियों पर हंसता है जो ज्यादा सूक्ष्म और जीवन को प्रभावित करने वाले तत्व हैं ।जैसे-जैसे समाज में विकृति का स्वरूप सघन होता गया वैसे-वैसे हास्य का स्थान व्यंग्य लेता गया।

व्यंग्य का अखिल भारतीय परिदृश्य जितना समृद्ध है उसमें सभी प्रादेशिक भाषाओं का अपना-अपना स्थान है। मराठी में आज हास्य व्यंग्य लेखकों की कोई कमी नहीं है। गुजराती और बंगाली में भी हास्य व्यंग्य के रचनाकार बहुत लोकप्रिय है। हास्य-व्यंग्य का यह विकास समकालीन सामाजिक विसंगतियों की देन है। यदि तुलनात्मक रूप से देखें तो छत्तीसगढ़ भी व्यंग्य लेखन में पीछे नहीं है। छत्तीसगढ़ के व्यंग्यकारों की अनेक ऐसी कृतियां प्रकाशित हो चुकी है जो अखिल भारतीय व्यंग्य साहित्य के समकक्ष

हैं। इन व्यंग्यकारों की रचना में भी वही विविधता और प्रयोग धर्मिता दिखलाई पड़ती है जो किसी भी विधा को निरंतर नवीन बनाए रखने के लिए आवश्यक है। त्रिभुवन पाण्डेय, प्रभाकर चौबे ,लतीफ घोंघी,विनोद शंकर शुक्ल जैसे व्यंग्य रचनाकारों की कृतियों में व्यंग्य की बहुआयामी विविधता दिखलाई पड़ती है ।ये विगत तीन-चार दशकों से निरंतर लिखते हुए भी वे कहीं रूढ़ी से बंधे दिखलाई नहीं पड़ते। इन सभी रचनाकारों की रचना प्रक्रिया के अवलोकन से अनुभव होता है कि इनमें भावी सामाजिक विसंगतियों के प्रति भी एक सतत् जागरूक दृष्टि है। हिंदी साहित्य के समालोचक भले ही हास्य-व्यंग्य को 'हाशिए' में रखने का प्रयास करें लेकिन अपनी प्रासंगिकता, अपनी क्षमता और अपनी लोकप्रियता के कारण व्यंग्य सदैव साहित्य का एक अभिन्न अंग बना रहेगा। व्यंग्य के बगैर किसी श्रेष्ठ साहित्य की कल्पना नहीं की जा सकती क्योंकि भाषा का सबसे श्रेष्ठ अर्थशक्ति का उद्घाटन व्यंग्य में ही होता है। व्यंग्य किसी संस्था, समाज, व्यक्ति तथा सामाजिक रूढ़िगत दुर्बलताओं को उद्घाटित कर हमारे सामने प्रस्तुत कर देता है। सच्चा व्यंग्य जीवन की समीक्षा होता है। वह मनुष्य को सोचने के लिए बाध्य करता है ।चेतना में हलचल पैदा करता है और जीवन में व्याप्त मिथ्याचार, पाखंड ,असामंजस्य और अन्याय से लड़ने की शक्ति देता है आज की अधिकांश समस्या सतही राजनीतिक दृष्टि की ही उपज है। समूचे देश की राजनीति ,सिंहासन के चारों ओर चक्कर काट रही है ।ऐसी स्थिति में व्यंग्यकार ही राजनीतिक विसंगतियों की निर्ममता का पर्दाफाश कर सकते हैं। पौराणिक और ऐतिहासिक पात्रों को लेकर व्यंग्य लिखने का काम पूर्व से प्रचलित रहा है। इस तरह के पात्रों के आसपास कथानक सृजित करने से पाठक कथा से शीघ्र जुड़ जाते हैं और रचना के साधारणीकरण की प्रक्रिया सरल हो जाती है। 'भगवान विष्णु की भारत यात्रा' त्रिभुवन पाण्डेय की एक प्रसिद्ध उपन्यास है जिसमें भारतीय जीवन के राजनीतिक, सामाजिक, पारिवारिक, धार्मिक, फिल्म, मिडिया और उच्च, निम्न, मध्यम वर्ग वीआईपी कल्चर आदि से जुड़े प्रसंगों के ताने-बाने में व्यंग्य बुना गया है। जिसमें आम आदमी की समस्या से भगवान विष्णु जूझते हैं जिसका पृथ्वी पर आगमन विशेष घटनाक्रम के वशीभूत हुआ है।इस उपन्यास में पौराणिक एवं ऐतिहासिक पात्रों का आश्रय लेकर व्यंग्य रचना किया गया है। जिसमें सामाजिक और राजनैतिक विषमता से स्वयं भगवान विष्णु का जूझना और थकना, आम आदमी की समस्या और कठिनाईयों की गम्भीरता को रेखांकित करते हुए करारा कटाक्ष किया गया है कि जब शोषण, अन्याय और अपमान को राजनीतिक समर्थन और सामाजिक सहमति मिल जाती है तो यह अमानवीय व्यवहार समाज में सहज स्वीकार्य विचार में परिवर्तित हो जाता है यानी शोषक और शोषित दोनों में से किसी को इस अन्याय पर कोई आपत्ती नही होती। तब ऐसी स्थिति में भगवान भी बेबस हो जाते हैं-'सेठ स्वरूपानंद पुलिस वालों की कार्यप्रणाली से अच्छी तरह परिचित थे। बिना दान दक्षिणा के कोई कार्य करना पुलिस संहिता के विरुद्ध था। उन्होंने तुरंत मुनीम को इशारा किया ।मुनीम ने तुरंत बंद लिफाफा इंस्पेक्टर की ओर बढ़ाया। लिफाफे का जादुई असर देखने लायक था। इंस्पेक्टर का खुरदरा सूखा चेहरा पसीज कर मुलायम हो गया। उसकी तनी हुई नुकीली मूछें क्रमशः शिथिल होकर झुक गई। ऐसा लगा जैसे उसकी मूछों ने सेठ जी को धन्यवाद दिया हो।'[2] व्यंग्य की दृष्टि से उपरोक्त कथन समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार की सहज सामाजिक स्वीकृति को प्रदर्शित करता है ।यह आज आम जनता के साथ होने वाली साधारण सी घटना है,पर इस पर जब व्यंग्यकार की पैनी नजर पड़ती है तो यह जनमानस की पीड़ा समाज के जिम्मेदारों को भी कुम्भकर्णी निद्रा से जागने पर मजबूर कर देता है। त्रिभुवन का लेखन राजनीतिक धुर्ततता, सामाजिक अंधविश्वास, धार्मिक पाखंड, भेदभाव, भ्रष्टाचार आदि पर केवल करारा फटकार नहीं थी, बल्कि उनका लेखन जनचेतना एवं जनशिक्षा के लिए था। उनकी हमेशा कोशिश रहती थी कि जनता के मस्तिष्क की खिड़कियां खुलें और वे विचारशील बने।

त्रिभुवन पाण्डेय ने अपनी व्यंग्य में वर्तमान राजनीतिक एवं सामाजिक स्थिति को आड़े हाथों लिया है। उनका यह कथन वर्तमान राजनीति का विद्रूप चेहरा प्रस्तुत करती है-'यह भी निश्चित है कि राजनीति के निर्मम शिकंजे में छटपटाता हुआ जीवन उपेक्षा का पात्र नहीं हो सकता। राजनीति ने आज जितने स्तरों पर व्यक्ति के जीवन को प्रभावित किया है वह पूर्व की अपेक्षा कहीं ज्यादा चिंताजनक है। राजनीति आज विशुद्ध व्यवसाय का रूप लेती जा रही है। सिद्धांतों और योजनाओं की बात केवल सामान्य जन को आकर्षित करने का आसान नुस्खा है।'[3] यहां उन्होंने राजनीति के वर्तमान स्वरूप को स्पष्ट करते हुए समाज को जागृत करने का प्रयास किया है। व्यंग्य की भाषा सबसे ज्यादा आम आदमी की भाषा होती है। इस तथ्य पर त्रिभुवन पाण्डेय का पूर्ण विश्वास था और वह अपनी समस्त रचनाएं आम लोगों की समस्याओं पर केंद्रित कर एवं समाज में व्याप्त असमानता को अभिव्यक्त करने की दृष्टि से लिखते रहे हैं। ताकि उनके रचना कर्म के अभीष्ट उद्देश्य की पूर्ति हो सके कि- भारत एक लोकतंत्र के रूप में और अधिक मजबूत और शक्तिशाली बनें तथा अंतिम जन को योजनाओं का लाभ पहले प्राप्त हो सकें।

त्रिभुवन वर्तमान में भी अपने रचना कर्म से समाज को दिशा देते दिखाई देते हैं। जनता की आंखों में अशिक्षा, अंधविश्वास, जातिवाद,धर्मांधता, साम्प्रदायिकता आदि की पट्टी पड़ी रहें इसकी तमाम कोशिशें जारी हैं इसके बावजूद त्रिभुवन के रचना कर्म से गुजरते हुए पाठक वह नहीं रह जाता जो पहले था-'बड़ा प्यारा बच्चा है, अकेला है एक या दो ......अकेला है ,वैसे भी ज्यादा बच्चे राष्ट्र के लिए अहितकर हैं, पारिवारिक जीवन की मधुरता के लिए ,जनसंख्या के संतुलन के लिए एक-दो ही उचित हैं। श्रीधर ने मुस्कुराते हुए कहा।'[4] त्रिभुवन पाण्डेय जी मूलतःव्यंग्यकार थे। व्यंग्यकार सदैव पीड़ितों और शोषितों का पक्षधर होता है ।अन्याय का प्रतिरोध उसका मूल स्वर होता है। वह व्यंग्य के जरिए किसी कला,मूल्य या जीवन दर्शन की खोज नहीं करते हैं। बल्कि वह 'दुष्ट' तत्वों की खोज करते है। जीवन विरोधी व्यवस्था की पड़ताल करते है, और बेबाकी के साथ उसके खिलाफ लिखते है,त्रिभुवन इसके अपवाद नहीं थे। इसका स्पष्ट प्रमाण यह है कि आम जनमानस तक अपनी व्यंग्य पहुंचाने के लिए आकाशवाणी के लिए भी लिखना प्रारंभ किये। उनकी व्यंग्य कविता वार्ता का नियमित प्रसारण होता रहा। आकाशवाणी की सूची में त्रिभुवन पाण्डेय का नाम महत्वपूर्ण लेखकों में सम्मिलित रहा है ।आकाशवाणी के लिए लिखना सहज काम नहीं था। आकाशवाणी का श्रोता समूह सड़क से ड्राइंग रूम तक सभी जगह मौजूद होते है। ऐसी रचना लिखना जो एक साथ विभिन्न आयु, रूचिऔर वर्गों के श्रोताओं को पसंद हो, आसान काम नहीं था। आकाशवाणी के माध्यम से अपनी व्यंग्य को आमजन तक पहुंचाने का चुनौतीपूर्ण कार्य वे सफलतापूर्वक किए। त्रिभुवन की सभी व्यंग्य रचना 'भगवान विष्णु की भारत यात्रा', 'पंपापुर की कथा','झूठ और सच','पंछी मत हंसो' एवं 'ब्यूटी पार्लर में भालू' का मूल स्वर समाज में व्याप्त असमानताओं एवं अन्याय का प्रतिरोध कर आमजन जागृति का संचार करना ही था।उनका उपन्यास 'झूठ जैसा सच' भी समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार पर कुठाराघात करता है। जिसमें कथा के नायक की जब मृत्यु होती है तो उसे यमदूत यमलोक ले जा रहे होते हैं तब कथा का नायक कहते है-'यमलोक प्रस्थान करते हुए रास्ते में कथा नायक यमदूतों से पूछता है कि उन्हें यमलोक

आने जाने का कितना यात्रा भत्ता दिया जाता है। यात्रा–भत्ता का नाम सुनकर यमदूतों के चेहरे पर निराशा व्याप्त हो जाती है। उन्हें काफी कम यात्रा भत्ता दिया जाता था। भत्ता का 30 प्रतिशत यमलोक के क्लर्क और यमराज मिलकर हड़प कर लेते थे। कथा नायक उन्हें आंदोलन करने का सुझाव देता है जबकि जवाब में यमदूत कहते हैं कि उससे कोई फायदा नहीं होगा क्योंकि जो भी जीतेगा वह यमराज ही होगा।'[5]

इस तरह उपन्यास का नायक वर्तमान समाज में व्याप्त घूसखोरी और भ्रष्टाचार पर कटाक्ष करते है। हर लोक में भ्रष्टाचार नामक बीमारी महामारी की तरह भयानक रूप ले चुका है एक अकेला कोई नायक इससे नहीं जीत सकता है। आमजन के प्रति करूणा की गहराई त्रिभुवन के साहित्य को व्यापकता प्रदान करती है। एक पीड़ित,शोषित जन का दर्द उस व्यक्ति विशेष का दर्द न होकर उस दर्द से गुजरने वाले सभी व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करने लगता है। वह पिडित व्यक्ति एक संकेत या प्रतीक बन जाता है – 'दिमाग तुम्हारा नहीं लोगों का खराब है,लेकिन यहां होता उल्टा है, जिस आदमी का दिमाग सही होता है उसे गलत दिमाग वाले मेंटल हॉस्पिटल या पागलखाने में डलवा देते हैं। यहां परेशानी बददिमाग वालों की नहीं, मुसीबत उनकी है जिनका दिमाग ठीक और सही है।'[6] त्रिभुवन का व्यंग्य आज भी प्रासंगिक हैं। इसका उजाला प्रमाण यह है कि जिन सवालों को उन्होंने उठाया है वे देश के व्यापक जनता के हित के सवाल थे। आज इक्कीसवीं सदी में लूट, जमाखोरी, मुनाफाखोरी, तस्करी,भ्रष्टाचार, पाखंड, जातिवाद, मूल्यहीनता, साम्प्रदायिकता.. आदि जैसे न जाने कितने सवाल है जो उनकी नाटक, कहानी, उपन्यास, गीत, कविताओं,लेखों, स्तंम्भों में दशकों पहले उठाएं गए थे।ये सवाल नहीं बल्कि वो बीमारी है जो भारतीय लोकतंत्र की जड़ों को कमजोर कर रहे हैं। इसी बीमारी को जड़ से खत्म करने में साहित्यकार त्रिभुवन आजीवन संघर्षरत रहे। व्यक्तिगत रूचि और द्वेष के आधार पर कभी भी रचना कर्म नहीं किया बल्कि समग्र रचना कर्म का उद्देश्य एक बेहतरीन दुनिया का निर्माण था। त्रिभुवन के रचना कर्म में अनेक स्थलों पर व्यंग्य का जो रूप व्यक्त हुआ है वे आज समाज में वास्तविक घटनाओं के रूप में हमारे सामने आ रहे है। इस तरह कई स्थलों पर त्रिभुवन के भविष्य दृष्टा रूपों का दर्शन होता है–'आदेश सुनकर पंडित के होश हवास गुम हो गए, जिन रुपयों की खातिर उसने यह सब मुसीबतें उठाई, उनका तो इंस्पेक्टर ने जिक्र तक नहीं किया ।साहस करके उसने कहा इंस्पेक्टर साहब वह इनाम की राशि जिसका अखबार में जिक्र किया है, कहां है?'[7] व्यंग्य का उद्देश्य ही एक सुंदर, स्वस्थ और समृद्ध समाज की रचना करना है। इसलिए जहां विसंगति होगी। व्यंग्य वहीं मिलेगा।उस पल की परिस्थितियां व्यंग्य की रचना करती हैं।' त्रिभुवन का विषय क्षेत्र ज्यादातर रचनाकारों की तरह राजनीति, महंगाई, बेरोजगारी या आतंकवाद की सीमा में नहीं है। उनकी नज़र राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के अनेक अनछुए प्रसंगों पर भी रहा है। वे शेयर मार्केट, क्रिकेट, फुटबॉल, ओलंपिक, वृक्षारोपण ,प्रदूषण जैसे क्षेत्रों पर भी व्यंग्य दृष्टि रखते थे। वे अपनी व्यंग्य में विकासशील देश की पतली हालात और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का भी पर्दाफाश करते हैं।'[8] त्रिभुवन उस दौर के रचनाकार हैं जब साहित्य का आधुनिक काल इस अंचल में अपने मूल्यों और मान्यताओं की स्थापना के लिए संघर्षरत था। साहित्य के परंपरागत और पांडित्य पूर्ण लेखन से हटकर त्रिभुवन ने व्यवहारिक यथार्थ के सामाजिक और राजनीतिक धरातल पर अपनी रचनाओं में सीधे–सीधे वर्तमान से संवाद किए हैं। जिससे आज भी उनकी रचना कालजयी बन पड़ा है।

छत्तीसगढ़ के वे ऐसे रचनाकार हैं जो चार दशक तक व्यंग्य लेखन में निरंतर प्रासंगिक, पठनीय और नवीनता बनाए हुए थे। जिनके व्यंग्य में सामाजिक एवं राजनीतिक विषमताओं का निचोड़ पाठक वर्ग को यथार्थ का ज्ञान कराने में और व्यंग्य से आनंदित करने में आज भी सक्षम हैं। त्रिभुवन पांडेय किसी एक क्षेत्र तक सीमित रहने वाले लेखक नहीं थे। वे एक साथ अनेक क्षेत्रों में कार्यशील रहने में अभ्यस्त थे। यह उसके व्यक्तित्व का बहुआयामी पक्ष था एक ट्रैक नहीं, मल्टी ट्रैक। एक पाव घर में, दूसरा कॉलेज में,तीसरा किसी पत्रिका या आकाशवाणी भवन में, चौथा टीवी के दफ्तर में पांचवां यूनिवर्सिटी में छठा अपने परम मित्रों के बीच, इन सबको इतनी सहजता से साधते थे कि कुछ भी न छूटे और सृजनात्मकता भी बची रहे।यह सब दो पग से तीन लोक को मापने वाले 'त्रिभुवन' से ही संभव था।

संदर्भ सूची :–

1. पाण्डेय त्रिभुवन,'हमर छत्तीसगढ़' 5 श्री प्रकाशन दुर्ग,अंक पांचवां,2010,पृष्ठ संख्या– 22
2. पांडेय त्रिभुवन 'भगवान विष्णु की भारत यात्रा' विश्व पॉकेट बुक्स प्रकाशन नई दिल्ली,प्रथम संस्करण 2010, पृष्ठ– 58
3. पांडेय त्रिभुवन, 'भगवान विष्णु की भारत यात्रा' विश्व पॉकेट बुक्स प्रकाशन नई दिल्ली,प्रथम संस्करण 2010 पृष्ठ – 115
4. पांडेय त्रिभुवन, 'भगवान विष्णु की भारत यात्रा' विश्व पॉकेट बुक्स प्रकाशन नई दिल्ली,प्रथम संस्करण 2010पृष्ठ – 109
5. पांडेय त्रिभुवन, 'भगवान विष्णु की भारत यात्रा' विश्व पॉकेट बुक्स प्रकाशन नई दिल्ली,प्रथम संस्करण 2010पृष्ठ – 12
6. पांडेय त्रिभुवन, 'भगवान विष्णु की भारत यात्रा' विश्व पॉकेट बुक्स प्रकाशन नई दिल्ली,प्रथम संस्करण 2010पृष्ठ – 52
7. 'पांडेय त्रिभुवन', भगवान विष्णु की भारत यात्रा' विश्व पॉकेट बुक्स प्रकाशन नई दिल्ली,प्रथम संस्करण 2010 पृष्ठ– 56
8. ध्रुव,डोमन लाल, 'हमर छत्तीसगढ' श्री प्रकाशन दुर्ग,अंक पांचवां,2010,पृष्ठ – 60

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025

MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

'अज्ञेय' निबंधकार : एक अध्ययन

जावेद खां पठान
डॉ. अनुकूल सोलंकी

1. शोधार्थी, हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.
2. शोध निर्देशक एवं सहायक प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, गुलाना, उज्जैन, मप्र.

सारांश:-हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग में जिन गद्य विधाओं का विकास हुआ हैं, उनमें मुख्यतः निबंध, जीवनी, संस्मरण, रेखाचित्र, व्यंग्य, रिपोतार्ज, डायरी, साक्षात्कार आदि तथ्याश्रित विधाएं बीसवीं शताब्दी की देन हैं। इन विधाओं के विकास में जिन लेखकों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है उनमें अज्ञेय का प्रमुख योगदान रहा हैं। निबंध लेखन की परंपरा में अज्ञेय एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में सामने आते हैं। हजारीप्रसाद द्विवेदी जी के बाद उनके निबंध लेखन में तर्कपूर्ण विचार धाराओं का प्रवाह दिखाई पडता हैं। लेखक ने बडे ही रागात्मक भाव से विषयों का प्रतिपादन किया है जो हमारे मन मस्तिष्क के पटल पर एक छाप छोड जाती हैं, और काफी देर तक हमें उन निबंधों में डूबें रहने हेतु बाध्य करती हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में निबंधकार के रूप में अज्ञेय के साहित्यिक अवदान पर विचार किया गया हैं।

शब्दकुंजी:-उन्मुक्त-स्वतंत्र, रंजन-डूबा हुआ, अन्वेषण-खोज, स्वच्छंद-मुक्त, जुगलबंदी-तालमेल, सृजन-निर्माण, तार्किक-तर्क संबंधी, अभिनव-नवीन, युग-समय, वृत्ति-स्वभाव।

भूमिका:-सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' का नाम लेते ही सर्वप्रथम हमारे मन मस्तिष्क में जो छवि उभरती हैं, वह मूलतः कवि की ही होती हैं। बहुत बाद में हम उन्हें एक निबंधकार के रूप में देखते हैं। निबंधकार के रूप में इन्हें बहुत ही एक सीमित वर्ग जानता हैं, अन्यथा हम उन्हें सदैव एक कवि, कहानीकार व उपन्यासकार के रूप में ही पढतें रहे हैं। बहुमुखी प्रतिभा के कलाकार 'अज्ञेय' का अनुभव संसार व्यापक हैं। इसे अभिव्यक्त करने के माध्यम भी बहु आयामी हैं। इसमें कोई संदेह नही हैं कि 'अज्ञेय' की साहित्यिक यात्रा निरंतर अपनी प्रगति की उॅचे सोपान का स्पर्श करती हैं। यदि उनके व्यक्तित्व एवं कलात्मक प्रतिभा की बात की जायें तों वें स्वभाव से विद्रोही थें और भाषा, साहित्य, व्यक्ति स्वाधीनता, कला तथा संस्कृति के संबंध में पारंपरिक रूढ़ियों, अंधविश्वास के प्रति 'नकार' उनकी रचना का प्रमुख अंग रहा हैं। उनका सृजन और चिंतन रचना कर्म के चरम उत्कर्ष को छूता रहा हैं। वह मानवीय व्यक्तित्व की स्वाधीनता के लिए, स्वाधीन चिंतन के लिए जीवन-भर संघर्ष करतें रहें। ऐसे संघर्षशील रचनाकार सच्चे अर्थो में समाज और संस्कृति के निर्माता होते हैं। 'अज्ञेय' के व्यक्तित्व एवं लेखन शैली की रामस्वरूप चतुर्वेदी जी ने सटीक व्याख्या की है -

हिन्दी साहित्य में पहली बार 'अज्ञेय' का व्यक्तित्व ऐसा मिलता हैं जो रचनाकार की वैसा ही उत्कृष्ट हैं जैसा की व्यवस्थापक। प्रायः समूचे नये साहित्य की व्यवस्था में केन्द्रीय व्यक्तित्व बने रहने पर भी 'अज्ञेय' की रचनाशीलता में कोई कमी नही आई हैं। यह एक विलक्षण स्थिति हैं। जहां व्यक्तित्व के दोनों पक्षो नें एक दूसरे को प्रखतर और समृद्धतर बनाया है। 'अज्ञेय' के लगभग सभी निबंध स्वाधीनता-प्रेम से अनुप्राणित हैं और यह स्वाधीनता केवल राजनीतिक सीमा में बंधी हुई नहीं हैं और न ही साहित्यिक सीमा से, बल्कि इसके आयाम इतने व्यापक है कि उसमें यथार्थ, संस्कृति, इतिहास और कला, पत्रकारिता और संपादन, दर्शन और धर्म जैसे विषय समा जाते हैं। इसका कारण बताते हुए 'अज्ञेय' कहते है कि ''प्रत्येक विषय एक-दूसरे से पारस्परिक रूप से जुड़ा होता हैं।'' किसी एक विषय की व्याख्या कर अन्य विषय को छोडना उनके लिए एक असमंजस की स्थिति पैदा करता हैं। 'अज्ञेय' के निबंधों को किसी भी सीमा रेखा व विभाजन रेखा में बांधना उनके निबंधो के प्रति न्याय संगत नही होगा। क्योंकि इनके निबंध अपने अंदर कई गुणो को समाहित किये हुए हैं। इस संदर्भ में आत्मनिष्ठ और वस्तुनिष्ठ दो भेद करकें 'अज्ञेय' के निबंधो की व्याख्या करना गलत हैं। क्योंकि उनके निबंध भाव-विचार, कला-कर्म की उन्मुक्तता का आकाश छूतें हैं। उनके एक साथ सौंदर्य, शोध और आनंद का प्रभाव हैं।

इन्होने कुछ निबंध 'वात्स्यायन' के नाम से कुछ निबंध 'कुट्टिचातन' के नाम से और कुछ निबंध 'अज्ञेय' के नाम से लिखे हैं। जिसकी अपनी एक अलग विशेषता हैं। 'अज्ञेय' के वैचारिक निबंधों या कह सकतें हैं आलोचनात्मक निबंधों में त्रिशंकु , स्त्रोत एवं सेतु , अद्यतन, युग संधियों पर, संवत्सर, धार और किनारें, केन्द्र और परिधि, आलवाल इत्यादि हैं। इन निबंध संग्रहो में साहित्य की विविध समस्याओं के साथ सामाजिक, सांस्कृतिक शिक्षा, विज्ञान, भाषा, आधुनिकता व परंपरा की समस्याओं से संबंधित गहन एवं गंभीर विचार विमर्श किया गया हैं। सृजनात्मक स्तर पर इन निबंधो में कल्पना का पुट अपेक्षाकृत कम हैं। निबंध बहुत ही सुगठित, तर्कपुष्ट, विवेचनों से संपृक्त हैं। निबंध श्रृंखलाबद्ध, तर्कपुष्ट, विवेचन के साथ धीरे-धीरे प्रवाह मान हुई हैं और वह भी बड़े ही संयत रूप से।

भारतीय संस्कृति, भारतीय परंपरा, भारतीय आधुनिकता, के साथ-साथ साहित्य-कला-संस्कृति, भाषा की मौलिक समस्याओं, चिंताओं, प्रश्नाकुलताओं से पाठकों का साक्षात्कार कराया हैं। परंपरा के महत्व को प्रतिपादित करतें हुए लेखक कहते हैं-''कोई भी कला वस्तु चाहें कितनी भी नई क्यों न हो ऐसी कोई वस्तु नहीं हैं तो आकास्मात अपने आप घटित हो गई हैं। वह ऐसी वस्तु हैं जो अपने आप में नही अपने पूर्ववर्ती तमाम कला वस्तुओं की परंपरा के साथ घटित हुई हैं। जितनी ही वह नई हैं, उतनी ही महत्वपूर्ण घटना कला वस्तुओं की परंपरा के साथ घटित हुई हैं। उतना ही परंपरा के साथ उसका संबंध अन्वेषण करना प्रासंगिक हो गया हैं।'' इस प्रकार वे

परंपरा व अतीत का वर्तमान के साथ तारतम्य को दर्शाते हैं।

ललित निबंधों में 'कहॉ हैं द्वारका', 'सब रंग कुछ राग', 'लिखी कागद कोरे', 'जोग लिखी', 'संवत्सर' निबंध संग्रह प्रमुख रहे हैं। ये निबंध निजीपन, भावों की प्रधानता, मन की उन्मुक्त भटकन, व्यक्ति व्यंजकता, संस्मरणात्मक शैली, कल्पनात्मक उनमुक्त उडान, सृजनशीलता जैसे गुणों को समाहित किए हुए हैं, पर अंततः विषयों को ही प्रमुखता दी गई हैं। ये निबंध आत्मा के तल पर तने स्थित रहते हैं उतने ही विचारों में लीन। हजारीप्रसाद द्विवेदी के बाद अगर कोई ललित व व्यक्तिव्यंजक निबंध के पुरोधा रहे है तो वे 'अज्ञेय' हैं। उन्होंने अपने ललित निबंध में गीत-सदृश रागात्मकता, विषय-संगठन, स्वच्छंदता और विचार को भाव की जुगलबंदी से युक्त कर ललित शैली में प्रस्तुत किया हैं जो सांस्कृतिक बोध से जुडकर इसे विशिष्ट बना देती हैं।

इसमें निबंधकार को एक विषय में भाव व विचार के पंख लगाकर अनुभूति को सार्थक अभिव्यक्ति का स्वरूप देकर एक नये लालित्य लोक में विचरण करना होता हैं। इस उपक्रम उसे हर बार नया अनुभव और अनुभव में अभिनव आनंद की प्राप्ति होती हैं। इन सभी तत्वों को अज्ञेय के ललित निबंधो में देखा जा सकता हैं। 'कहॉं हैं द्वारका में' निबंध में लेखक लिखते हैं ''भाव तो वहाँ हैं पर रंजित रूप से प्रस्तुत किया गया हैं। और वह रंजन उन्हें झुठा या हल्का करने के लिए नहीं हैं बल्कि आकृष्ट करने के लिए हैं। रंगत के प्रति भी मूल्यवान धातु के प्रति भी जिसे रंजित किया हैं।'' इसके अतिरिक्त रचनाकार ने आत्मपरक निबंध 'आत्मनेपद' लिखा जिसमें उन्होनें स्वयं अपने और कृतियों के संबंध में स्पष्टीकरण दिया हैं जो तार्किक आधार पर हैं। आत्मनेपद के अधिकांश निबंध इसी कोटि में आते हैं। अर्थात इस निबंध संग्रह में लेखक ने अपनी सृजन प्रक्रिया को काव्य, आख्यान, आलोचना, स्थिति और मन के संदर्भ में स्पष्ट किया हैं। इस प्रकार ''विचार एवं चिंतन प्रधान तथा आत्मव्यंजक एवं ललित दोनों ही प्रकार के निबंधों को मिला देने पर अज्ञेय का सजग अनुभव समृद्ध एवं संवेदनशील व्यक्तित्व उभर कर सामने आता हैं। इसमें संदेह नहीं हैं कि 'अज्ञेय' हिन्दी के एक सशक्त निबंधकार हैं। निबंध शिल्प को उन्होनें एक नया आयाम दिया हैं। उनके निबंध उनकी जिज्ञासा वृत्ति से सीधे जुड़े हैं। इस वृत्ति की चरम परिणति जीवन की सार्थकता की उपलब्धि में हुई हैं। उनके निबंध इस उपलब्धि के साक्षी हैं।''

निष्कर्ष:-कुल मिलाकर अज्ञेय के निबंधो में व्यक्तित्व की खोज, अस्मिता की तलाश, प्रयोग-प्रगति, परम्परा-आधुनिकता, बौद्धिकता, आत्म-सजगता, रागात्मक संबंधो में बदलाव, रूढ़ि और मौलिकता, साहित्यकार का दायित्व, पश्चिम से खुला संवाद, भाषा-शिल्प की गहन चेतना, संस्कृति और सर्जनात्मकता आदि जैसे तमाम विषयों को लेखक ने किसी न किसी रूप में निबंधो के केन्द्र में लाया है। उन्होने नयी रचना-स्थिति की चुनौतियों पर अपेक कोणों से विचार किया हैं। वस्तुतः ''अज्ञेय उन सृजनशील लेखकों में हैं जिन्होंने साहित्यिक सृजनशीलता और रचनात्मक भाषा जैसे मुद्दों पर संवाद की इच्छा रखते हुए संस्कृति-संवाद जैसा माहौल बनाने के लिए प्रयत्न किया है और बहुत कुछ एक विचारक की तरह अपने भीतर और बाहर की संकट को परिभाषित करने की कोशिश भी की हैं वह उन विचारकों में हैं जो वैयक्तिक स्वतंत्रता और कला स्वायत्ता का लगातार पक्ष लेते रहे हैं और उन रचनाकारों में है जो रचना में अद्वितीयता और सम्प्रेषण के द्वैत से जब-तब उलझते भी रहे हैं। चिंतन का सिलसिला बनाये रखने के लिए ऐसी अविच्छिन्न निष्ठा कम सर्जनात्मक लेखकों में पायी जाती हैं।''

सन्दर्भ सूची:-

1. अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या-रामस्वरूप चतुर्वेदी
2. जोग लिखी-अज्ञेय
3. आलोचना अज्ञेय की स्थिति-कृष्णदत्त पालीवाल
4. त्रिशंकु-अज्ञेय
5. कहाँ हैं द्वारका-अज्ञेय
6. हिन्दी का गद्य साहित्य-रामचन्द्र तिवारी
7. आलोचना आलेख-डॉ. परमानंद श्रीवास्तव

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

एकान्त श्रीवास्तव की कविताओं में नारी-चेतना

दीपक तिवारी

शोधार्थी, पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़

सारांश:-एकान्त श्रीवास्तव की कविताओं में नारी-विमर्श के विविध स्वर देखनें को मिलते हैं;जिनका सीधा संबंध आम जन से है। यही कारण है कि इनकी कविताएँ अधिक संप्रेषणीय भी है। अपनी विशिष्ट शैली के कारण समकालीन हिंदी कविता में एकान्त श्रीवास्तव की विशेष पहचान है। कविता का शिल्प उनकी अपनी चित्रात्मकता से और भी सुंदर बन पड़ा है। एकान्त की कविताओ में स्त्री जीवन के प्रति न सिर्फ सहानुभूति है बल्कि शोषण और अत्याचार के प्रति गहरा विरोध भी है। कवि नें ग्रामीण और शहरी स्त्रियों के जीवन को करीब से जिया है,इसलिए उनकी कविताओं का बिम्ब बनावटी न होकर पूर्णतः मौलिक है। कवि की कविता स्त्री जीवन के दुःख और समाज में उनकी वर्तमान स्थिति के साथ हमेशा खड़ी दिखाई देती है।

बीज शब्द:- लोकधर्मिता; यथार्थ; संवेदना; श्रम; प्रगतिशीलता; समकालीनता; ग्रामीण - संस्कृति; ममत्व; स्त्री - जीवन; स्वत्व; परंपरा; भौतिकवादी जटिलता।

हिंदी साहित्य में नारी-विमर्श का स्वरूप विभिन्न रचनाओं में सामने आता है। समकालीन हिंदी कविता भी नारी-विमर्श से अछूती नहीं रही। एकान्त श्रीवास्तव मूलतः लोकधर्मी कवि के रूप में हमारे सामनें आते हैं, जिनका लोक अपने सीमित संदर्भों में होते हुए भी अपने विस्तार में प्रत्येक सहदय तक सीधे पहुँचता है। कविता की प्रासंगिकता पर प्रकाश डालते हुए एकान्त श्रीवास्तव लिखते हैं-

''कविता के पाँव यथार्थ, इतिहास व परंपरा की कठोर भूमि पर चाहे टिकें हों मगर उसके हाथों नें कल फूलने वाली डंगालियों को भी थाम रखा है। दरअसल कविता जो है और जो होना चाहिए के बीच, यथार्थ और स्वप्न के बीच एक पुल का काम करती है।''[1]

ऐसे में नारी- विमर्श भी कविता के इस सार्वभौमिक यथार्थ से असंपृक्त नहीं है। एकान्त श्रीवास्तव की कविता का नारी-पक्ष संवेदना के स्तर पर भी मजबूत है। नारी-विमर्श के लिए जिस कवि-मन की आवश्यकता होती है,वह संवेदनशील मन एकान्त श्रीवास्तव की रचनाधर्मिता के मूल में है। कवि की रचनाशीलता पर आलोचक स्नेहा सिंह लिखतीं हैं-

''कवि की स्त्री-चेतना जितनी प्रबल है, उतनी ही मर्मस्पर्शी। परंपरा से ही स्त्री को 'प्रकृति' कहा गया है। प्रकृति में 'स्त्री' और स्त्री में 'प्रकृति' को देखना हमारी आदिम संस्कृति रही है। हमने इसे महिमामंडित भी किया है। किन्तु एकांत की संवेदनशील दृष्टि प्रकृति एवं स्त्री- सत्ता की पृथकता को महसूस करती है। पूंजीवादी सभ्यता ने जिस बाजार को विकसित किया है उसमें 'स्त्री' भी एक उत्पाद ही है। बल्कि यों कहें कि 'स्त्री' इस बाजार का केन्द्रीय आकर्षण है तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।''[2]

एकान्त श्रीवास्तव की कविताओं में नारी कभी माँ बनकर अपनी ममता से कविता को सींचती है, तो कभी लोक के आलोक में श्रम का गीत गाते-सीला बीनते हुए अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराती है। कवि के सम्पूर्ण रचनाकर्म में मनुष्य जीवन के अनेक स्वर दिखाई देते हैं। इन सभी स्वरों में सबसे महत्वपूर्ण स्वर 'श्रम' का है। बेकारी और बेरोजगारी से जूझते समाज को अपनी कर्मठता याद दिलाने के लिए कवि ने काव्यात्मक प्रयास किया है, जिसमे जीवन - यापन के लिए पलायन करते मजदूरों के प्रति संवेदना मर्मस्पर्शी ढंग से सामनें आई है -

''चूड़ियाँ
माँ के हाथ की
बजती हैं सुबह-शाम
इनमें हैं
परदेस गए पिता की
स्मृतियों की खनक
जो बनाए रखती है
घर को घर''[3]

एकान्त श्रीवास्तव नें स्त्री-जीवन के मर्मस्पर्शी पक्षों को गहराई से अनुभव किया है। यही कारण है कि उनकी कविताओं में जगह-जगह नारी-जीवन की विसंगतियाँ भी खुलकर सामनें आतीं हैं। शिक्षित होते समाज में आज भी स्त्रियों के प्रति गहरा भेद-भाव है। पुरुषों की तुलना नें कम पारिश्रमिक देना.स्त्रियों को अकर्मण्य समझना इस पिछड़े विचार के उदाहरण हैं। भौतिकवादी जटिलता के युग में कविता का स्वर भी काफी हद तक अपनी सरलता खोता जा रहा है। एकान्त श्रीवास्तव की कविता में उभरकर आता श्रमशील नारी का जीवन अपनी ऊष्मा से इस सरलता को बनाए रखने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यहाँ नारी का जीवन सिर्फ कोमल भावनाओ का विस्तार ही नहीं है;बल्कि अपने अस्तित्व को बनाए रखनें के लिए किए गए प्रयत्नों का सशक्त उदाहरण भी है -

''उन तीन रुपयों को वे बाँट लेती हैं आपस में
तो उन्हें एक-एक रुपया मिलता है
करेले की लताओं को ढूँढ़ने में
और उन्हें तोडकर बेचने में
उन्हें लगा है आधा दिन
तो यह एक रुपया
उनके आधे दिन का पारिश्रमिक है
मेरे आधे दिन के वेतन से

कितना कम
और उनके आधे दिन का श्रम
कितना ज्यादा मेरे आधे दिन के श्रम से''[4]

एकान्त श्रीवास्तव की कविता लोक से उपजी कविता है, जहाँ स्त्री स्वाभाविक रूप से कविता का विषय बन जातीं है। वास्तव में स्त्रियों के बिना समाज की कल्पना कठिन है। वर्तमान में समाज में नारी-जीवन और भी कठिन हो गया है। नारियों की विवशता और मेहनतकश जीवन की अनेक विसंगतियों की अभिव्यक्ति से इनकी कविता जीवंत बन पड़ी है। इनकी कविता में संसार में व्याप्त चोरी, झूठ, लूट इत्यादि दुर्भावनाओं से समाज की स्त्रियाँ जूझती हुई दिखतीं हैं-

''वह गाँव का स्टेशन था
वहाँ केंवल पैसेंजर रुकती थी
वहीं मुझे वे दिखाई दीं
आम बेचने वाली स्त्रियाँ
- - - - - - - -
बस दो मिनट में चलने लगती है ट्रेन
कुछ शरारती और धूर्त मुसाफिर
पैसे देनें का उपक्रम करते
जानबूझकर देर करते
- - - - - - - -
अंत में हारकर कहतीं- बाबू, कम से कम
टोकनी ही फेंक दो,खिड़की से बाहर''[5]

बदलते समाज में मनुष्य की विचारधारा स्त्रियों के प्रति बदली जरूर है,परंतु विचारों का परिवर्तन औसत से कुछ कम ही है। आज के समय में भी स्त्रियों को शिक्षा,सामाजिकता,राजनीति से वंचित रखा जा रहा है। अतः आज भी स्त्रियों के प्रति लोगों का दृष्टिकोण पूर्णतः सकारात्मक नहीं कहा जा सकता। ऐसे में कवि इन कुप्रथाओं का प्रतिरोध करता है। संवेदना के अलावा,स्त्रियों की वास्तविक स्थिति के साथ खड़ा होने को कवि अपना धर्म मानते हैं। वे लिखते हैं-

''फल, फल थे
उन्हें बिकना ही था
किसी न किसी बाजार में
लड़की मगर लडकी थी
हाड, मांस की
और जीवित
उसकी इच्छाएँ थीं
कि उसे स्कूल जाना था
कि उसकी डोली उठनी थी
लड़की आम नहीं थी!''[6]

विश्व आधुनिकता की ओर मुग्ध-दृष्टि से देख रहा है। विकसित होता समाज अंततः किन अर्थों में विकसित हो रहा है, यह प्रश्न एकान्त श्रीवास्तव की कविताओं का मूल प्रश्न है। मरती हुई मानवता समाज के सामने एक संकट है। स्त्री का जीवन समर्पण का दूसरा नाम है,जहाँ बढ़ती उम्र और उनका नियमित श्रम पृथक नहीं है। गरीबी, भूखमरी से जूझती स्त्रियाँ विश्व की प्रगतिशीलता के सामने प्रश्नचिन्ह है। कवि ने लिखा है-

''जानें फूलों के किस गाँव से चलकर
वह आती है अपनी टोकरी में
डगर के दूधिया फूल लिए
उम्र की आखिरी थरथराती भोर में
एक ऐसे अरण्य से जिसका वसंत
बीत चुका है
फूल चुनकर मुँह अँधेरे, वह आती है!''

भारतीय समाज की यह मान्यता है कि स्त्री पुरुष के बिना अधूरी है। महिलाओं की अपेक्षाकृत वर्तमान में स्त्रियों के शोषण का महत्वपूर्ण कारण पुरुष बनते हुए दिख रहे हैं। एकान्त श्रीवास्तव इन शोषित स्त्रियों के पक्षधर कवि हैं। कवि अपनी रचनाधर्मिता के माध्यम से समाज को स्त्रियों के प्रति जागरूक होने का सन्देश देते हैं। उनकी कविता विधवा, शोषित, पीड़ित, वृद्ध स्त्रियों की लाठी है, जिनका स्वर समाज की सुप्त-चेतना को जगाने का शंखनाद है। समाज अपने मानव-मूल्यों के बिना कुछ भी नहीं है। स्त्रियों के शोषण के प्रतिरोध में कवि लिखते हैं -

''मेरी और मेरी कविता की सदिच्छा
बस इतनी है
कि उमा को कहीं छोटा-मोटा काम मिल जाए
और थोड़े से हरे पते आ जाएँ
एक झुलसी हुई टहनी में
सूखी नदी में उतर आए
नए जल की धार
तालाक के बाद
अधिक स्वतंत्र हो जाता पुरुष
दूसरी उमा की खोज के लिए
मगर उमाएँ हो जाती हैं अधिक असहाय
कि कोई रुद्र अब उन्हें स्वीकार नहीं करेगा !''[8]

देश के महापुरुष समाज के जिस अंतिम व्यक्ति के विकास का स्वप्न देखते हैं,उसी अंतिम व्यक्ति की पीड़ा एकान्त श्रीवास्तव की कविता में परिलक्षित होती है । समाज में व्याप्त पूंजीवादी व्यवस्था समानता की विरोधी है। एक तरफ समाज का गरीब वर्ग अति आवश्यक संसाधनों के बिना जीवन-निर्वाह के लिए विवश है वहीं दूसरी ओर समाज का पूंजीपति वर्ग इन संसाधनों का दुरुपयोग करके निम्न वर्ग को इससे वंचित रखना चाहता है। एकान्त श्रीवास्तव इस शोषित वर्ग के समर्थन में लिखते हैं-

''नहाकर आधी लपेटकर गीली सा?ी
आधी को सुखाती
ये स्त्रियाँ हैं भारतवर्ष की
और ये किसकी आलमारियों में
ठसी पड़ीं हैं
दस हजार साढ़ियाँ''[9]

एकान्त श्रीवास्तव की कविता में स्त्रियों के अस्तित्व की स्वतंत्रता केंद्र में दिखाई देती है। गाँव हो या नगर कवि के लिए स्त्री का अपना अस्तित्व सर्वोपरि है। छायावाद के आधार स्तंभों में से एक महीयसी महादेवी वर्मा नें लिखा है -

''हमें न किसी पर जय चाहिए, न किसी से पराजय, न किसी पर प्रभुता चाहिए, न किसी पर प्रभुत्व। केवल अपना वह स्थान, वह स्वत्व चाहिए, जिसका पुरुषों के निकट कोई उपयोग नहीं है, परन्तु जिसके बिना हम समाज का उपयोगी अंग नहीं बन सकेंगी। हमारी जाग्रत और साधन संपन्न बहनें इस दिशा में विशेष महत्वपूर्ण कार्य कर सकेंगी, इसमें संदेह नहीं।''[10]

इसी स्वत्व को कविता के माध्यम से पोषित करनें का कार्य एकान्त श्रीवास्तव नें किया है। नारी अपनें आप में पूजित है, भारत की ज्ञान परंपरा में नारी का स्थान सर्वोपरि है। कहा भी गया है- ''यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते, रमन्ते तत्र देवता!'' समाज के नारी-विषयक दृष्टिकोण से कवि का दृष्टिकोण सर्वथा भिन्न है। स्त्रियों की कोमल भावना का स्पंदन उन्हें लिखनें को प्रेरित करता है। बहन,बेटी,माँ इत्यादि रिश्तों में भी कवि उस स्त्री को ढूँढ़ लेते हैं, जिनका जीवन ' स्व ' से बढ़कर ' पर ' तक जा पहुँचा है। करुणा से ओत-प्रोत भावनाएँ कविता के रूप में अभिव्यक्ति पाती हैं-

''बहनें घर भर में
सुगंध की तरह व्याप्त हैं
एक दिन उड़ जाएँगी
जानें किन पवन झकोरों के साथ
रह जाएगा तेज धूप में भी
हमारी कमीजों पर
उनके हाथों से कड़े फूल का
सबसे प्यारा रंग''[11]

निष्कर्ष:-एकान्त श्रीवास्तव समकालीन हिंदी कविता का एक महत्वपूर्ण नाम है। इनकी कविताओ में लोक का अव्यक्त आलोक दिखाई पड़ता है। इनकी रचनाओं के विषय की गंभीरता अपने आप में विशिष्ट होती है। सहज स्थितियों की प्रेरणा से कविता का सृजन करने में कवि सिद्धहस्त हैं। अपनी लोकधर्मिता के लिए एकान्त श्रीवास्तव हिंदी कविता के सशक्त हस्ताक्षर हैं। इनकी कविताओं में नारी-विमर्श के विविध स्वर देखनें को मिलते हैं, जिनका सीधा संबंध आम जन से है। यही कारण है कि इनकी कविता अधिक संप्रेषणीय भी है। अपनी विशिष्ट शैली के कारण एकान्त श्रीवास्तव की अपनी विशेष पहचान है। कविता का शिल्प उनकी अपनी चित्रात्मकता से और भी सुंदर बन पड़ा है। स्त्री जीवन के दु:ख और समाज में उनकी वर्तमान स्थिति के साथ कवि की कविता हमें साथ खड़ी दिखाई देती है। अत: यह कहा जा सकता है कि एकान्त श्रीवास्तव अपनी लोक-शैली के माध्यम से नारी-विमर्श को रेखांकित करने वाले एक सफल रचनाकार हैं।

संदर्भ सूची :-

1. श्रीवास्तव,एकान्त,कविता का आत्मपक्ष, प्रकाशन संस्थान,नयी दिल्ली,द्वितीय संस्करण 2010,पृष्ठ सं. 99.
2. सिंह स्नेहा.लमही (त्रैमासिक): संपा.ऋत्विक रॉय, जुलाई-सितंबर ,2023, लखनऊ,पृष्ठ सं.184.
3. श्रीवास्तव,एकान्त.अन्न हैं मेरे शब्द,सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन,नई दिल्ली,2013,पृष्ठ सं.-67.
4. श्रीवास्तव,एकान्त.धरती अधखिला फूल है,राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली,2022,पृष्ठ सं.- 29.
5. वही,पृष्ठ सं.- 55.
6. श्रीवास्तव,एकान्त.बीज से फूल तक, राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली,2003,पृष्ठ सं. 89-90.
7. वही,पृष्ठ सं.-39.
8. वही,पृष्ठ सं. -59.
9. श्रीवास्तव,एकान्त.नागकेसर का देश यह, प्रकाशन संस्थान,नई दिल्ली,द्वितीय संस्करण,2016,पृष्ठ सं. 40.
10. वर्मा महादेवी. श्रृंखला की कड़ियाँ, ,लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ सं. - 23-24 .
11. श्रीवास्तव,एकान्त.अन्न हैं मेरे शब्द,सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन,नई दिल्ली,2013,पृष्ठ सं.-76.

मुकुंद कौशल की ग़ज़लों में सामाजिक चेतना

नरोत्तम कुमार साहू
डॉ. यशवन्त कुमार साव

1. शोधार्थी, हिंदी, शासकीय दानवीर तुलाराम स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उतई
2. शोध निर्देशक एवं सहायक प्राध्यापक, स्व. मदनलाल शासकीय महाविद्यालय, अरमरीकला, जिला-बालोद

शोध सारांश :- हिन्दी साहित्य में ग़ज़ल को सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त हैद्य इसलिए यह अत्यंत लोकप्रिय काव्य-विधा है। यह उर्दू साहित्य से होने के कारण उसके कथ्य एवं शिल्प से प्रभावित है, किन्तु इसने अपने कथ्य-कौशल में निश्चय ही परिष्कार किया है। ग़ज़ल का इतिहास लगभग पंद्रह शतक पुराना है। इन पंद्रह शतकों में ग़ज़ल विधा के अर्थ तथा स्वरूप में आमूलचुल परिवर्तन हुआ है। हिन्दी तथा उर्दू में ग़ज़लों की रचना करके मुकुन्द कौशल ने समकालीन ग़ज़लकारों की अग्रिम पंक्ति में अपना स्थान बनाया। छत्तीसगढ़ी बोली को भाषा की जीवतंता और गरिमा प्रदान करने में जो पूरी पीढ़ी खप गई कौशल जी उसकी एक महत्वपूर्ण कड़ी है। कौशल जी ने छत्तीसगढ़ी भाषा में ग़ज़लों का जो जादू जगाया है वह निश्चय ही अद्वितीय है। आधुनिक छंद विधा ग़ज़ल का प्रयोग कर उन्होंने छत्तीसगढ़ी की अभिव्यक्ति क्षमता को प्रतिष्ठित करने के लिए क्रांतिकारी कदम उठाया है। उन्होंने मजदूर किसान और आम आदमी की मजबूरियों को एक जागरूक रचनाकार की हैसियत से अंकित किया है। उनके शब्दचित्र तथा कथित विकास की विषमताओं व वर्तमान लोकतंत्र को दर्शातें है जिन्हें सुन्दर ढंग से बिम्बों के सहारे व्यक्त किया है। उनकी रचनाकारिताओं में प्रतिबद्धता उन्हें यथार्थवादी काव्यधारा चिंतन से जोड़ता है उनकी रचनाकारिता प्रगतिवादी विचार आन्दोलन का हिस्सा है मात्र भाषिक संरचना नहीं, उनके गीतों की प्रमुख विशेषता ध्वन्यात्मक्ता है।

प्रस्तावना :- मुकुन्द कौशल ने अपने अथक प्रयासों से छत्तीसगढ़ी साहित्य में ग़ज़ल को न केवल स्थापित किये बल्कि निरंतर पुष्पित-पल्लवित किए हैं। कौशल जी ने गीत और ग़ज़ल दोनों विधाओं को कुशलता पूर्वक साधा है। छत्तीसगढ़ी की श्रृंगार परक इतिवृतात्मक प्रचलित पारम्पारिक गीतों की शैलीगत सीमाओं को तोड़ते हुए उन्होने ग़ज़ल विधा को छत्तीसगढ़ी साहित्य की आसंदी पर सम्मान पूर्वक बिठाया है। वस्तुतः ग़ज़लों में निहित संक्षिप्तता व अनुभूति की तीव्रता के ही कारण उन्हें छत्तीसगढ़ी में ग़ज़लें रचने की प्रेरणा मिली। यही कारण है कि उनकी छत्तीसगढ़ी ग़ज़लों में जिस तरह का वैचारिक विस्फोट हमें दिखाई पड़ता है। वैसा अन्य स्थानों पर नहीं मिलता। छत्तीसगढ़ी ग़ज़ल में रचनाकार की विचारधारा मानवता से ओतप्रोत होती है। सच भी है, बड़ी शायरी वह होती है, जिसमें मानवतावाद हो, उदारवाद हो। छत्तीसगढ़ी ग़ज़लों में सम्पूर्ण छत्तीसगढ़ प्रतिबिंबित होती है। आज दुनिया को गांव कहा जा रहा है, अब यह जरूरी है कि गांव की जीवन-गाथा ग़ज़ल की जुबान से गुंजित हो।

छत्तीसगढ़ राज्य निर्माण के साथ छत्तीसगढ़ी बोली को राजभाषा बनाने की जब पहल हुई तो अनेक साहित्यकारों ने हिन्दी के बजाय छत्तीसगढ़ी में लेखन को प्राथमिकता के साथ मानस पटल में उकेरा। छत्तीसगढ़ी ग़ज़लकारों ने नवोदित छत्तीसगढ़ राज्य में छत्तीसगढ़ के रहवासियों की पीड़ा को कृषि आधारित दिनचर्या तथा ठेठ छत्तीसगढ़ी शब्दों को अपने ग़ज़ल के माध्यम से उकेरने का प्रयास किया। ऋतु वर्णन में प्रयुक्त बिंबो, अलंकारों जैसे प्रयोग करते ग़ज़लकारों ने समय को सुस्ताने और समय की अंगड़ाई लेने का सटीक चित्रण किया है। गांव के विलुप्त देशज शब्दों, कृषि संबंधी उपकरणों को अपने ग़ज़लों में स्थान दिया है। आम जनता की गरीबी, भूखमरी, महंगाई और बेरोजगारी के दंश को समाज के समक्ष लाने का प्रयास किया गया है। सरकारी भ्रष्टाचार के चलते जो परिपाटी चलती आ रही है, कागजों में ही नाली, खुदाई और सड़क बनते एवं पाटने का चित्रण सहज ही ग़ज़लों में दिग्दर्शित होता है। सहज एवं सरल स्वभाव के छत्तीसगढ़िया लोगों के अंर्तमन को झांकने का प्रयास बहुत ही मार्मिक ढंग से ग़ज़लकारों ने किया है।

मुकुंद कौशल मूलतः गीतकार है जिनके हिन्दी और छत्तीसगढ़ी गीत आकाशवाणी दूरदर्शन से प्रसारित होते रहे हैं। लेकिन छत्तीसगढ़ी में ग़ज़ल लिखकर आप सुर्खियों पर रहे हैं। छत्तीसगढ़ी में ग़ज़ल लिखने की उनकी मन्शा उन्ही के शब्दों में इस प्रकार है।

''अनबन गीत रचै हौं संगी नवां सदी मा ग़ज़ल लिखौ
दुए डांस मां जे कहि देबे सबके मन ला भा जाथे।''

छत्तीसगढ़ी में ग़ज़ल कहना सर्जना की नई जमीन को स्पर्श करना है। किसी क्षेत्र में नवीनता का आग्रह नए प्रतिमान और नए धरातल के निर्माण का उद्घोष माना जाता है तभी वे कहते है।

''जिनगी के ब्यारा मा मिंझरा हे धान
थोरिक हे मान बबा थोरिक अपमान
अपन के चिन्हारी बढ़ मुस्किल हे आज
कोन इहाँ दुश्मन अऊ कोन हे मितान''

ग़ज़ल के जो मायने कल तक थे, वे आज नहीं है, क्योंकि ग़ज़ल ने अपनी लंबी यात्रा मे अनेकों रूप बदले है। इन ग़ज़लों में जीवन की विसंगतियों राजनैतिक सामाजिक, विद्रूपताएँ, कृषक, जीवन की पीड़ा प्रेम की अनुभूतियाँ हृदय का अंगार और मन का श्रृंगार सभी कुछ है।

शिल्प की नए पन की बानगी देखिए :-

''नहर में जागत हे दुकाल, चेतकर संगी
खेत मा उवत हे सवाल, चेत कर संगी
जउन मन हम मन ला अंधियार के बाटा दे हे

हे उँखर हाथ में मसाल चेतकर संगी।''

कौशल जी की एक और विशेषता, वह यह है कि छोटे से छोटा कार्य भी वे इतने कलात्मक ढंग से करते हैं कि साधारण सा काम भी असाधारण हो जाता है। घोंसला तो हर चिड़िया बना लेती है किंतु बया चिड़िया के द्वारा बनाए गए घोंसले की बात ही अलग है।अपने नवीन व नवोन्मेषी प्रयोग के बारे में वे लिखते है। ''ग़ज़ल कोई आसान विधा नहीं है और छत्तीसगढ़ी भाषा में ग़ज़ल का प्रयोग अनूठा है।''

हिन्दी में जब से ग़ज़ल का प्रचलन बड़ा है तब से नित नये कथ्य और शिल्प के साथ साहित्य के संसार में ग़ज़लें, अपनी पुरजोर उपस्थिति दर्ज कराने में सफल हुई हैं। अरबी में फारसी, फारसी से उर्दू से अन्यान्य भाषाओं में मजबूती के साथ पैर जमाने वाली यह सरस काव्यविधा निरंतर लोकप्रिय होती चली गई है। सर्व विदित है, कि प्रत्येक भाषा का अपना एक अलग रंग, अलग स्वभाव व अलग स्वरूप होता है। कोई भी विधा जब किसी भाषा-विशेष के साथ तालमेल स्थापित करती है, तो उसमें विधागत प्रतिबद्धताओं के उपरान्त भाषस्मिता के मूलरंग उभरने लगते हैं, जो अपने मौलिक सौन्दर्य की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं। जाहिर है कि हिन्दी मतें भी ग़ज़ल का अपना एक अलग रंग है, जो उर्दू और अन्य भाषा की ग़ज़लों से भिन्न है।

ग़ज़ल आज रूमानियत के दौर से उपर उठकर समसामयिक स्थितियों की अभिव्यक्ति का सबल साधन बन चुकी है। दरबारों से विकसित हुई इस विधा के सौंदर्यबोध व कोमलता में कहीं कोई कभी नही आई है। व्यापक जीवन संदर्भों से जुड़कर इसका कथ्य व इसके बिम्ब-प्रतीक भी अनवरत विकसित होते चले गये हैं। कहना न होगा कि हिन्दी भाष के ग़ज़ल को भरपूर अपनत्व प्रदान किया है। उदात्त भावभूमि एवं चेतनागाम्भीर्य से उपजे भावोच्छास, ग़ज़ल की कला से अनुप्रमाणित होकर और भी सम्मोहक हो गये हैं। इनका शिल्प-विधान भी भावान्विति के अनुसार ही प्रयुक्त है अतः इन ग़ज़लों के शब्दों की व्यंजनाशक्ति के सम्यक् प्रयोग संभवतः आपकी मनवीणा के तारों को झंकृत कर सकें। मानवजीन के हर्षोल्लास एवं आन्तरिक पीड़ा की रागात्मक संचेतना जब ग़ज़ल के सांचे में ढलती है तभी वह सुधी वाचकों-श्रोताओं के अंतर्मन को स्पर्श कर पाती है। सच्ची स्वानुभूति से निःसृत इन ग़ज़लों की बहुरंगी किरणें यदि आपकी चेतना को स्पर्श कर सकीं, तो बस यही मेरी सफलता होगी।

श्री मुकुन्द कौशल ग़ज़ल संग्रह 'चिराग-ग़ज़लों के' में नागरी लिपि में उर्दू ग़ज़लें संकलित है। ग़ज़लों का व्याकरण के आधार पर अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि आपकी इन ग़ज़लों में ग़ज़ल विधा के स्वरूप एवं परम्परा का पूरा खयाल रखा गया है। देश में ग़ज़ल लेखक की परम्परा का काफी विकास हुआ है। अधिकतर ग़ज़लें समाज के लिए सुखद सोच भी देती है। मुकुन्द कौशल एक ऐसे शायर हैं जिनके शेरों में रिवायत की मीठास के साथ जदीदियत की दस्तक भी है। हिन्दी उर्दू की मिलीजुली शब्द सम्पदा का सुन्दर प्रयोग आपके रदीफ काफियों में दिखाई देता है। शब्दों का चयन काबिले गौर है और सबसे अच्छी बात कि वज़न कहीं गड़बड़ाया नहीं-

उदाहरण -

हवा की जद पर इक जलता दिया है
ये शायद आँधियों का मर्सिया है।

जाने कितने रास्ते तय करके आई है ग़ज़ल
अब हमारे घर में आके मुस्कुराई है ग़ज़ल

वर्तमान समय में ग़ज़ल हिन्दी साहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा के रूप में अपने को स्थापित कर चुकी है। हिन्दी ग़ज़ल का कथ्य अब अपेक्षाकृत बहु विस्तृत हो चुका है । सामन्ती मनोरंजन करने वाली उत्तेजक सामग्री के स्थान पर उसमें आम आदमी के दुःख-दर्द का, अभावग्रस्त जीवन के तनावों का, मानवीय मूल्यों के विघटन का, सामाजिक अव्यवस्था, शोषण एवं आतंक तथा विसंगतियों का ही चित्रण प्रमुख रूप से किया जाता है।

प्रत्येक ग़ज़लकार रचनाकार होने से पहले व्यक्ति है और इसी कारण वह समाज से, आस-पास के परिवेश से जुड़ा हुआ होता है। वह समाज के साथ सामीप्य स्थापित करने से ही उसके यथार्थ से परिचित होता है और इससे समाज में होने वाले विभिक्त परिवर्तनों, नित्य-प्रतिदिन घटित होने वाली घटनाओं आदि से उसका सीधा साक्षात्कार होता है। वह न्याय-अन्याय, सत्य-असत्य, उचित-अनुचित इत्यादि में से प्रथम का पक्ष लेता है और दूसरे के विरुद्ध अपनी लेखनी, अटूट विश्वास व स्वस्थ विचारों के साथ तनकर खड़ा हो जाता है। उसकी यही विशेषता उसे सामान्य व्यक्ति से पृथक् करती है जिसके पफलस्वरूप वह रचना करने के लिए बाध्य हो जाता है और उसके संवेदनशील विचारों के उसकी रचना में समाहित हो जाने के कारण ही उसकी रचना महत्वपूर्ण बनती है। रचनाकार अपने चारों ओर के वातावरण के यथार्थ से परिचित होकर उससे संवेदना के स्तर पर ही संबद्ध होता है। इस यथार्थ के अंतर्गत ही जीवन के सभी पक्ष समाहित होते हैं और इसी यथार्थ का सहारा लेकर एक रचनाकार समाज की विडम्बनाओं तक पहुँच पाता है। अवश्य ही मनुष्य सामाजिक प्राणी है समाज के बिना उसका अस्तित्व नहीं है।

व्यक्ति समाज की सबसे लघु इकाई है। व्यक्ति के जीवन की सार्थकता समाज में ही पाई जाती है। व्यक्ति का अपने परिवेश के साथ घनिष्ट सम्बन्ध होता है। समाज में घटित होने वाली बहुत-सी घटनाएँ व परिस्थितियाँ उसके व्यक्तित्व का निर्माण करती हैं। वह जिस परिवेश में जन्म लेगा उसका विकास वैसा ही होगा। व्यक्ति से पृथक् समाज की कल्पना की ही नहीं जा सकती। यह बात दूसरी है कि समाज के नियम व्यक्ति विशेष के नियमों से भिन्न हो सकते हैं परन्तु व्यक्ति अपने व्यक्तिगत नियमों को समाज सापेक्ष रखकर ही समाज की इकाई बन जाता है। समाज से अलग होकर व्यक्ति का जीवन कठिन है। इसलिए समाज में रहकर ही वह अपनी आवश्यकताओं को पूरा करता है। इस प्रकार व्यक्ति व समाज एक दूसरे के पूरक हैं। समाज में नित्य प्रतिदिन घटित होने वाली घटनाओं को देखकर वैसे तो प्रत्येक नागरिक प्रभावित होता है। लेकिन ग़ज़लकार क्योंकि सहृदय व्यक्ति होता है। इसलिए वह उन स्थितियों को हृदयगम करके समाज के हितार्थ समाज सापेक्ष निर्णय लेता है। इसलिए सम्पूर्ण मानव समाज में ग़ज़लकार को ही अधिक सजग, सचेत, चेतन, विद्रोही और आन्दोलनकारी व परिवर्तन का मुखिया माना जाता है। इतिहास साक्षी है जब-जब समाज में परिवर्तन की आवश्यकता पड़ी है तब-तब वैचारिक स्तर पर आन्दोलन की पहल ग़ज़लकारों ने ही की है। गुजराती भाषा भाषी होने के बावजूद मुकुंद कौशल ने हिन्दी एवं छत्तीसगढ़ी में सशक्त रचनायें की। कुछ पंक्तियां उदाहरण के तौर पर उद्धृत करने का लोभ संवरण नही कर पा रहा हूं-

लटलट ले फरे हवय करजा हर बारी मा
पीरा ल मींजत हन, खुसी के दुकाल हे
चुरत हे दिलासा के जेवर ह हंड़िया म
साग उग झन पूछव, मिरिच अउ पताल हे
हमला थपरावत हे तरी उपर सब्बोझिन
अतको म जियत हवन, इही हर कमाल हे

सरकारी भ्रष्टाचार पर कटाक्ष करते हुए मुकुद कौशल जी ने कागजों में ही नाली खुदते हैं, स?क बनते हैं और पाट दिये जाते हैं, पैसे बांट लिये जाते हैं। कष्ट को झेल लेने के बाद उसका सरकारी हल भेजा जाता है। जनता ये सब देख रही है कि कैसे उन्हीं के हथियारों से उनका दमन किया जा रहा है–

पहिली गढढा खोदिस अउ पाटत हे,
बितिस हे, बरसात त खुमरी बांटत हे,
अंधरा नोहन सबला देखत हन कौसल
हमरे टंगिया ले वो हमला काटत हे

आज हर राजनीतिक दलों में आंतरिक कलह एवं व्यक्तिगत समस्याओं के कारण राजनैतिक पतन हो रहा है, और देश गंभीर समस्या से जूझ रहा है। ऐसे में स्वच्छ राजनैतिक चेतना हेतु वे अपने ग़ज़लों के माध्यम से हर सम्भव प्रयास किया है।

बेवजह बदले निकाले जा रहे हैं
हर तरफ पत्थर उछाले जा रहे हैं
आप क्या जाने यहां की बांबियों में
किस तरह के नाग पाले जा रहे हैं।

भारत एक विशाल राष्ट्र है जिसमें विविधता के अनेक आयाम प्रतिबिंबित हैं। देशप्रेम की भावना विकसित करना, योग्य व सुजान नागरिकों का निर्माण करना हमारी शिक्षा का महत्वपूर्ण अंग है तथा देश की गौरव गाथा लिखना कवि का कर्म है तथा देशभक्ति सर्वोपरि है। शिक्षा की दुर्दशा को व्यक्त करते हुए 'कोदो देना' मुहावरे का प्रयोग किया है।

नींद न देखैय खटिया जठना,पेड़ न घेपै पानी घाम
भूख न पूछै जूठा–काठा,मया न देखै जात कुजात।

अशिक्षा एक अभिशाप है, अशिक्षा के घोर अंधियारे में शिक्षा का अलख जगाते हुए उन्होंने लिखा है–

का–का लिक्खे कोन जनि, कोसिस करके नई पढ़ पावौं,
उन्कर अलकरहा चिट्ठी के, एक्को आखर बांचत न बनय।

गरीबी, भूखमरी, महंगाई और बेरोजगारी से त्रस्त जनता को अब वर्तमान समय का भरोसा नहीं रहा। चारों ओर लूटने और नोंचने वाले बैठे हैं। विडबंना ऐसी है कि उनके घर का दीपक बुझ जाता है, उनके हिस्से के उजाले को भी लोग हड़प लेते रहे हैं। सीमित संसाधनों से जीने को मजबूर गरीबों के लिए सुख सिर्फ स्वप्न है, उनका अस्तित्व अब स्वप्न से ज्यादा भारी हो गया है–

इन्कर अंधियारी कुरिया के चिमनी घलो बुता जाथै,
उन पोगराए हें अंजोर ला ये कइसन गुन्ताड़ा हे,
पंचम म चिचियावै कौंवा गदहा रेंकै धइवत मा,
धरे टिमटिमी बिलई बईठगे, कोलिहा धरे नंगाड़ा हे,
फटहा अंचरा मा जोरत हें, जेमन हरियर सपना ला,
उन्कर सपना मन ले कतको गरू त उन्कर हाड़ा हे।

छत्तीसगढ़ी में ग़ज़ल लेखन करने 'नवोन्मेष' का प्रारंभ किया इन ग़ज़लों में छन्द विधान तो उर्दू ग़ज़लों का ही है किन्तु भाषा, भाव एवं कथ्य पूर्णतः छत्तीसगढ़ के लोकजीवन से अर्जित किया हुआ है। कौशल जी ने ग़ज़ल, पद्य के साथ–साथ गद्य लेखन का कार्य भी किया है, आपके द्वारा रचित उपन्यास 'केरवस' निरन्तर विकसित होते हुए छत्तीसगढ़ी गद्य साहित्य के पथ में 'मील का पत्थर' है। यह एक अनुभवजन्य, चिन्तनपरक उपन्यास है। जिसके द्वारा लेखक ने वर्षों की कुप्रथाओं और रूढियों में जकड़े मजदूर, किसानों का उत्पीड़न और समर्थ संमतों द्वारा स्त्रियों का दैहिक शोषण तो उजागर किया है साथ ही साथ ग्रामीण विकास, जन जागरण, सांस्कृतिक, पारिवारिक मूल्यों को भी कुशलता के साथ स्थापित किया है।

गज़ल की अवधारणा के लगभग सभी बिन्दू आपके लेखन में पाए जाते हैं। आपके साहित्य में समसामायिक चिन्तन के सभी पहलू राष्ट्रीय समस्याएँ, सामाजिक समस्याएँ तथा अन्तराष्ट्रीय समस्याएँ, राजनीति, सामाजिक आर्थिक शोषण, स्त्रियों की समस्याएँ, पर्यावरण व साक्षरता जैसे सभी विषयों पर आपने रचनाएँ की है। रूढ़िवादी विचारों ढकोसलों का विरोध करने वाला साहित्य प्रगतिपरक साहित्य कहलाता है। आपकी रचना में सामाजिक रूढ़ियों, दुष्प्रथाओं और ढकोसलों का विरोध परिलक्षित होता है।

संदर्भ सूचीः–

1. संपा. कर चितरंजनः छत्तीसगढ़ी ग़ज़ल और मुकुन्द कौशल, वैभव, प्रकाशन, रायपुर छ.ग.पृ.36
2. संपा. प्रोफेसर. मनोहर–भारतीय ग़ज़ल–रंग अंतरंग शब्द सृष्टि–पृष्ठ 35/ भारतीय ग़ज़ल विशेषांक– 34
3. डॉ. नरेशः ग़ज़ल शिल्प व संरचना– पृष्ठ 25
4. संपा. प्रोफेसर मनोहर भारतीय ग़ज़ल विशेषांक, भारतीय ग़ज़ल रंग–अंतरंग–34
5. कर डॉ.चितरंजन (समीक्षा) मोर ग़ज़ल के उड़त परेवा, संपा. डॉ. पाठक विनय कुमार, प्रयास प्रकाशन, बिलासपुर
6. संपा. मनोहर, शब्द सृष्टि ग़ज़ल विशेषांक, पृ. 38
7. डॉ. नरेशः ग़ज़ल शिल्प व संरचना– पृष्ठ 25
8. संपा. पाठक विनय कुमारः समकालीन समीक्षा विमर्श, मोर ग़ज़ल के उड़त परेवा, प्रयास प्रकाशन, बिलासपुर 2014, पृ. 87
9. संपा कर चित्तरंजनः छत्तीसगढ़ी ग़ज़ल और मुकुन्द कौशल
10. कौशल मुकुन्दः हमर भुंईयां हमर अगास, पृ. 20
11. कौशल मुकुन्दः चिराग ग़ज़लों के, पृ. 70
12. कौशल मुकुन्दः छत्तीसगढ़ी ग़ज़ल, पृ. 58
13. डॉ. सत्यभामा आडिलः महत्व मुकुन्द कौशल पृ. 75
14. संपा. डॉ.विनय कुमार पाठकः समकालीन समीक्षा विमर्श, मोर . गज़ल के उड़त परेवा, पृ. 20
15. संपा. प्रोफेसर मनोहर भारतीय ग़ज़ल विशेषांक, भारतीय ग़ज़ल रंग–अंतरंग–34

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

दस महाविद्या का गूढ़ रहस्य

आरती सिंह
डॉ. मौसमी परिहार

1. शोधार्थी, हिंदी, रवींद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल, मप्र.
2. शोध निर्देशक एवं एसोसिएट प्रोफेसर, रवींद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल, मप्र.

शोध सार:-दस महाविद्या अर्थात महान विधा रूपी देवी। महाविद्या, देवी पार्वती के दस रूप हैं, जो अधिकांश तांत्रिक साधकों द्वारा पूजे जाते हैं, परंतु साधारण भक्तों को भी अचूक सिद्धि प्रदान करने वाली है। इन्हें दस महाविद्या के नाम से भी जाना जाता है। ये दसों महाविद्याएं आदि शक्ति माता पार्वती की ही रूप मानी जाती है। दस महाविद्या विभिन्न दिशाओं की अधिष्ठातृ शक्तियां है। भगवती काली और तारा देवी-उत्तर दिशा की, श्री विद्या (षोडशी - त्रिपुर सुंदरी)- ईशान की दिशा, देवी भुवनेश्वरी पश्चिम दिशा की, श्री त्रिपुर भैरवी दक्षिण दिशा की, माता छिन्नमस्ता पूर्व दिशा की, भगवती धूमावती पूर्व दिशा की, माता बगला (बगलामुखी) दक्षिण दिशा की, भगवती मातंगी वायव्य दिशा की तथा माता श्री कमला नैत्य दिशा की अधिष्ठातृ है।

कहीं-कहीं 24 विधाओं का वर्णन भी आता है। लेकिन विश्व के प्राचीन आगम तंत्र (चीनानाचार) के अनुसार दस महाविद्या की साधना का उल्लेख है परंतु मूलतः दस महाविद्या ही प्रचलन में है। इनके दो कुल है। इनकी साधना दो कुलों के रूप में की जाती है। श्री कुल और काली कुल। इन दोनों में नौं-नौं देवियों का वर्णन है। इस प्रकार यह 18 हो जाती हैं। कुछ ऋषियों ने इन्हें तीन रूपों में माना है। उग्र, सौम्य और सौम्य-उग्र। उग्र में काली, छिन्नमस्ता, धूमावती और बगलामुखी है। सौम्य में त्रिपुरसुंदरी, भुवनेश्वरी, मातंगी और महालक्ष्मी (कमला) है। तारा तथा भैरवी को उग्र तथा सौम्य दोनों माना गया है देवी के वैसे तो अनंत रूप है पर इनमें भी तारा, काली और षोडशी के रूपों की पूजा, भेद रूप में प्रसिद्ध है। भगवती के इस संसार में आने के और रूप धारण करने के कारणों की चर्चा मुख्यतः जगत कल्याण, साधक के कार्य, उपासना की सफलता तथा दानवों का नाश करने के लिए हुई। सर्वरूपमयी देवी सर्वभ् देवीमयम् जगत। अतोऽहम् विश्व रूपा त्वाम् नमामि परमेश्वरी।। अर्थात यह सारा संसार शक्ति रूप है ही है।

प्रस्तावना:-महाविद्या के विषय पर कुछ भी कहना सूर्य को दीपक दिखाने की भांति है। क्योंकि अनंत विराट को संक्षेप में शब्दावरण पहनाना अत्यधिक कठिन होता है। शाक्त तंत्र में एक ही पराशक्ति के दस स्वरूप उपासना क्रम में बताए गए हैं। मूल में एकत्व होने के कारण सभी महाविद्याएं ब्रह्म विद्याएं मानी जाती हैं। इन महाविद्याओं की उपासना की विशेषता यह है कि इनसे श्रेय और प्रेय दोनों की उपलब्धि होती है। अनुरूप पराशक्ति का जो रूप चित्रित किया गया है उसमें गुणों से परे होने तथा व्यापक एवं निराकार होने के चिन्ह प्रतीक रूप में उपस्थित है इसके अतिरिक्त श्रेय एवं प्रेय से संबंधित चिन्ह भी संयुक्त है। हमारे शास्त्रों में दस महाविद्याओं का उल्लेख किया गया है। तंत्र क्रिया में विद्या में इन दस महाविद्याओं का विशेष महत्व होता है। इन दस विधाओं की साधना और उपासना से विशेष फल की प्राप्ति होती है। ये महाविद्याओं को दशावतार माना गया है। दस महाविद्याएं मां दुर्गा के ही रूप है जिसे सिद्धि देने वाली मानी जाती है। मां दुर्गा के इन दस महाविद्याओं की साधना करने वाला व्यक्ति सभी भौतिक सुखों को प्राप्त कर बंधन से भी मुक्त हो जाता है। मां को प्रसन्न करने के लिए तांत्रिक साधकों द्वारा यह पूजा की जाती है।

मुख्य शब्द:-महाविद्या, सिद्धि प्रदान, अधिष्ठातृ, तांत्रिक, साधना, उपासना, भौतिक, श्रेय, प्रेय, दशावतार, पराशक्ति, ईशान, साधक, कल्याण, रहस्य, दस का रहस्य।

संसार में दस दिशाएं स्पष्ट है। इसी भांति से दस की संख्या भी पूर्णतः पूर्ण ब्रह्म का सूचक है। किसी भी रहस्य का शुभारंभ शून्य से होता है, शून्य ! अर्थात आदि अंत रहित संख्या, जिससे जुड़े उसे महान बना दे और स्वयं एक क्रम प्रभावित कर दे...ऐसा है शून्य का स्वभाव। इसके बाद एक, दो, तीन से नौ तक की संख्याएं होती हैं। शून्य से ही सृष्टि होती है। जब कुछ नहीं था उस समय शून्य था। इस शून्य का अर्थ शून्य नहीं अपितु पूर्ण है। इसी से नौ संख्याओं का विराट प्रस्तुत हुआ करता है। जो की एक से नौं तक होता है। यही रहस्य क, च, ट, प, त, य, क्ष, त्र तथा ज्ञ का है । क्योंकि यही आध अक्षर है। इन्हीं से अन्य शब्दों का प्रादुभाव हुआ करता है। प्रत्येक मनुष्य की देह पर नौं द्वार स्पष्ट है और दसवां द्वार अदृश्य है क्योंकि वह शून्य रूपी विराट है, जहां से समस्त संख्या - रूपी भावनाओं का श्री गणेश हुआ करता है। शिरोमंडल प्रदेश में शून्य सर्वदा कार्यरत है।

दस महाविद्याओं का प्रथम दर्शन:-देवी पार्वती को आधभवानी माना जाता है इनका पाणिग्रहण संस्कार देवाधिदेव महादेव के साथ इनकी अभिलाषानुसार हुआ था। सती जनक दक्ष ने एक बार यज्ञ किया जिसमें उसने शिवजी को आमंत्रित नहीं किया। सती को इस यज्ञ की सूचना प्राप्त हुई तो उसने शिवजी से वहां चलने का विनम्र निवेदन किया। जिसे उन्होंने अस्वीकार कर दिया। अपने स्वामी की अभिलाष वहां न जाने की समझ कर सती ने स्वयं के जाने की आज्ञा चाही तो शिव ने दक्ष के शत्रुता पूर्ण व्यवहार का ध्यान रखते हुए उन्हें पुनः मना कर दिया। अपने शब्दों की बारंबार अवहेलना देखकर सती ने कहा-

'ततोऽहं तत्र यास्यामि , तदाज्ञापय वा न वा।
प्राप्स्यामि यज्ञभागं वा नाशयिष्यामि व मखम्।।'

अर्थात आपकी आज्ञा हो या ना हो किंतु मैं वहां अवश्य जाऊंगी। वहां जाकर मैं यज्ञ अंश प्राप्त करूंगी अन्यथा यज्ञ नष्ट कर दूंगी। शिव ने पुनः

समझाने पर सती क्रोधित हो उठी और उन्होंने रौद्र रूप ग्रहण कर लिया। उनके नेत्र क्रोध से लाल हो गए, अधर क्रोध से फड़फड़ाने लगे और तीव्र अट्टहास किया। कुछ स्मरण करके शिव जी ने उन्हें ध्यान से देखा तो पार्वती का शरीर क्रोधाग्नि से जलकर क्रमशः काला पड़ता जा रहा था। अपनी जीवन - संगिनी का यह भीषण रूप देखकर उन्होंने दूर चले जाना संभवतः उचित समझा होगा, अतः वहां से चले गए। वह कुछ देर ही गए थे कि अपने समक्ष एक दिव्य स्वरुप देखकर अचम्भें में पड़ गए। तत्पश्चात उन्होंने अपने दाएं, बाएं, ऊपर तथा नीचे अर्थात सभी तरफ देखा तो प्रत्येक दिशा में एक विभिन्न देविय स्वरूप देखकर स्तंभित हो गए। अतः उन्होंने कहा-'सती! क्या माया है?'

अपने स्वामी का प्रश्न श्रवण करके सती ने विनम्र भाव से बताया —'स्वामी! आपके समक्ष जो कृष्णा-वर्णा देवी स्थित है वह 'काली' है। आपके ऊपर महाकाल स्वरूपिणी जो नील-वर्णा देवी है वह 'तारा' है। आपके पश्चिम में श्याम वर्णा और कटे हुए शीश को उठाये जो देवी खड़ी है वह 'छिन्नमस्तिका' है। आपके बांई तरफ देवी 'भुवनेश्वरी' खड़ी है। आपके पृष्ठ पर शत्रु मर्दन करने वाली देवी 'बगलामुखी' खड़ी है। आपके अग्नि कोण में 'विधवा रुपिणी - धूमावती' खड़ी है। नेऋत्य कोण में देवी 'त्रिपुर सुंदरी' खड़ी है। वायव्य कोण पर 'मातंगी' खड़ी है। ईशान कोण पर देवी 'षोडशी' खड़ी है तथा 'भैरवी' रूपा होकर मैं स्वयं उपस्थित हूं।' यही पर शिवजी के द्वारा इनका महात्म्य पूछे जाने पर सती ने बताया था- 'इन सभी की पूजा अर्चना करने पर चतुर्वर्ग की अर्थात धर्म, भोग, मोक्ष तथा अर्थ की प्राप्ति हुआ करती है। इन्हीं की कृपा से षट्कर्मों की सिद्धि तथा अभीष्ट की उपलब्धि हुआ करती है।' शिवजी के निवेदन करने पर यह देवी क्रमशः कालिका देवी में समा गई।

दस महाविद्याएं:-

1. काली:-दस महाविद्या में काली प्रथम रूप है। माता का यह रूप साक्षात और जागृत है। काली के रूप में माता का किसी भी प्रकार से अपमान करना अर्थात खुद के जीवन को संकट में डालने के समान है। महा दैत्यों का वध करने के लिए माता ने ये रूप धरा था। सिद्धि प्राप्त करने के लिए माता की वीरभाव में पूजा की जाती है। काली माता तत्काल प्रसन्न होने वाली और तत्काल ही रुठने वाली देवी है। अतः इनकी साधना या इनका भक्त बनने के पूर्व एकनिष्ठ और कर्मों से पवित्र होना जरूरी होता है। यह कज्जल पर्वत के समान शव पर आरूढ़ मुंडमाला धारण किए हुए एक हाथ में खड्ग दूसरे हाथ में त्रिशूल और तीसरे हाथ में कटे हुए सिर को लेकर भक्तों के समक्ष प्रकट होने वाली काली माता को नमस्कार। यह काली एक प्रबल शत्रुहनता महिषासुर मर्दिनी और रक्तबीज का वध करने वाली शिवप्रिया चामुंडा का साक्षात स्वरूप है, जिसने देव दानव युद्ध में देवताओं को विजय दिलाई थी। इनका क्रोध तभी शांत हुआ था जब शिव इनके चरणों में लेट गए थे।

2. तारा:-तांत्रिकों की प्रमुख देवी तारा। तारने वाली कहने के कारण माता को तारा भी कहा जाता है। सबसे पहले महर्षि वशिष्ठ ने तारा की आराधना की थी। शत्रुओं का नाश करने वाली सौंदर्य और रूप ऐश्वर्य की देवी तारा आर्थिक उन्नति और भोग दान और मोक्ष प्रदान करने वाली है। भगवती तारा तीन स्वरूप है:- तारा, एक जटा और नील सरस्वती।

तारापीठ में देवी सती के नेत्र गिरे थे, इसीलिए इस स्थान को नयनतारा भी कहा जाता है। यह पीठ पश्चिम बंगाल के बीरभूम जिला में स्थित है। इसीलिए यह स्थान तारापीठ के नाम से विख्यात है। प्राचीन काल में महर्षि वशिष्ठ ने इस स्थान पर देवी तारा की उपासना करके सिद्धियां प्राप्त की थी। इस मंदिर में वामाखेपा नामक एक साधक ने देवी तारा की साधना करके उनसे सिद्धि हासिल की थी।

3. त्रिपुर सुंदरी:-षोडशी माहेश्वरी शक्ति की विग्रह वाली शक्ति है। इनकी चार भुजा और तीन नेत्र हैं। इसे ललिता, राजराजेश्वरी और त्रिपुर सुंदरी भी कहा जाता है। इनमें षोडश कलाएं पूर्ण है इसलिए षोडशी भी कहा जाता है। भारतीय राज्य त्रिपुरा में स्थित त्रिपुर सुंदरी का शक्तिपीठ है माना जाता है कि यहां माता के धारण किए हुए वस्त्र गिरे थे। त्रिपुर सुंदरी शक्तिपीठ भारतवर्ष के अज्ञात 108 एवं ज्ञात 51 पीठों में से एक है।

4. भुवनेश्वरी:-भुवनेश्वरी को आदिशक्ति और मूल प्रकृति भी कहा गया है। भुवनेश्वरी ही शताक्षी और शाकंभरी नाम से प्रसिद्ध हुई। पुत्र प्राप्ति के लिए लोग इनकी आराधना करते हैं। आदिशक्ति भुवनेश्वरी मां का स्वरूप सौम्य एवं अंग कांति अरुण है। भक्तों को अभय एवं सिद्धियां प्रदान करना इनका स्वाभाविक गुण है। इस महाविद्या की आराधना से सूर्य के समान तेज और ऊर्जा प्रकट होने लगती है। ऐसा व्यक्ति अच्छे राजनीतिक पद पर आसान हो सकता है। माता का आशीर्वाद मिलने से धन प्राप्त होता है और संसार के सभी शक्ति स्वरूप महाबली उसका चरण स्पर्श करते हैं।

5. छिन्नमस्ता:-इस परिवर्तनशील जगत का अधिपति कबंध है और उसकी शक्ति छिन्नमस्ता है। इनका सिर कटा हुआ और इनके कबंध से रक्त की तीन धाराएं बह रही है। इनकी तीन आंखें हैं और ये मदन और रति पर आसीन है। देवी के गले में हड्डियों की माला तथा कंधे पर यज्ञोपवीत है। इसीलिए शांत भाव से इनकी उपासना करने पर यह अपने शांत स्वरूप को प्रकट करती है। उग्र रूप में उपासना करने पर यह उग्र रूप में दर्शन देती है जिससे साधक के उच्चाटन होने का भय रहता है।

6. त्रिपुर भैरवी:-त्रिपुर भैरवी की उपासना से सभी बंधन दूर हो जाते हैं। यह बंदीछोड़ माता है। भैरवी के नाना प्रकार के भेद बताए गए हैं जो इस प्रकार है त्रिपुरा भैरवी, चैतन्य भैरवी, सिद्ध भैरवी, भुवनेश्वर भैरवी, संपदाप्रद भैरवी, कमलेश्वरी भैरवी, कौलेश्वर भैरवी, कामेश्वरी भैरवी, नित्या भैरवी, रूद्रभैरवी, भद्र भैरवी, तथा षटकुटा भैरवी आदि। त्रिपुरा भैरवी ऊर्ध्वान्वय की देवता है। माता की चार भुजाएं और तीन नेत्र हैं। इन्हें षोडशी भी कहा जाता है। षोडशी को श्रीविद्या भी माना जाता है। यह साधक को युक्ति और मुक्ति दोनों ही प्रदान करती है। इसकी साधना से षोडश कला निपुण संतान की प्राप्ति होती है। जल, थल और नभ में उसका वर्चस्व कायम होता है। आजीविका और व्यापार में इतनी वृद्धि होती है कि व्यक्ति संसार भर में धन श्रेष्ठ यानी सर्वाधिक धनी बनकर सुख भोग करता है।

7. धूमावती:-धूमावती का कोई स्वामी नहीं है। इसलिए यह विधवा माता मानी गई है। इनकी साधना से जीवन में निडरता और निश्चिंतता आती है। इनकी साधना या प्रार्थना से आत्मबल का विकास होता है। इस महाविद्या के फल से देवी धूमावती सूकरी के रूप में प्रत्यक्ष प्रकट होकर साधक के सभी रोग अरिष्ट और शत्रुओं का नाश कर देती है। प्रबल महाप्रतापी तथा सिद्ध पुरुष के रूप में उस साधक की ख्याति हो जाती है।

8. बगलामुखी:-माता बगलामुखी की साधना युद्ध में विजय होने और शत्रुओं के नाश के लिए की जाती है। बगलामुखी के देश में तीन ही स्थान है। कृष्ण और अर्जुन ने महाभारत के युद्ध के पूर्व माता बगलामुखी की पूजा अर्चना की थी। इनकी साधना शत्रु भय से मुक्ति और वाक् सिद्धि के लिए की जाती है। जिसकी साधना सप्त ऋषियों ने वैदिक काल में समय-समय पर की है। इसकी साधना से जहां घोर शत्रु अपने ही विनाश बुद्धि से पराजित हो जाते हैं वहां साधक का जीवन निष्कंटक तथा लोकप्रिय बन जाता है।

9. मातंगी :–मतंग शिव का नाम है। शिव की यह शक्ति असुरों को मोहित करने वाली और साधकों को अभीष्ट फल देने वाली है। गृहस्थ जीवन को श्रेष्ठ बनाने के लिए लोग इनकी पूजा करते हैं। यह श्याम वर्ण और चंद्रमा को मस्तक पर धारण करती है। यह पूर्णतया वाग्देवी की ही पूर्ति है। चार भुजाएं चार वेद हैं मां मातंगी वैदिकों की सरस्वती है।

10. कमला :–दरिद्रता, संकट, गृहकलह और अशांति को दूर करती है कमलारानी। इनकी सेवा और भक्ति से व्यक्ति सुख और समृद्धि पूर्ण रहकर शांतिमय जीवन बिताता है। श्वेत वर्ण के चार हाथी सूंड में सुवर्ण कलश लेकर सुवर्ण के समान कांति लिए हुए मां को स्नान कर रहे हैं। कमल पर आसीन कमल पुष्प धारण किए हुए मां सुशोभित होती है। समृद्धि, धन, नारी, पुत्रादि के लिए इनकी साधना की जाती है।

निष्कर्ष :–देवी, अप्सरा, यक्षिणी, डाकिनी, शाकिनी और पिशाचिनी आदि में सबसे सात्विक और धर्म का मार्ग है 'देवी' की पूजा, साधना और प्रार्थना करना। कैलाश पर्वत के ध्यानी की अर्धांगिनी सती ने दूसरा जन्म पार्वती के रूप में लिया था। उनके दो पुत्र हैं गणेश और कार्तिकेय। मां पार्वती अपने पूर्व जन्म में सती थी। नौ दुर्गा भी पार्वती का ही रूप है। इस माता सती और पार्वती की पूजा साधना करना सनातन धर्म का मार्ग है। शास्त्रों के अनुसार इन दस महाविद्या में से किसी एक की नित्य पूजा अर्चना करने से लंबे समय से चली आ रही बीमारी, भूत – प्रेत, अकारण ही मानहानि, बुरी घटनाएं, गृहकलह, शनि का बुरा प्रभाव, बेरोजगारी, तनाव आदि सभी तरह के संकट तत्काल ही समाप्त हो जाते हैं और व्यक्ति परम सुख और शांति पता है। इन माताओं की साधना कल्पवृक्ष के समान शीघ्र फलदायक और सभी कामनाओं को पूर्ण करने में सहायक मानी गई है।

संदर्भ सूची :–

1. तंत्र साधना – अंजली शर्मा
2. जागरण – चंदा कुमारी
3. धर्म संग्रह – अनिरुद्ध जोशी
4. महाविद्या – विकिपीडिया
5. शाक्त तंत्र साधना – डॉ मोदीलाल खड्डुर शास्त्री

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025

MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

महादेवी वर्मा के रेखाचित्र में स्त्री की दयनीय स्थिति

प्रमोद कुमार साहनी
डॉ. मौसमी मधुबाला श्रीवास्तव

1. शोधार्थी, सैम ग्लोबल विश्वविद्यालय, भोपाल, मप्र.
2. शोध निर्देशक, सैम ग्लोबल विश्वविद्यालय, भोपाल, मप्र.

महादेवी वर्मा हिन्दी साहित्य के छायावाद के चार स्तम्भों में से एक प्रमुख और मजबतू स्तम्भ है। इन्होनें हिन्दी साहित्य जगत को कविताएँ, कहानी, संस्मरण, निबंध एवं रेखाचित्र प्रदान किया है। ये सभी रचनाएँ हिन्दी साहित्य को विशेष बनाती है। महादेवी वर्मा हिन्दी साहित्य में रेखाचित्र में अद्वितीय स्थान रखती हैं। छायावाद में अकेली कवयित्री हैं। इतना ही नहीं महादेवी जी अपना अमिट छाप बना चुकी हैं।

महादेवी वर्मा का जन्म 26 मार्च 1907 ई0 को उत्तर प्रदेश र्ष के फर्रूखाबाद में होली के दिन हुआ था। महादेवी वर्मा के पिताजी का नाम गोविन्द प्रसाद वर्मा एवं दादा जी श्री बाँके बिहारी वर्मा के वंश में सात पर तों से बेटी का जन्म नहीं हुआ था इसलिए दादा जी बाँके बिहार वर्मा अपने कुल देवता देवी दुर्गा से विनती करते रहते थे कि मेरे खानदान में भी एक बेटी का जन्म हो। संयोग भी ऐसा ही रहा बिहारी के घर एक पौत्री (पोती) का जन्म हुआ। कई वर्ष बाद घर में बेटी का जन्म होने से पूरे परिवार में खुशियाँ ही खुशियाँ छा गई। चारो ओर खुशियाँ मनाई जा रही थी। दादा जी घर में पुत्री का जन्म कुल देवी की असीम कृपा एवं उनका प्रसाद मानकर देवी के सम्मान में इस बालिका का नाम महादेवी रखा गया। बड़े घर एवं विद्वान परिवार में जन्मी महादेवी वर्मा के पिता हिन्दी अवधी, संस्कृत के जानकार पुरूष थे दादा जी भी काफी शिक्षित व विद्वान थे महादेवी वर्मा का माता श्रीमती हेमरानी देवी का पिता व माता के कवयित्री होने के कारण इनपर भी माता-पिता का गहड़ा प्रभाव पड़ा और हेमरानी देवी भी ब्रजभाषा में कविता आदि लिखती थी। अब चुकी पूरे घर परिवार का महौल जैसा था वैसा ही प्रभाव महादेवी वर्मा पर पड़ना स्वाभाविक ही था। काफी छोटी उम्र में दिखने लगी थी और आगे चलकर दिन प्रति दिन महादेवी की साहित्यिक रचनाओं में इतना अधिक निखार आती गई कि महादेवी जी छायावाद के चौथे स्तम्भ माने गये साथ ही गरीब, असहाय, लाचार, अनाथ विधवा एवं विमाता स्त्री की आवाज बन गयी। तभी हम आज इनको पढ़ व इनकों लिख भी रहे हैं।

शिक्षा दीक्षा:-महादेवी वर्मा जब स्कूल जाने योग्य हुई तो पिताजी उन्हें स्कूल भेजना चाहा, लेकिन माता श्रीमती हेमरानी देवी विद्यालय भेजने से पूर्व उन्हें घर का काम सीखानाा चाहती थी। घर की शिक्षा में उन्हें घर-आंगन लीपना-पोतना, घर को सजाना, गेहूँ-चावल फटकना, रोटी बनाना, भात-दाल, सब्जी, पकौड़ी, बड़ा-बड़ी, पराठा बनाने की शिक्षा दी गई। साथ ही वे बगीचा को भी सजाने लगी। उसके बाद उन्हें मिशन स्कूल भेजा गया। इनकी प्रारंभिक शिक्षा इन्दौर में सम्पन्न हुई। इन्दौर में ही इन्हें संस्कृत, उर्दू, चित्रकला तथा संगीत की शिक्षा दी गई। 13 वर्ष की आयु में मीडिल की परीक्षा प्रयाग से प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण हुई। वे उत्तर प्रदेश की परीक्षा में राज्य में टॉप की। वे दर्शनशास्त्र में स्नातक, प्रयाग विश्वविद्यालय से की इसके बाद इसी विश्वविद्यालय से संस्कृत से स्नातकोत्तर की परीक्षा उत्तीर्ण किया।

महादेवी वर्मा का साहित्य योगदान:-छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा का साहित्यिक योगदान काफी सराहनीय है। इनकी कविताओं में अध्यात्मिकता, संवेदना एवं करूणा की अभिव्यक्ति हुई है। उनवकी कहानी निबंध व रेखाचित्र समाज एवं सांस्कृतिक कहानी निर्भर है और तत्कालीन समय की समाजिक स्थिति को बेहतरीन ढंग से अध्ययन किया है। इनका साहित्य सिर्फइनका व्यक्तित्व की छाया नहीं बल्कि यह समाजिक जागरूकता का प्रतिनिधित्व भी करता है।

छायावादी कविता:-हिन्दी साहित्य का स्वर्णिम युग छायावाद के प्रमुख कवयित्री महादेवी वर्मा की कविताएँ सभी उपयुक्त गुणों से परिपूर्ण थी इनकी कविताएँ मानवीय संवेदनाओं का गहन अध्यन करती है। पाठक को भाव विभोर करने में सक्षम है इनकी कविताएँ।

इनकी काव्य संग्रह:-नीरजा सांध्यागीत, रश्मि, नीहार, दीपशिखा और यामा आदि हिन्दी के महत्वपूर्ण काव्य माने जाते हैं।

गद्य साहित्य:-महादेवी वर्मा की जितनी ख्याति काव्य रचना में मिली है उसी तरह गद्य साहित्य की रचनाएँ भी महादेवी वर्मा को प्रसिद्ध करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाया है। गद्यात्मक रचनाएँ रेखाचित्र, संस्मरण, निबंध, आलोचना, ललित निबंध और कहानी आदि।

नारीवादी लेखन:-इनके साहित्य की सबसे बड़ी विशे ाता स्त्री-विमर्श को विशेष स्थान देना है। लेखिका द्वारा महिलाओं की समस्याओं, उनकी अपेक्षा, उम्मीद, संघर्ष और कठिनाईयों का सजीव चित्रण किया गया है। रेखाचित्र संस्मरण आदि में महिलाओं की दशा, आर्थिक स्थिति, समाजिक स्थिति, शैक्षिक स्थिति, पारिवारिक स्थिति का गहन अध्ययन किया गया है। महादेवी वर्मा ने अपनी लेखनी के माध्यम से महिलाओं को शिक्षित, स्वंतत्र सशक्त एवं आत्मनिर्भर बनाने के लिए उत्साहित किया है।

रेखाचित्र एवं स्त्री विमर्श:-लेखिका ने रेखाचित्र और संस्मरण जैसी विधा लिखकर अपनी क्षमता और समाज के प्रति अपनी जिम्मेवारी, तत्कालीन समाजिक परिस्थितियों व वातावरण से हमें अवगत कराया है साथ ही यह भी स्पष्ट किया है कि महादेवी वर्मा नारी की संवदना, उनकी दुदर्शा, समाज में नारी का स्थान आदि के बेहतरी के प्रति जागरूक है। महादेवी वर्मा के चार रेखाचित्रों में दो रेखाचित्र, 'स्मृति की रेखाएँ' और 'अतीत के चलचित्र' रेखाचित्र में अधिकतर रेखाचित्र में नारी विषयक रचनाओं को ही

अंकित किया गया है। ऐसा भी नहीं कहा जा सकता है कि इनके द्वारा अन्य विषयों पर ध्यान नहीं दिया गया है, लेकिन स्त्री विमर्श पर ज्यादा बेहतर ढंग से ध्यान दिया गया है और दे भी क्यों नहीं तत्कालीन समय में नारी की स्थिति ही ऐसी थी कि उनका ध्यान सबसे ज्यादा नारी पर ही गया।

नारी जीवन समस्याएँ और संघर्ष:–महादेवी वर्मा के रेखाचित्रों में स्त्री विमर्श के तहत स्त्री जीवन की समस्याओं और संघर्ष का सजीव चित्रण किया गया है। महिलाओं के जीवन को सजीव किया गया है इनके रेखाचित्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनके द्वारा ग्रामीण एवं शहरी दोनों प्रकार की स्त्री का चित्रण किया गया है।

गिल्लू:–महादेवी वर्मा के गिल्लू रेखाचित्र में एक गिलहरी की कहानी है। जो अप्रत्यक्ष ढंग से महिलाओं की संवेदनशीलता,मातृत्व भावना और देखभाल को दर्शाती है। इस रेखाचित्र में स्पष्ट किया गया है कि किस तरह एक स्त्री द्वारा अपनी छोटी से छोटी जिम्मेवारी को ईमानदारी पूर्वक पूरी की जाती है।

नीलिमा:–'निलीमा' रेखाचित्र बिना माता–पिता के जीने वाली एक लड़की की सजीव कहानी है। नीलिमा महिलाओं के सशक्तिकरण और उनकी स्वतंत्रता के संघर्ष का प्रतीक है। इस रेखाचित्र में लेखिका द्वारा यह बताया गया है कि इस समाज में महिलाएँ भी आत्म–सम्मान के साथ जीने के हकदार है।

घीसा:–'घीसा' रेखाचित्र में घीसा का मार्मिक चित्रण किया गया है साथ ही इस रेखाचित्र में समाज में उपेक्षित एक ऐसी स्त्री का स्थान निर्धारण किया गया है जिसे समाज की नासमझी के कारण बिना गलती की सजा दी जाती है। लोगों का कहना है कि घीसा का जन्म उसके पिता के मरने के बारह महीने बाद हुआ। इस कारण समाज में लोग घीसा की माँ को काफी अपमान सहना पड़ता है। जबकि सच इससे परे था।

बदलू:–'बदलू' रेखाचित्र में बदलू कुम्हार एवं उसकी पत्नी का जीवंत चित्रण किया गया है। बदलू पति–पत्नी अशिक्षित एवं काफी गरीब है। वह इतना गरीब है कि बच्चे दो वक्त रोटी भी पेट भर नहीं खा पाते है। वह इनता कमा भी नहीं पाता है कि परिवार का भरण–पोषण भी ठीक से कर सके। इसलिए परिवार को चलाने के लिए धर्मपत्नी भी दूसरे के यहाँ मजदूरी करती है। ताकि परिवार का भरण–पोषण ठीक से हो सके। इलाज के बिना बदलू की बेटी मर जाती है। इस रेखाचित्र में अशिक्षित स्त्री–पुरूष की दशा का सजीव चित्रण किया गया है।

भक्तिन:–'भक्तिन' रेखाचित्र में महादेवी वर्मा द्वारा घर परिवार व समाजिक कुव्यवस्था में त्रस्त ऐसी स्त्री का चित्रण किया गया है जो विवश होकर अपनी बेटियों को ही सारी दुनिया, जीवन का सहारा माना। दूसरी शादी करने के बजाय अपनी बेटियों की जिन्दगी सवारना उचित समझा। अपने पतिव्रता धर्म को निभाया लेकिन भक्तिन यानी लछमिन को अपना घर परिवार छोड़कर महादेवी वर्मा के यहाँ रहकर अपना जीवन व्यतीत करना पड़ा।

चीनीफेरे वाला:–चीनी फेरेवाला रेखाचित्र में महादेवी वर्मा द्वारा एक विमाता की कुकृति को दिखाया गया है जिसमें एक विमाता द्वारा अपनी सौतेली बेटी को अपने हाथों से सजा–सज्जा कर के अंधेरी रात में वेश्यावृति के लिए जबरन भेजती है। यहाँ विमाता के क्रुर रूप का चित्रण किया गया है।

बिबिया:–'बिबिया' धोबिन रेखाचित्र में बहुविवाह व अनमेल विवाह का चित्रण किया गया है। महादेवी वर्मा द्वारा बिबिया रेखाचित्र में बिबिया नामक ऐसी धोबिन की चर्चा की गयी है। जो समाजिक बंधन में इतना जकड़ गई है कि वह उससे मुक्त हो ही नहीं पा रही है। परिवार के लोग अपने घर की स्त्री को घर का प्रतिष्ठा समझने लगते हैं। नतीजा स्त्री का शोषण शुरू हो जाता है। इस पुरूष प्रधान देश व समाज में स्त्री, पुरूष की बात मानने व अत्याचर सहने को विवश है।

अभागी स्त्री:–अभागी स्त्री रेखाचित्र में महादेवी वर्मा द्वारा ऐसी महिला का सजीव चित्रण किया गया है जो चाह कर भी समाज में बेहतर जीवन नहीं जी सकती। समाज ऐसी स्त्री को स्वीकार नहीं कर सकता जिसकी माँ समाज में वेश्यावृति करने वाली थी। वह स्त्री चाहती है कि सभ्य समाज में बेहतर जीवन जी सके और अपना स्थान स्थापित कर सके लेकिन यह समाज उसी स्त्री को बेहतर जीवन जीने का अधिकार नहीं दे पाता है।

निष्कर्ष के रूप में स्पष्ट कहा जा सकता है कि महादेवी वर्मा ने अपने रेखाचित्र में जितने भी स्त्री का चित्रण किया है उसमें से सभी स्त्र पात्र का जीवन करूणामय है। सभी के जीवन में पुरूष वर्ग का घूसपैठ, अत्याचार, शोषण, समाजिक शोषण, पारिवारिक शोषण हुआ है। इनकी आर्थिक स्थिति भी काफी खराब रही है। समाज में इनकी स्थिति काफी खराब व दयनीय रही है। महादेवी जी ने इन सब में सुधार जैसे समाज में स्त्री की दशा में सुधार लाना, शिक्षित करने की व्यवस्था, बाल विवाह, अनमेल विवाह पर कड़ी टिप्पणी की है वह विधवा विवाह जैसी रिवाज को सराहा भी है। कुल मिलाकर कहा जाए तो महादेवी वर्मा ने स्त्री की दर्दुशा में सुधार के लिए उनके जीवन में बेहतरी के लिए पाठक को प्रेरित किया ।

स्त्री का जीवन व दशा में सुधार हो सके इस कार्य के प्रति महादेवी जी लोगों को जागरूक व सजग किया हो इनका साहित्य न केवल महिलाओं के लिए प्रेरणा श्रोत है, बल्कि आज भी महिलाओं के संघर्ष और सशक्तिकरण के लिए प्रासंगिक है।

संदर्भ सूची:–

1. वर्मा महादेवी, गिल्लू और अन्य रेखाचित्र, नई दिल्ली राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. वर्मा महादेवी, अतीत के चलचित्र, राजकल प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. पाण्डेय रामजी, महादेवी वर्मा प्रतिनिधि गद्य रचनाएँ, भारतीय प्रकाशन।
4. वर्मा महादेवी – स्मृति की रेखाएँ, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. जैन निर्मला– महादेवी संचयिता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. सिंह नामवर, छायावाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

लोकगीतों में नर्मदा

शुभम चौहान

शोधार्थी, हिंदी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल, मप्र.

नर्मदा लोक और लालित्य की नदी है, अनंत अनुराग और असीम आनंद की नदी है। उमंग, अनुराग, स्नेह और उत्सव की असंख्य लहरियों से युक्त नर्मदा का स्वर सनातन का शाश्वत प्रवाह है। लोक के आलोक में अनंतकाल से नर्मदा की स्तुति कोटि–कोटि कंठ कर रहे हैं। नर्मदा नदी संस्कृति वाहिनी नदी है, वह संस्कृति की सदैव से सृजक एवं पालक रही है। पौराणिक तथा लोक कथाओं में नर्मदा नदी आदिकाल से ही अपने आसपास रहने वाले समाज का उद्धार करती आ रही है। उसके तट पर रहने वाले अंचल–वासियों के साथ–साथ वहाँ के जीव जंतुओं और वनस्पतियों का भी जीवन वहाँफूल–फल रहा है। नर्मदा की धारा में सदैवसे जल के साथ–साथ समाज का हितप्रवाहमान हो रहा है, एवं जब किसी कारक द्वारा समाज का हितकिया जाता है तो समाज के द्वारा भी लौट कर उसका आभार एवं कृतज्ञता व्यक्त की जाती है, यह कृतज्ञता साहित्यिक एवं लोक विधाओं द्वारा व्यक्त की जाती है। गीत, कविता, भजन, मंत्र, यज्ञ अनुष्ठान आदि कर के आम जनमानस उन कारकों का धन्यवाद ज्ञापित करता है। लोक में एवं पुराणों में माँ नर्मदा की महिमा का बखान किया जाता रहा है,पुराणों के साथ मुख्य रूप से यह बखान विभिन्न अनुष्ठानों के साथ गाये गए गीतों के द्वारा किया जाता रहा है। चूँकि यह गीत लोक में, लोक के द्वारा, लोक में बह रही नर्मदा नदी के प्रति गुंजायमान होते हैं, इसलिए इन्हें लोकगीत की श्रेणी में रखा जाता है।

लोकगीत, लोक के द्वारा रचे गए, लोक में पोषित किए गए एवं लोक के द्वारा पूर्ण रूप से अपनाए व गाये गए गीत होते हैं, जिन्हें किसी एक व्यक्ति द्वारा सृजित न कर एक पूर्ण समाज द्वारा रचा जाता है। लोकगीत का जो रचनाकार होता है, वह अपने आप को संपूर्ण समाज अथवा लोक को समर्पित कर देता है। यह बात सर्वविदित है कि नर्मदापुरम (पूर्व में होशंगाबाद) के समीप आदिमानव के निवासित रहने के साक्ष्य प्राप्त हुए हैं,जहाँ पर आदिमानव कई लाखों साल पहले निवास किया करते थे, तथा वहाँ पर उन्होंने अपने विकास की गाथा को नए सिरे से प्रारंभ किया था। वह मानव एवं अन्य प्राणी समाज नर्मदा नदी के ऊपर पूर्ण रूप से निर्भर हुआ करता था। तब से ही मानव सभ्यता ने नर्मदा के ऊपर निर्भर रहकर स्वयं को पोषित किया है एवं उससे सभी प्रकार के संसाधन(भोजन, जल, कृषि, जलीय जन्तु) जुटाकर अपने आप को विकसित भी किया।

यह बात स्पष्ट है कि नर्मदा जी कोमाँ की संज्ञा दी गई है एवं यह संज्ञायूँ ही नहीं दी गई। माँ से बालक जन्म लेकर उससे पोषक प्राप्त करता है और स्वयं को शारीरिक एवं मानसिक रूप से विकसित भी करता है, तब हमें यह बात स्पष्ट रूप से समझ में आती है कि नर्मदा से विकसित होकर कई प्रकार के मानव जातियाँ, पशु–पक्षी एवं विभिन्न पेड़ पौधों की प्रजातियाँ विकसित हुई है।चूँकि मानव भाषा के पक्ष से संपन्न प्राणी है,जिस कारण वह अपनी माँ स्वरूप नर्मदा के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए उसकी महिमा का बखान आदिकाल से ही करता आ रहा है। नर्मदा नदी के लिए मुख्य रूप से जो लोकगीत गाये जाते हैं, वह उसके आसपास के निवासी अंचलों के लोगों के द्वारा ही गाये जाते हैं, जिनका वहाँ के आम जनमानस के साथ–साथ संपूर्ण भारतवर्ष में विशेष महत्व है। शास्त्रों की भाषा संस्कृत रही है एवं इसके पश्चात् अन्य भाषाओं का भी शास्त्रों में प्रयोग किया गया है। संस्कृत भाषा में भी नर्मदा माँ का बखान किया गया है, निश्चित रूप से ये उस समय के लोकगीत ही रहे होंगे। जिस प्रकार कहा गया है –

सतयुगेतुशांकरी नामा, त्रेतायामतुनिरुत्फला।
द्वापरेतुरेवायाम, कलियुगेतु नर्मदा।

लेखक शिवकुमार तिवारी एवं गोविंद प्रसाद मिश्र की पुस्तक ‘नर्मदा की धारा से’ की भूमिका में डॉ. सुरेश कुमार वर्मा लिखते हैं कि 卐भारत के मध्य प्रदेश के एक बड़े भू–भाग की जीवन रेखा है नर्मदा। इसके उत्तर दक्षिण तटीय क्षेत्र में निवास करने वाले समाज की लोक संस्कृति दिनचर्या और जीवन शैली से इसका अटूट रिश्ता रहा है। किसी लोकगीतकार ने यदि यह कहा है कि यह नदी यहाँ के लोगों के लिए संजीवनी और प्राणदायनी है तो कोई गलत नहीं कहा –

’नरबदा मैया –––––––
नरबदामैय्या मोरी
जीवन की नैय्या, तोरी––
लहराती धारा प्यारी
हहराती धारा जी में प्रान धरे–––।’[1]

मध्य प्रदेश के पोर–पोर में नर्मदा विराजमान हैं। प्रत्येक आंचल में माँ नर्मदा के लोकगीत गाये जाते हैं। बुंदेलखंड, मध्यप्रदेश का वृहद अञ्चल है,जहाँ पर सांस्कृतिक एवं लोक रूपी गीतों का बोलबाला है। बुंदेलखंड का बखान वहाँ की विभिन्न विधाओं में किया जाता रहा है। आल्हा छंद बुंदेलखंड का एक प्रमुख छंद है, आल्हा वीर रस प्रधान काव्य होता है, जिसमें बुंदेलखंडी बुंदेली बोली में विभिन्न गाथाएँ गाई जाती हैं। आल्हा छंद में माँ नर्मदा के अवतरण की कथा भी कही गई है। आल्हा में नर्मदा की अवतरण संबंधित गाथा इस प्रकार है–

’एक समय शिव शंकर भोला, पिया भांग जंगल में जाय
छोड़ा घर में पार्वती को, घोर तपस्या की है आय
बीत गए कितने दिन ऐसे शिव की लीला कही न जाए
खुली समाधि जब शंभू की चौंक के देखे नजर पसार
मस्तक से तब बहा पसीना, पोंछे पसीना शिव त्रिपुरार

दिव्य रूप धर कन्या प्रगटी, जिसका था अद्भुत अवतार
रेवा नाम पड़ा कन्या का नमन करें जिसको संसार।'[2]

अर्थात् एक समय की बात है, शिव जी ने जंगल में जाकर भांग-बूटी का सेवन किया तथा उन्होंने पार्वती माता को घर में छोड़कर जंगल में कठोर तपस्या की। लम्बे समय बाद जब भोलेनाथ की तपस्या पूर्ण हो गई तो विस्मित अवस्था में अपनी आँखें खोली। तब शिव जी ने अपने माथे पर आए हुए पसीने का साफ किया। इसी समय उस पसीने की बूंद से एक दिव्य रूपी कन्या का अवतरण हुआ। इस समय इस सुंदर कन्या का नाम रेवा(नर्मदा) पड़ा, जिसको सारा संसार आज पूज रहा है एवं उसके चरणों में नमन कर रहा है। लोकगीत भजन के रूप में भी गाये जाते रहे हैं एवं नर्मदा जी के महिमा तथा गुणों के बखान हेतु विभिन्न अंचलों में भजन स्वरूप लोकगीत गाए जाते हैं। नर्मदामध्य प्रदेश, गुजरात एवं महाराष्ट्र में बहने वाली प्रमुख नदी है, गुजरात अंचल में एवं मध्य प्रदेश के निमाड़ एवं मालवांचल में नर्मदा की महिमा भजन रूप में खूब बखानी गई है। नर्मदा के भजन स्वरूप अश्विन यदुवंशी जो कि कथा वाचक हैं, ने नर्मदा का लोकगीत रूपी कई भजन लिखे हैं। एक भजन इसप्रकार है-

'थारो निर्मल निर्मलपानी,
नर्मदा महारानी महारानी,
महारानी ने कल्याणी,
नर्मदा महारानी महारानी।।
माई थारा नीर माँ ब्रम्हा जी नहाया,
ब्रम्हा जी नहाया मैया डुबकी लगाया,
थारी पूजा करे हो ब्रम्हाणी,
नर्मदा महारानी महारानी,
थारो निर्मल निर्मल पानी,
नर्मदा महारानी महारानी।'[3]

हम सभी जानते हैं कि नर्मदा नदी अमरकंटक क्षेत्र से निकली है जो कि मध्य प्रदेश का सघन वन वाला क्षेत्र है। इस क्षेत्र के अंतर्गत अनूपपुर, शहडोल, उमरिया,डिंडोरी, मंडला, जबलपुर, सिवनी, नरसिंहपुर आदि क्षेत्र आता है। हम यह भी जानते हैं कि जहाँ पर वनों का क्षेत्र अधिक होता है,वहाँ पर जनजातीय समुदाय के लोग अधिक निवास करते हैं। यह जनजातीय निवास समुदाय के लोग आदिकाल से प्रत्येक शुभ कार्य में एवं अनुष्ठान में माँ नर्मदा का आवाहन अवश्य करते हैं। यह पूजा एवं अनुष्ठान उनके द्वारा गाये गए जनजातीय लोकगीतों के द्वारा संपूर्ण होते हैं। बैगा जनजाति मध्यप्रदेश के डिंडोरी, मंडला,सिवनी एवं शहडोल क्षेत्र के अधिक निवास करती है उनके यहाँ'सुमिरिनी' या आवाहन नृत्य गीत गाये जाते हैं, जिनमें नर्मदा का आवाहन किया जाता है,उनकी महिमागाई जाती है।ये गीत बैगा समुदाय के लोग परस्पर टोली बनाकर एक-दूसरे के सम्मुख खड़े होकर नृत्य करते हुए गाते हैं। बैगा जनजाति का लोकगीत कुछ इस प्रकार है-

तोला गायों, देवि नर्मदा पहली पवार हुई रे ऽऽऽ
केखर गायों में तो केखर बजाय ओ हो ऽऽऽ
पहली पवार हुई रे ऽऽऽ
खेरों के गायों में तो ठाकुर बजाय ओ हो ऽऽऽ
पहली पवार हुई रे ऽऽऽ
जरिया के जड़ी-बूटी छीन्दीछतनार ओ हो ऽऽऽ
पहली पवार हुई रे ऽऽऽ
केला को हम दे थन केला तो धूप ओ हो ऽऽऽ
पहली पवार हुई रे ऽऽऽ
मैया ला हम देथननरियल सुपारी ओ हो ऽऽऽ
पहली पवार हुई रे ऽऽऽ[4]

अर्थात हे देवी नर्मदा! सबसे पहले आपका स्मरण करता हूँ । मैं किसके लिए करता हूँ? किसके लिए बजाता हूँ? मैं खेरों देव (गाँव के भूमि रक्षक देवता) के लिए गाता हूँ और ठाकुर देव (गाँव के जनरक्षक देवता) के लिए बजाता हूँ। मैं संपूर्ण प्रकृति की आराधना करता हूँ, जिसमें छोटी झाड़ी से लेकर जड़ी बूटियाँ एवं बड़े-बड़े वृक्ष हैं। हम दो धूप-दीप देकर किसकी पूजा करते हैं? हम नर्मदा मैया को नारियल सुपारी चढ़ाकर पूजा करते हैं। नर्मदा लोक में इस प्रकार रची बसी है कि उसकी महिमा प्रत्येक बोली एवं भाषा में गायी गई है, अगर हम ध्यान से देखे हैं तो मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र एवं गुजरात के प्रत्येक जनजातीय एवं आंचलिक क्षेत्र में बोली जाने वाली लगभग प्रत्येक भाषा में नर्मदा की महिमा गायी गई है। जब हम इस भारतवर्ष के विस्तार में समझने का प्रयास करते हैं, तब भी हमें वैदिक संस्कृत से लेकर पाली, प्राकृत, अपभ्रंश तथा वर्तमान की सभी उत्तर एवं दक्षिण भारतीय भाषाओं में नर्मदा का कोई न कोई लोकगीत मिलता ही है।इससे यह सिद्ध होता है कि नर्मदा भारतवर्ष के परिपेक्ष में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। निमाड़ क्षेत्र मध्यप्रदेश का एक प्रमुख अंचल है,यहाँ भी नर्मदा माई की कृपा उनकी सदा नीराधार के रूप में लोक में प्रवाहित होती है। यहाँ की बोली निमाड़ी है,जहाँ पर जिसमें विभिन्न प्रकार के लोकगीत गाये गए हैं। ग्राम 'वरुड़' के श्रीमती लक्ष्मीबाई श्रीकृष्ण जीकुमरावत नर्मदा जी की महिमा कुछ इस प्रकार गाते हैं -

तेरे चरणों में चारों धाम
नर्मदा मैया लाज रखना
कंकू बिन हल्दी, नऽ हल्दी बिन कंकू।

साथ ही निमाड़ अंचल के ग्राम वरुड़ के ही छाया छोगालाल कुमरावत नर्मदा जी की महिमा निमाड़ी भाषा में इस प्रकार से गाती हैं -

'नरबदाखळमळड़ जाय
कि तवो पछो सरकतों जाय
पयली जो बार मऽखारिक चढ़ाया।
खारिक का शंख बनाया हो॥
कि तवो पछो सरकतों जाय....
दूसरी जो बार मऽ बादाम चढ़ाई।
बदाम की सीप बनावटी जाय॥
कि तवो पछो सरकतोंजाय....
तीसरी जो बार मऽनायळड़ चढ़ाया,
नायळड़ का टोळड़याबनावतीजाय।
कि तवो पछो सरकतोंजाय....'[5]

अर्थात् तवा नदी विवाह की अभिलाषा(प्रचलित लोक कथा) से नर्मदा को खारिक(खजूर), बादाम, नारियल, शक्कर और चूनर चढ़ाता है, परंतु नर्मदा अपने पूरे वेग से कल-कल करते हुए आगे बहती जाती है। जिससे तवा नदी को भी पीछे हटना पड़ता है। उसके द्वारा चढ़ाई सामग्रियों को नर्मदा अपने प्रताप से बदल देती है, जिसमें खारिक को शंख, बादाम को सीप, नारियल को पत्थर, शक्कर को बालू(रेत) और चुनरी को कन्जी बना दिया जाता है। नर्मदा के तटों के आसपास रहने वाले लोग उनके लिए 'भगत' भी जाते हैं। भगत का अर्थ भक्ति गीत होता है। इन भक्ति गीतों में आम जनमानस आपने कुल देवियों के साथ-साथ नर्मदा जी की भी स्तुति करता है। इनकी संगीतमय धुन सारे नर्मदा तटों पर लगभग एक सी ही होती है, भाषा एवं बोलियों के आधार पर शब्दों में हेर-फेर होना स्वाभाविक है। मनीष मिश्रा अपनी पुस्तक 'नर्मदा : संस्कृति और

इतिहास' में उदाहरण स्वरूप एक लोकगीत का आशय लेते हैं, जो कि नर्मदा के प्रभाव से ओत-प्रोत जनमानस द्वारा गया जाता है –

'पार करो वैतरनी रे
तरनी तेरो नाम,
पार करो वैतरनी रे
नमो नमोजैनर्मदे.. जै हो माँ
नमो नमो...
निर्मल जल की बह रही रे,,,,
निर्मल जल की,,,
अमरित सी धार,,, नमो नमो हे नर्मदे
जै हो माँ'[6]

अर्थात् हे माँ नर्मदा! तुम लोगों को भवसागर से तारती हो यही कारण है कि लोग तुम्हें तरणी(भवसागर से तारने वाली) कहा करते हैं। हेमाँ नर्मदा! मैं तुमको प्रणाम करता हूँ। तुम्हारे जल की जो निर्मल धारा बह रही है, वह अमृत जैसी है। माँ नर्मदा, मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ।

नर्मदा कल्पवल्ली माँ नर्मदा के महत्व से परिपूर्ण पुस्तक है। इसमें माँ नर्मदा की महिमा के साथ उनके विभिन्न भाषाओं में गीत एवं श्लोक दिए गए हैं। इस पुस्तक के प्रारंभ में ही कुछ लोकगीतों का लेखन भी इसमें किया गया है। 'रेवा माँ' शीर्षक का लोकगीत कुछ इस प्रकार है, जिसमें भाव रूपी पुष्प माँ नर्मदा के बखान हेतु उनके चरणों में अर्पित किए गए हैं –

लहर-लहर में रेवा माई सेवा तेरी पाई।
कर अभिषेक अखंडित शिव का महिमा दश दिशिछाई॥
कण – कण में भर रही मधुरिमा, पय पायस हो जाए।
पा प्रसाद प्रमुदित नर-नारी हर्ष हृदय भर लाए।
नाम नर्मदा क्यों न होय फिर जन – जन की सुखदाई।
अमित प्रभाव तपस्वी गण से वर्णित तेरी माई।
दिव्य धाम प्यारा है सारा, देव दनुज हितकारी।
मनुज आज भी हैं कृतार्थ पा तुझे होय बलिहारी।[7]

माँ नर्मदा की परिक्रमा करने वाले भक्तों के मुख से अनेकानेक लोकगीत सदैव उच्चरित होते रहे हैं। जो भी भक्त उनकी परिक्रमा करता है, अवश्य ही उनके लोकगीतों को गाकर अपने मन को रस प्रदान करता है। 'तपोभूमि नर्मदा' में शैलेंद्र नारायण घोषाल शास्त्री एक संस्मरण में वहाँ के एक परिक्रमा करने वाले संत के द्वारा गाये जाने वाले लोकगीत(माँ नर्मदा को भोग लगाते हुए गाया गया) का रेखांकन इस प्रकार करते हैं –

'महाराज जी का पकाया हुआ भोग बनकर तैयार हो गया। टिकिया, अरहर की दाल तथा कढ़ाई के भोग को लेकर वह मंदिर के अंदर भगवान को अर्पित करने गए। उनके भोग निवेदन का मंत्र भी विचित्र था –

मेरे आंखों के दौतारे
कपूर धवल सुता नीला ज्योतिर्मयी इह दौ रूप उजारे।
शिवसुंदर नर्मदा मनोहर कैलाश भृगुमंडल बाढ़े।
शुक शारद नारद बलिहारी, महिमा बर्नत हारे।'[8]

नर्मदा नदी जीवन के प्रारंभ से अंत तक मनुष्य की यात्रा में साथ देने वाली नदी है, यह हमारे भारत की संस्कृति में प्रत्येक त्यौहार की साक्षी होती है। मनुष्य के जीवन में सभी प्रकार की समृद्धि नदी के किनारे ही आती है क्योंकि नदी से ही मनुष्य सारे खनिज संसाधन दोह कर अपने जीवन को संपन्नता देने का प्रयास करता है। जब जीवन में खुशी की घड़ियाँ आती हैं तब मनुष्य त्यौहार के रूप में मनाता है। भारतीय संस्कृति में नदियों को प्रत्येक त्यौहार में याद करने की परंपरा चली आई है, होली, दीवाली या रक्षाबंधन सभी में उन्हें याद कर उनका धन्यवाद दिया जाता है। मध्य प्रदेश में दिवारी गीत, होरी गीत आदि में नर्मदा जी को याद करने की परंपरा है। दीपावली में विजय भावना से ओतप्रोत गीत गाये जाते हैं, जिन्हें दिवारी गीत कहा जाता है। दिवारी गीत में नर्मदा के सेवा गीत गाये गए हैं, जो इस प्रकार हैं-

धौरी बगरी धुवघटाखलीलीकेन कछार रे।
नाचन बगरी नरबदा, लालईपैले पार रे, ओ हो ऽऽऽ ॥

अर्थात धावलवर्णी बकरी धोबीघाट की ओर अपनी उदर पूर्ति (चरने) करने गई है, लीली (कत्थई) रंग की गाय केन नदी की ओर चली गई है, नाचन गाय नर्मदा के कछार में चर रही है, एवं लाल गाय नर्मदा की दूसरी ओर चली गई है। इसी प्रकार धन्यवाद स्वरूप नर्मदा की महिमा का बखान भी दिवारी गीत में किया गया है-

भली बात ऐसी भई, माई में जो नहाय रे।
या जिंदगानी पार कर, सीधे बैकुंठजाय रे, हो ऽऽऽ ।।[9]

इन पंक्तियों में कहा गया है कि नर्मदा में जो मनुष्य स्नान करता है, उसे स्वर्ग की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार के गीत नर्मदा के अंचलों में होली, रक्षाबंधन एवं अन्य त्यौहारों पर भी गाये जाते हैं। इस बात कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि भारत में जितने प्रकार के त्यौहार मनाए जाते हैं, उन सबका केंद्र नदियाँ ही होती हैं। नर्मदा भी मध्य भारत के तीन राज्यों के जीवन का केंद्र बिन्दु है, अतः उनका गुणगान भी विभिन्न गीतों एवं लोकगीतों में किया जाना स्वाभाविक है। नर्मदा की महिमा जितनी गायी जाए,उतनी कम है। विभिन्न भाषाओं,बोलियाँ एवं जनजातीय अंचलों में नर्मदा की महिमा अपने-अपने हिसाब से गायी गई है। नर्मदा केवल नदी मात्र नहीं है, अपितु लोक के कण-कण में बसी हुई जीवित रेखा के समान है। नर्मदा जी के इन्हीं गुणों के कारण उन्हें जीवित नदी का दर्जा भी प्राप्त है। वह लोक का आदिकाल से पालन-पोषण करती आ रही हैं, जिसे लोक में गाये जाने वाले लोकगीतों के माध्यम से सुना एवं गुनगुनाया जा सकता है। माँ नर्मदा ऐसे ही लोक में प्रवाहमान होती रहें एवं हम सभी प्राणियों का कल्याण करती रहें, यही कामना है।

नर्मदा मैया ऐसी तो बहे रे ऽऽऽ......

संदर्भ सूची:-

1. तिवारी, शिव कुमार, मिश्रा, गोविंद प्रसाद, नर्मदा की धारा से, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, 2007, भूमिका
2. मिश्रा मनीष, नर्मदा : संस्कृति और इतिहास, मोतीलाल बनारसी दास पब्लिशिंग हाउस, पृष्ठ 132-133
3. अश्विन यदुवंशी, भजन गंगा
4. चंदेल, डॉ प्रताप सिंह, चौमासा, संपादक डॉ. धर्मेंद्र पारे, अंक 120, नवंबर 2022 – फरवरी 2023, पृष्ठ 75
5. कुमरावत, छोगालाल, चौमासा, सं.- डॉ. धर्मेंद्र पारे, अंक 120, नवंबर 2022 – फरवरी 2023, पृष्ठ 116-117
6. मिश्रा, मनीष, नर्मदा : संस्कृति और इतिहास, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशिंग हाउस, पृष्ठ 130- 131
7. गिरी, स्वामी ओंकारानंद गिरी, नर्मदा कल्पवल्ली, पृष्ठ 5
8. शास्त्री, शैलेंद्रनारायणघोषाल, तपोभूमि नर्मदा प्रथम खंड, पृष्ठ 170
9. चंदेल, डॉ प्रताप सिंह, चौमासा, संपादक डॉ. धर्मेंद्र पारे, अंक 120, नवंबर 2022 – फरवरी 2023, पृष्ठ 78

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

एकविंशशतके संस्कृतगद्यसाहित्ये ज्योतिषं पर्यावरणचिन्तनश्च

रक्षा भारद्वाज
डॉ. धर्मेन्द्रकुमारसिंह देवः

1. शोधच्छात्रा, साहित्यविभागः, केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः, भोपालपरिसरः मप्र.
2. शोधनिर्देशकः, साहित्यविभागः, केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः, भोपालपरिसरः मप्र.

अस्माकं देशे पर्यावरणचेतना नाद्यतनीया। आवैदिक– वाङ्मयात् लौकिकसाहित्यपर्यन्तं प्रवृत्तरेखा परिलक्ष्यते। भारतीयजीवने प्रकृतिः देवतुल्या। तत्र ये नगाः, नद्यः, पादपाः, पशवः पक्षिणः, उरगा अन्ये च सर्वे देवतावत् पूज्याः। तेषां संरक्षणं धर्मवद् विहितमिति व्यज्यते।अस्मान् परितः सन्ति यानि कान्यपि प्रकृतेरुपादानानि तानि सर्वाणि सन्ति पर्यावरणक्षेत्रे। उपरिगमनमण्डलं, मध्ये पृथिवीतलम् अधश्चाण्विजलं तत्र सर्वे प्राणधारिणिवनेषु ग्रामेषु वा ये जन्तवो हिंसा वाहिंसा वा। धरिण्यां जलं भूमेरध उपरि वा सर्वत्र तटेषु वा। एतत् सर्वमस्माकं करणीयं कर्तव्यम्। लोकमंगलहेतोरस्माकं पूर्वजैरेतद् अनुभूतम्। पर्यावरणसंरक्षाः प्रयासास्तैर्विहिताः। संस्कृतम् एतत् परिलक्ष्यते। संस्कृतवाङ्मये दृश्यते लौकिके च तत्रापि दृश्यकाव्ये श्रव्यकाव्ये च गद्ये वा पद्ये वा।

प्रकृतेर्ये प्रमुखघटकास्ते सर्वे भारतीयसंस्कृतौ देववत् पूज्याः। पर्यावरणसंरक्षणे तेषां महत्वं सविशेषम्। गङ्गायमुनाप्रभृतयः सरितो मातृवत्पूजनीयाः। भूमिसिंचनक्षेत्रे महती तासां भूमिका। सुकरं तेन कृषिकर्म। तासां संरक्षणेन जीवनं जनानां सुखसमन्वितम्। हिमवत्प्रभृतयः पर्वता अपि प्रकृतिघटकाः। पर्यावरणसंरक्षणे तेषां महत्वं प्रकृष्टम्। राष्ट्रियतां रक्षन्ति गिरयः। तेनाभ्यन्तरे पर्यावरणे याति समताम्। तोयं काष्ठमौषधञ्च यच्छन्ति नगाः। अतो रक्षणीयास्ते। वनानामपि महत्वं महद्वर्तते। तत्र वृक्षा वारि निरुन्धन्ति भूम्यन्तरे। वारयन्ति ते भूमिक्षरणाम्। काष्ठेन्धनकष्टमपि समाधीयते। वनेषु सन्ति नैकविधा जन्तवः सौम्याः क्रूराश्च। जीवो जीवस्य भोजनमिति न्यायेनैको हिंस्रः पशुर्जन्तुर्वा यथाऽहिरण्यं जीवमत्ति यथाऽऽरंबुधः कृषकाणां क्षेत्रं प्रविश्य सत्यं खादति विनाशयति वा। एवं पर्यावरणसमतुल्यता संरक्ष्यते। अनेनैव कारणेन भारते देशे नद्यः सम्पूज्यन्ते, नगाः सम्पूज्यन्ते, द्रुमाः सम्पूज्यन्ते जन्तवश्चापि सौम्या धेनुप्रभृतयो हिंसा वोरगादयः।

पर्यावरणचेतना संहितासाहित्ये प्रतिपादिता। वैदिकवाङ्मये याऽपि देवताविषयक प्रकल्पना, प्राधान्येन सा प्रकृतिघटकावमव्यैव। यथा पृथिवी, सूर्यः, वायुः, पर्जन्य उपाश्वेह्यादीनां प्रकल्पना। तत्र प्रभाते लोकं स्वप्रकाशेन पूरयन्त्याः समन्ततः पर्यावरणञ्चालोकेन समलंकुर्वत्यास्तमोहन्त्र्या उषस आगमनस्य ऋग्वेदे प्रशस्ततमवर्णनं प्राप्यते।

ज्योतिषशास्त्रेऽपि पर्यावरणसंरक्षणमभिव्यंजितम्–

उक्तञ्च पाणिनिशिक्षायाम्––––

शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम् ।
ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते ॥
पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते ।
तस्मात् साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते ॥

षडङ्गेषु ज्योतिषस्य महत्वम् अत्यधिकम्। 'ज्योतिषां सूर्यादिग्रहाणां बोधकं शास्त्रं ज्योतिषशास्त्रम्। शास्त्रेऽस्मिन् सौरमण्डलस्य स्वरूपं रहस्यं च, खगोलस्य स्वरूपं, पृथिव्याः आकारः, चन्द्रस्य परिकल्पना, ग्रहविषयकसिद्धान्ताः, वेधशालायन्त्राणि, नक्षत्रमण्डलानि, आकाशगङ्गादयश्च विविच्यन्ते। अस्मिन् हि शास्त्रे ग्रहनक्षत्रादीनां गतिस्थितिसञ्चारानुसारं पृथिव्या उपरि सम्भावितशुभाशुभफलानां निर्देशाः क्रियन्ते। कर्मप्रधानेऽस्मिन् संसारे कदा कथं च कि कर्म सम्पादनीयमिति कार्यकर्मफलज्ञानं विज्ञानमिदमेव प्रददाति। ज्योतिर्विज्ञाने ऋतुविज्ञानं वास्तुविज्ञानं, सामुद्रिकविज्ञानं, जातकफलकथनं, कृषिविज्ञानं, व्यक्ताव्यक्तगणितविद्या, वृक्षायुर्वेदः, ग्रहचिकित्सा, भूकम्पः, उत्पातः, खगोलभूगोलदृग्गोलविज्ञानानि। रत्नविज्ञानादिबहुविधविषयाः विद्यन्ते।

साम्प्रतं तथ्यमिदं प्रायः सर्वैरेव ज्ञायते यत् सौरमण्डले अनेके ग्रहाः, नक्षत्राणि, तारामण्डलम्, आकाशगङ्गा, पृथिवी, जलं, वायु, आकाशादितत्त्वानि विद्यन्ते। सर्वेषु एतेषु तत्त्वेषु घर्षणम् आकर्षणञ्च सततं प्रचलति। एततफलस्वरूपं नानाविधाः विस्फोटाः काले काले जायन्ते एतेषां सुस्पष्टप्रभावा मनुष्याणां जीवजन्तूनां वनस्पतीनां पर्यावरणस्य चोपरि परिलक्ष्यन्ते। ज्योतिषशास्त्रं सर्वेषाम् एतेषां सूक्ष्माध्ययनं विधाय मानवजीवनं सुखमयम् निरामयं च कर्तुम् इच्छति। वस्तुतः ज्योतिषशास्त्रेषु प्रतिपादितानां सिद्धान्तानां समन्वयः यदि आधुनिकविज्ञानेन सह भवेत् तर्हि सर्व लोकः आनन्देन जीवेत।

रामायणमहाभारतयो भूतानुकम्पा प्रशस्ता। प्रकृतिं प्रति प्रेमश्चापि प्रशस्तम्। सत्वहिंसाविरोधेऽव रामायणरचनाऽऽधारः। यत्र महाकविः क्रौञ्चवधं वीक्ष्य तत्क्षणमेव स्वविरोधं प्रकटीकरोति।

मा निषाद ! प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ।। इति ।।

रामायणे रामकथाया विकासोऽधिकाशंतः वनानां पवित्रप्रशान्तपर्यावरणे सम्भूतः। अनेकेषां दुष्टराक्षसानां दलनं वनेष्वेव। श्रेष्ठमुनीनां तपस्या वनेष्वेव संजाता। दुष्टराक्षसरावणस्य वधयोजना वने एव निर्मिता। सीतानिष्कासनजीवनं वाल्मीकेः शान्तवने एव व्यतीतम्। कुशलवयोर्जन्मतयोः परिपालनञ्च वाल्मीकेराश्रमे प्रशान्तपर्यावरणे एव। वाल्मीके- प्रशस्तपर्यावरणस्य प्रकल्पनानिम्नांकिते पद्य आश्रमवर्णने वर्तते‌ङ्क

शरण्यं सर्वभूतानां सुसम्भृष्टाजिरं तथा।
मृगैर्बहुभिराकीर्णं पक्षिसंघैः समावृतम् ।।

लौकिकसंस्कृतकाव्यान्तर्गते महाकविकालिदास–प्रणीतेऽभिज्ञानशकुन्तले नाटके कविना पादपसंरक्षणं प्रतिपादितं पुष्पाणि प्रत्युनुकम्पाभावश्च। पद्यमिदम् : –

न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या,
नादत्ते प्रियमण्डनाऽपि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।

आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः,

सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्।।

एतेन वर्णनेन वृक्षपुष्पाणां संरक्षणमभिव्यंजितम्। कालिदासकृतिष्वाश्रमपरिसरेषु मृगयाऽपि वर्जिता। राजाऽप्याश्रमशान्तिभङ्गनाक्षमत। आश्रमेषु वायुमण्डलं यज्ञधूमेन प्रदूषणमुक्तं पवित्रं सुरभितश्चासीत्। विक्रमोर्वशीयेनाटकेऽप्याश्रमे सत्वानुकम्पाऽऽश्रमं परितः पर्यावरणसंरक्षा च निरूपिता। पंचमेऽङ्के राजपूतोराश्रमविपरीतमाचारणं ज्ञात्वाऽऽचार्यच्यवनस्तमाश्रमान्निष्कासितवान्। भास-शूद्रक - भवभूति प्रणीतेषु नाटकेष्वपि प्राणिरक्षणमभिव्यक्तम्। पर्यावरणसंरक्षा वाप्यभिव्यक्ता उत्तररामचरिते प्रथमे पद्यमिदं तपोवनं परितः प्रशान्तिं, पर्यावरणपवित्रताश्च सूचयति

एतानि तानि गिरिनिर्झरिणी तेषु,

वैसानसाश्रिततरुणि तपोवनानि ।

येष्वातिथेयपरमा यमिनो भजन्ते,

नीवारमुष्टिपचना गृहिणी गृहाणि।।

एवं च महाकाव्येष्वपि पर्यावरणचेतना अभिव्यक्ता। रघुवशे प्रथमे सर्गे वसिष्ठाश्रमवर्णनं महाकवेः पर्यावरणचेतनामेव द्योतयति

सेकान्ते मुनिकन्याभिस्तत्क्षणोज्झितवृक्षकम्।

विश्वासाय विहंगानामालवालाम्बुपायिनाम्।।

्एवं कुमारसम्भवेऽपि पर्यावरणसंरक्षणमभिव्यंजितम्। हिमादिवर्णनप्रसंगे प्रथमे सर्गे तत्र पर्यावरणपावित्र्यं प्रकल्पितम्। तत्रत्यं वायुवर्णनम् -

भागीरथी निर्झरसीकराणां बोढा मुहुः कम्पितदेवदासः।

यद्वायुरन्विष्टमृगैः किरातैरासेव्यते भिन्नशिखण्डिबर्हः।।

आचार्यराधावल्लभत्रिपाठिना रचितं रुमीपञ्चदशी इत्यस्य आरम्भः भारतीयवृक्षेण जातः। प्रकृतेः चित्रणे प्रकृतिप्रेमी हृदयं कथनम् अनिवार्यं वर्तते, तस्य अभावे प्रकृतिचित्रणम् सम्भवं नास्ति। मुल्लानसरुद्दीन इत्यस्य कथा अमरत्वं प्राप्तुं यस्मिन् वृक्षस्य उपालम्भनं नीत्वा जाबालिमुनेः मुखात् शरीरम् एव वृक्षस्य संज्ञया अभिहितं कृतम्।

'ततः समग्रेऽपि राज्ये भारतीयवृक्षम् अधिकृत्य कर्णाकर्णिकया किंवदन्त्यः स्यन्दन्ते स्म। क्रमात् राजानमपि एताः किंवदन्त्यः उपसृताः। भारतीयवृक्षविषये राज्ञः कौतुकं जातम्।

स आदिशत्- प्रेष्यतां दूतः भारतं प्रति। स तत्र गत्वा एतादृशस्य वृक्षस्य फलानि अस्माकं कृते आनयतु इति'। तथा 'स वृक्षः कुत्र वर्तते यस्य फलं भक्षयित्वा नरः वार्धक्येन बाधितो न भवेत्, न वा म्रियते?' तथा 'जाबालिर्मुनिः करुणापूरिताभ्यां नयाभ्यां तं पश्यन् अवदत् वत्स, एतादृशः वृक्षः वस्तुतो न भवति। इदं शरीरमेवैतादृशः वृक्षः अथवा सूर्यः, पवनः, चन्द्रः एतेऽपि तादृशा वृक्षाः। संसार एव एतादृशो वृक्षः। एनं वयं नामभेदैः विविधं वर्णयामः। नामभेदात् भेदबुद्धिर्भवति। तत्वं तु एकमेव। स च वृक्षः बहिर्भ्रमणेन अन्वेष्टुं न शक्यते, स तु मनुष्यस्य अन्तः वर्तते'। तथा च 'लघु हरितं च द्विपम्' शीर्षकेन लिखितकथायां प्रकृतिचित्रणं प्रस्तुतम्। यथा-'इयं धेनु वर्तते मनुष्य जीवः। लघु हरितं च द्वीपम् अस्ति इयं धारित्रि। जीवो वर्ते गृहनुः। स स्वगृहनुतया सर्वा सम्मिमात्मसात् कर्तुं चेष्टते। यावत् प्राप्तं तावतोऽधिकं मे स्यादिति चिन्तयति। जीवः चिन्तया दीनः कृशश्च भवति, आशीर्वचोभिः पुष्टिं च प्राप्नोति'। न केवलं प्रकृति वर्णनस्य अपितु प्रकृतिसंरक्षणस्य संदेशम् अपि दीयते-'तस्य एत व्रतम्- कदापि वृक्षेभ्यः फलं न त्रोटयिष्यामि, फलस्य सङ्ग्रहाय न कदापि कमपि वृक्षं धूनयिष्यामि न कदापि मत्कृति केनचित् आनीतानि चित्वा दीयमानानि वा फलानि स्वीकरिष्यामीति'।

सागरस्य विषये प्रो. त्रिपाठिना लिखितम् 'सागरः स्वफेनिलेऽगादेऽम्बुराशौ अद्भुतां कामपि सृष्टि गोपयित्वा स्थितः। तत्र मत्स्य - झष - तिमि - मिमिंगल नकप्रभृतयः सहस्त्रविधा जलजन्तवः तानि तानि दुर्लभ- बहुमूल्य-रत्नानि, विचित्राश्च वनस्पतयो विलसन्ति। वैज्ञानिकानां कृते अन्वेषणस्य अकृष्टक्षेत्रं विपुलमसौ सागरः समुपस्थापयति। सृष्टेः स्वारस्यम् अन्येयैव दृशा विलोकयतां कवीना कृते तु सागर- प्राणमयः पुरुष एव'।

एवं प्रकारेण केरलराज्यस्य वर्षायाः सौन्दर्यस्य वर्णनम् अतिशयेन कृतम्। यथा 'वहिर्वर्षाः देवो ....वर्षति।

मेघा नभसस्तलान्नीचैरवनताः। कृष्णां मेघाः। केरलेषु वर्षायाः का कथा। एतत् तु सलिलनिधौ सौहित्यकरणम्, हरीतिम्नि हरीतिम्न आधानम् आप्लवने पुनराप्लवनम्'। स्वर्गस्य कथां बालकं विशाखं वदन् गङ्गायाः वर्णनं करोति- 'गङ्गा नदी तु स्वर्गात् विनिः सृता। अनन्तरं या अन्तरिक्षे ततः परं भूलोके प्रवहति। वयं गंगायाः भूलोकस्य स्त्रोतः यावत् समागताः। ततः परमवश्यं स्वर्गः स्यात्। विभिन्नाः पादपाः नानाविधानि पुष्पाणि। तेषां नामानि शान्तिशीलो जानाति। पादयोरधः हिमालयस्य शीतलाः शिलाः, उपरि विततं गगनम्। परितो देवदारू वृक्षाः'। तथा च अन्यत्र स्थले हिमालये विशाखेन सह प्रकृतेः चित्रणम कृतम्

'एकदा सायङ्?काले नभो निर्मलमदृश्यत। प्रसन्नः पवनः आकाशादवतीर्य मुखं परामृशति, स्कन्धौ संवाहयति। शान्तः स्थिरो गुहापरिसरः। वृक्षा अपि निष्कम्पं स्थिताः। अस्तङ्?गच्छतो दिनकरस्य किरणाः स्वर्णिमंस्नस्तरं निर्मान्ति स्म'।

त्रिपाठीवर्यः हिमालयक्षेत्रस्य वर्णने तत्र प्रकृतेः परिवर्तनशीलस्य स्थितेः वर्णनम्-'कर्कशकटुविरावैरतिभीषणं रवं विमुञ्चन्तो प्रबलैरासारैर्वर्षितुमारब्धवन्तो मेघाः। हिमालयोऽपि कम्पते स्मेति प्रतिभाति। प्रस्तराः पर्वताग्रात् स्खलन्ति स्म,निपतन्ति च स्म। मेघानां गर्जनं, प्रस्तणां च भ्रंशः प्रभञ्जनस्य च उत्कट उग्रो श्रवणभैरवो रवः- एते सर्वे शब्दा मिलित्वा कर्मापि कोलहलं कुतपं विरचयन्ति स्म'।

एतेन स्पष्टं भवति यद् वैदिकवाङ्मयाद् आरभ्य लौकिककाव्यपर्यन्तं सर्वत्र पर्यावरणचेतना परिलक्ष्यते तत्संरक्षणप्रवृत्तिश्च। आधुनिके युगेऽपि तच्चेतनाऽपरिहार्या। किन्तु हन्त सम्प्रति पर्यावरणसंरक्षणम्प्रति परिलक्ष्यत औदासीन्यम्। तत्परिणामा अपि लोकेनानुभूयन्ते। अतो न कोऽपि विकल्पोऽस्ति पर्यावरणसंरक्षाविषये, लोककल्याण-मभीष्टश्चेत्। तत्कृतेऽनुकार्या संस्कृतवाङ्मयेऽभिव्यक्ता पर्यावरणचेतना।

संदर्भग्रन्थाः-

1. अर्वाचीन संस्कृत साहित्य (दशा एवं दिशा), ड़ॉ मञ्जुलता शर्मा, परिमल पब्लिकेशन्स 27/28 शक्तिनगर, दिल्ली 110007, प्रथम संस्करण 2004
2. आधुनिकसंस्कृतसाहित्येतिहासः, देवर्षिकलानाथ शास्त्री,जगदीश संस्कृत पुस्तकालय, जयपुर 302001, नूतन संस्करण 2010
3. अन्यच्च(उपन्यासः), प्रो.राधावल्लभत्रिपाठी, संस्कृतभारती,नवदेहली 110055,प्रथम संस्करण 2011
4. अभिज्ञानशाकुन्तलम्,डॉ.गङ्गासागरराय, चौखम्भा संस्कृत संस्थान वाराणसी-221001, वि.सं.2065
5. उत्तररामचरितम्, डॉ. कपिलदेव द्विवेदी आचार्य, 2 कटरा रोड, इलाहाबाद-211002,संस्करण 2009
6. रूमी पञ्चदशी- प्रो.राधावल्लभत्रिपाठी, संस्कृतभारती,नवदेहली
7. रघुवंशमहाकाव्यम्, डॉ. रमाकान्त त्रिपाठी, चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी-221001,संस्करण 2018

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025

MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

वैश्विक संस्कृति के सामाजिक संदर्भ : भारतीय परिप्रेक्ष्य में

राजश्री भारद्वाज

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी, सत्यनारायण अग्रवाल शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, कोहका, नेवरा, रायपुर, छत्तीसगढ़

वैश्विक स्तर पर विभिन्न संस्कृतियां आदान-प्रदान के द्वारा एक - दूसरे से जुड़ी हुई है। भारत की सांस्कृतिक विविधता ईश्वर एवं धर्म में आस्था अन्य देशों को आकृष्ट करती है। प्राचीन काल से भारत की सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक धरोहरों के प्रति वैश्विक देशों की आस्था रही है। पीढ़ी दर पीढ़ी से हस्तांतरित होती हुई वर्तमान में संस्कृति का स्वरूप परिवर्तित होता आया है। जिसने लोगों की रहन-सहन, वेश-भूषा, खान-पान, मनोरंजन, रीति - रीवाज, बोलचाल के ढंग और भाषा परिवर्तित होती आ रही है। भारत की संस्कृति जहां अन्य देशों को आकृष्ट करती है और आस्था है। उसी प्रकार वैश्विक संस्कृति से भारतीय जन भी आकृष्ट होते हैं एवं पारस्परिक आदान-प्रदान द्वारा एक-दूसरे से जुड़ते हैं। भूमंडलीकरण ने एक देश की संस्कृति को पूरे विश्व के साथ जोड़ दिया है। जिसने हमारे रहन, खान - पान को पुरी तरह से बदल दिया है। अपने आप को सुसंस्कृत समाज का हिस्सा बनाने के लिए आधुनिक जीवनशैली अपनाकर उच्च शिक्षित समाज का हिस्सा बनने की दौड़ में सभी रहते हैं। खानपान में आए बदलाव मैगी, चाऊमीन, कुरकुरे, पिज्जा, चिकन टिक्का, शाम का खाना रेस्टोरेंट में या दावतें फाइव स्टार होटलों में मनाने की परंपराएं बढ़ी है। पारंपरिक जीवन शैली खान-पान वैश्विक देशों को आकर्षित करती है। मनीषा कुलश्रेष्ठ की रचना अनामा की विदेशी पात्र भारतीय खानपान और संस्कृति से आकृष्ट होती है। 'खाना कम चिकनाई से बना अनूठे प्रयोगों वाला खाना था, बैंगन का भरता, जिसमें कच्ची प्याज, टमाटर थे, बिना तेल के। सात्विक नींबू डली दाल और हींग का छौंक लगा कर बनाया कद्दू का रायता था, पतली मुलायम रोटियां। खाना बहुत स्वादिष्ट है, मगर आपने बहुत सारा बनवा लिया।'[1] आज की अधिकांश युवा पीढ़ी प्राचीन परंपराओं और संस्कृति के प्रति अरुचि रखते हैं। उनके व्यवहार और मूल्य पूरी तरह परिवर्तित हो रहे हैं। उपभोक्तावाद एवं बाजारीकरण ने उनके व्यवहार को मूल्य एवं नैतिकता जैसे मापदंड को नष्ट करने में भूमिका निभा रही है। कथनी और करनी में बनावटीपन और दिखावे की प्रवृत्ति नैतिक मूल्यों के महत्व को कम कर रही है। मनीषा कुलश्रेष्ठ की पंचकन्या उपन्यास में पुष्कर मेले का वर्णन है जिसमें विदेशियों की उनके प्रति रुचि राजस्थान की धरा पर खींच लाती है। कालबेलिया नृत्य की धूम रहती है जिसे देखने दूर-दूर से लोग आते हैं। मथुरा, काशी, वृंदावन, अयोध्या आदि धार्मिक स्थलों के प्रति श्रद्धा और आस्था, विश्वास सभी को आकृष्ट करती है।

पंचकन्या की पात्र एग्नेस भारतीय कला एवं संगीत के प्रति रुचि रखती है। अपनी मां की तरह कथक नृत्य सीखने भारत आती है। अपनापन, प्रेम और स्नेह से रहती है। भारतीय संगीत, कला और पाश्चात्य कला, संगीत का सम्मिश्रण वैश्विक संस्कृति से जुड़ रही है। पाश्चात्य संस्कृति के अनुकरण ने शिक्षा और वेशभूषा को परिवर्तित कर संस्कृतियों को मिश्रित कर दिया है। वैश्वीकरण ने आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों को प्रभावित किया है। जिससे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सांस्कृतिक एवं सामाजिक आवागमन प्रारंभ हुआ है। आर्थिक क्षेत्रों में होने वाले परिवर्तन ने आधुनिकता एवं पाश्चात्य संस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषता रही जिससे सामाजिक व्यवस्था और संस्कृतियों का वैश्विक प्रवाह, समृद्ध पाश्चात्य सामाजिक व्यवस्था व संस्कृतियों के स्थानीय संस्कृति के प्रवाह में वृद्धि की है। सामाजिक व्यवस्था और संस्कृतियों के वैश्विक प्रवाह अर्थात् जब एक देश के नागरिक प्रवास के दौरान दूसरे देशों में प्रवास करते हैं। अपने साथ अपनी संस्कृति, रहन-सहन, रीति-रिवाज, वेश-भूषा, भाषा, खान-पान लेकर जाते हैं। एक देश के निवासी प्रवास के दौरान उस देश की संस्कृति को आत्मसात करते हैं। साथ ही अपनी संस्कृति और सामाजिकता को बनाए रखते हैं जिससे सामाजिक संस्कृतियों का आदान-प्रदान होता है। वैश्वीकरण के द्वारा एक संस्कृति दूसरी संस्कृति से इस प्रकार जुड़ती जा रही है कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक जुड़ाव राष्ट्र एवं राज्य का स्वरूप परिवर्तित कर रही है। पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण में स्थानीय संस्कृतियों के लिए विरोधाभास एवं पहचान का संकट उत्पन्न किया है। स्थानीय संस्कृतियों के सामंजस्य से वैश्विक संस्कृति की स्थापना की जा सकती है। वैश्विक संस्कृति के प्रवाह के साथ समान भाषा का विस्तार हुआ है। पर्यटन क्षेत्र में भी वृद्धि हुई है। इंटरनेट और जनसंचार माध्यमों ने सार्वजनिक भाषा, वैज्ञानिक एवं अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशनों से एक भाषा को प्रयोग में वृद्धि के साथ सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रवाह में वृद्धि हो रही है। वैश्वीकरण, निजीकरण, उदारीकरण, उपभोक्तावादी संस्कृति, आयातोन्मुख ग्रामीण स्तर एवं नगरीकरण में हिन्दी भाषा और अंग्रेजी भाषा सार्वजनिक भाषा के रूप में प्रयोग की जा रही है। आज उदारवादी, वैश्वीकरण, निजीकरण, भूमंडलीकरण के दौर में कोई देश अपने को अलग नहीं रख सकता। आर्थिक, सामाजिक आदि क्षेत्रों में विकास एवं लोककल्याण के लिए इसकी आवश्यकता और अधिक जरूरी हो जाती है। वैश्विक अर्थव्यवस्था में प्रतिस्पर्धा, राष्ट्र-राज्य एवं गरीब व विकासशील देशों के लिए संकट है। अपनी राष्ट्रीय अस्मिता, स्थानीय संस्कृति, सामाजिक व्यवस्था को संरक्षण प्रदान करने के लिए वैश्विक परिवर्तनों में सामंजस्य बनाए रखने की जरूरत बढ़ जाती है। वैश्वीकरण के फलस्वरूप जो सांस्कृतिक बदलाव आए हैं उसने हमारे रहन-सहन, खान-पान, पहनावे को बदल दिया है। धोती-कुर्ता, साड़ी की जगह पैंट शर्ट, पारंपरिक खानपान में पिज्जा, मोमोस, काफी आदि ने ले ली है। भाषा व संस्कृति में संकट इसके सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों प्रभाव दिखाई दे रहे हैं। जीवन के मानक एवं जीवन की गुणवत्ता नैतिक मूल्य प्रभावित

हो रहे हैं। मनुष्य का आंतरिक विकास, नैतिक उन्नति, सद्व्यवहार सभी के मायने बदल रहे हैं। मनीषा कुलश्रेष्ठ की बिगड़ैल बच्चे कहानी के पात्र आधुनिक जीवनशैली तो अपनाते जिन्हें देखकर लोग तरह – तरह के कयास लगाते हैं। जब तथाकथित पढ़ें लिखे लोग जो नहीं कर पाए तीन बिगड़ैल बच्चे में संवेदना जीवित रहती है। वहीं एक पक्ष यह भी है कि 'मैंने स्वयं से सवाल पूछा...क्या मैंने बच्चों को सुरक्षित और कठोर अनुशासन में रखकर बहुत महान काम किया है ? क्या निशि इस कठोर अनुशासन और अतिरिक्त सुरक्षित वातावरण में पलकर बेहद दब्बू बनकर नहीं रह गयी है ? बस शादी कर देने भर से क्या उसे सुरक्षित कर दिया हमने ? अपनी होनहार एम. बी. ए. लड़की को मुंबई जाकर एक मल्टीनेशनल कंपनी में नौकरी नहीं करने दी... हम दोनों ही डर गये थे। कितना रोयी थी वह...यहीं रहकर करो नौकरी... या फिर कह दिया कि शादी के बाद कर लेना नौकरी वह भी पति चाहे तो।'[2] आधुनिकता के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रभाव सामाज पर दिखाई पड़ रहे हैं भारतीय संस्कृति की जड़ें आंतरिक जीवंतता के साथ अक्षुण्ण बनी हुई है।

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीन एवं समृद्ध संस्कृति है जो प्राचीन काल से समृद्ध और परिष्कृत होती रही है। इसकी उदारता एवं समन्वयवादी गुणों के कारण अन्य संस्कृतियों के साथ सामंजस्य करते अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखा है। पाश्चात्य संस्कृति ने हमारी वेशभूषा, भोजन, घरेलू समान, विचार, आदर्श, भावनाओं, विश्वास को प्रभावित किया है। संस्कृति हमें विश्व की अन्य संस्कृतियों से अलग करती है। नैतिक मूल्य एवं मानवीय गुणों को सुसंस्कृत बनाती है। आज के युग में जो संपन्न है, पूंजीपति है, बड़े बंगले में रहता है, महंगी चीजें रखता है, सुसंस्कृत कहलाता है। मानवीय गुण बदलने लगे हैं। प्रतिस्पर्धा व्याप्त हो गई है। अपने आप को उस सांचे में ढालने की, भाषा पर भी इसका असर हुआ है, अंग्रेजी पढ़ा लिखा, बोलने वाले व्यक्ति समाज में प्रतिष्ठा का पात्र बन जाता है। बड़े – बड़े फर्म, कंपनियों में उनकी मांग होती है, ऊंचे पद भी प्राप्त होते हैं। ग्रामीण भारतीय समाज के लिए संकट उत्पन्न हो रहे हैं। पारंपरिक फसलों के साथ भारतीयता कृषक भी बाजारीकरण को देखकर निर्यातोन्मुखी फसल उगाने लगे हैं। कृषि को भी व्यापारीकरण से जोड़ दिया है। ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में पलायन में वृद्धि हुई है। संयुक्त परिवार, एकल परिवार में परिवर्तित हो रहे हैं। साहित्य कला, संगीत, विज्ञान और दर्शन में वैश्वीकरण का प्रभाव दिखाई देती है। भारतीय फिल्मों को वैश्वीकरण ने सबसे अधिक प्रभावित किया है। फिल्में भारतीय संस्कृति को अभिव्यक्त करती थी वह भी पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से अपनी क्षेत्रीयता और पहचान खो रही है। सांस्कृतिक एवं सामाजिक हस्तांतरण से सांस्कृतिक एवं साहित्यिक अस्मिता प्रभावित हो रही है। भारतीय जीवन दृष्टि पश्चिमी दृष्टिकोण से बदलती जा रही है। वैश्वीकरण ने ग्रामीण अंचलों की वस्तुओं को विश्व धरातल पर जोड़ दिया है। संचार व्यवस्था, खेल, विश्व पर्यटन में वैश्वीकरण में प्रगति लाई है। पर्यावरण की समस्या एक देश की नहीं पूरे विश्व की समस्या है। वैश्वीकरण एक सामाजिक और संस्कृति से संबंधित क्रियाओं को प्रभावित करती है। सूचना, उपभोग, मनोरंजन, के संप्रेषण ने राष्ट्र, राज्य, क्षेत्र एवं व्यक्तियों के मध्य अंतरों को मिटाया है। जिससे बढ़ती हुई रुचियां, भोजन, फैशन, वेशभूषा, खेल, सिनेमा, समाचारपत्र, दूरदर्शन कार्यक्रमों में समान रुचियों द्वारा संस्कृतियों का वैश्वीकरण हो रहा है। इससे स्थानीय सामाजिक, सांस्कृतिक संरचना में परिवर्तन आ रहा है। जनसंचार माध्यम टेलीफोन, आकाशवाणी, दूरदर्शन, वीडियो, मोबाइल, इंटरनेट में स्थानीय संस्कृति के प्रचार वाहक का काम कर रही है। एक तरफ विदेशी संस्कृति के प्रसार ने भारतीय संस्कृति के लिए खतरा उत्पन्न कर दिया है। पारंपरिक वस्त्रों की जगह वैश्विक वस्त्रों की मांग और रुचि बढ़ रही है। मनीषा कुलश्रेष्ठ की रचना पंचकन्या की पात्र एग्नेस कथक नृत्य सीखने भारत आती है और भारतीय नृत्य, साहित्य, कला एवं संगीत के प्रति रुचि रखती है। वैश्वीकरण ने विश्व संस्कृति को जोड़ दिया है। संस्कृति राष्ट्र से जुड़ा हुआ है। प्राचीन भारतीय संस्कृति आज भी समृद्ध और महान है। वैश्विक संस्कृति ने प्रभावित अवश्य किया है। परंतु उसकी आत्मीयता आज भी बनी हुई है। वस्तुओं के अनेक विकल्प, बढ़ती मॉल संस्कृति ने खान–पान, रहन – सहन, वेशभूषा में उपभोग के विभिन्न विकल्प उपस्थित किये हैं। संचार के माध्यमों ने संस्कृतियों के पारस्परिक आदान–प्रदान में तीव्र वृद्धि की है। इन माध्यमों से मूल्य, नैतिकता, परंपरा, परिवार, विवाह, स्त्री–पुरुष अंतः क्रिया में स्वच्छंदता आदि में नये प्रतिमान प्रकट हो रहे हैं जिससे भारत की विशिष्ट आदर्श संस्कृति वैश्विक ढांचे में ढल रही है। सांस्कृतिकता, स्थानीय ज्ञान, पहचान, स्वयं, समुदाय और राष्ट्र की भावना का वैश्विक स्तर पर महत्व प्रदान करती है। सांस्कृतिक वैश्वीकरण द्वारा विश्व की विचार, अर्थ, मूल्यों का प्रसारण होता है जो सामाजिक संबंधों का विस्तार एवं उसे गहन करती है। यह इंटरनेट लोकप्रिय संस्कृति, मीडिया एवं अंतर्राष्ट्रीय आवागमन द्वारा प्रसारित हुई है। संस्कृतियों के प्रसार ने व्यक्तियों को राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय सीमाओं पर विस्तारित सामाजिक संबंधों में भाग लेने में सक्षम बनाया है। सांस्कृतिक वैश्वीकरण द्वारा ज्ञान का निर्माण होने के साथ लोग अपनी व्यक्तिगत और सामूहिक सांस्कृतिक पहचान से जुड़ते हैं जिससे विभिन्न आबादी और संस्कृतियों के बीच परस्पर जुड़ाव को बढ़ावा मिलता है। वैश्वीकरण का सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक परिवेश का निर्माण करता है। वैश्वीकरण विश्व को आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और पारिस्थितिक रुप से जोड़ने के साथ समय एवं स्थान की सीमाओं को तोड़ते हुए समुदायों और संगठनों को अन्योन्याश्रित एवं अंतः पारस्परिकता के संबंधों में बांधने और स्थाई सांस्कृतिक अंतः क्रिया द्वारा आदान–प्रदान की प्रक्रिया है।

स्थानीयता का स्थान सार्वभौमिकता ने ले लिया है। आर्थिक क्षेत्र से शुरू हुआ वैश्वीकरण जीवन के सभी पक्षों सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और और वैचारिकता को प्रभावित किया है। वैश्वीकरण ने सामाजिक सुखद परिवार और संस्कृति को सर्वाधिक और प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया है। वैश्वीकरण से समाज और संस्कृति के वर्ण संकर संस्कृति का उदय, भाषा, बोली, मुद्रा, वस्तु, क्षेत्रीयता की सीमा का विस्तार, स्थांतरण, शरणार्थी, घुमंतू लोगों में वृद्धि, क्षेत्रीय संस्कृति का उपभोक्तावादी संस्कृतियों के प्रति झुकाव, वैश्विक संस्कृति का उदय, पूंजीवादी समाजों के अनुरूप सांस्कृतिक मॉडल का विस्तार, सांस्कृतिक वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप सांस्कृतिक विविधता में कमी आना, विचारधारात्मक पलायन, संस्कृति का विस्तार, विवेकवाद, स्वतंत्रता, नागरिकता, लोकप्रिय संस्कृति का उदय आदि रुपों से प्रभावित किया है। वैश्वीकरण ने सामाजिक रूप से असमानता, नस्ल, जातीय, वर्ण व्यवस्था को भी प्रभावित करने में भूमिका निभाई है। सामाजिक और सांस्कृतिक वैश्वीकरण के विपरित प्रभाव के साथ विश्व स्तर हमारी प्राचीन और समृद्ध संस्कृति की पहचान आज विश्व के कोने – कोने में फैलने के साथ एक विशिष्ट पहचान जो भारत को अन्य संस्कृतियों से पृथक करती है और अपनी समृद्धता के लिए जानी जाती है।

संदर्भ सूची :–

1. अनामा – मनीषा कुलश्रेष्ठ, पृष्ठ – 16–17
2. कठपुतलियॉ – मनीषा कुलश्रेष्ठ, पृष्ठ – 122

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

मालवी लोककथाओं के अनुशीलन में डॉ. प्रहलाद चंद्र जोशी का अवदान

मधु मालवीय

शोधार्थी, हिंदी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.

मनुष्य के जन्म के साथ ही लोक कथा का उदय हो जाता है। मनुष्य में कहानी कहने और सुनने की परंपरा परसों से चली आ रही है। नानी और दादी की कहानियां सुनने की परंपरा दिखाई पड़ती है लोक कथा जीवन के सुख-दु:ख, रीति रिवाज, आस्थाओं और विश्वास की परंपरा है। लोक कथा के लिए अंग्रेजी में फोक-टेल शब्द प्रचलित है। लोक साहित्य के अध्ययन में लोककथा महत्वपूर्ण स्थान रखती है, जो शब्द लोक प्रचलित उन कथाओं के लिए प्रयुक्त होता है जो मौखिक परंपरा द्वारा वर्षों से पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही है।

भारत के अलग-अलग राज्यों में लोक कथाओं का बड़ा संग्रह है। जिसमें मालवा के क्षेत्र में मालवी लोग कथाओं का विशाल भंडार है। जिसके अंतर्गत लोक कथाओं में जनमानस की अवस्थाओं, विश्वास, धार्मिक भावनाएं तथा लोकमान्यताओं के प्रति सजीव चित्रण किया गया है। मालवी लोक कथाओं की दृष्टि से अत्यंत समृद्धि है यह लोकगीत, लोकगाथा, लोककथा, लोकनाट्य, पहेली लोकोक्ति आदि की अभिव्यक्त है। इसमें से लोक कथा में लोक मानस का अटूट विश्वास है लोक कथा में लोक मानस के धार्मिक भावनाएं, रूढ़िवादी भावनाएं, अंधमान्यताएं, सामान्य जीवन का स्तर लोकमान्यताओं के जीवन का चित्रण है। मालवी लोक कथाओं है, जिसमें ऐतिहासिक, अर्ध ऐतिहासिक, व्रत कथाएं, पशु पक्षियों की कथाएं, बाल कथाएं, चमत्कारी कथाएं, भूत प्रेत और परियों की कथाएं मिलती हैं। मालवी लोग कथाओं की परंपरा अति प्राचीन है, मालवा का क्षेत्र मैदानी है, पहाड़ी कथाओं की तुलना में भूत प्रेतों, परियों के प्रति विश्वास कम है मुख्य रूप से कृषि जीवन पर आधारित मालवी कथाएं अधिक है, साथ ही आदिवासी और नदियों की उत्पत्ति के विषय में कथाओं का उल्लेख यद्यपि इनमें मिलता है। मालवा के गांवों में लोक कथाओं का भंडार है जहां फसल काटने पर लोग बड़े-बड़े उत्सव बनाते हैं जहां उत्सव के इस क्षण को मनोरंजन कथाएं, जो की शिक्षा उपदेशक होती है। दादी-नानी की कहानी जो की मजेदार होती है वर्षों से यहां रीति चली आ रही है। बारह वर्षों के तीज त्यौहार आये, व्रत कथाओं जो कि पौराणिक आख्यानों के साक्षी रही है। नारी द्वारा परिवार की सुख समृद्धि की आकांक्षा इन कथाओं से जुड़ी है। व्रत में मुख्य रूप से दशा माता की कथा , सीतला माता की कथा , ग्यारस माता की कथा, हड़ताली तीज आदि मुख्य रूप से स्त्रियों के द्वारा व्रत कर कही जाती है। मालवी लोक कथाओं के कई प्रकार की लोक कथाएं हैं जिसमें ऐतिहासिक, अर्ध ऐतिहासिक, व्रत कथाएं, पशु पक्षियों की कथाएं, बाल कथाएं, चमत्कारी कथाएं, भूत प्रेत और परियों की कथाएं मिलती हैं। ऐतिहासिक वर्णन में रानी रूपमती और बजबहादुर कहानी, देवीअहिल्याबाई, राजा विक्रमादित्य आदि मुख्य है और इसी के साथ अर्थ ऐतिहासिक कथा विक्रम बेताल, बिरला का तालाब लोक कथाएं सुनाई जाती है। मालवी लोग कथाओं में पशु पक्षियों की कहानी जिसमें चिड़ी चिड़िया, होशियार चूहा, बिल्ली, खरगोश, कछुआ, मकड़ी आदि की कथाओं को भी सुनने को मिलती है।

मालवी लोक साहित्य की लोक कथाओं अपने ही रूप में विशेष होती है वहां लोग जीवन की संघर्ष रहित सुख और समृद्धि होती है मालवी लोग कथाओं का साहित्य मानव जीवन के विविध तार्तिक रूप को प्रस्तुत करती है। मालवी लोककथाओं के संग्रह का कार्य कई वर्षों से चल रहा है, लोक साहित्य में लोक कथा का अन्वेषण तथा अनुशीलन के प्रति नई मनोवृति जागृत हुई है इसके अध्यक्ष मालवी लोक संस्कृति के उन्नायक डॉ. सूर्य नारायण व्यास, डॉ. श्याम परमार, डॉ. बसंतीलाल बम, डॉ. चिंतामणि उपाध्याय तथा डॉ. प्रहलादचंद्र जोशी आदि इसी कड़ी में कई लोग जुड़ते रहे और आज भी जुड़ रहे हैं। मालवी लोक कथाओं की परंपरा को यदि किसी व्यक्तित्व के समूचे विस्तार के साथ गतिमयता देकर नये युग की आधारशिला रखी है तो वह नाम है पहलाद चंद्र जोशी का है। डॉ. जोशी ने मालवी साहित्य पर प्रकाशित कई महत्वपूर्ण ग्रंथों प्रमुख के द्वारा अवदान दिया है जिसमें प्रमुख का शोधग्रन्थ की 'मालवी लोककथाएँ' का मुख्य है जिसमें लोक कथाओं को विस्तार के साथ विवेचन किया गया है। डॉ.जोशी का वृद्ध ग्रंथ 'मालवी लोककथाएँ' जिस पर उन्होंने पीएच.डी. की शोधोपाधि विक्रम विश्वविद्यालय से प्राप्त की है जिसका प्रकाशन सार्थक प्रकाशन दिल्ली से 2000 ईस्वी में हुआ यह ग्रंथ जो डॉ. जोशी के अथक साधन और अटूट विश्वास और बड़ी लगन का तथा परिश्रम का प्रतीक है। डॉ. जोशी के ग्रंथ के माध्यम से भारतीय लोककथा परंपरा के उत्साह उसके विशिष्ट और विकास यात्रा का आकलन किया। इसके माध्यम से मालवा की लोककथाओं का एक-एक कोना छान लिया उन्होंने इस ग्रंथ में लोक कथाओं का वर्गीकरण के विभिन्न आधार पर चर्चा कर तीन सौ से अधिक लोक कथाओं का वर्णन किया है इस ग्रंथ में जातिगत, सामाजिक, धार्मिक, मनोरंजन, जादू टोने, पशु पक्षी, ऐतिहासिक, बाल कथाएं, व्रत कथाएं, खेती-बाड़ी आदि का विभिन्न अध्यायो में वर्गीकरण कर लोककथाओं की विवेचना की गई है। मालवी लोककथाओं के विषय पर शोध ग्रंथ पहुंच तक आते आते वे मालवी संस्कृति के क्षेत्र में ही पूरा जीवन समर्पित कर दिया डॉ- जोशी ने मालवी पर प्रकाशित कई महत्वपूर्ण ग्रंथों का योगदान दिया उनमें विशेष मुख्य उल्लेखनीय है। मालवी और उपबोलियों का व्याकरण, मालवी लोककथाएं, प्रमाणिक मालवी हिंदी शब्दकोश, मालवी स्वयं शिक्षक, सोंडवाड़ी साहित्य, संस्कृति और व्याकरण आदि। उनकी प्रकाषनधीन कुछ कृतियों ने सोंधवाड़ी लोककथाएँ, लघु वृत्तात्मक गीत कथाएँ, ढोला मारवण, गीतकथा 'हीड़' आदि प्रमुख्य है जिसका प्रकाषन नहीं हो पाया डॉ. जोषी मालवी लोकवार्ता के वरिष्ठ और गंभीर अध्येता है आपने मालवी के अनेक पारंपरिक मालवी लोक कथाओं का संकलन भी किया हैं। मालवी लोककथाओं के अध्ययन एवं अनुशीलन की स्थिति संतोषजनक नहीं है इसके संकलन एवं प्रकाशन का अभाव रहा है। डॉ. चिंतामणि उपाध्याय उल्लेख किया है कि मालवी

लोक कथाओं के साहित्य का संकलन की दृष्टि से अछूता ही रहा है। बालकों द्वारा कही जाने वाली छोटी-छोटी कहानी और स्त्रियों के व्रत एवं त्योहार संबंधित कथाएं पुरुषों की नीतिपरक एवं श्रृंगार की मनोरंजन लोक कथाओं का व्यवस्थित संकलन करना वांछनीय है। डॉ. श्याम परमार ने भी लोक कथाओं के अध्ययन के अभाव पर प्रकाश डालते हुए लिखा की संक्षिप्त में मालवी कहानियों का संकलन संतोषजनक नहीं रहा है। इसी भावना से प्रेरित होते हुए, डॉ. जोशी ने मालवी कथाओं के क्षेत्र में कदम उठाया है। आपकी मालवी लोककथाओं के प्रति आरंभ से लगाव रहा है डॉक्टर जोशी बचपन से ही परियों की कहानी, नटखट नंदू, काड का घोड़ा आदि कथाओं बड़े चाव से पढ़ा करते थे। पठन-पाठन की यही प्रवृत्ति युवावस्था में जाकर कर सामने आई, जिसने लोककथाओं के क्षेत्र में व्यापक रूप से कार्य करने को उत्प्रेरित किया। डॉ. जोशी ने अनवरत गति से मालवी लोक साहित्य के संकलन, संपादन एवं प्रकाशन का कार्य करते हैं। डॉ. जोशी जी ने मालवी लोक कथाओं पर अधिक परिश्रम किया। क्योंकि मालवी लोक कथाओं कार्य साहित्य में ना के बराबर था । लोक कथाएं बहुत ही विस्तृत होते हैं जिसके संकलन एवं प्रमाणिक करने के लिए कई वर्ष लग गए। अनवरत परिश्रम करने के पश्चात डॉ. जोशी ने वर्गीकरण कर स्त्री पुरुष एवं बालकों, ऐतिहासिक, देवी देवताओं की, मनोरंजन मालवी लोककथा आदि पर विस्तार के साथ कार्य किया है। डॉ जोशी ने इन्हें गेय अगेय तथा अन्य में वर्गीकृत किया है यही नहीं विषयगत, वस्तुगत तथा शैलीगत रूपों में भी वर्गीकृत किया गया है इस ग्रंथ के प्रथम खंड में अध्यायवार योजना बनाई गई है भारतीय लोक कथाओं के तत्व, मालवी लोककथाओं में अभिव्यक्त लोग संस्कृति, लोक कथाओं का वर्णन, मालवी में लोककथाओं में भावपक्ष तथा कलापक्ष आदि का महत्व रखते हुए प्रथम खंड में 72 मालवी लोककथाओं की विवेचना की गई है।

द्वितीय खंड में उन्होंने मालवी गीत कथाएं जिसके अंतर्गत मालवी की गीतकथाओं का वर्गीकरण किया गया गीत कथाओं में सामान्य प्रवृत्तियां जिसमें प्रेमकथा, ढोलामारवण, हीड, वीरगाथा आदि और प्रमुख लोक कथाओं का वर्गीकरण कर प्रस्तुत किया गया है लोक कथाओं में जनजीवन उसकी प्रकृति संस्कृति एवं वाचिक परंपरा को ध्यान में रखते हुए लोक कथाओं को संकलित किया गया है। इसी खंड में अध्याय वार आगे बढ़ते हुए डॉक्टर जोशी ने भक्ति संबंधी लोक कथाओं का वर्गीकृत करते हुए मालवी लोक कथाओं में भक्ति के विविध रूप तथा सर्प पूजा से संबंधित लोककथाओं में देवव्यापी त्यौहार की लोक कथाओं का वर्णन किया है, इसी क्रम में जोशी जी ने तेजाजी महाराज, नागजी, दूलजी, ग्यारस माता, राजानल आदि मालवी लोक कथाओं का कथानक के साथ विवेचन कर विस्तार से वर्णन किया गया है। डॉ जोशी के इसे ग्रंथ के द्वारा विश्व व्यापी लोक कथाओं के प्रसार में अपनी भूमिका निभा रहा है, वहीं भारत के लोक कथाओं के साथ नहीं लोक कथाओं की तुलना भी की जा रही है उन्होंने विभिन्न प्रकार की लोक कथाओं के पार्श्व में निहित जन मानस से ऐतिहासिक, पौराणिक, सामाजिक मूल्य एवं मान्यताओं को धार्मिक आस्था का विस्तार से उल्लेखित किया गया है। डॉ जोशी विभिन्न भाव दशाओं, कथाशिल्प संगीत तत्वों आदि के माध्यम से लोक कथा को विवेचन कर महत्वपूर्ण निष्कर्ष दिया है। इन्होंने पश्चात्य विद्वानों एवं प्राचीन भारतीय साहित्यकारों के द्वारा वर्गीकरण लोक कथाओं को अध्ययन एवं विश्लेषण के लिए एक नया मोड़ देने का प्रयास किया गया है। डॉ. जोशी के जातिगत वर्गीकृत कर अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की लोक कथाओं का भी विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है उन्होंने लोक कथाओं की विविध दृष्टि से अर्थों का की खोज की गई है कहीं भी धार्मिक आस्था आधार बनाया है तो कई नैतिकता का पाठ पढ़ाया, वहीं कहीं जीवन में परिवर्तन लाने के उपयोग की सिद्ध होती है अतः यहां ग्रंथ विस्तृत और परिप्रेक्ष्य में मालवी लोक कथाओं का अध्ययन करते हुए विश्व व्यापी बनता है। मालवी लोककथाओं इस ग्रंथ में दोनों ही खंडों में मालवी कथाओं का अपार भंडार किया गया है। उन्होंने देवी देवताओं से संबंधित कथाओं मातासती की कथा, जल देवता की कथा, चौसठयोगिनी आदि कथाओं का वर्णन किया गया है मनोरंजन के आधार को भी लेकर मनोरंजन के विविध तत्वों को भी बताया है डॉ. जोशी की रूढ़ियोंवादी यथास्थिति को भी प्रकट किया गया है। डॉ. जोशी के द्वारा ऐसा कोई भी लोककथा का कोना नहीं बचा है जिसकी विवेचना उन्होंने नहीं की हो, उन्होंने अन्य लोक कथाओं एवं गीतकथाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया इस अध्ययन से यहां बताया गया है कि इन कथाओं का मूल भाव क्या है, जिसे उन्होंने बताया कि सियार संबंधी कथाएं जिस प्रकार के मालवा में प्रचलित है उसी प्रकार भारत के अनेक प्रांतो में भी प्रचलित है किंतु उस प्राणी को अन्य देशों में उतना महत्व प्राप्त नहीं होता जितना की मालवा में। विशेष सियारों की चतुराई विशेषज्ञ कथाएं उपलब्ध होती है। डॉ जोशी ने एक अध्याय में मालवी गीत कथाओं का भी वर्णन प्रस्तुत किया है मालवी लोक कथाओं की भांति गीतकथाओं का भी विशाल भंडार है। मालवी की गीत कथाएं जीवन के संपूर्ण जीवन को चरित्र का गीतों के माध्यम से बताया गया है मालवी लोक कथाओं में गीत कथाएं में ग्यारस माता, नरसीजी को मायरो, चंदनकुंवर, राजानल ,नवली भाभी की चुनडी आदि कई लोकगीत कथाएं डॉ. जोशी द्वारा संकलित की गई है। मालवी लोक कथा में नैतिक मान्यता, नीति, अपनत्व, धार्मिक तत्व की अभिव्यक्ति होती है। मालवी लोक कथाओं का साहित्य अन्य जनपदों की मौखिक कथाओं की तरह अलग ही अस्तित्व रखती है धार्मिक व्रत एवं त्योहार से संबंधित कथाओं के साथ ही मनोरंजन के लिए कल्पित की गई कथाओं का यह अनंत भंडार है मालवी लोक कथाओं का शांत रस की समतल भूमि पर विवेचन करती है। वहां का लोकजीवन संघर्ष रहित, सुखी और समृद्धि है इसका प्रभाव वहां की कथा गाथाओं पर भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित करती है। लोक साहित्य लोक जीवन का दर्पण माना जाता है मानव जीवन के विभिन्न क्रियाकलापों लोक साहित्य द्वारा अभिव्यक्ति होती है लोक साहित्य मौखिक अभिव्यक्ति है जो लोक के कंठ में मौखिक रूप से सुरक्षित है मालवी लोक कथाओं के अनुशीलन करने से मालवी संस्कृति की अभिव्यक्ति होती है मालवी भाषा साहित्य और संस्कृति का राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में स्थापित करने वाले डॉ. जोशी का यह ग्रंथ अत्यंत गरिमामय है। डॉ. जोशी इस ग्रंथ के माध्यम से लोक कथाओं के क्षेत्र में कार्य करने के वाले अनुसंधानकर्ता के लिए सही मार्गदर्शन करता है उन्होंने मालवी लोक कथाओं की इस तरह से विष्लेषण प्रस्तुत की किया गया है जो कि भारतीय स्तर पर समग्र रूप से प्रथम प्रकाश डालता है।

संदर्भ सूची:-

1. डॉ. प्रहलाद चंद्र जोशी, मालवी लोककथाएं, प्रकाशन सार्थक प्रकाशन प्रथम संस्करण 2000
2. डॉ. श्याम परमार, मालवी लोक साहित्य, हिंदुस्तानी एकेडेमी इलाहाबाद 1969
3. डॉ. कृष्ण देव उपाध्याय, लोक साहित्य की भूमिका, साहित्य भवन लिमिटेड इलाहाबाद 1957
4. डॉ. कृष्ण देव उपाध्याय, भारत में लोक साहित्य, भवन प्राइवेट लिमिटेड जीरो रोड इलाहाबाद प्रथम संस्करण 1998
5. डॉ. चिंतामणि उपाध्याय ,मालवी लोकगीत एक विवेचनात्मक अध्ययन
6. डॉ. बसंतीलाल बम, भारतीय लोक कथाएं शोधप्रबंध 1966
7. डॉ. शैलेंद्रकुमार शर्मा, मालवी लोक अनुसंधान की परंपरा और डॉ. प्रहलाद चंद्र जोशी पत्रिका (चौमासा)

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

डॉ. श्याम परमार का व्यक्तित्व और कृतित्व

पारस परमार
डॉ. भेरूलाल मालवीय

1. शोधार्थी, हिंदी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.
2. शोध निर्देशक, बी. के. एस. एन. शासकीय महाविद्यालय, शाजापुर, मप्र.

सन् 1924 शाजापुर मध्य प्रदेश में एक साहित्यिक सूर्य उदय हुआ, जिसकी जन्म तिथि थी 17 नवंबर 1924 । जिसकी शिक्षा एम. ए.पी-एच.डी. रही। उस व्यक्तित्व का नामकरण श्याम परमार के रूप में हुआ, जो पी-एच.डी. करने के बाद डॉक्टर श्याम परमार के नाम से विख्यात हुए। आपको हिंदी के प्राध्यापक (राजकीय महाविद्यालय महू मध्य प्रदेश) के रूप में शासकीय नौकरी करने का सुअवसर प्राप्त हुआ, जिसके माध्यम से अपने गुरुधर्म का निर्वाह करते हुए मां हिंदी की सेवा की। यही से आपके अंदर माँ शारदे की अनुकंपा से साहित्यिक बीज प्रस्फुटित होने लगे। शनैः शनैः वह बीज अंकुरित होकर पौधे के रूप में दृष्टिगोचर होने लगे। कुछ समय उपरांत आपको आकाशवाणी भोपाल और इंदौर केन्द्रों पर कार्यक्रम-निर्देशक के पद पर सुशोभित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, जहाँ पर आपको हिंदी मालवी के कई साहित्यकारों से संपर्क हुआ। उनके विचारों और उन विचारों की अभिव्यक्तियों से वह अत्यधिक प्रेरित हुए। तदुपरांत आपको नई दिल्ली स्थित आकाशवाणी केंद्र के महाविद्यालय में लोक संगीत विशिष्ट अधिकारी के रूप में सेवा करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। आपने अपनी यौवन-अवस्था में ही अपनी प्रवृत्ति और प्रकृति के अनुसार अपने अंदर उपजे उस पौधे को पेड़ बनाना शुरू किया और वहां बना भी। आपकी साहित्यिक के माध्यम से सेवा करने की भूख बढ़ती गयी। आपके मन में कुछ नया करने की संकल्पना जागृत होने लगी जिसे वह मूर्त रूप देने के लिए तत्पर हुए। हम जानते ही हैं कि सन् 1960 के पूर्व की कविताएं भक्ति काल पर आधारित हुआ करती थी। भक्ति काल के कवियों में सूरदास, नंददास, संतनाम देव,नरसिंह मेहता, पीपाजी, सुन्दरदास, गुरुगोविंद सिंह, ध्रुवदास,तुलसीदास,रसखान,व्यास जी, स्वामी हरिदास, मीराबाई, कबीरदास, कृष्णदास, आदि-आदि कवियों ने इस काल को स्वर्णकाल बना दिया। इस काल में मानव मात्र सद्मार्ग दिखाने का अद्भुत प्रयास हुआ। डॉक्टर श्याम परमार के चित्त पटल पर कुछ अभिनव करने की इच्छा शक्ति बढ़ने लगी, जिससे वहां अपनी लेखनी के माध्यम से प्रकाशमान भी करने लगी। 53 वर्ष की उम्र में 16 दिसंबर सन 1977 को निधन हो गया। हम कह सकते हैं हम कि लोकसाहित्य के कई सितारों में से, एक सितारा टूट गया। वह सितारा डॉक्टर श्याम परमार के रूप में टूट कर, भी अमर हो गया, जिसकी आभा आज भी साहित्य जगत में विद्यमान है। अपने छोटे से जीवन काल में आपने जो लोक साहित्य की सेवा की वह अविस्मरणी रहेगी। वे मराठी, अंग्रेजी, और हिंदी भाषा पर अपनी लेखनीय के माध्यम से क्रियाशील रहे। आपने आदिवासी क्षेत्र का सतत् भ्रमण कर अपने साहित्य को सुरम्यता प्रदान की। कई मालवी कवि सम्मेलनों में आपने, अपनी सरसता से श्रोताओं को मंत्र मुग्ध किया। आपने कई कवियों की प्रतिभा को निखारने का अनुपम सौभाग्य भी प्राप्त किया। डॉ श्याम परमार सदैव ही, लोककथाओं के बहुरंगी संसार में रमते रहे। प्रादेशिक स्तर से वह राष्ट्रीय स्तर के 'फोकलोरिस्ट' बने। अपने प्रदेश और देश की बहुआयामी लोक संस्कृति की जानकारी संसार के अन्य देशों को मिल सके, इस दृष्टि से उन्होंने अंग्रेजी के कई लेख लिखे जो फोकलोर ऑफ मध्य प्रदेश, ट्रेडिशनल फोक मीडिया इन इंडिया आदि पुस्तकों में संकलित है। डॉक्टर श्याम परमार एक कुशल संगीतमय, चित्रकार, फोटोग्राफर भी थे आपने कई साहित्यकारों को जोड़कर लोक साहित्य की सेवा की। आपके कोमल स्वभाव, मुस्कुराते चेहरे, लज्जावान व्यक्तित्व की उनके गुरु-मित्र डॉक्टर प्रभाकर मचावे के साथ, उनके सहपाठी हरि नारायण व्यास, नरेश मेहता, शरदचंद्र, मुक्तिबोध आदि सराहना करते रहे। आगे जाकर उनके यह सहपाठी बड़े लेखक, कवि बने। डॉ. श्याम परमार अपक्ष और गुटनिरपेक्ष व्यक्ति थे। आपने, अपने सीमित साधनों में सीमित व्यक्तियों के योगदान से मालवी लोकसाहित्य के क्षेत्र में इतना अधिक काम किया कि आज लोग उस साहित्यकार पर पी-एच. डी. की डिग्री प्राप्त कर रहे हैं। विचार करने में आता है कि कितने ऊर्जावान व्यक्तित्व केसाथ अपनी धुन के पक्के होंगे, जो शासकीय सेवा ईमानदारी से करते हुए साहित्य की सेवा भी सफलतापूर्वक करते रहे। आप अपने पीछे पत्नी श्रीमती हीरा देवी एवं पुत्र अजय, विजय एवं पुत्री रेखा को रोता बिलखता छोड़ गए। पुत्र विजय तो स्वयं एक साहित्यकार है।

आपने अपने छोटे से जीवन काल में सिर्फ लोकभाषा से ही संबंधित कोई एक दर्जन पुस्तके एवं उपन्यास लिखे और आलोचनाएं की थी। आप अत्यंत कर्मठ और लगनशील साहित्य साधक थे। हम कह सकते हैं कि ऐसे देवदूत धरा पर बहुत कम होते हैं जो अपने कृतित्व का प्रकाश छोड़ देवलोकी हो जाते हैं। उसी प्रकाश से साहित्य जगत जगमगाता रहता है। हमें यह भी स्मरण रखना होगा कि आपने विदेशो में जाकर, भी लोक साहित्य की सेवा की है, और विदेशी लोक साहित्यकारों को भी जगाया है।

चूंकि शाजापुर के ग्रामीण परिवेश में रहते हुए आपको भक्ति काल से प्रेरित कई रीति-रिवाजो को देखने, सुनने, समझने का लाभ मिलता रहा। हम कह सकते हैं की भक्ति काल से लेकर रीतिकाल की प्रारंभिक अवस्था में परिस्थितियों के अनुसार असंतोष, अस्वीकृति और विद्रोह का स्वर बहुत साफ उभर कर सामने आया है, क्योंकि सामाजिक परिवेश की कुरूपता से

मोह भंग की स्थिति बनने लगी। आप अ-कविता आंदोलन के संदर्भ में सर्वाधिक चर्चित कवि-आलोचकों के प्रारंभिक कवियों में गिने जाते रहे हैं। आपकी गणना तत्कालीन विद्वानों, शिक्षाविदों में अत्यधिक सम्मान से की जाती थी। आपकी शिक्षा संकल्पनाएं जो कि आपकी कृतियों में परिलक्षित होती हुई दिखाई देती है, जिसमें आपके व्यक्तित्व को जाना जा सकता है। अर्थात आपका व्यक्तित्व साहित्यिक गतिविधियों से ओत-प्रोत जिसमें समाजसेवा के भाव समाहित हो, जिसका दृष्टिकोण सुधारवादी हो ऐसे सद्भावो से सना हुआ था। डॉ. श्याम परमार अ-कविता के संबंध तथा प्रारंभिक कवि के रूप में स्वीकृत है। लेकिन वह अब अ-कविता आंदोलन के बहुत सारे कवियों, लेखकों की तरह ही समकालीन कविता-विमर्श से बाहर है।

हम कह सकते हैं कि अकविता एक आंदोलन था, जिसे साठोत्तरी कविता भी कहा जा सकता है। अर्थात जो कविताएं 1960 के दशक में आरंभ हुई उन्हें साठोत्तरी अकविता कहते हैं। हम यहाँ इस बात का जिक्र करना भी आवश्यक समझेंगे कि आपने (डॉ. श्याम परमार) ने जो संग्रहण किया उसमें नौ सौ लोकगीत, पच्चास कथागीत, सात प्रबंधगीत, पांच सौ लोकोक्तियाँ, एक सौ पचास लोककथाएं, सम्मिलित है। जिसे उनकी पुस्तक 'मालवी लोक साहित्य' प्रमाणित करती है। डॉ. श्याम परमार ने सन 1965 में अकविता पत्रिका शुरू की थी। अकविता के सबसे प्रसिद्ध ग्रंथ विजप में गंगा प्रसाद विमल, जगदीश चतुर्वेदी और श्याम परमार की रचनाएं सम्मिलित थी। डॉ. श्याम परमार की कृतियों में अकविता और कलासंदर्भ (आलोचना), भारतीय लोकसाहित्य, लोकधर्मीनाट्य-परंपरा और लोकसाहित्य विषयक अनेक पुस्तकें 'मोरझाल'उपन्यास जस्मीन आफ़ दि ब्लैकसॉइल (अंग्रेजी) तथा हिंदी साहित्य का व्रहत इतिहास (सोहलवा भाग) एवं हिंदी साहित्य कोश के भी सहयोगी रहे। डॉ. श्याम परमार के अनुसार व्यक्तित्व से रहित समान रूप में समाज की आत्मा को व्यक्त करने वाली मौखिक अभिव्यक्तियां लोकसाहित्य की श्रेणी में आती है।

मैं अकविता के आंदोलनकारियों के दृष्टिकोण की और इंगित करना भी जरूरी समझती हूँ। अकविता के आंदोलनकारियों के अनुसार कवि कविता के सिद्धांतों का पालन भी कर सकते हैं। इन कविताओं में विद्रोह, आक्रामकता और सपाट बयानी की भरमार थी। इन कविताओं में सभ्यता और संस्कृति को नकारकर असभ्य और स्वेच्छाचारी बातों का समर्थन किया जाता था। उपरोक्त विशेषताओं के आधार पर डॉक्टर श्याम परमार सहित कई कवियों ने अपनी कविताएं लिखी थी। मैं डॉ. श्याम परमार के कुछ प्रमुख कविताओं के शीर्षकों को दर्शाना चाहती हूँ, जो इस प्रकार है- हिप्पोपटोमस, यंत्रित, अट्ठाईसवीं सीढ़ी पर हत्या, निकृत, दुपहर, पेचक, नवंबर: सर्द आग का एहसास, अंधेरे का पाठक, परांवृत्त, मैं और मेरा वक्त, होगा, देहांतर, प्रस्ताव, एक विद्रुपम्, ब्लैक आउट, कविता से आगे, जुलूस, होने ना होने के दौर, पौशाक, एक मौसम की तलाश, विसंगति, संभावित, अर्थतर, प्रश्नों के बीच बदलता चेहरा, घेरा आदि हम उपरोक्त शीर्षकों को पढ़कर ही समझ जाएँगे कि उनकी कविताओं में स्वच्छंदता है, सपाट बयानबाजी है, आक्रामकता है विद्रोह के स्वर है। वे अकविताएं सभ्यता और संस्कृति के अनुरूप नहीं है डॉक्टर श्याम परमार जी ने अपनी इन कविताओं को 1967, 1972 में विजप नामक पुस्तक में और निषेध नामक पुस्तक में प्रशासन करवाया था।

उपरोक्त कविताओं में कहीं कुंठा है तो कहीं अवसाद है। कहीं शंका है तो कहीं हिंसा है। कहीं भीड़ है तो कहीं शिकायत है। कहीं हत्या है तो कहीं डर है। कहीं रात है तो कहीं मृत्यु है।कहीं दर्पण का जिक्र है तो कहीं शब्द का। कहीं सृजन है तो कहीं चीजे हैं। कहीं भविष्य का वर्णन है तो कहीं समय और आत्मा का। मौसम और शहर का वर्णन अ-कविता के वास्तविक स्वरूप की ओर इशारा करते हैं। डॉ. श्याम परमार जी के लोक साहित्य के विषय क्षेत्र के विस्तार पर विचार करते हुए लिखा है कि 'आधुनिक साहित्य की नवीन प्रवृत्तियों मैं लोक का प्रयोग गीत, वार्ता, कथासंगीत, साहित्य आदि से युक्त होकर साधारण जन समाज, जिसमें पूर्व संचित परंपराएं, भावनाएं, विश्वास और आदर्श सुरक्षित है। तथा जिसमे भाषा और साहित्यगत सामग्री नहीं होती है।'

डॉ. श्याम परमार ने लोक साहित्य के मालवी स्वरूप को ही नहीं अपितु निमाड़ी, छत्तीसगढ़ी, राजस्थानी, गुजराती, मराठी, मारवाड़ी, भोजपुरी, मैथिली, बुंदेलखण्डी, बघेली, कौरवी, अवधि, रायगढ़ी, उमठवाडी, बागड़ी, पारवी, ढोलेवाडी के लोक भाषाओं के साहित्य का वृद्धरूप से अध्ययन चिंतन-मनन कर उनकी प्रकृति, प्रवृत्ति और विषय वस्तु को समझकर एक अभूतपूर्व साधना की। आपने इन क्षैत्रीय भाषाओं में विभिन्न अवसरों पर सामूहिक या व्यक्तिगत गायन में प्रयुक्त लोकगीतों का भी अनुशीलन कर उन्हें सम्मान प्रदान करने का काम किया। जिसके अंतर्गत बालगीत, जन्मसंस्कार गीत, विवाह के गीत, देवी देवताओं के गीत, चंद्रसखी के गीत, ऋतुगीत, लोकोन्मुखी, संतपरक लोकगीत, आदि गीतों के संकलनों को मालवी लोकसाहित्य नामक पुस्तक में समाहित किया गया। जो की अद्वितीय था ग्रामीण क्षेत्र से शिक्षक पटवारी से लोकगीत लिखवाकर मंगवाना उनकी विवेचना करना फिर उन्हें लिपिबद्ध करना बहुत ही 'टेढ़ी खीर'था, जिसे पंडित रामनरेश त्रिपाठी से प्रेरणा लेकर संपन्न किया। हम यदि मालवी-संबंधी प्रकाशित सामग्रियों पर विचार करें तो डॉक्टर श्याम परमार द्वारा प्रकाशित करवाई गई कृतियां-मालवी लोकगीत एवं मालवा की लोककथाएँ मालवा माटी की मिठास और संस्कृति को अपने अंदर समाहित करती प्रतीत होती है। इतना ही नहीं डॉक्टर श्याम परमार ने अंग्रेजी में भी कुछ सामग्रियां प्रकाशित करवा कर समुदाय को भी मालवी साहित्य से जोड़ने का अनुपम प्रयास किया।

इन सामग्रियों में-

GarbaFestiwal in Malwa and Gujarat -1947

Basant puja in Malwa -1947

Peasant folk Songs -1948

Folk Songs of Savan in MalwaAmritBajar Patarika-1950

'Sanja puja' Hindustan standard-1952

सम्मिलित है।

लोक वार्ता-शास्त्र-संबंधी प्रकाशित सामग्रियों में श्याम परमार जी की पुस्तक, मालवी लोकगीत, इंदौर (2009), मालवी और उसका साहित्य, दिल्ली 1954, मालवा की लोक कथाएं-दिल्ली 1954 को भी स्थान मिला हुआ था। लोकधर्मी में नाट्य परंपरा में आपने उत्तर भारत की रामलीला, रामलीला मध्य भारत की माच, नौटंकी स्वांग, गुजरात की भमाई, बंगाल-बिहार-के जात्रा, गंभीरा और कीर्तनिया, महाराष्ट्र के लोकनाट्य, तमाशा, ललित, बहुरूपिया, दशावतार, दतियाभारत के-यक्षगान, विधिनाटकम और तौल बोम्मुलु, कठपुतली का खेल, दक्षिणी प्रांतों के छाया नाटक, आदि विस्तृत रूप से समझाने का प्रयास किया है। इस प्रकार हम श्याम परमार जी को बहुमुखी प्रतिभा के धनी कह सकते हैं। आपने जो लोकसाहित्य का विषय चुनकर मालवी भाषा के साथ संपूर्ण भारत की

लोकभाषाओं को जो सम्मान प्रदान करने का सराहनी कार्य किया है वहां प्रशंसनी है मैं तो यहां तक कहना चाहूंगी कि एक समृद्ध साहित्यिक व्यक्तित्व अपनी पूर्ण क्षमतानुसार अपने जीवन काल में जितना अधिक से अधिक कर सकता है, उतना डॉक्टर श्याम परमार जी ने किया है।

हम निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं। की एक साहित्यकार का धर्म है कि वह हमारी संस्कृति-सभ्यता की सकारात्मक स्थिति को समाज ही नही अपितु विश्व जगत को बताएं। आपने भारतीय सभ्यता और संस्कृति के सौंदर्य-बौद्ध के साथ हमारी लोक सभ्यता और संस्कृतियों की मिठास को भी आत्मसात कर, लोक साहित्य के रूप में लिपिबद्ध कर एक अनुपम, उत्कृष्ट साधना संपन्न कार्य किया, जिसके लिए उन्हें साहित्य जगत स्मरण करता रहेगा।

आपने अपने कार्यकाल के साठवें से सत्तरवें अर्थात 1967 एवं 1972 में कुछ अ-कविताएं भी लिखी, जो साहित्यिक दृष्टिकोण से तो उत्तम ही नहीं अतिउत्तम कहीं जा सकती है, लेकिन मुझे उनमें सकारात्मकता का अभाव दिखा। उन कविताओं में हमारी भारतीय संस्कृति की पवित्र (पावन) झलकियों का अभाव होने से मुझे ऐसा आभास हुआ कि जैसे-सोने की थाली में अरुचिकर भोजन परोस दिया गया हो। क्योंकि उनमें लोक साहित्य की सामूहिक-अपनेपन की छाप थी और न ही उनमें भारतीय संस्कृति की 'वसुदेव कुटुंबकम' की भावना दृष्टिगोचर होती है। लेकिन हमें यह भी समझना पड़ेगा कि उसे समय के अ-कविता आंदोलन की मूल भावना (स्वच्छंदता) पर आधारित रचनाएं लिखकर एक नवीन प्रयोग किया। मैं लोक साहित्य के लोक-गीतों से इतना अवश्य जान पाई की कवि और लेखक बनने के लिए शिक्षित होने या अत्यधिक शिक्षित होना आवश्यक नहीं है। हमारे लोकगीतों को घडने वाले ग्रामीण क्षेत्र के अनपढ़ या कमपढ़ लोग या माता-बहने थी, जो मौखिक रूप से अपने गीतों का निर्माण कर उन्हें बिना लिपिबद्ध किए लय-ताल से सामूहिक गायन करती थी। उन रचना धर्मियों को न अपना नाम उल्लेखित करने की लालसा रहती थी और ना ही किसी विशेषण की भूख रहती थी। उनका उद्देश्य किसी विशेष शुभावसर पर, विशेष देवी देवताओं का सुमिरण, आगंतुकों को मंत्र मुग्ध करना ही रहता था। उन लोकगीतों में सहजता, सौजन्यता, सुमधुरता,निश्चलता, झलकती रहती थी। वह परंपरा आज भी हमें मनोरंजित सुख शांति प्रदान करती आ रही है। इसलिए तो कहा जाता है कि 'कवि पैदा होता है, बनाया नहीं जा सकता'।

मैं कहना चाहूंगी कि विभिन्न अवसरों के विभिन्न लोक-गीतों को सुनकर अपनी क्षेत्रीय भाषाओं में लिपिबद्ध कर जिन-जिन साहित्यकारों ने यहां पेचीदा कार्य किया है, वे सब सम्मान के पात्र है और डॉक्टर श्याम परमार ने देश के कई क्षेत्रीय भाषाओं के लोकगीत उपासको, लोकनाट्य, लोककथा, गीतों, लोकोक्तियों, पहेलियों, कहावतों के संग्रहको और रचनाधर्मियों को संग्रहित कर जो पुनीत कार्य किया है। उससे प्रतीत होता है कि डॉक्टर श्याम परमार पर माँ शारदे की असीम अनुकंपा थी। आपकी गणना समाज के लोकप्रिय साहित्यकारों में की जा सकती है।

संदर्भ सूची :-

1. मालवी लोक साहित्य - डॉ. श्याम परमार
2. मालवी और उसका साहित्य - डॉ. श्याम परमार
3. भारत में लोक साहित्य - कृष्णदेव उपाध्याय
4. लोक साहित्य की भूमिका - कृष्ण देव उपाध्याय
5. श्याम परमार की स्मृतियां और अवदान

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

हरि भटनागर की कहानियों में बाल मजदूर : एक विश्लेषण

एस. हसीना

शोधार्थी, हिंदी विभाग, बैंगलोर विश्वविद्यालय, बैंगलोर

सारांश :- हरि भटनागर एक प्रमुख भारतीय लेखक हैं, जिन्होंने अपने लेखन में बाल मदूरों की समस्याओं को गहराई से दर्शाया है। उनकी कहानियाँ बच्चों के संघर्ष, उनके सपनों और सामाजिक अन्याय को उजागर करती हैं। इस लेख में हम उनकी प्रमुख कहानियाँ 'सगीर और उसकी बस्ती के लोग', 'लड़के','कथरी', और 'हुलिया', 'मुन्ने की उमर' पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

प्रस्तावना :- समकालीन साहित्य के साहित्यकारों ने विभिन्न गद्य ङ्क विधाओं के माध्यम से साहित्य सृजन कर समाज को व्यवस्थित करने का प्रयास किया है। समकालीन साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में नई विचारधाराओं, संवेदनशीलता, नई शिल्प विधि को स्थान देकर कहानियों को नया मोड़ दिया है। समकालीन साहित्यकारों ने जीवन बोध को स्पष्ट रूप से समझा और जीवन के प्रति अपने दृष्टिकोण की प्रस्तुति दी है। हरि भटनागर एक वरिष्ठ लेखक है। उनकी कहानियों में बाल मजदूर जीवन को केंद्र में रखकर यथार्थता प्रस्तुत की है। यह यथार्थ बालकों की मानसिक दशा को गहराई से अभिव्यक्त करता है। इनकी कहानियों में भावुकता और संवेदनशीलता को महत्व दिया गया है। हरि भटनागर ने अपनी कहानियों में जीवन के हर अनुभव को सच्चाई और ईमानदारी के साथ अभिव्यक्त किया है। हरि भटनागर की कहानियों के माध्यम से बाल मजदूर विषय को विश्लेषित किया जा रहा है।

हरि भटनागर की प्रसिद्ध कहानी 'सगीर और उसकी बस्ती के लोग' है। इस कहानी का प्रधान पात्र सगीर है। सगीर की उम्र चौदह वर्ष की है, लेकिन दिखाई देने में सगीर नौ-दस वर्ष का था। सगीर के अब्बा मर चुके थे। घर के गुज़ारे के बारे में, काम के बारे में सोच-विचार करके सगीर परेशान हो जाता है। सगीर नाल लगाने के काम को सीखने के लिए ज़हीर उस्ताद के पास जाता है। 'पाँच-छः महीने में ही सगीर नाल लगाने के काम में माहिर हो जाता है।'[1] सगीर को ज़हीर उस्ताद जितने भी पैसे देते थे वह अपनी अम्मी को दे देता था। थोड़े दिन बाद गहकियाँ सगीर के पास नहीं आते हैं, क्यों कि गहकियाँ यह कहते-'अभी लौंडा है, काम बिगाड़ देगा।'[2] सगीर को चाय की दुकान में काम मिल गया। वहाँ का अभद्र व्यवहार, अधिक परिश्रम उस पर कम पैसे, जिस में उसका भी पेट न भरे, अम्मी और ज़हीर उस्ताद की तो बात तो दूर। वह काम छोड़कर भाग आया। इसी तरह वह दूसरी चाय की दुकान में काम करता है वह भी थोड़े दिनों के लिए। सगीर काम न मिलने पर बहुत मायूस हो जाता है। इधर-उधर भटकने के बाद उसको भूख लगने लगी थी। आम के बगीचे में एक समूह मौजङ्कमस्ती करके केक और टमाटर के सास की बोतल छोड़कर चले जाते है। वे चीज़े सगीर को मिली सगीर उसको अजीब तरह से देखने लगता है और बस्ती के सभी लोगों को दिखाता है लेकिन कोई भी उन चीजों के बारे में नहीं जानता है। 'लड़के' कहानी में भी बाल मजदूर विषय को लेकर चित्रित किया गया है। पिछले दो वर्षों से ठाकुर दिग्विजय सिंह की कोठी में काम करने के लिए मनीराम और केसव है। मनीराम की उम्र तेरह ङ्क चौदह वर्ष की है, लेकिन दिखाई देने में सत्रह-अट्ठारह वर्ष का दिखाई देता है। केसव की उम्र भी तेरह-चौदह की है, और दिखाई देने में दस वर्ष का दिखाई देता है। दोनों ठाकुर की हवेली पर देर रात तक काम किया करते थे। ठाकुर के यहाँ मनीराम का काम था ङ्क सुबह चार बजे उठना झाड़ू लगाना, बर्तन माँझना, पौंछा मारना, पानी भरना ये काम थे। मनीराम से काम में कुछ गलती हो जाएँ तो जैसे गिलास गिर जाए या काँच के बर्तन फूट जाएँ तो झान्नाता हुआ थप्पड़। 'काम करते - करते ऊंघ जाने पर कान गरम किए जाते थे या सिर के बाल बेरहमी से खींचे जाते थे।'[3] मनीराम का जीवन एक दम यांत्रिक हो गया था। ठीक इसी तरह से केसव का जीवन भी था। केसव पहले होटल में, मिठाई की दुकान में, बेकरी में काम करता था। केसव को भी सुबह मुँह अंधेरे उठना पड़ता था। 'पौंछा लगाते हुए, गिलास साफ करते हुए कपड़ों पर लोहा फेरते हुए, फर्श पर ज्यादा पानी गिर जाता या गिलास में खर चिपका रह जाता तो केसव भय से पसीने में नहा जाता था।'[4] प्रकृति में तब्दीली है लेकिन इन दोनों के दैनिक क्रियाकलाप में नहीं। सख़्त मेहनत से इनके हाथों में घिट्टे पड गए थे । नींद पूरी न होने की वजह से मनीराम, केसव की आँखों में हमेशा नींद भरी होती और शरीर में थकान। मनीराम, केसव इन दोनों के भीतर ठाकुर के प्रति भय समाहित था। 'कथरी' नामक कहानी में जगदीश का पिता मंगल विवाह से पहले कबाड़ का काम करता था। शादी के बाद उसने कबाड़ का काम छोड़ दिया। झुग्गी में ज्यादातर औरतें काम पर जाती है और आदमी घर में आराम से ताडी पीते हैं। जितने भी पैसे थे मंगल के पास उसने खूब ऐश किया। मंगल की पत्नी मंगल को काम पर जाने के लिए कहने लगती है तो मंगल काम पर जाने के लिए तैयार नहीं होता है। उसकी पत्नी हार मान चुकी थी। उसकी पत्नी कबाड़ का बंधा- बंधाया धंधा करना चाहती थी लेकिन हिम्मत नहीं जुटा पायी थी। उसने कॉलोनी के कुछ घरों में चौका बासन धोना, कपड़े धोना, रोटी बनाने का काम किया करती थी। हर रोज़ शाम को झुग्गी से निकलकर मंगल पत्नी के साथ लड़ाई-झगड़ा, मार पिटाई करके पैसे लेकर ताड़ी पीने के लिए चला जाता था। ताड़ी की दुकान में काम करने वाले लड़के को देख कर मंगल को अपने बेटे की याद आने लगती है। उस लड़के को देख कर मंगल के मन में एक विचार आया कि वह भी अपने बेटे जगदीश को काम पर भेजें। शराब पीने के लिए उसे सख्त पैसों की जरूरत थी। अगर बेटे को काम पर लगा दिया जाए तो उसे शराब के लिए पैसे मिल जाएँगे। मंगल को पत्नी के साथ लड़ने झगड़ने, मार पिटाई करने की जरूरत नहीं पड़ेगी। मंगल अपने स्वार्थ के लिए जगदीश को लाला की चाय की दुकान पर काम करने के

लिए उसे छोड़ जाता है। लाला की चाय की दुकान बस अड्डे के पास थी। लाला जगदीश को देखकर भाँप गया की लड़का चुस्त दुरुस्त है काम करने के लिए। लाला ने मंगल को बीस रुपये देकर भेज दिया। बाप के जाने के बाद लाला ने जगदीश को खाने के लिए केक पर मलाई और शक्कर डाल कर दी। लाला जगदीश को बेटे के समान देखने लगता है। दिन भर जगदीश का काम चाय के झूठे गिलास उठाना और उन्हें धोना फिर लाला के इशारे पर इधर से उधर दौड़ना। शाम के समय में लाला ने जगदीश को खाने के लिए चाय और डबलरोटी दी। बर्तन धोने के लिए शंभू आता था। शंभू मुस्कुराते हुए प्यार भरी नजरों से जगदीश को देखते हुए बर्तन मलता था। शंभू काम के बाद मलाई की खुरचन जगदीश को देता जो काफी लजीज थी। रात के दस बजे सोने का समय था। बस का अड्डा सुनसान हो जाता था। जगदीश खाना खा चुका था लाला भट्टी के नीचे सोने के लिए उसका बिस्तर जमाकर लाला घर चले गए। जगदीश को बिस्तर पर सोते ही गहरी नींद आ गयी गयी। 'उसे थोड़ी देर बाद जोरों की सर्दी लग रही थी जो कुछ उसने ओढा था वह काफी ना था नींद ना आने के कारण उसने लाला कि बगलवाली हलवाई की दुकान में काम करने वाले लड़कों को दोपहर के समय में देखा था जगदीश का मन हुआ कि उन्हें देख कर आये।'[5] लेकिन यह सोचकर वह चुप रह गया कि कहीं उसे चोर लबारी ना समझे। एक पागल नंगा सर्दी से बेतरह काँपते हुए भट्टी के पास आकर खड़ा होने लगा जगदीश का मन हुआ उसे अपने पास लिटा ले दोनों सर्दी से बच जाएँगे। थोड़ी देर बाद जगदीश को अपनी माँ की याद आने लगती है माँ से वह रोज़ाना लिपटकर सोता था उसकी झुग्गी में बिछाने के लिए दो बोरे थे और ओढ़ने के लिए एक चादरा। जगदीश और माँ एक दूसरे के कथरी थे जिससे लिपटकर वे सर्दी को दूर भगा लिया करते थे। आज जगदीश और उसकी माँ एक दूसरे से अलग और दूर थे। 'जगदीश की इच्छा हुई कि वह अपनी माँ के पास जाएँ। लेकिन उसी समय लाला को आते देख कर जगदीश के पाँव वहीं पर रुक जाते हैं।'[6] 'हुलिया' नामक कहानी में तेरह वर्षीय का बालक नारू मोटर गेराज में काम करता है। उसके साथ उसके हम उम्र के चार लड़के भी मोटर गेराज में काम करते हैं। नारू का जीवन एकदम यांत्रिक था। थोड़ी देर के लिए भी उसे आराम नहीं मिलता था। नारू के पिता नारू और उसकी माँ को छोड़कर दूसरा विवाह करके चले जाते है। नारू की माँ कूडे कागज़-पन्नियाँ बटोर ने का काम करके नारू का पालन पोषण किया था। एक दिन नारू जब पास के नाई के दुकान पहुँचकर अपने हुलिये को देखकर चौँक जाता है। नारू के दिमाग में अचानक एक विचार आया कि-'वह अपनी हुलिया दुरुस्त करेगा, एक बेहतर इंसान बनेगा।'[7] यह बात उसे पुलकित कर रही थी। नारू जब अपने घर जाता है तो टटरा तारों से बँधा था। नारू टटरा खोलकर अंदर से लौकी बराबर साबुन को लिए नल के पास नहाने चला जाता है। वह नहा धोकर कपड़े पहनने के लिए टपरे के अंदर आता है वहाँ पर नारू को एक नीली कमीज़ थी जिसे अम्मी पिछले दिनों इज्तिमा से खरीदकर लाई थी। उसमें बटन लगाने थे दो एक जगह रफ़ू करना था। अम्मी ने यह कमीज़ ईद के लिए खरीदी थी। 'ईद पर नहीं, आज वह उसे पहनेगा। ईद से बढ़कर है आज का दिन।'[8] जब नारू कमीज़ को खोजकर देखने लगा उसमें बड़े-बड़े छिद्दे थे। चूहों ने बीच-बीच में उसे खा लिया था। वह कमीज़ को पहनकर एक छोटा-सा झिलमिल सुनहरा शॉल ओढकर वह अपनी इच्छा पूरी करने लगा था। नारू बाज़ार में, कॉलोनी, न्यू मार्केट आदि जगहों पर उत्साहवर्धक घूमने लगता है। 'मुन्ने की उमर' हरि भटनागर की यह एक महत्वपूर्ण कहानी है। इस कहानी में चूने भट्टे में काम करने वाला मजदूर हसन की है। हसन अपनी मशक्कत भरी दैनिक जीवन के बीच एक चार-पाँच वर्षीय सुंदर सलोने बच्चे को देखकर उसके प्रति हसन को अपार प्रेम उमड़ आता है। हसन खुशी और स्मृति में मुग्ध होकर अपने बच्चे का ख्याल आता है और उसके बारे में सोच विचार करने लगता है कि उसका बच्चा भी उसी की उम्र का होगा, लेकिन हसन के मन में दूसरी बात यह आई कि बेटा सात-आठ साल का है। जब वह इन बातों को लेकर सोचने लगा तो हसन परेशान हो गया था। हसन अपने बच्चे की उमर की जाँच करने के लिए अपने घर जाता है । रास्ते में वह अपने मुन्ने के बारे में सोचकर चल रहा था तो ठोकर की वजह से अंगूठे के पैर को चोट लगी। लेकिन हसन इससे बेखबर हो कर वह मुन्ने-मुन्ने कहता बढ़ता जा रहा था। घर पहुँचते ही वह अपनी बीवी को पुकार कर पूछने लगा कि- बचवा कहाँ है? बीवी हैरान होकर हसन की ओर देखकर कहने लगती है कि-'मुन्ने किते साल का? वह मुन्ने कहाँ रहा? वह तो ढपोंग हुआ दस बरस का। चाय की दुकान में काम करता है। यह क्या लेटा है। इशारे से उसने लड़के को दिखाया ङ्क कब से ठेल रही हूँ, उठता ही नहीं। अभी मालिक आ जाएगा तो लगाएगा बीसों जूते। झोंटा पकड़कर ले जाएगा.... ।'[9] हसन के ज़ेहन में बनी बच्चे की स्वभाविक छवि टूट-टूट कर बिखर जाती है।

कहानियों के मुख्य बिंदुओं का विश्लेषण :-

ज़ परिवार में किसी कमानेवाले वयस्क का न होना :-किसी भी व्यक्ति को समाज में प्रगति की ओर ले जाने का मार्ग व्यक्ति की पारिवारिक स्थिति होती है। गरीबी अपने साथ अशिक्षा, भूख, बीमारी भी लाती है। उन बच्चों का भविष्य अंधकारमय हो जाता है जिनके यहाँ कोई वयस्क कार्य करनेवाला नहीं होता है। हरि भटनागर की कहानी 'सगीर और उसकी बस्ती के लोग' नामक कहानी में सगीर के पिता की मृत्यु हो जाती है। उस मासूम बच्चे के नाजूक कंधों पर उसके परिवार का भार आ जाता है तथा परिवार के मुखिया के न रहने पर उसके परिवार का, ज़हीर उस्ताद का दायित्व भी आ जाता है। जो सगीर का कर्तव्य बन जाता है। सगीर के घर में कोई बड़ा सदस्य काम करनेवाला नहीं होता है तो सगीर ही अपने परिवार का पोषण करने के लिए प्रतिबद्ध होता है।

● **अशिक्षा :-**गरीबी का मुख्य कारण अशिक्षा है। अर्थ का अभाव आय के स्रोतों की कमी के कारण भी माँ-बाप अपने बच्चों से मजदूरी करवाने के लिए मजबूर हैं। 'कथरी', 'मुन्ने की उमर' नामक कहानियों में माँ-बाप अपने बच्चों को स्कूल भेजने के बजाय काम पर भेजने के लिए इच्छुक होते हैं।

● **निर्धनता :-**आर्थिक विपन्नता किसी भी व्यक्ति के जीवन में असंतोष को उत्पन्न करने का प्रमुख कारण है। जब व्यक्ति के जीवन में अर्थ की समस्या उत्पन्न होती है तब उसे अनेकों कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। 'हुलिया' नामक कहानी का मुख्य बाल पात्र नारू निर्धनता के कारण दो जून रोटी के लिए मोटर गैराज में का करना पड़ता है।

● **बाल मजदूर का शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य में तनाव :-** बच्चों से अधिक परिश्रम करवाने पर बालकों का शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं भावनात्मक विकास नहीं हो पाता है। 'लड़के' नामक कहानी में मनीराम और केसव दोनों सुबह चार बजे ठाकुर साहब ऊपरवाले कमरे की खिड़कियाँ खोलकर ज़ोर-ज़ोर से मानस पाठ करते। दोनों को जगाने की ज़रूरत न पड़ती। दोनों देर रात तक मशीन की तरह काम करते थे। नींद पूरी न हो पाने की वजह से आँखों में हमेशा नींद भरी होती और शरीर में थकान।

● **भय की भावना :-**'लड़के' नामक कहानी में केसव के मन में यह बात समा गई कि अगर वह कोठी छोड़कर भागा तो ठाकुर उसे जिंदा नहीं छोड़ेगा। पोछा लगाते हुए, गिलास साफ करते हुए, कपड़ों पर लोहा फेरते हुए दोनों में यह डर बना रहता कि कहीं कोई गलती न हो जाए। ठाकुर जैसे दूसरे व्यक्ति को देखकर केसव और मनीराम दोनों को अजीब किस्म का डर लग रहा था। तभी यकायक केशव घबरा जाता है। थोड़ी दूर स्थित पेड़ के नीचे उसने

ठाकुर साहब को देखा था। वह पेड़ की ओट में छिप गया और पीछे पीछे दौड़ आए मनीराम को डर के मारे कहने लगता है। दोनों एक पल में ठाकुर की हवेली में पहुँच जाते है।

● **सर्दी में गरम कपड़ों का अभाव**ः–'कथरी' नामक कहानी बाल मजदूर पात्र जगदीश को लाला की चाय की दुकान में काम करके रात भर वहीं सोना पड़ता है। जगदीश ने एक घण्टे की ही नींद ली थी। कड़ाके की सर्दी की वजह से उसकी नींद टूट जाती है। सर्दी की वजह से भट्टी की पूरी आग राख में तब्दील हो गयी थी। जगदीश ने सर्दी के बचाव के लिए जो कुछ ओढ़ा था वह उसके लिए काफी न थे, उस को गरम ऊनी कपड़ों का अभाव था।

● **अर्थ की लोलुपता**ः–लोगों में अर्थ के प्रति लालसा हरदिन बढ़ने लगी है। अर्थ ही मानव जीवन का एक मात्र लक्ष्य बन गया है। आज के आदमी को अर्थ अत्यंत शक्ति के साथ घसीटता है। 'कथरी' नामक कहानी में जगदीश का पिता मंगल शराब पीने की लालसा, अर्थ के अभाव के कारण जगदीश को काम करने के लिए लाला की चाय की दुकान पर छोड़कर आता है। एक पिता होने के नाते वह यह भी नहीं सोचता की जगदीश की उमर अभी आठ वर्ष की है।

● **रोजगारी और कम वेतन**ः–महानगरों में कस्बाई जीवन जीने वाले निचले स्तर के मज़दूर लोगों को रोजगार पूर्ण रूपेण नहीं मिल पाता है। यदि अगर हर रोज़ का काम मिल जाता है तो उनका जीवन सुखद होगा। अगर बेरोज़गारी है तो जीवन में यतानाएँ झेलना पड़ता है। मजदूरों से ज्यादा मजदूरों के बच्चों को पूँजीवादी लोग जल्दी काम पर रख लेते है। क्योंकि बाल मजदूरों को काम पर रखने से आधा वेतन देकर डराकर, धमकाकर काम करवा लेते हैं।

● **बच्चों पर अभिभावकों का आर्थिक दबाव**ः–आर्थिक दबाव एक ऐसी स्थिति है जिसमें व्यक्ति या परिवार अपनी आर्थिक ज़रूरतों को पूरा करने में असमर्थ होता है। यह दबाव व्यक्ति को अपने जीवन के लक्ष्यों को प्राप्त करने में बाधा उत्पन्न करता है और परिवार को अपने सदस्यों की ज़रूरतों को पूरा करने में असमर्थ बनाता है। बच्चों के प्रति अभिभावकों के आर्थिक दबाव के कारण हैं आय की कमी, वित्तीय संकट, कर्ज की समस्या, अभिभावकों की जीवनयापन की लागत में वृद्धि ये सभी प्रभाव बच्चों को बाल मजदूर बनने के लिए प्रभावित करती हैं।

निष्कर्षः–भारत देश के किसी भी शहर के इलाके या कस्बाई स्थानों पर प्रत्यक्ष रूप से सच्चाई दिखाई देने लगती है। किसी चाय की दुकान पर, होटल, गैरेज, रेल्वे स्टेशन आदि कई ऐसे स्थान हैं जहाँ बच्चे अपने मालिकों के इशारों पर मशीन की तरह काम करते है। कुछ बच्चे न तो सर्दी की परवाह करते हैं और न ही गर्मी की परवाह करते है। दो रोटी के जुगाड़ के लिए उन्हे सुबह से लेकर शाम तक करना पड़ता है। बच्चों के शरीर और उनके हाथों पर जमी हुई मैल उनकी दयनीय दशा को प्रदर्शित करती है। ये बच्चे आम बच्चों से बिल्कुल अलग दिखाई देते हैं इनके बिखरे हुए बाल, बदन पर फटे पुराने कपड़े, अध खुला तन यही इन बच्चों की पहचान है।

हरि भटनागर की कहानियाँ बाल मजदूरों की समस्याओं को गहराई से उजागर करती हैं। 'सगीर और उसकी बस्ती के लोग', 'लड़के', 'कथरी', और,'हुलिया', 'मुन्ने की उम्र' जैसी कहानियाँ न केवल मनोरंजन करती हैं, बल्कि समाज के प्रति एक महत्वपूर्ण संदेश भी देती हैं। इन कहानियों के माध्यम से पाठकों को यह समझ में आता है कि बच्चों के अधिकारों की रक्षा करना हमारी जिम्मेदारी है। हर बच्चे को अपने सपनों को पूरा करने का अवसर मिलना चाहिए, और समाज को मिलकर इस दिशा में काम करना होगा। हरि भटनागर की लेखन शैली और संवेदनशीलता हमें प्रेरित करती है कि हम इन बच्चों की ज़िंदगी में सकारात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास करें।

संदर्भ सूचीः–

1. सगीर और उसकी बस्ती के लोग–आधार प्रकाशन – पृष्ठ संख्या – 11
2. सगीर और उसकी बस्ती के लोग–आधार प्रकाशन – पृष्ठ संख्या–11
3. सगीर और उसकी बस्ती के लोग – आधार प्रकाशन– पृष्ठ संख्या–42
4. सगीर और उसकी बस्ती के लोग – आधार प्रकाशन – पृष्ठ संख्या–43
5. आँख का नाम रोटी –भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन पृष्ठ संख्या – 31
6. आँख का नाम रोटी –भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन पृष्ठ संख्या – 32
7. बिल्ली नहीं दीवार – आधार प्रकाशन पृष्ठ संख्या –10
8. बिल्ली नहीं दीवार – आधार प्रकाशन –पृष्ठ संख्या –11
9. नाम में का रखा है – इंडिया नेटबुक्स प्रकाशन – पृष्ठ संख्या–13

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

साहित्य और समाज का अर्न्तसंबंध : वर्तमान सन्दर्भ में

डॉ. दिव्या मिश्रा

अतिथि विद्वान, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा, मप्र.

भूमिका :-हिन्दी में साहित्य का समाज शास्त्र एक स्वतन्त्र विद्या के रूप में उभर रहा है। संस्कृत की भौतिकवादी व्याख्या के आधार पर कलाओं का जो समाज शास्त्र विकसित हुआ है। उसका एक रूप है साहित्य का समाज शास्त्र, इसे कोई साहित्य का समाज शास्त्र कहे या समाज शास्त्रीय आलोचना, उसका लक्ष्य साहितय की सामाजिकता की व्याख्या करना है। साहित्य के समाज शास्त्र का विकास साहित्य के आलोचकों ने किया। तेन, लियोलार मेन्थन, लूसिया गोल्ड मान, मिसेल जेराफ्र और रेमाण्ड विलियमस का इस शास्त्र के विकास में काफ्री योगदान है।

साहित्य की धारणा के परिवर्तन और विकास में सामाजिक परिवर्तन विकास की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसलिए साहित्य के समाज शास्त्रों ने साहित्य की ऐसी व्याख्या विकसित की जिससे साहित्य का सामाजिक रूप स्पष्ट हो। और समाज से साहित्य की व्याख्या सम्भव हो। साहित्य के समाज शास्त्र का मुख्य उदेश्य है। समाज से साहित्य के सम्बन्धों की व्याख्या और खोज, गहरे स्तर पर छान–विन करने पर साहितय और समाज के सम्बन्ध जटिल दिखाई देते है। सर्जनात्मक साहित्य के विकास में समाज की क्या भूमिका होती है। और रचना की जड़े समाज में कितनी समाई होती है। कोई रचना किस सीमा तक समाज को कर प्रभावित करती है, इन सब पर विचार विमर्श इस शास्त्र में होता है। क्योंकि साहित्य रचना एक सामाजिक कर्म है, चूंकि साहित्य रचना एक कर्म है, और कर्ता एक सामाजिक उत्पादन माध्यम।

स्तेल ने–साहित्य की उत्पत्ति में समाज की भूमिका और समाज पर साहित्य के प्रभाव का विवेचना क्रान्तिकारी ढंग से किया। तेन ने भी साहित्य की सामाजिक भूमि और उसके जातिय चरित्र पर बल देते हुए समाज के बारे में ज्ञान का प्रमुख रूवरूप माना है। 19 वीं शदी में साहित्य का समाज शास्त्र को दो भागों (स्तरों) पर जोड़ा एक समाज को साहित्य की उत्पत्ति और उसके स्वरूप का निर्धारण करने वाला व्यक्ति के रूप में तथा दूसरे साहित्य के रूप में तथा समाज को दर्पण के रूप में 20वीं शदी के साहित्य समाजशास्त्रीय भी साहित्य कृत के ज्ञानात्मक पक्ष को महत्व स्वीकार करते है। याकृत में सामाजिक चेतना विश्व दृष्टि और भूल चेतना की अभिव्यक्ति होती है।

जे.एल. सेमेमन्स ने लिखा है कि–''एक चित्र के अनुभव को दूसरे क्षेत्र से जोड़ते समाज सादृश्य मूलक सम्बन्ध भावना का सहारा लेना जरूरी है, इसी आधार पर साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है।''

साहित्य के समाज में समान धर्मिता धारण की व्याख्या और साहित्य विवेचना में सफ्रल प्रयोग लूसी गोल्ड मान ने किया। जीवन जगत के बोध व्यंजना के तरीकों की खोजा और रूप शिल्प आदि के अविष्कार से लेकर भाषा की अंगिमाओं का विकास कल्पना की मदद से ही होता है। साहित्य का समाज शास्त्र, साहित्य और साहित्यकार के कल्पित प्रभाव मण्डल को हटाकर उनकी वास्तविक स्थिति का विश्लेषण करता है। साहित्य के समाज शास्त्र का विकास जिस दिशा में हुआ, उसका उदेश्य पाठक से साहित्य के सम्बन्ध का विवेचना करना। पाठक का मतलब, साहित्य के उत्पादन से आगे बढ़कर उससे उस भोग पर ध्यान क्रेन्द्रित करना है। साहित्य का समाज शास्त्र आधुनिक युक समाज में साहित्य की वास्तविकता स्थिति और भूमिका को यर्थाथवादी ढंग से समझने का प्रत्यत्न करता है। आज साहित्य के समाज शास्त्र की दो धराएं है–

एक विमांशावादी जिसमें समाज की अभिव्यक्ति की खोज होती है। दूसरा अनुभाववादी धारा है, जिसमें साहित्य को रोमांटिक सामाजिक स्थिति का विवेचना होता है।

आज का साहित्य भी अति आधुनिकता के चक्र में फ्रसने लगा है। स्त्री, पुरूषो के गुहांग वर्णन तथा उनके क्रिया–कलापों के सम्पूर्ण चित्रणों से कथाकार किस यथार्थ वोध चाहना है? जीवन यौवनाचार के अतिरिक्त भी बहुत कुछ है। हिन्दी की स्वस्थ कहानी जीवन का प्रभावकारी चित्रण करती है। कभी–कभी उसके परिवेश चित्रण से ऐसा जान पड़ता है, कि मानों वह रिर्पोर्ताज से स्पर्धा लेना चाहती हो। आधुनिक साहित्यकार को सौन्दर्य के प्रति क्या दृष्टि है, वास्तव में ना तो सौन्दर्य की कोई व्याख्या हो सकती है, और न ही उसे बांधा जा सकता है।

रवीन्द्र नाथ ने एक स्थान पर कहां है कि–''जब मैं आकाश की ओर आंख उठाता हूं, तो पूर्व और पश्चिम दिशा आलोकित हो उठती है और जब मैं गुलाव की ओर देखता हूं, और कहता हूं कि वह सुन्दर है, तो वह सचमुच सुन्दर हो उठता हैं।

''**साहित्य क्या है?**

साहित्य जतना की चित्तवृतियों का प्रतिविम्ब है, साहित्य किसी परम्परा विशेष से सम्बद्ध होता है। अतः उसकी विला क्षणता को उससे अलग नही किया जा सकता है। दूसरी ओर उसका सर्जक विशिष्ट प्रतिभा, कल्पना, रचना, दृष्टि, जीवन विवेक से सम्पत्र व्यक्ति विशेष द्वारा होता है। अतः उसकी अपनी विलाक्षणता या विशिष्टता को नकारा नही जा सकता। साहित्य अनेक रूपों में मानव मन की अति व्यक्ति है। जिसमें हित की भावना केन्द्रियता प्राप्त करती है। यही नही साहित्य ज्ञाना में समन्वयकी प्रवृत्ति प्रधान है। जबकि साहित्य ज्ञाना में अन्यवयकी समाज का ज्ञान लक्ष्य कभी अर्थ कभी काम, कभी धर्म और कभी मोप्त की प्राप्ति हो सकती है। किन्तु साहित्य का उदेश्य चतुर्वग की प्राप्ति है, जो उसकी समविति का ही लक्षण है।

जब हम साहित्य को देखते या पढ़ते है तव हम साहित्य में समाज का रूपएवं स्वरूप की व्याख्या करते है, तो हमे यह ज्ञात होता है कि ''साहित्य शब्द का मूल अर्थ संस्कृत 'शब्द का मूल अर्थ है। जब हम सहित 'सहित शब्द को व्यायकरण की दृष्टि से देखते है तो ज्ञात होता है कि 'धा' धातु के साथ 'क्त' प्रत्यय के संयोग से हित शब्द निष्पन्न होता है। 'हित शब्द' में स जोड़ने से सहित शब्द बना, जिसका अर्थ हुआ ''विविध वस्तुओं का मिलन अथवा हित कल्याण युक्त होना। इसी 'साहित्य शब्द' में 'व्यत' प्रत्यय करने पर भाव वाचक संज्ञा अर्थात साहित्य शब्द बनता है।

रामचन्द्र शुक्ल–हिन्दी साहित्य का इतिहास–3

इस व्याकरण सम्मत शाब्दिक ब्यूत्पति मूलक विश्लेषण में हमने साहित्य की दो प्रकृत्तियां देखी पहली एकत्री करण, दूसरी कल्याण की भावना साहित्य के सम्बन्ध में संस्कृत का बहूप्रचलित सूत्र वाक्य 'साहित्य भावः साहित्यम' में भी अनेक वस्तुओं के समाहित होने का भाव निहित है। जिसमें सव का हित हो साहित्य है। इस विवेचना में हम साहित्य का वयापकतम रूवरूप पाते है साहित्य शब्द व्यक्ति का सबसे बड़ा प्रमाण तो यह है कि कालान्तर में वाडः मय और काव्य मय दोनों के लिए साहित्य में समग्र जीवन की अभिव्यक्ति और ज्ञान चेतना का बोध होने के कारण वैयतिक प्रयासों में नही समेटा जा सकता है।

साहित्य सचेत रूप से उन प्रवृत्तियों को ग्रहण नही करता, दूसरा साहित्य वह है जिसमें उन गुणों, प्रावृत्तियों के वास्तविक अभिप्रायः गर्भित अर्थ तथा उनके निर्माण कार्य जागरूक प्रकार से ग्रहण किये जाते है। उन्होने कहा किसी भी साहित्य को तीन तरह से देखा जाना चाहिए। एक वह किन स्त्रोतो से उदगत होता है। दूसरा उसका कलात्मक प्रभाव क्या है। तिसरा उसकी अन्तः प्रकृत और रूप रेखा कैसी है।

साहित्य की परिभाषाएँ

1. **आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने लिख है कि–**''ज्ञान राशि के संक्षिप्त कोप का नाम ही साहित्य है।'' उन्होने ''साहित्य समाज का दर्पण है।'' यह भी माना है,
2. **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कहा है कि:–**''प्रत्येक देश का साहित्य वहां की जनता की चित्तवृत्ति का सोच व प्रतिविम्ब है।''

इस प्रकार शुक्ल जी ने चित्तवृत्तियों की परम्परा को परखते हुए, साहित्य परम्परा के साथ उनका सामांजस्य स्थापित किया है।

3. **डॉ0 नागेन्द्र के शब्दों में:–**''साहित्य का समाज शास्त्र से जीवन का गहरा प्रभाव, दुहरा सम्बन्ध है, पहला क्रिया रूप में दूसरा प्रतिक्रिया के रूप में, क्रिया के रूप् में जीवन की अभिव्यक्ति है, प्रतिक्रिया रूप में उसका निर्माता और पोषक''
4. **प्रेमचन्द्र के अनुसार साहित्य की परिभाषा:–**''साहित्य की बहुत सी परिभाषाएँ दी गई है, साहित्य पर मेरे विचार में, उसकी सर्वोत्तम परिभाषा जीवन की आलोचना है। चाहे वह निबन्ध के रूप में हो चाहे कहानी के, कात्य के रूप में उसे हमारे जीवन की आलोचना होनी चाहिए।

बाबू श्याम सुन्दर के अनुसार:–''अंग्रेजी के लिटरेचर शब्द, तथा संस्क़त के काव्य शब्द को दो अर्थो में ग्रहण किया गया है! एक स्थान में उन्होने कहा है कि लिटरेचर शब्द की भांति हिन्दी साहित्य शब्द भी दो अर्थो में प्रस्तुत होने लगा है। बेचचाल की भाषा में हम किसी भी छपी हुई पुस्तक को साहित्य की संज्ञा दे सकते हैं। उपयुक्त अर्थ में साहित्य से उन्ही पुस्तकों का बोध होता है।''

डॉ0 गोविन्द त्रिगायत के शब्दों में:–''साहित्य जीवन जगत के गत्यात्मक सौन्दर्य की वह भावना भांकी है, जिसके सहारे नित्य आनन्द और कल्याण का विधान होता है। साहित्य कहलाती है। ''

डॉ. रामकुमार वर्मा के शब्दों में:–''साहित्य मानव की संवेदनाओ का कलात्मक रूप से अभिव्यक्ति करण है।''साहित्य जीवन के प़त्रों साथ अनुभूति की संवेदना से सम्बन्धित है, जीवन मूल्यों के परिवर्तन के फलस्वरूप, साहित्य के व्यंजन पास में परिवर्तन होता रहता है। साहित्य को कभी कला, कभी काव्य, कभी अलेवार शास्त्र और कभी ग्रन्थों के रूप में स्वीकृत दी गई।

समाज क्या है?

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, वह समाज में रहता है, और उसमें रहते हुए अपने योग क्षोम के लिए सतत् प्रत्यनशील रहता है। उसका हित कल्याण एवं उन्नित पराजय की उपकथाओं निर्माण एवं विनाश वितयुक्ति एवं विकम्वनाओं का एक वास्तविक विस्तृत आलेख है। मानव जीवन से सम्बन्धित विज्ञानोंका विवेच्य विषय मनुष्य न होकर मानव समाज हो है। सामाजिक सम्बधों के विभिन्न पहुलओं अंगो को लेकर विभिन्न सामाजिक विज्ञानों का जन्म एवं विकाश हुआ।

सामान्यतः व्यक्तियों के समूह के अर्थ में समाज का प्रयोग होता है। यह किसी संगठित या आंसगठित समूह को समाज कहते है।

जैसे:– आर्य समाज, ब्रम्ह समाज, महिला समाज विद्यार्थी समाज आदि।

राजनीत शास्त्री समाज को व्यक्तियों के समूह के रूप में देखता है, मानव शास्त्रीय मानव समुदायों को ही समाज मानता है। जबकि अर्थ शास्त्री अर्थिक क्रियाओं को समन्वय करने वाले व्यक्तियों को समाज कहता है। हम समाज को समाज शास्त्र के दृष्टिकोण से जानना चाहते है। अतः समाज शास्त्र में 'समाज' शब्द विशिष्ट अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। यहां व्यक्ति व्यक्ति के बीच पाये जाने वाले सामाजिक के आधार पर निर्मित व्यवस्था को 'समाज' कहा गया है।

समाजशास्त्र की परिभाषाएॅ:–

समाजशास्त्र की परिभाषा में विद्वानों ने विभिन्न मत दिये हैं:'–

सोशियोंलाजी 'सोशियो और लाजी को मिला कर बना है, शोशियो का शब्दिक अर्थ है,'समाज' इस प्रकार सोशियोलाजी का शब्दिक अर्थ – समाज तथा लाजी का अर्थ है, ज्ञान अथवा विज्ञान इस प्रकार सोशियोलाजी का शब्दिक अर्थ – समाज से सम्बन्धित समाज विज्ञान जो कि समाज के विषय में वैज्ञानिक अध्ययन करता है। वस्तुतः लैटिन भाषा के ''शोसियम '' तथा ग्रीक भाषा के ''लोगस'' के सम्नानित दृष्टिकोण से समाजशास्त्र उस विज्ञान का सूचक है, जो समाज का क्रम्बद्ध तथा संबहित अध्ययन करता है।

अगस्ट काम्टे के अनुसार:–''समाज व्यक्तियों का जात है।'' ऐसी भाषा जिसमें सभी का हित हो तथा सभी को लोक मंगल की कामना किया जाता है। उसे समाज शास्त्र कहा जाता है।

जार्ज मिशल:–''समाज को उन व्यक्तियों का समूह मानता है, जो अन्तः क्रिया व्दारा सम्बन्धित है।''

रार्ल्फ लिन्टन के अनुसार:–''समाज वह है, जिसमें सम्मलित व्यक्ति त्यक्ति अपने को संगठित करने और एक सामाजिक इकाई के रूप में के लिए लम्बे समय के साथ रहते और काम करते रहे हों।''

ब्लेकमार और गिलीन के शब्दों में:–''समाज शास्त्र, मानव जाति के एक दूसरे के सम्पर्क में आने से उत्पन्न होने वाली सामाजिक घटनाओं का अध्यय करता है।''

फेयर वैक्स के अनुशार:–''समाज शास्त्र एक ऐसा नाम है, जिसका प्रयोग किंचित पदार्थो के अपरिपक्य डोर के लिए किया जाता है। जिसमें समाज के ज्ञान का समावेश होता है।''

मैकाइवर पेज की स्थापना:–''समाज रीतियों एवं कार्य प्रणालियों की अधिकार एवं परिस्थिक सहायता की है। अनेक समूहों तथा विभागों, मानव व्यवहार के नियन्त्रणों तथा स्वतन्त्रओं की एक व्यवथा है। इस सदैव परिवर्तनशील, जटिल, व्यवस्था को हम समाज कहते है। यह' सामाजिक सम्बन्धो को जात है। औरयह हमेशा परिवर्तन होता रहता ।''

''समाज शास्त्र समाज का अध्ययन है।''

स्माज शास्त्रीय मन्यता के अनुसार– कृति की व्याख्या हेतु लेखक, पाठक, आलोचक आदि की पारिस्थरिक अन्त: क्रियाओ का अध्ययन आवश्यक है।

साहित्य में समाज और समाज में साहित्य में समाज कैसे होता है:–

साहित्य के सन्दर्भ में समाज शास्त्रीय अध्ययन एक विशेष प्रकार का अध्ययन है, हम किसी कृत के अध्ययन विम्बप्रतीक भाषा शैली अलंकार तक सीमित नही रखते अपितु मनोंवैज्ञानिक धरातल पर साहित्य सर्जना को जोडते है। साहित्य के आर्थिक राजनैतिक, सामाजिक विपटन, या संरचानाएं साहितय के समाज शास्त्र में इस तरह साहित्य समाज का विश्लेषण नही करता, अपितु सामाजिक जीवन के मूल तक गहराई में पहुचतां है। इस रूप् में साहित्य समाज का दर्पण ही नही वह मानव मूल्यों को भी ध्यान में रखत है। साहित्य का अध्ययन जब समाज शास्त्रीय अध्ययन से करते है' तक हमारे सामने विभिन्न दृष्टिकोण होते है:–

1. समाज के प्रतिविम्ब के रूप में साहित्य का अध्ययन।
2. लेखक के सन्दर्भ को ध्यान में रखकर साहित्य का अध्ययन।
3. साहित्य को किसी विशेष परिस्थित में विशेष समाज व्दारा स्वीकृत के अध्ययन।
4. उद्देश्य की सम्प्रेषणीयता के आधार पर साहित्य का अध्ययन।
5. समाज को संगठित करने एवं उसे प्रमाणित करने की दृष्टि से साहित्य का अध्ययन।
6. सामाजिक धरातल पर साहित्य का अध्ययन।

समाज में साहित्य और साहित्यकार:–साहित्य और साहित्यकार की आज के समाज में जो स्थिति है, उसका विवेचना साहित्य का समाज शास्त्र करता है। साहित्य के समाज से लेखक के सम्बन्ध उसकी सामाजिक स्थिति, जीविका, आश्रय और इन सब वे प्रभावित होने वाली मानसिकता का अध्ययन होता है। साहित्य के समाज शास्त्र की भौतिक सत्ता और साहित्यकार की वास्तविक स्थिति के विश्लेषण पर वल देती है। इस परम्परा वादी दृष्टि कोण की परम्परावादी कोणों की प्रधानता है। और इसका सर्वाधिक विकास अपने भारतीयों के अन्दर झलकता है। और दिखाई पड़ता है। इसका अन्तर्गत दो प्रवृत्तियां है, एक प्रवृत्ति साहित्य के समाज शास्त्र की एक शाखा बनाने पर जोर देती है। दूसरी प्रवृत्ति साहित्यकार को समझने की कोशिश करती है। जिस प्रकार से अपने समाज के लिए कणि ने लिखा है कि–नही पराग नही मधुर मधु, नही विकास इतिकाल,अली कली ही सौ विहयों, आगे कौन हकाल,,भारत में साहित्यक अनुशीलन की परम्परा प्राचीन है।

आज के समाज में साहित्य और साहित्यकार की वह स्थिति नही है, जो आम जनगण की वह स्थिति नही है, भारतीय समाज में साहित्यकार की बदलती स्थिति पर विचार करे तो यह समझते देर न लगेगी कि जो अपने में स्थिति, वाल्मीकी, कालीदास, भवभूमि, कबीरदास, विहारी या भूषण की थी, आज वह लेखक ही नही है। साहित्य और साहित्यकारकी आज के समय में जो स्थिति है। उसका विवेचना साहित्य का समाज शास्त्र करता है।

सन्दर्भ सूची:–

1. साहित्य के समाज शास्त्र की भूमिका – डॉ0 मैनेजर पाण्डेय भारतीय भाषा केन्द्र, जवाहरलाल नेहरू वि0वि0 दिल्ली
2. साहित्य का समाज शास्त्रीय चिन्तन – डॉ0 निर्मला जैन
3. रामकुमार वर्मा, साहित्य शास् पृष्ठ संख्या 10
4. समाज शास्त्रीय अवधारणाएं– एम0एल0 गुप्ता एवं डी0डी0 शर्मा
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास– रामचन्द्र शुक्ल
6. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी– कहानियों के कुछ विचार
7. भारतीय साहित्य, जगदीश पब्लिकेशन अस्पताल मार्ग,आगरा–3

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

यमुना के बागी बेटे उपन्यास में अभिव्यक्त सामाजिक - राजनैतिक बोध

ऐपिन सिंह
डॉ. बचन लाल

1. शोधार्थी, हिंदी, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड
2. सहायक प्राध्यापक, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय परिसर, अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड

विद्यासागर नौटियाल हिंदी के समकालीन कथाकार हैं। उनकी चर्चित रचना 'यमुना के बागी बेटे' ऐतिहासिकोन्मुख यथार्थवादी उपन्यास है। लघु कलेवर के इस औपन्यासिक कृति में कथाकार ने आजादी से पूर्व टिहरी गढ़वाल रियासत के प्रमुख व समृद्ध परगने 'रवांई' में सामंती शासन की दमनकारी नीति और जनांदोलन के नायकों के स्वाभिमान, साहस और शहादत को अभिव्यंजित किया है। 'तिलाड़ी गोलीकांड' की घटना को कथानक बनाकर उपन्यासकार ने साम्राज्यवादी व्यवस्था के पोषकों के अमानवीय व्यवहार तथा रवांल्टों(रवांई वासी) के दुर्धर्ष संघर्ष और बलिदान को सामयिक पीढ़ी के समक्ष प्रस्तुत किया है। निश्चय ही यह सामाजिक-राजनीतिक दृष्टि से ऐतिहासिक कथा-कृति है। विद्यागर नौटियाल ने इस उपन्यास में तत्कालीन सामाजिक-राजनीतिक सरोकारों से संपृक्त यर्थाथ व मार्मिक घटना को वर्णित किया है।

सामाजिक बोध:-समीक्ष्य उपन्यास 'यमुना के बागी बेटे' की सामाजिक परिस्थिति के अवलोकन से ज्ञात होता कि तत्समय गढ़वाल राज्य में सामाजिक व्यवस्था बड़ी विषम थीं। रवांई और जौनपुर परगने में भी उथल-पुथल मची थी। सामंती शासन की लोभ-लिप्सा से लोकमानस आतंकित था। स्वभाव से आततायी रियासत के अहलकार मदोन्मत्त रहते थे। लोगों के समस्त आचार-विचार, उत्सव रीति-रिवाज, धर्म-विश्वास, मेले-पर्व, तीज-त्योहार और बैठक-स्थल आदि पर दरबार की नज़र रहती थी। आम जन कुंठित और अभिशप्त जीवन व्यतीत करते थे। वे अपने अधिकारों के लड़ते तो ढंढकी (विरोधी) कहलाए जाने लगे। चतुर्दिक अमानुषिक व्यवहार के दंश से उनका जीवन नारकीय हो गया। उन्हें शिक्षा से वंचित रखा जाता; क्योंकि दरबार को भय था कि शिक्षित होने से चेतना जाग उठेगी। महाराजा की जवाबदेही अंग्रेजी हुकुमत के प्रति थी न कि प्रजा के।

उपन्यासकार विद्यासागर नौटियाल ने युगीन सामाजिक परिस्थितियों को पौराणिक और ऐतिहासिक दृष्टांतों से लक्षित किया है। उस समय समाज में मुख्य रूप से दो वर्ग दिखाई देते हैं- एक साम्राज्यवादी-पूँजीवादी विचार धारा के पोषक और दूसरा करुणा के सागर में डूबा आम जनमानस। एक ओर महाराजा और उनके सिपहसालार तो दूसरी ओर प्रताड़ित प्रजा। प्रजा केवल कहने के लिए थी! असल में वे क्षुद्र जीव समझे जाते। वे स्वर्गलोक के धर्म-रक्षक कहे जाने वाले देवपुत्र 'अष्टवसु' और ऋषि वशिष्ठ के कथा-प्रसंग के द्वारा बताते हैं कि वशिष्ठ ने होम-धेनु के रूप में जिस उत्तमनंदिनी नाम की गाय को प्राप्त किया, उसके अद्भुत गुणों से प्रभावित होकर एक वसु ने उस गाय का हरण कर लिया। ब्रह्मर्षि के कुपित श्रीमुख से शाप मिल गया कि ''तुम सब मनुष्यलोक में जन्म धारण करो'' इस शाप से अष्टवसु विचलित हो गए। ऋषि के समक्ष याचना करने लगे कि,- 'हमें मानवों की संगत से बचाइए दयालु पिता। सिर्फ इतनी ही प्राथर्ना है कि हमें साधारण मनुष्यों के बीच न भेजा जाए।'[1] अष्टवसुओं का यह कथन साधारण मनुष्यलोक को तुच्छ घोषित करता है। वे स्वयं को आम मानव से विशिष्ट और भिन्न मानते हैं। टिहरी का सामंती शासन भी अपने राज्य की प्रजा के प्रति कुछ इसी प्रकार का भाव रखता हैं,- 'ईश्वर ने राजा के रूप में पैदा कर धरती पर भेजा है तो उसे राजा की तरह ही रहना चाहिए- साधारण मनुष्यों से अलग, उनके स्तर से ऊपर। हर ऐरे-गैरे से घुल-मिलकर रहने से राजा की इज्जत कम होती हैं।'[2] अष्टवसुओं और राजा के कथनों मे बहुत साम्यता है। वे सधारण मनुष्यों के लोक से इतर विशिष्ट लोक के वासी है। रवांल्टे उनके लिए हेय हैं। उनके समाज से इनका कोई सरोकार नहीं है। उस समाज में निहित वर्ग-भेद की दृष्टि विजयदशमी के अवसर आयोजित उत्सव में भी देखी जा सकती है, जब रवांल्टों को अपमानित किया जाता है। साम्राज्यवाद के प्रतिनिधि गर्वनर हेली की आवाभगत में दरबारी हुक्मरान गौरव का भान करते हैं। रवांल्टों की मौजूदगी उनके लिए शूल की तरह हैं।

उपन्यास में वर्ग-संघर्ष के स्पष्ट व व्यापक कथा-सूत्र अंतर्भूत हैं। प्राचीन काल से राजतंत्र और प्रजा के बीच बड़ी विभाजक रेखा रही है। राजा-महाराजाओं को ईश्वर के सदृश पूजा जाता रहा है। इस उपन्यास में भी प्रजा की अपने महाराजा के प्रति अन्यतम राजभक्ति का भाव है। रवांई में वन-व्यवस्था का पुरजोर विरोध हुआ। दीवान चक्रधर जुयाल और डी0एफ0ओ0 पद्मदत्त की अगुआई में प्रजा के दमन के पड्यंत्र रचे जाते हैं। उन पर अत्याचार किए गए। कृषि और पशुपालन के लिए कठोर प्रावधान किए गए। दुर्व्यवहार और शोषित वृत्ति से पीड़ित जन समुदाय ढंढक(विद्रोह) का आश्रय लेने को विवश होता है। प्रभुत्ववादी दरबारी शासन के समानांतर स्वराज के निमितार्थ 'आजाद पंचायतों' का गठन होने लगा। दरबार की प्रतिक्रिया में 'मुल्क' की परिकल्पना उभर आई। 'कुछ दिन पहले चांदाडोखरी में जमा लोगों ने अपनी आजाद पंचायत की स्थापना करते हुए यह ऐलान कर दिया था कि रियासत के वन-संबंधी नए कानूनों को नहीं माना जाएगा।'[3] जो समाज चिरकाल से वनों के मध्य निवास कर रहा था, उसके जंगल, खेत, रास्ते और पशुपालन सीधे रियासत के अधिकार मे आ गए। भूतपूर्व वज़ीर हरिकृष्ण रतूड़ी को रवांईवासी इस वन-व्यवस्था के कठोर कानून से होने वाले कष्ट और संकट से अवगत कराते हैं। वे कहते हैं,- 'सारा झगड़ा तो जंगल को बचाने का है पंडितजी। हम जंगल के पेड़ों को खड़ा करना चाहते हैं, जंगलात वाले उन्हें ठेकेदार को बेचकर कटवा देने का बेरहम कानून बना रहे हैं।'[4] स्थानीय निवासी बताते हैं कि रवांई की बहू-बेटियाँ अपने ही वनों से पशुओं के लिए घास व लकड़ी तक नहीं ला सकती हैं।

पूरे उपन्यास में समाज सामंती शासन से आक्रांत है। इस वंचना से भी यह समुदाय शांतिपूर्वक जीवन व्यतीत करने में विश्वास करता है। उनकी स्पृहा सीमित हैं। वे कपट नहीं जानते। राजा को 'बोलांदा बदरी' कहते हैं। जब अपने हितों के लिए वे अहिंसापूर्वक बैठक करते हैं तो, उन पर बर्बरता से गोलियाँ चलाई जाती हैं। मुख पर तारकोल पोता जाता है। जासूसों की मदद से घरों में लूटमार होने लगती है तथा बलपूर्वक निर्दोष रवांल्टों को बंदी बनाकर कारगार में कठोर यातनाएँ दी जाती हैं। वे स्वाभिमानी रवांल्टें माफी न माँगकर सहर्ष दण्ड को स्वीकार कर लेते हैं। तत्कालीन समाज में प्रजा को दास की तरह समझा जाता है। प्रजा की इस दयनीय दशा और कुख्यात 'तिलाड़ी गोलीकांड'(जालियाँवाला बाग हत्याकांड के समान) की घटना को जब 'गढ़वाली' पत्रिका में प्रकाशित किया जाता है, तो पत्रिका के संपादक विश्वंभरदत्त चंदौला को भी कारावास भेज दिया जाता है। लेकिन रवांल्टों ने अधिकारों की रक्षा के लिए अहिंसक जन-विद्रोह किया। वे विवेकशून्य कानूनों को तिलांजलि दे देते हैं और सामंती शासन का प्रतिकार करने के लिए उद्यत हो उठते हैं। रवांई कांड के मर्मज्ञ लेखक सकलचंद रावत के अनुसार,- 'यह समाज कृषि एवं पशुपालन से अपना निर्वाह करता था तथा इस समाज में सच्चाई, प्रेम, न्याय, करूणा और बंधुत्व जैसे जीवन मूल्य तथा संवाद, सहमति सहयोग, सहभाग एवं सहकार परक जीवन शैली के उन्नयन और संरक्षरण का आधार पंचायतें ही रही हैं।'[5]

गौर से देखें तो उपन्यास में कृषि, पशुपालन का उस समाज में विशेष स्थान है। पंचायतों के माध्यम से रवांई परगने के निवासी पारस्परिक सामाजिक समंजन और सौहार्द को बनाए रखते थे। उपन्यासकार ने मार्क्सवादी विचारधारा के अनुरूप समाज के वर्ग-सघर्ष को उद्घाटित भी किया है और रूपांकित भी। 'यमुना के बागी बेटे' उपन्यास में समाज के अंतर्विरोध, वैमनस्य, दमनकारी नीतियों तथा रवांल्टों की सांगठनिक चेतना और जन-जाग्रति की सहज अभिव्यक्ति हुई है। उनका साहस और मातृभूमि का अनुराग प्रशंसनीय है- जो इस समाज को आज भी अभिप्रेरित करता है।

राजनीतिक बोधः-प्रस्तुत उपन्यास 'यमुना के बागी बेटे' की राजनीतिक पृष्ठभूमि को समझने से पूर्व तत्कालीन पृष्ठभूमि को समझने से पूर्व तत्कालीन राष्ट्रीय आंदोलनों की प्रभावान्विति को जानना जरूरी होगा। कोई भी क्षेत्र विशेष दैशिक परिस्थितियों से असंपृक्त नहीं हो सकता। उपन्यास में वर्णित घटना अनायास नहीं होती है। उदार और सहिष्णु रवांई वासी अंहिसात्मक लड़ाई लड़ रहे थे, यह कोई संयोग नहीं हो सकता? निश्चय ही देश में आंदोलित राष्ट्रभक्तों और अनके आंदोलनों ने सामंती शासन के विरुद्ध जातीय संघटन की लड़ाई लड़ रहे रवांल्टों को ऊर्जस्वित किया होगा।

इस उपन्यास का पात्र रामप्रसाद, जो कि रवांल्टों के प्रमुख बैठक स्थान राजतर में रहता था, वह नियमित तौर पर दैनिक अखबार मंगवता था। 'रामप्रसाद रवांल्टा नहीं था। वह साहरनपुर का रहने वाला था। छत्तीस मील दूरी पर स्थित अंग्रेजी भारत के देहरादून जिल के एक पहाड़ी शहर चकरता से दुकान के माल के साथ यह नियमित तौर पर एक दैनिक अखबार 'हिंदुस्तान' भी मंगवाता था। होम मेंबर चक्रधर को इस बात की बखूबी जानकारी थी।'[6] स्वाभाविक है कि यदि उस समय कुछेक व्यक्ति भी पढ़ना जानते होंगे तो मौखिक रूप से देश में घटित आंदोलनों की खबर से बाकी रवांल्टे भी परिचित हो रहे होंगे। इतिहासविद् डॉ0 शिवप्रसाद डबराल 'चारण' भी इस मत की पृष्टि करते हुए कहते हैं,- 'चकरोता से रवांई जाने वाले मार्ग पर स्थित राजतर नामक स्थान पर लाला रामप्रसाद की दुकान पर समाचार पत्र आते थे, जिनमें देशभर में फैले हुए सत्याग्रह के समाचार छपे रहते थे। रवांई के निवासी इन समाचारों की बड़ी उत्सुकता से पढ़ते तथा सुनते थे।'[7]

उपन्यास में उल्लिखित मुख्य घटना 'तिलाड़ी गोलीकांड' की पृष्ठभूमि में टिहरी रियासत द्वारा लागू अमानवीय वन-व्यवस्था (1927-28 ई0) प्रमुख राजनीतिक घटना थी। अधिकारच्युत रवांल्टे आक्रोशित हो गए थे। वनाधिकारी पद्मदत्त रतूड़ी नई वन-व्यवस्था के लिए नक्शे तैयार करने लगा। जंगल से लेकर खेत भी रियासत के अधिकार में आ गए। 'पदमदत्त रियासत के नक्शे तैयार करने लगा है। उसके नक्शों में रियासत के अंदर जितनी जमीन है, उस पर दरबार का मालिकाना हक दिखाया जाने लगा है। जमीन पर हल चलाने वाले प्रजा के लोगों का उस पर कोई हक नहीं हो सकता। खेत दरबार के खलिहान दरबार के।'[8] प्रजाजन पर कठोर प्रतिबंध लगाए जाते हैं। रवांई में बंदिशे बढ़ती गंई। कृषकों और पशुपालकों के लिए सीमित पशुओं को रखने का अन्यायपूर्ण आदेश लागू हुआ। इसमें प्रावधान रखा गया कि जंगलों के समीप निवासित प्रत्येक व्यक्ति को चार भेड़-बकरी, एक भैंस व दो बैल रखने का अधिकार होगा। यदि इससे अधिक मवेशी हुए तो प्रति भैंस पर दो रुपया, भेड़-बकरी 50 पैसे तथा प्रति गाय-बैल पर एक रुपया प्रतिवर्ष कर के रूप में दरबार को देना होगा। इस दमनकारी आदेश से रवांल्टों का खून खौल उठा। अब वे ढंढक के लिए तत्पर हो गए थे। पशु और जंगल के सहारे अपना जीवन गुजारने वालें रवांल्टों के लिए यह अस्तित्व और अस्मिता का प्रश्न था! सांगठनिक चेतना का स्फुरण होने लगा। सिर झुका कर दरबार की आज्ञा का पालना करने वाले रवांल्टों का स्वाभिमान जाग उठा। वे संघर्ष के लिए प्रवृत्त हो गए।

उन दिनों देश में गांधी जी के नेतृत्व में सत्यग्रह के आंदोलन चल रहे थे। संभवतः स्वाधीनता की लहर टिहरी गढ़वाल रियासत में भी दस्तक दे रही होगी। जनता जागने लगी थी। ऐसी परिस्थिति में1929 ई0 में विजयदशमी के पर्व पर दीवान चक्रधर के द्वारा राजधानी नरेंद्रनगर में गवर्नर हेली के स्वागत के लिए उत्सव का आयोजन होता है। हुक्म के अनुसार रवांल्टे भी वहाँ जाते हैं। वहां वे रवांल्टो उपहास के पात्र बनाए जाते हैं। उनका अपमान होता है। मूसलाधार वृष्टि और शीत-प्रकोप से छः रवांल्टों की मृत्यु हो जाती है। मूक दरबार पर इस घटना का किंचित् प्रभाव भी नहीं पड़ता। इस घटना ने राजभक्त रवांल्टों के विश्वास और स्वाभिमान को आघात पहुँचा। 'पूरा सकारी अमला लाड साहब के लश्कर की सेवा करने में जुटा रहा। रवांल्टों की जिंदगी और मौत से उस शासन का कोई सरोकार नहीं था।'[9] दरबार के पदाधिकारीयों के इस दुर्व्यवहार से रवांल्टे अचंभित हो गए। अपमान बोध ने उन्हें झकझोर दिया। दरबार के प्रति उनकी स्वामिभक्ति का तिरोभाव हो गया। रवांल्टों का पौरुष जाग गया। सदियों से पराधीनता के कवच को तोड़ने के लिए वे शक्ति का संधान करने लगे। एकता और स्वराज रूपी लहरें उनके अंतस् में हिलोरें मारने लगी थी। रवांई वासी आंदोलित हो उठे। इस आंदोलन का नेतृत्व कंसेरू के दयाराम, नगाणगाँव के हीरासिंह तथा खमुण्डी-गोडर के बैजराम और किशनदत्त ने संभाला।

इस वन-व्यवस्था से अंसतुष्ट और आंदोलित रवांल्टों के भय से चिंताग्रस्त दीवान चक्रधर ने भूतपूर्व बजीर हरिकृष्ण रतूड़ी को रवांई भेजा। उनके आश्वासन से रवांल्टों में आशा की किरण जाग उठी। दूसरी ओर चक्रधर जुयाल और पद्मदत्त रतूड़ी सुनियोजि पड्यंत्र की व्यूह-रचना रच रहे थे। छद्मपूर्वक बंदी बनाए गए लाला रामप्रसाद, दयाराम रूद्रसिंह व जमन सिंह को मुक्त करने के लिए रवांई वासी किशनद त के नेतृत्व में डंडाल गाँव के निकट घने जंगल में रात को पहुँचते हैं। मदोन्मत पदमदत्त रतूड़ी की बंदूक की गोली से झून सिंह व अजीत सिंह मौके पर ही शहीद हो गए। 'राड़ी पर्वत पर गोलियों की चलने की वे आवाजें दूर-दूर तक फैल गंइ। ये गोलियाँ बनैले, हिंसक जानवरों पर नहीं,

शांत इंसानों पर दागी गई थीं।'[10] इस घटना का सूत्रधार पद्मदत्त रतूड़ी घटना स्थल से नौ दो ग्यारह हो गया। लाशों को पीठ पर लाने वाले रवांल्टे विस्मय और शोक में डूबे थे। 20 मई, 1930 को हुई इस घटना से रवांई में विस्फोट की स्थिति थी। चक्रधर जुयाल और पद्मदत्त नैनीताल जाकर पोलिटिकल एजेंट स्टाइफसे भेंट करते हैं और रवांई की अद्यतन जानकारी देते हैं। इससे पूर्व 23 अप्रैल, 1930 ई0 में पेशावर कांड भी हुआ। चंद्रसिंह गढ़वाली ने निहत्थे पठानों पर गोली चलाने से मनाकर दिया था। टिहरी के तत्कालीन सेनाप्रमुख कर्नल सुंदरसिंह ने भी महाराजा की अनुपस्थिति में रवांई के निहत्थे लोगों पर बंदूक उठाने से मना कर दिया। इस भय से उसने नवनियुक्त कमांडेंट नत्थूसिंह और गैर-रवांल्टाओं गढ़वाली सिपाहिओं को उत्तेजित किया। रवांल्टों पर मिथ्यारोप लगाए। 29 मई, 1930 को गंगाणी में श्मशान घाट पर आए बहुत-से लोगों को पकड़कर हथकड़ी पहनाकर राजगढ़ी ले गए। प्रमुख ढंढकियों में से एक किशनदत्त को भी बंदी बनाया गया। उसी रात चारों दिशाओं में रवांई वासियों के रणसिंगों और भंकोरों की ध्वनि से वातावरण गुंजायमान होने लगा। वाद्ययंत्रों के माध्यम से लोगों को इस खबर की सांकेतिक सूचना दी गई।

अगले दिन 30 मई, 1930 को रवांई वासी बंदी बनाए गए रवांल्टों को मुक्त करने और अपने अधिकारों की प्रतिरक्षा के लिए बहुत-से लोग बड़कोट से नीचे की कुछ दूरी पर तिलाड़ी मैदान में जमा हो गए। प्रचंड आक्रोश से रवांई के लोग स्वाभिमान और अस्तित्व को रक्षित करने के लिए अहिंसात्मक भाव से तिलाड़ी सेरा में आ गए। रवांई के इतिहास में इतने लोग पहले कभी इकट्ठे नहीं हुए। प्रभुत्ववादी सत्ता के विरुद्ध उपेक्षित जन-समुदाय सीना तान के खड़ा हो गया। उनके दिलों में अब मिट्टी का प्रेम उग्र हो गया। सुदूर दुर्गम्य अंचलों से आए रवांई वासियों ने अपनी आंचलिक अखण्डता और जातीय गौरव के लिए प्रतिबद्धता दिखाई। 'फतेहपर्वत और बंगाण के लोग भी रात भर चलते हुए वहां पहुँच गए थे। उनमें जुवा सहित रियासत की कुल पैंतालीस पट्टियों के लोग शामिल थे। हालात की खबर सुनकर वे खुद वहाँ आ गए थे।'[11] तिलाड़ी में मौजूद स्वाभिमानी रवांल्टों को कुछ ही देर में कमांडेंट नत्थूसिंह और उसकी पलटन ने तीन तरफ से घेर लिया। चौथी दिशा में यमुना नदी की उफनती जलराशि थी! कुछ ही क्षणों में उन पर अंधाधुंध फायरिंग होती है। अठारह लोग घटनास्थ पर ही शहीद हो जाते हैं। नदी पार सुनाल्डी गाँव में खड़े एक व्यक्ति को भी गोली लगती है। छान(पशुशाला) में भी गोलियाँ लगती हैं। लोगों की कराहने की आवाजें सुनाई देने लगीं। तिलाड़ी मैदान रक्तरंजित हो गया। पीड़ा और शोक की भयावहता ने आकाश को भी कंपित कर दिया। पलटन बहुत समय के बाद गोलियों की बौंछारों को रोकती है। तड़पते-बिलखते घायलों को उनके हाल पर छोड़ दिया जाता है। फिर वे इस हत्याकाण्ड के साक्ष्यों को छुपाने के लिए लाशों को ठिकाने लगाने लगते हैं। 'वे लाशों को घसीटते हुए एक जगह पर ले गए और उनके चेहरों और सरों पर तारकोल पोतने लगे। ऐसा इसलिए किया जा रहा था कि उनकी शिनाख्त न हो सके।... हथकड़ियों-रस्सों से जकड़े हुए करीब ढाई सौ रवांल्टों को लेकर पलटन राजगढ़ी की ओर चल दी।'[12]

इस नृशंस हत्याकाण्ड के पश्चात् भी रवांई वासियों पर अत्याचार बढ़ने लगे। उनके घरों का लूटने का कार्य चला। बाद में करीब तीन सौ आदमियों को टिहरी जेल ले जाया गया। तिलाड़ी कांड के खबरों को प्रकाशित करने वाले 'गढ़वाली' के निर्भीक यशस्वी संपादक विश्वंभरदत्त चंदौला पर अभियोग चलाया गया। उन्हें लगभग एक वर्ष की कारावास की सजा हुई। रवांई के जन-विदोह की घटनाओं को प्रकाशित कर उन्होंने अद्वितीय साहसिक योगदान दिया। वे बंदी बनाए गए। वीर रवांल्टों पर मुकदमा चला। कुल पचहत्तर लोगों को सजा सुनाई गई। इस जनांदोलन के प्रमुख नायकों-दयाराम, हीरासिंह, किशनदत्त, रूद्रसिंह, दलपति, जमुनो आदि को सोलह सेर वजनी बेड़ियाँ पहनाई गईं। इस निर्मम हत्याकांड के समय महाराजा नरेन्द्रशाह यूरोप की यात्रा पर थे। शांतिप्रिय रवांल्टे, जो अपने अधिकारों की बात करते थे उनकी शहादत से टिहरी दरबार को कोई खेद न था!

राष्ट्रीय क्षितिज की तत्कालीन परिस्थितियों को देंखे तो उस समय 1928 ई0 में सरदार बल्लभ भाई पटेल के नेतृत्व में कर न देने के लिए आंदोलन हुआ। तिलाड़ी कांड की समयावधि के समीप गांधी जी ने 12 मार्च, 1930 को नागरिक अवज्ञा आंदोलन चलाया। देश में स्वराज की भावना जाग्रत हो गई थी। रवांई के स्वतः स्फूर्त इस जन-विद्रोह को संभवतः इन राष्ट्रीय आंदोलनों से भी शक्ति व प्रेरणा प्राप्त हुई होंगी। रवांई के 'तीन सरकार' और पाँच सरकार-आजाद पंचायतों के गठन में स्वाधीनता का ही स्वर ध्वनित होता है। लेकिन इतिहासकारों ने इस विशिष्ट विद्राह की ओर ध्यान नहीं दिया। जबकि ये आंदोलन क्षेत्रीय होकर भी राष्ट्रीयता की चेतना पर अवलंबित था। इसीलिए रवांल्टों ने साम्राज्यवाद और पूँजीवादी व्यवस्था के प्रति विद्रोह किया था। 'साम्राज्यवाद के विरुद्ध छेड़े गए अभियान के साथ-साथ देशी पूँजीवाद और सामंतवाद के शोषक स्वरूप पर भी लोगों की निगाहें उठीं। किसान तथा मजदूर आंदोलनों को नई शक्ति प्राप्त हुई।'[13]

निष्कर्षतः इस उपन्यास में विद्यासागर नौटियाल ने गढ़वाल रियासत के स्वाभिमानी, मेहनतकश पशुपालकों और किसानों पर हुए अत्याचार, शोषण तथा तिलाड़ी नरसंहार का यथार्थ चित्रण किया है। उपन्यासकार ने वर्ग-संघर्ष के ऐतिहासिक घटनाओं के माध्यम से मार्क्सवादी विचारधारा की उपादेयता को भी प्रतिपादित किया है। 'यमुना के बागी बेटे' उपन्यास तत्कालीन गढ़वाल रियासत के यमुनाघाटी के रवांई और जौनपुर क्षेत्र में हुए जन-विद्रोह के सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों को उकेरने में सफल हुआ है ।

संदर्भ सूची:-

1. नौटियाल, विद्यासागर, यमुना के बागी बेटे, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करणः 2023, पृ0-28.
2. वही, पृ0-31.
3. वही, पृ0-87.
4. वही, पृ0-90.
5. तलवाड़, (डॉ0) के0एल0, तिलाड़ी सम्मान स्मारिका, तिलाड़ी सम्मान समिति, बड़कोट,उत्तरकाशी, प्रवेशांक 2012, पृ0-8.
6. नौटियाल, विद्यासागर, यमुना के बागी बेटे, सामयिक प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करणः 2020, पृ0-63.
7. डबराल, (डॉ0) शिवप्रसाद, टिहरी-गढ़वाल राज्य का इतिहास-2, वीरगाथा प्रकाशन, दोगड़ा, पौड़ीगढ़वाल, संस्करण, सं 2056 वि0 पृ0-41.
8. नौटियाल, विद्यासागर, यमुना के बागी बेटे, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करणः 2023, पृ0-53.
9. वही पृ0-61.
10. वही पृ0-100.
11. वही, पृ0-117.
12. वही, पृ0-121.
13. मिश्र, शिवकुमार, मार्क्सवादी साहित्य-चिंतन इतिहास तथा सिद्धांत, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण- 2010, पृ0- 430.

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

केदारनाथ 'शब्द मसीहा' के लघुकथा और व्यंग्य में दाम्पत्य प्रेम का मार्मिक चित्रण

योगेश कुमार तारक
डॉ. अभिनेष सुराना

1. शोधार्थी, शासकीय वि. या. ता. स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, दुर्ग, छत्तीसगढ़
2. शोध निर्देशक, प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, हिन्दी, शासकीय वि. या. ता. स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, दुर्ग, छत्तीसगढ

शोध सार:-दाम्पत्य प्रेम एक ऐसा अनुभव है जो दो लोगों के बीच की गहरी भावनात्मक और शारीरिक जुड़ाव को दर्शाता है। यह रिश्ता दो लोगों को एक साथ बांधता है और उनके भीतर एक दूसरे के साथ जीवन निर्वाह करने की इच्छा को जगाता है। दाम्पत्य प्रेम में दो लोग एक दूसरे के साथ अपने जीवन के हर पल को साझा करते हैं, चाहे वह खुशी हो या गम। वे एक दूसरे के साथ अपने सपनों को पूरा करने की कोशिश करते हैं और एक दूसरे के साथ अपने जीवन को सुखी बनाने की कोशिश करते हैं। दाम्पत्य प्रेम में विश्वास, सम्मान, और स्नेह की भावना होती है। यह एक ऐसा रिश्ता है जो दो लोगों को एक साथ बांधता है। दांपत्य प्रेम जीवन का एक सुखद अनुभव है। यह एक ऐसा रिश्ता है जो हमें जीवन की हर चुनौती का सामना करने की ताकत देता है और हमें जीवन की हर खुशी को एक-दूसरे के साथ साझा करने की इच्छा को जगाता है।

बीज शब्द:-दाम्पत्य प्रेम, अनुराग, स्त्री-पुरुष, आत्मसमपर्ण, वफादारी, स्वचालित, साहचर्य, संयोजन, आनंद, समर्पित, सरस, लघु-दीर्घ, स्रावित, भारतीय संस्कृति, परस्पर प्रेम, दांपत्य जीवन, संस्कार।

भूमिका:-भारत, भारतीय संस्कृति, भारतीय कला और भारतीय समाज के लिए विश्व वन्दनीय है। इसी भारतीय समाज में एक महत्वपूर्ण संस्था है परिवार। परिवार किसी समाज की नीव होता है और इस परिवार को भी सुसज्जित करने के विवाह संस्कार की आवश्यकता होती है तथा बिना विवाह के व्यक्ति गृहस्थ आश्रम में पदार्पण नहीं कर पाता है और बिना गृहस्थ जीवन के अनुभव के व्यक्ति जीवन के परमलक्ष्य की अनुभूति नहीं कर पाता है इसलिए विवाह का होना अत्यावश्यक है। विवाह संस्कार में आबद्ध स्त्री-पुरुष के संयोग को ही 'दाम्पत्य' कहा जाता है। दाम्पत्य जीवन में बंधकर ही नर-नारी प्रमाणिक रूप से यौनानन्द की संपूर्ति करता है इसलिए वैदिक धर्म शास्त्रों में 'दाम्पत्य' को प्रमुख स्थान प्राप्त हुआ है जो असीम एवं अमिट है। वैदिक रीति के अनुसार अग्नि प्रशिक्षण एवं सप्तपक्षी के फेरों के पश्चात् ही नर-नारी पति-पत्नी बनकर दाम्पत्य जीवन में प्रवेश करते है विवाहित पति-पत्नी का युग्म को 'दम्पत्ति' कहा गया है। इसी 'दम्पत्ति' के परस्पर प्रेम की अनुराग पूर्ण जीवन का नाम ही दाम्पत्य है। 'दम्पत्ति' शब्द को स्पष्ट करते हुए श्री अमर सिंह ने अपने कोष में कहा है कि 'पति-पत्नी ही दम्पत्ति है। इसके पर्यायवाची के रूप में जयंती, जायापति तथा भार्यापति शब्द भी संयुक्त होते हैं।'[1] विवाह के बाद ही स्त्री-पुरुष को पति-पत्नी का दर्जा दिया जाता है और पति-पत्नी को ही दम्पत्ति कहा जाता है। दाम्पत्य जीवन में विवाह एक आधारशिला है। हमारे स्मृति ग्रन्थों में बहु चर्चित याज्ञवल्क्य स्मृति का भी कथन है कि 'नारी माता बनने के लिए एवं पुरूष पिता बनने के लिए उत्पन्न किए गये हैं। वेदों का यह स्पष्ट वचन है कि धर्म का आचरण पुरुष अपनी पत्नी के साथ करें।'[2] मानवशास्त्र के रचयिता महर्षि मनु ने भी अपने ग्रन्थ 'मनुस्मृति' में दाम्पत्य के रहस्य को स्पष्ट करते हुए कहा है कि 'वही व्यक्ति पूर्ण पुरूष है जो पत्नी तथा संतान युक्त है।'[3] विश्व प्रसिद्ध पौराणिक एवं विशाल काव्य ग्रन्थ 'महाभारत' में भी स्पष्ट उल्लेख है कि 'वे ही व्यक्ति सम्यक रुपेण अपने दायित्वों को पूरा कर सकते हैं जिनके पत्निया हैं। वे ही पारिवारिक जीवन व्यतीत करते हैं जिनके पत्नियाँ हैं। जिनके पत्नियाँ हैं वे ही व्यक्ति सुखी रह सकते हैं।'[4] हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध कवि गोस्वामी बाबा ने भी अपनी रचना 'रामचरितमानस' में इसी 'दाम्पत्य' की ओर संकेत करते हुए कहा है कि 'जिय बिनु देह नदी बिनु बारी। तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी।'[5]

पति एवं पत्नी का दाम्पत्य जीवन का अभिन्न अंग है। पति के बिना पत्नी निराश्रित एवं अपूर्ण है तो पत्नी के अभाव में पति एकाकी एवं खोखला है। वह धार्मिक रूप से संतान उत्पत्ति कर स्वयं की पीढ़ी का विस्तार नहीं कर सकता है। अतः दाम्पत्य जीवन में दाम्पत्य का होना आवश्यक है। बिना आपसी प्रेम के परिवार जैसे शब्दों की कल्पना करना शून्य है। दाम्पत्य अनुराग में शरीर और मनोवृत्ति की अपील की भावना तथा प्रभाव की शक्ति, आत्मा और इच्छा की आकांक्षाएँ शामिल हैं। इन सभी का मूल उद्देश्य शरीर से परे हृदय और आत्मा की एकता है। दाम्पत्य प्रेम निश्चित रूप से पारस्परिक आत्मसमर्पण, बच्चों के प्रति अलगाव, वफादारी आदि की मांग करता है। दाम्पत्य प्रेम के लिए विवाह के आपसी तालमेल के माध्यम से सभी प्रमुख जीवन घटनाओं पर प्रतिक्रिया करने के लिए एक अडिग, स्वचालित प्रतिबद्धता की आवश्यकता होती है। यदि कोई रिश्ते की आकस्मिकता और गम्भीर पुनरावलोकित योजनाओं के बारे में लगातार विचार रखता है तो वह ऐसी प्रतिबद्धता को मूर्त रूप नहीं दे सकता है। दाम्पत्य प्रेम के लिए आकस्मिक योजनाओं से रहित आजीवन साहचर्य प्रतिबद्धता की जरूरत होती है। दाम्पत्य प्रेम में जीवन साथी के अटूट विश्वास का संयोजन होना आवश्यक है। दाम्पत्य प्रेम में गहरी आस्था और मन की पवित्रता होनी चाहिए। धोखा और विश्वासघात दाम्पत्य प्रेम को विनष्ट कर जीवन को संघर्षशील एवं कटु बना देते हैं। दाम्पत्य प्रेम विचारों के मजबूत आदान-प्रदान का भी हिस्सा है। पति-पत्नी के वैचारिक संबंध अच्छे होना दाम्पत्य प्रेम को मजबूती प्रदान करते हैं। दाम्पत्य प्रेम सफल जीवन का रहस्य है जिसमें पति-पत्नी स्वयं के जीवन को

आबद्ध कर आनन्द की अनुभूति करते हैं। साहित्य के सभी रचनाकारों ने दाम्पत्य जीवन के इस प्रम को स्व-स्व रचनाओं में पिरोया है। सूर, तुलसी, जायसी, महादेवी वर्मा, कालिदास, माघ आदि कवियों की रचनाओं में इसे विशेष रूप से दिखा जा सकता है। महाकवि कालिदास ने अपने विश्व प्रसिद्ध नाटक 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' में दाम्पत्य प्रेम का सजीव चित्रण करते हुए कहा है कि –

'एषा कुसुमनिषण्णा तृषितापि
सती भवन्तमनुरक्ता।
प्रतिपालयति मधुकरी न खलु
मधु त्वया बिना विषति।'[6]

अर्थात् आपसे प्रणय करने वाली यह भ्रमरी प्यासी होने पर भी पुष्प पर बैठी हुई आपकी प्रतीक्षा कर रही है। तुम्हारे (पति) के बिना यह पुष्प रस (मधु) का पान नहीं कर रही है।

सामान्य आदमी की बेबसी, पीडा, हताशा, जिज्ञासा, चिंतन को अपनी विशिष्ट कथ्य शैली से समाज के हर वर्ग तक प्रक्षेपित करने वाले श्री केदारनाथ 'शब्द मसीहा' ने अपनी लघु कथाओं में दाम्पत्य प्रेम के इसी रहस्य को उद्घाटित किया है। जैसे 'मैंने तुम्हारा मूड खराब कर दिया। सॉरी! मैं तुम्हारे लिए दर्द सह लूँगी। प्रिया बोली। चुपचाप कपड़े बदल लो। मैंने खाना बना लिया है। न मैं बूढ़ा हो रहा हूँ और न तुम। मेरा सम्बन्ध तुम्हारी देह से पहले तुम्हारे दर्द और मन से है। ज्यादा समर्पित होने की जरूरत नहीं है। मन का मिलना महत्वपूर्ण होता है तन का नहीं।'[7]

पति/पत्नी के मध्य विद्यमान दाम्पत्य प्रेम जीवन में मिठास लाकर समस्त बाधाओं को दूर कर देता है किन्तु प्रायः परस्पर विद्यमान अहं इस दाम्पत्य में विष घोलने का कार्य करता है जबकि अंर्तहृदय से वह उसी अनुराग में आबद्ध होते हैं और जब वह अहं विनष्ट हो जाता है तो दाम्पत्य प्रेम पुनः स्त्रावित होकर दाम्पत्य जीवन को सरस बना देता है। जैसा कि आलोच्य कथाकार की कथाओं में देखा जा सकता है 'हैलो सुधा मैं प्रदीप बोल रहा हूँ। आज तो यार तुम्हारे काम के बहुत चर्चे हैं अखबार में। बधाई हो। थैंक्स प्रदीप ! शुक्र है भगवान का तुम्हे मेरा काम समझ आया। खैर छोड़ो आज शाम को मैं जल्दी घर आ रही हूँ। क्या खाना है बताओ? मैं खुद खाना बनाउँगी आज। अरे दस बारह घंटे की ड्यूटी के बाद थक जाओगी। रहने दो ये सब। कोई बात नहीं। काम तो चलता ही रहेगा पर पति बूढ़ा न हो जाए मेरे हाथ का खाना खाने की लालसा में। हा हा हा। आज जो खिलाना है खिलाओ। सब तुम्हारी पसंद का।'[8]

दाम्पत्य प्रेम की प्रगाढ़ता इतनी मजबूत होती है कि जीवन के अंतिम समय तक नहीं बिखरती है। माता-पिता के लिए उनकी संताने भी इस दाम्पत्य प्रेम का ही एक अंग होती है किन्तु जरावस्था के आने पर संताने अपने आत्मजो से जिस तरह मुँह फेर लेती है वह अकथनीय दुःख होता है। वह और भी कष्टदाई तब हो जाता है जब माता-पिता में से कोई एक दैवीय कष्ट कार कारण बन जाता है तब उनकी संताने उन्हें एकाकी कर स्वयं के परिवार के भरण-पोषण में संलग्न हो जाते हैं। किन्तु ऐसी स्थिति में भी दाम्पत्य प्रेम लौ मंद नहीं पड़ती और वे परस्पर सहायतार्थ तैयार रहते हैं और स्व-स्व कर्तव्य का निर्वहन बखूबी करते हैं। श्री केदारनाथ 'शब्द मसीहा' की लघु कथा 'सोंच जिंदा है अभी' का नायक 'जंगलिया' में अपनी पत्नी 'संतो' को लकवे से ठीक होकर काम पर जाने का आश्वासन देता है और संतो अपने जीर्ण-शीर्ण हाँथों से जंगलिया के टांगो की मालिश कर रही थी 'जंगलिया लकवे का शिकार क्या हुआ जैसे उसकी सारी इज्जत ही चली गयी। ईलाज में पैसा भी खर्च हुआ और कर्जा भी। अब वह जैसे घर के लिए बोझ हो गया था। दोनो बेटे अपने परिवार में मस्त थे और संतो का रो-रोकर बुरा हाल, इस दशा को देखकर पति की। संतो किसी बाबा का दिया हुआ सिद्ध तेल उसकी टांग और बाजू पर मल रही थी। ..... कल का इंतजार कौन करेगा संतो! बोझ नहीं हूँ ......भूखा न मरूँगा और न मरने दूँगा। ......संतो में पति के लिए प्यार उमड़ आया था पहले सा।'[9]

पति/पत्नी के मध्य विश्वास का प्रकाश होता है जो उन्हें परस्पर प्रेम में बाँधे रहता है। पत्नी कोई बात अपने पति से नही छिपाती और न ही पति अपनी पत्नी से। दाम्पत्य का यही प्रेम उन्हें जीवन के हर कष्ट में संबल प्रदान करता है यथा 'रमा ! आज तुमसे एक सच कहना है, अब मुझे लगता है मेरे पास समय नहीं है। अस्पताल में लेटे हुए पति ने कहा। ......दरअसल मैं तुम्हारे प्रति ईमानदार नहीं था। मेरा एक और बेटा भी है और उसकी माँ इसी शहर में है। ....तुम्हारी सुरक्षा की भावना ने आज मुझे मजबूर कर दिया। कल मैं जब नहीं रहूँगा तो तुम्हारे पास कम से कम एक बेटा तो रहेगा। सौतेला ही सही और एक बहन भी चाहे सौत ही सही। ....तुम्हारी पत्नी और बेटा भी आते ही होंगे। तुमने जीवन भर मेरा ख्याल रखा है और कभी किसी बात की कमी नहीं होने दी। मैं इतनी स्वार्थी नहीं हूँ कि तुम्हें एक अंतिम खुशी भी न दे सकूँ। ......उसका मन सच्चाई के उजाले से।'[10]

विश्व प्रसिद्ध 'रामचरितमानस' में गोस्वामी तुलसीदास ने दाम्पत्य प्रेम का बड़ा ही सुन्दर दृश्य उस समय किया है जब राक्षसाधिपति रावण अशोक वाटिका में सीता जी को वैभव का लालच देकर अपनी पटरानी बनाने को कहता है। उस समय अपने पति श्रीराम के प्रेम में ही अनुरक्त सीता जी रावण से कहती है कि–

'तृन धरि ओट कहति बैदेही। सुनिए अवधपति परम सनेही।
सुन दशमुख खद्योत प्रकाशा। कबहुँ कि नलिनी करइ बिकासा।।'[11]

दाम्पत्य प्रेम में पति/पत्नी के अतिरिक्त अन्य किसी का मेल नहीं हो सकता है। वे परस्पर ही समर्पित रहते हैं। दाम्पत्य जीवन में कभी-कभी हल्के-फुल्के बदलाव भी आते है जिसका मतलब यह बिल्कुल नहीं होता है कि पति/पत्नी के मध्य वैमनस्य है। वे परस्पर कलह करते हैं। एक-दूसरे के लिए अनबोल बनकर भी वे अनमोल बने रहते है। पुरूष वर्चस्व के कारण नित्य घरेलू कार्यों में संलग्न पत्नी भले ही स्वयं को दासत्व के रूप में सोचे किन्तु यह सच है कि इस दासत्व ने भी वह साम्राज्ञी का अनुभव करती है और अपने पति के लिए वह सब कुछ निछावर कर देती है। पति भी उसके इस समर्पण में निहाल हो उठता है और ठंडा भोजन खाने की मांग करता है क्योंकि वह जानता है कि नित्य गरम-गरम भोजन खिलाने वाली उसकी पत्नी ठंडे भोजन में ही संतुष्ट हो जाती है। श्री केदारनाथ 'शब्द मसीहा' दाम्पत्य प्रेम के इसी रहस्य को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि 'मूली के पराठों के लिए मूलियाँ घिसते हुए बीबी के हाथो में कई बार स्टील के मूलीकस के दाँते चुभ गये मगर वह घिसती रही। जब मूलियाँ निचोड़ने की बारी आई तो आँखो से आसू निकल पड़े मूलियों के पानी की जलन में। पहला गर्म-गर्म पराठा दही और मक्खन के साथ परोसा गया मगर खाने को मन न हुआ। ....आज मेरा ठंडा पराठा खाने का मन था। दोनों एक-दूसरे को देखते हुए खा रहे थे। खाना खत्म होते ही पति उठा और पत्नी के कोमल हाथों को अपने हाथों में लिया। आज तुम्हारे हाँथो की जलन मेरे दिल में लग गई थी। हाथों से क्रीम मलते हुए कहा। बीबी की आँखो से आँसू बह निकले प्यार के।'[12]

दाम्पत्य प्रेम में कोई दिखावा नहीं होता है। वह तो आत्मा से आत्मा का जुड़ाव होता है जो अनेकों विपदाओं में भी पति/पत्नी को जोड़े रहता है।

पाश्चात्य संस्कृति के बढ़ते प्रकोप में भले ही दाम्पत्य प्रेम मंद पड़ रहा हो किन्तु भारतीय संस्कृति के पोषक युगल में वह आज भी फलित हो रहा है। जैसे कि कथाकार श्री केदारनाथ 'शब्द मसीहा' कहते हैं 'हाँ हम है.... ओल्ड माइंडेड स्टूपिडस। हमने नहीं किया ऐस प्यार... हम गन्नों के खेत वाले प्यार को जानते हैं.... जो गृहस्थी में पेरे जाने पर मिठास देते हैं.. चुक जाने पर जिनकी हूंछ भी जलाने के काम आती है.... पर वे साथ नहीं छोड़ते... मिठास के साथ... ... चिपकन और जीवन की पकड़ रहती है।'[13]

दाम्पत्य जीवन में कोई लघु या दीर्घ नहीं होता है। पति/पत्नी एक-दूसरे के पूरक होते है। जब पति के कष्ट पर पत्नी पूर्ण सहायक होती है तो पत्नी के कष्ट में भी पति को सहायक होना चाहिए। तभी दाम्पत्य प्रेम चिर स्थायी होता है। दाम्पत्य प्रेम में बाह्याडम्बर का लेश मात्र भी अनुप्रयोग नहीं होता है और जहाँ होता है वहाँ दाम्पत्य प्रेम शून्य होकर स्वार्थ प्रेम में तब्दील हो जाता है। श्री केदारनाथ 'शब्द मसीहा' की कथाओं में दाम्पत्य प्रेम का एक उदाहरण और भी मार्मिक हुआ है जहाँ पति अपने पुरुषत्व (परूष होने को बड़प्पन) का परित्याग लोक लज्जा से रहित होकर अपनी सहधर्मियों के पैरों की मालिश करता है और अपने यथार्थ कर्तव्य का प्रमुदित होकर निर्वहन करता है। वह अपनी पत्नी से कहता है 'ये दवाई खाने के बाद इस तेल की मालिश करनी है और पैर पर गरम पट्टी लपेटनी है। लाओ मैं तेल लगा दूँ पैर में। हाय राम! तुम मेरे गोड़ में हाँथ लगाओगे? किसी ने देख लिया तो कितनी थू-थू होगी मेरी और तुम्हारी। रहने दो मैं दवा ही खा लूँगी। हद है, कैसी बात कर रही हो। बीबी मेरी हो या मोहल्ले की? लाओ पैर आगे करो। और सुनीत तेल की सीसी लेकर पैर पर मालिश करने लगा। पत्नी की आँखो में दर्द के कम और प्यार के आँसू ज्यादा बह निकले।'[14]

निष्कर्ष:-आधुनिक हिन्दी साहित्य में समय-समय पर लगभग सभी प्रमुख लेखकों ने दाम्पत्य जीवन को लेकर साहित्य लिखा है। उसी कड़ी में समकालीन कथाकार केदारनाथ 'शब्द मसीहा' ने भी अपने लघुकथाओं और व्यंग्यों में मौजूदा समय के परिप्रेक्ष्य में दाम्पत्य जीवन की मधुर संबंध एवं मार्मिक क्षणों का चित्रण किया है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि केदारनाथ 'शब्द मसीहा' जी ने दाम्पत्य प्रेम के उन सभी पहलुओं का यथार्थ चित्रांकन अपनी लघु कथाओं में किया है जो समाज में निहित होकर वैमनस्य की खाई को पाटकर प्रेम की सरिता बहा देने में सहायक सिद्ध होते हैं।

संदर्भ सूची:-

1. सिंह, अमर, अमरकोष चौखम्भा, सुरभारती प्रकाशन, संस्करण 2000, कांड-2, श्लोक-38
2. याज्ञवल्क्य, याज्ञवल्क्य स्मृति, 1-77 श्लोक
3. मनु, महर्षि, मनु स्मृति, अध्याय-9, पृ. 96
4. व्यास, वेद, महाभारत, आदिपर्व, पृ. 40-41
5. तुलसीदास, गोस्वामी, रामचरितमानस, गीता प्रेस गोरखपुर, 26 वाँ संस्करण, अयोध्या कांड दोहा 65 के उपर, पृ. 311
6. कालिदास, अभिज्ञानशाकुन्तलम्, महाकाली प्रकाशन कानपुर, पृष्ठ सं. अंक, श्लोक-19
7. शब्द मसीहा, केदारनाथ, मंटो के बाद, किताबगंज प्रकाशन राजस्थान, प्रथम संस्करण 2018, पृ. 77
8. वही, पृ. 23
9. शब्द मसीहा, केदारनाथ, राहों की बातें, मचान प्रकाशन पं. बंगाल, प्रथम संस्करण जुलाई 2018, पृ.17
10. शब्द मसीहा, केदारनाथ, जिंदा है मंटो भाग-2, के.बी.एस. प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 2017, पृ. 84 'अनोखा-उजाला' कथा
11. तुलसीदास, गोस्वामी, रामचरितमानस, सुन्दरकाण्ड, दोहा सं. 8 के आगे चौपाई भाग
12. शब्द मसीहा, केदारनाथ, जिंदा है मंटो, के.बी.एस. प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 2016, पृ. 72
13. शब्द मसीहा, केदारनाथ, मंटो न मरब, मचान प्रकाशन नादिया प. बंगाल, प्रथम संस्करण 2018, पृ.28
14. शब्द मसीहा, केदारनाथ, शब्द गुलेल, के.बी.एस. प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 2020, पृ. 10

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

आदिग्रंथ में संगीत तत्त्व और प्रासंगिकता

सपना अरोरा

शोधार्थी, हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.

संगीत सृष्टि की अनुपम कलाओं में सर्वश्रेष्ठ है। संगीत सृष्टि के कण-कण में समाया है। जड़-चेतन सभी पर संगीत का प्रभाव दिखाई देता है। आसमान में कड़क बिजली या तेज हवाएँ, कल-कल करते बहते झरने, नन्हे शिशु की किलकारी, जीव-जंतुओं के क्रिया कलाप, बारिश में गिरते पानी की आवाज, नदियों की कल-कल समुहों की लहरें सभी में किसी न किसी रूप में ध्वनि एवं नाद समाया है जो मन को छूता है। सृष्टि की इस अदभुत कला के अभाव में जीवन की कल्पना ही असम्भव है। संगीत जीवन काअभिन्न अंग है। इसके अभाव में जीवन नीरस, बेजान है। संगीत प्रकृति में ऊर्जा का संचार करता है। मन को एकात, शांत सुख और आनंद प्रदान करता है। यह सकारात्मक सोच का निर्माण करने के साथ ही शारीरिक, मानसिक विकारों को दूर करने में सहायक है। आजके क्षण-क्षण बदलते जीवन के परिमाणों के बीच उदासीनता अकेलापन, शारीरिक एवं मानसिक अस्वस्थता, बैचेनी इन सभी को दूर करने में संगीत सहायक सिद्ध होता है। कार्य के प्रति रुचि बढ़ाने, तनाव-मुक्त करने, मन-मस्तिष्क को शांत करने में संगीत की भूमिका सराहनीय है।

'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' में संगीत को विशेष महत्व दिया गया है इतना ही नहीं गुरु वाणी रूपी शरीर की आत्मा उसका संगीततत्त्व है। आदिग्रंथ का संपादन रागों के आधार पर किया गया है। सिक्खी मार्ग-नाम मार्ग है जिसके लिए राग तथा कीर्तन जरुरी है। गुरु ग्रंथ साहिब की रचना का महत्वपूर्ण प्रयोजन आनंद प्राप्ति, चित की शांति और परम सुख की प्राप्ति है। गुरुवाणी की राग तथा लय से प्रेम पूर्वक पाठ करने से भक्त ईश्वर को नाम में लीन हो जाता है। भक्ति मार्ग में ईश्वर स्तुति तथा भगवद भजन में संगीत की महानता को वैदिक काल से ही स्वीकार किया गया। भक्ति मार्ग में संगीत के साथ भगवद् भजन करने से मन शीघ्र ही ईश्वर के नाम में लीन हो जाता है। नाम स्मरण एवं उच्चारण करते समय सिर्फ मुह से नाम का रटन किया जाता है पर संगीत के साथ नाम जप एवं गुण गान करते समय संगीत की मनोहर शक्ति भगवान के नाम रूप को मन से बांध देती है। इन्हीं कारणों से गुरुवाणी के निर्माण के समय उन्हें विभिन्न रागों में गाए जाने का उल्लेख किया गया है। स्वयं गुरुनानक देव जी ने भी शब्द का संगीत को अनिवार्य अंग माना है। वे स्वयं संगी से जुड़े थे। पहली बार जब वे ब्रह्म वाणी से जुड़े तब उन्होने अपने साथी मरदाने को रबाब की धुन सजाने को कहा और धुर की वाणी (ईश्वरीय वाणी) को रबाब की धुन के साथ गाया तब सारी सृष्टि ही भक्ति रस में झूमने लगी थी ।

संगीत गुरु वाणी का अनिवार्य अंग है। संगीत सारे संसार का मूल नाद है। नाद से ही सारी सृष्टि का निर्माण हुआ है। इसलिए गुरुबाणी में भी कीर्तन को सर्वोत्तम मान कर कीरतनु निरमोलक हीरा फरमाया है। 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब'में संगीत का महत्व दर्शाता है कि सम्पूर्ण वाणी रागबद्ध है तथा निश्चित राग में बाणी को गाने का निर्देश किया गया है। 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' में आई गुरुवाणी रागबद्ध है। जब वह राग में गाए जाते है, तब वह कीर्तन कहलाता है। संगीत मन को स्थिर करता है यह अन्य सभी कलाओं से अधिक प्रभावशाली है। इससे कठोर ह्दय भी कोमल होता है। संगीत से प्रभु से जुड़ने का सर्वोत्तम साधन है। संगीत मन के विचारों और दोषों को दूर किया जा सकता है।

गुरुवाणी मानवता को सर्वोच्च मानती है। मानवीय मूल्यों की समाज में स्थापना करना गुरुवाणी का लक्ष्य रहा है। गुरुवाणी के संकलन का समय मध्यकाल रहा जो सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक दृष्टि से पतन का समय रहा है। मध्यकाल के संतों, भक्तों और महापुरुषों ने अपनी उपदेशात्मक वाणी से समाज में चेतना जागृत करने का कार्य किया। उन्होंने अनुभव किया कि जन मानस में व्याप्त जीवन को देखने के प्रति उदासीन दृष्टिकोण था, जिसके कारण नीरसता छाई हुई थी। नीरस जीवन में नैतिक मूल्यों का रस घोलने हेतु संतों और भक्तों ने कीर्तन की अनिवार्यता को समझा और यही कारण है कि गुरुवाणी में संगीत द्वारा वाणी को सुसज्जित किया है। गुरु वाणी के अनुसार जिस प्रकार भोजन शरीर के लिए आवश्यक है, उसी प्रकार कीर्तन आत्मा के लिए आवश्यक है। विद्वानों का कथन है कि राग-बद्ध-वाणी गायन मन को अति प्रभावित करता है। गुरुवाणी में 31 रागों में वाणी को रागबद्ध किया गया है। यह सभी राग मानव मन की अनुभूतियों से प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े होते है। श्री गुरु ग्रंथ साहिबजी की वाणी मानवता की बाणी है जो संगीत से ओत-प्रोत अपने हर जिज्ञासु के मन को शांत तथा स्थिर करती है। गुरु बाणी के अनुसार संगीत, लोक जीवन की वास्तविक संपत्ति है-

राग रतन परीआ परवार।। तिसु विधि उपजै अंम्रितु सार।।
नानक करते का इहु धनु मालु।। जे को बूसै एहु बीचारू।।

अर्थात श्रेष्ठ राग तथा उनका परिवार, इनमें यदि नाम - रस अमृत का मेल हो जाए तब अद्भूत आनंद की प्राप्ति हो जाती है, जो ईश्वर की प्राप्ति कराने वाला धन-माल है जिसके कारण गुरुवाणी में स्थान-स्थान पर बाणी के गायन का निर्देष किया गया है ।

'श्रीगुरु ग्रंथ साहिब जी' में आए नैतिक मूल्यों में सत्संगति को अधिक महत्व दिया गया है। सत्संगति में रहकर संगीत एवं रागमयी वाणी द्वारा उपदेश प्राप्त करना आध्यात्मिक सफलता को प्राप्त करने जैसा है।
'हरि दिनु रैनि कीरतनु गाइए। बहुडि व जोनी पाईए।।''

समूची वाणी लोक जीवन में सत्संगति की विशेष सहायक सिद्ध होती है। रागों की श्रेष्ठता का गुरु वाणी में बखान करते हुए कहा गया है कि वह सुंदर राग धन्य है जो गायन कर मन की तृष्णा को समाप्त करता है तथा जो जन, प्रभुनाम की स्तुति गायन में करता है वह भी धन्य है। 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' में संगीत के इन गायन विधान को आत्म सात कर मनुष्य आनंद, सुख, कल्याण आदि की प्राप्ति कर पाता है।

अनंद सूख मंगल बने पेखत गुन गाउ।।
कथा कीरतनु राग जाए धुनि इहु बनिओ सुआउ।।

गुरुवाणी में रागबद्ध बाणी के गायन से प्रभुप्राप्ति के आनंद की प्राप्ति होने की बात कही गई है जो संगीत के मानव-जीवन में महत्व को दर्शाती है।

'श्री गुरु ग्रंथ साहिबजी' की बाणी सच्ची बानी है। यह मनुष्य को मनुष्य से जोड़ती है 'मानवता' को संबल प्रदान करती है। गुरु बाणी का गायन सबके साथ मिलकर करना, मानवता के संदेश का गायन करने जैसा ही है। यहाँ सभी एक समान हो जाते है। ऊँच-नीच, जाति-पाति, लिंग, वर्ण आदि के सारे भेद समाप्त हो जाते हैं। सब एक साथ वाणी का गायन, श्रवण, मनन करते हैं।

गुरु अर्जुनदेव जी ने गुरु वाणी के उपदेशों को संपूर्ण मानवता के भले के लिए इस शब्दरूपी जवाहरातों से भरे, मानवीय उच्च मूल्यों से भरे अक्षय भंडार को सबके लिए खोल दिया है। ऐसी पवित्र और नैतिक मूल्यों से भरपूर वाणी का गायन इस कलयुग में योग-तप करने के समान है।

कलजुग महि कीरतनु परधाना। गुरमुखि जपीए लाइ धिआना ।।
आपि तरै सगले कुल तारे हरि दरगह पति सिउ जाइदा।।

अर्थात् इस कलयुग में पदार्थवादी युग में कीर्तन ही श्रेष्ठ कर्म है। मनुष्य को गुरु की शरण लेकर, मन को जोड़ उस परमात्मा का नाम जपना चाहिए, जिससे वह स्वयं विषय विकारों का त्याग कर औरों को भी इनसे पार करा देता है। वह प्रभु के घर में मान प्राप्त करता है। गुरु वाणी द्वारा पारस्परिक प्रेम, आदर विश्वास समानता एवं विश्व-भाईचारे को ही दर्शाता है। आज भी जहाँ विश्व में मनुष्य अपने अस्तित्वपहचान के लिए समाज में अपनी सहभागीदारी के लिए संघर्षरत है वहाँ गुरु बाणी की व्यापक सोच उसे सारी कुंठाओ तथा संकीर्णताओं से परे निकालने में सहायक है। आज मनुष्य भाग दौड़ भरी जिन्दगी जीने के लिए मजबूर है ऐसे समय में कई अवसाद उसे घेरे हुए है इन अवसाद, तनाव, और कुंठाओं से दूर होने का सुगम मार्ग भक्ति ही है इस ओर गुरुवाणी सबसे सहायक सिद्ध होती है। परिवर्तन और प्रतिस्पर्धा के दौर नेमनुष्य के समक्ष कई चुनौतियां सामने लाई है जिनसे सिर्फ युवा ही प्रभावित नहीं है बल्कि आज के समय में प्रत्येक व्यक्ति इससे प्रभावित है। बच्चों से लेकर बुर्जुग तक सभी समय के परिवर्तनों और दिखावटी जीवन से प्रभावित है और अपने जीवन में भी सुख, शांति समृद्धि को भौतिक सुखों में ढूंढ रहे हैं। भौतिकता से प्रभावित हो कर उन सभी साधनों का एकत्रिकरण कर रहे है किन्तु शांति, संतोष और आनंद इन सभी से दूर है और सभी ओर से हार कर अवसाद का शिकार हो रहे हैं क्योंकि आज का मनुष्य अंधी दौड़ में दौड़ता हुआ सुख की तलाश कर रहा वह सत्य को पहचान नहीं रहा है ऐसे कठिन समय में भक्ति ही ऐसा मार्ग है जो उसे आनंद की प्राप्ति करा सकती है और उसके लिए उसे नाम स्मरण, संगीत, गायन, भजन, स्तुति सबसे सरल साधन के रूप में उपलब्ध है। निश्चित ही संगीत मानव मन को सुकुन पहुँचाता है। उसके मन और शरीर को निर्मल बनाता है गुरुवाणी की शरण में जाकर आज के मनुष्यों को निश्चित तौर पर शांति और सुख प्राप्त हो सकता है। यह उसी प्रकार सहायक सिद्ध हो सकती है जिस प्रकार एक रोगी के लिए दवा उपयोगी है उसी प्रकार गुरुवाणी धीरे-धीरे मनुष्य के मानसिक रोगों को दूर करती हुई आनंद की ओर ले जाती है।

निष्कर्षतः गुरुबाणी भौतिक जगत में अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह करते हुए परमात्मा को पाने का लक्ष्य प्रशस्त करती है। अपने जीवन में भौतिक जगत में रहते हुए परमात्मा की शरण में जाने के लिए युवा पीढ़ी को राह दिखाती है। गुरुबाणी हमारी संस्कृति, सभ्यता, परंपराओं, शाश्वत मूल्यों का प्रतिरूप है। अतः इनकी रक्षा तथा संभालने का कार्य मनुष्य का परम कर्तव्य है, जिसके द्वारा 'मानवता' के संवर्धन में अपना योगदान दे पाएगा। हमारी भारतीय संस्कृति की समृद्धता को बनाएँ रखने के लिए हमारे पौराणिक धर्मग्रंथों का विशेष स्थान है। उसी परम्परा में 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' भी हमारी समृद्ध संस्कृति की धरोहर है जिसे आज भी उतनी ही पवित्रता और आत्मीयता से पूजा जाता है और निश्चित तौर पर गुरू वाणी हमारे मन, मस्तिष्क को सुकून पहुँचाती है। केवल सिक्ख सम्प्रदाय ही नहीं भारतमें अन्य धर्म, जाति, सम्प्रदाय के लोगों द्वारा भी इसकी श्रेष्ठता से लाभ प्राप्त किया जा सकता है। हमारी संस्कृति संदैव विश्व बंधुत्व की भावना को महत्त्व देती है। गुरुबाणी भी विश्व के समस्त प्राणियों को समृद्ध करने का महत्वपूर्ण ग्रंथ है। जिसका लाभ सम्पूर्ण मानव जाति के लिए उपलब्ध है। सत्य को पहचानने का निरंतर प्रयत्न करना तथा उस सत्य को व्यवहार में ढालना ही गुरुवाणी का संदेश है। सत्कर्म करते हुए गुरुवाणी की अमृत, रागमयी धारा में स्वयं को खो कर शुभमनोकामनाओ को प्राप्त किया जा सकता है।

संदर्भ सूचीः-

1. डॉ. जोध सिंह - श्री गुरु ग्रंथ साहिब (हिन्दी अनुवाद)
2. डॉ. मनमोहन सहगल - गुरु ग्रंथ साहिब एक सांस्कृतिक सर्वेक्षण
3. डॉ. सुरण सिंह विलखू - आदि ग्रंथ के परंपरागत तत्त्वों का अध्ययन
4. डॉ. महीप सिंह- आदि ग्रंथ में संग्रहित संत कवि

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

सल्तनत कालीन समाज

डॉ. राजीव कुमार

एसोसिएट प्रोफेसर, के. एम. विश्वविद्यालय, मथुरा, उप्र.

भारत में मुसलमानों के आने से पहले हिन्दू समाज विभिन्न जातियों एवं वर्गो में बँटा हुआ था। प्राचीन भारत की वर्णव्यवस्था ने कठोर जाति व्यवस्था का रूप धारण कर लिया और समाज विभिन्न जातियों एवं वर्गो में विभाजित हो गया। इसके साथ-साथ समाज विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों में विभक्त था। इनमें सल्तनत काल में मुख्य रूप से हिन्दू, मुस्लिम, जैन सम्प्रदाय थे। इस काल में मुस्लिम एवं हिन्दू सम्प्रदाय ही प्रमुख थे। मुस्लिम समाज अनेक जातियों में बंटा था। सल्तनत काल में तुर्क, अफ़गान, अरब और हब्शी जातियों के मुसलमान विदेशी मुसलमान के रूप में देखे जाते थे। इनमें 14 वीं शताब्दी तक तुर्को की स्थिति सर्वश्रेष्ठ बनी रही। क्योंकि ये शासक वर्ग थे। अरबों एवं हब्शियों की स्थिति भारतीय मुसलमानों से अच्छी थी। भारतीय मुसलमानों का प्रभाव खिलजी वंश द्वारा सत्ता पर अधिकार प्राप्त करने के पश्चात बढ़ने लगा। भारतीय मुसलमान वे लोग थे जिन्होंने स्वयं धर्म परिवर्तन करके इस्लाम ग्रहण किया था। या जिनके पूर्वजों ने इस्लाम ग्रहण किया था। ऐसे धर्म परिवर्तित मुसलमानों में ब्राह्मण, राजपूत या अन्य प्रतिष्ठित जाति के मुसलमान कम ही थे। अधिकतर समाज के निम्न वर्गो से धर्म-परिवर्तन हुआ था। इसीलिये भारतीय मुसलमानों को आरम्भ में विशेष प्रतिष्ठा और प्रभाव नहीं प्राप्त हो सका था।

मुस्लिम समाज को तीन वर्गो में विभाजित किया है-शासक वर्ग, अभिजात वर्ग एवं जनसाधारण वर्ग। वहीं कुछ विद्वानों के अनुसार मुस्लिम समाज उमरा वर्ग, उलेमा वर्ग, एवं जनसाधारण वर्ग में विभाजित था। परन्तु यह बहुत व्यापक दिखाई देता है। सूक्ष्म अध्ययन करे तो उसे 05 वर्गो में विभक्त कर सकते है।

शासक वर्ग- शासक उसके परिवार के सदस्य एवं निकट सम्बन्धी उमरा आदि सम्मिलित थे ।

उलेमा वर्ग- इसके अंतगर्त उलेमा, दरवेश सूफ़ीसंत आदि थे। उलेमा शब्द आलिम का बहुवचन है तथा आलिम वह है जिसे धार्मिक ज्ञान प्राप्त हो।

मध्यम वर्ग- इस वर्ग में शिक्षक, लेखक, हकीम, ज्योतिषी, कवि, दुकानदार, साधारण अमीर व्यापारी, राजकीय कर्मचारी, साधारण अमीर, आदि थे।

चौथा वर्ग शिल्पकारों, कृषकों तथा छोटे व्यवसाय में लगे हुए लोगों का था। इसी वर्ग में धोबी, नौकर, जुलाहे, लोहार, बढ़ई आदि थे। मुस्लिम शासकों की स्थापत्यकला में रूचि होने के कारण शिल्पकारों की मांग बढ़ी तथा उन्हें राजकीय प्रोत्साहन भी प्राप्त हुआ था।

निम्न वर्ग- मुस्लिम समाज का अंतिम वर्ग, जिसमें श्रमिक, भूमिहीन किसान, बेरोजगार, दास, गरीब इत्यादि थे। इस वर्ग को ''अजलाफ' कहा जाता था। यह वर्ग समाज के अन्य वर्गो पर आश्रित था। 'जकात' के रूप में जो धन लिया जाता था, वह धन इस वर्ग के लोगों पर व्यय किया जाता था।

'अशरफ' वर्ग समाज में प्रतिष्ठित वर्ग था, इसमें अधिकांशतः विदेशी मुसलमान और ऊँची जातियों के धर्म परिवर्तित मुसलमान थे। ''अजलाफ' एवं ''अशरफ' वर्ग में पारस्परिक शादी-विवाह का सम्बन्ध नहीं था, लेकिन हिन्दू समाज की जाति प्रथा जैसी जटिलता भी इनमें नहीं थी। इनमें आपस में सहभोज पर प्रतिबंध नहीं था और न ही छुआ-छूत की भावना थी। स्मरणीय है कि मुस्लिम समाज में ऊर्ध्वाधर गतिशीलता की संभावना बहुत अधिक थी। आर्थिक स्थिति में सुधार के साथ एवं वैवाहिक सम्बन्ध के माध्यम से कोई व्यक्ति आसानी से 'अजलाफवर्ग' से 'अशरफवर्ग' में प्रवेश कर सकता था। हिन्दू समाज में जाति प्रथा क्षैतिज आधार पर विभक्त थी। यह समाज जाति, धर्म, मत एवं व्यवसाय के आधार पर विभक्त था। यह समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्रों के मध्य विभाजित था। जाति का निर्धारण जन्म से था। और सामान्यतयाः हिन्दू समाज में ऊर्ध्वाधर गतिशीलता (Vertical social mobility) का अभाव था। समाज में ब्राह्मण सर्वोपरि थे। इनके बाद क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्ग आते थे।

इन प्रमुख जातियों के अतिरिक्त अनेक उपजातियाँ भी थी जो सभी एक दूसरे से पृथक थी। जिनमें आपस में सहभोज और पारस्परिक विवाह सम्बन्ध का अभाव था। हिन्दू समाज में शूद्रों की स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। इन्हें नगरों से बाहर रहना पड़ता था। तथा इन्हें अछूत एवं अपवित्र समझा जाता था। इन्हें मंदिरों में प्रवेश की अनुमति नहीं थी। तथा इन्हें सामाजिक यातनाओं का सामना करना पड़ता था। गुप्त काल में फाह्यान एवं 11 वीं शताब्दी में अलबरूनी ने जो वर्णन शूद्रों के बारे में किया है उसमें काफ़ी समानता है। शूद्रों की यह दयनीय स्थिति मध्यकाल में भी बनी रही। शूद्रों की यह स्थिति दक्षिणी भारत में भी देखने को मिलती है। यही कारण था कि सूफ़ी संतों द्वारा धर्म प्रचार के उपाय हिन्दू धर्म की निम्न जातियों के बीच प्रभावशाली सिद्ध हुए। और सूफ़ी संतों से प्रभावित होकर निम्न वर्गो द्वारा इस्लाम धर्म ग्रहण करने में अधिक रूचि दिखायी। भारत में तुर्को के आगमन के पश्चात हिन्दू समाज के प्रत्येक वर्ग में परिवर्तन देखने को मिलते है। ब्राह्मणों का व्यवसाय केवल पूजा-पाठ, अध्ययन-अध्यापन तक ही सीमित नहीं रहा, बल्कि मंदिरों में महंतों, राजपरिवार में पुरोहितों, ग्रामीण क्षेत्रों में भूराजस्व वसूल करने वाले, व्यापारी तथा अन्य प्रकार के व्यवसाय ग्रहण कर लिये।

सल्तनत कालीन समाज को आर्थिक आधार पर भी अध्ययन

किया जा सकता है। इसके अंतर्गत समाज का सर्वोपरि वर्ग शासक वर्ग था। इसमें राज परिवार के सदस्य, उलेमा वर्ग, सामंत आदि आते है। इनके साथ जमींदार, अधीनस्थ शासक, राय, राजा आदि आते थे। दूसरे स्तर पर निम्न स्तर पदाधिकारी, बड़े व्यापारी, व्यवसायी आदि आते थे। जिनमें हिन्दू और मुसलमान दोनों ही आते थे। तीसरे स्तर पर साधारण व्यापारी, शिल्पकार और दस्तकार एवं कृषक थे। सबसे निचले स्तर पर दास एवं घरेलू कर्मचारी आते थे।

दास प्रथा का प्रचलन हिन्दू एवं मुस्लिम दोनों समाज में देखने को मिलता है। मुसलमानों में दास 2 प्रकार के होते थे– (1) बन्दा अथवा शाही दास, (2) बुर्दा अथवा सामान्य दास। शाहीदास प्रशंसनीय होते थे। वे महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त होते थे। ये पद सैनिक अथवा आर्थिक हो सकते थे। दासता मुक्ति के बाद वे सुल्तान का पद भी ग्रहण कर सकते थे। ऐबक, इल्तुतमिश और बलबन इसके उदाहरण है।

सल्तनतकालीन समाज में दासियाँ रखने की प्रथा भी थी। ये राज परिवार की महिलाओं एवं धनी परिवार की महिलाओं की सेवा के लिये होती थी। दासियाँ सामान्यतः हिन्दू एवं मुसलमान दोनों समाज में प्रचलित थी। हिन्दू समाज में दास का कार्य घरेलू कामकाज के अतिरिक्त कृषि कार्य भी कराया जाता था। जबकि मुसलमानों में दासों का कार्य घरेलू कामकाज के साथ-2 शिल्प का कार्य भी कराया जाता था। फिरोजशाह द्वारा अपने शासन में बड़ी संख्या में दासों की भर्ती एवं इन्हें कारखाने में भर्ती करने के सम्बन्ध में जानकारी मिलती है। सल्तनतकाल में स्त्रियों की स्थिति पूर्वकाल की तरह दयनीय थी। लड़कियाँ का अल्प आयु में विवाह तथा पति के प्रति पत्नी की निष्ठा और सेवा के दायित्व लादने वाले पुराने नियम कायम रहे। मुसलमानों के आगमन से पूर्व भारतीय समाज में पुरूषों की तुलना में स्त्रियों के अधिकार सीमित थे। महिलायें पुरूषों की संरक्षता में रहती थी वे बाल्यकाल में पुत्री के रूप में पिता की संरक्षता में रहती थी, पत्नी के रूप में पति की संरक्षता एवं विधवा के रूप में पुत्र की संरक्षता में रहती थी। इस प्रकार से भारतीय महिलायें जन्म से लेकर मृत्यु तक संरक्षता में रहती थी। हिन्दू समाज में महिलाओं का कर्तव्य शिशु को जन्म देना था और यदि पुत्री का जन्म होता था तो दुर्भाग्यपूर्ण समझा जाता था। इब्नबतूता ने ढोलकों की ऊँची आवाज के साथ एक स्त्री द्वारा स्वयं को अपने पति की चिता पर जलाये जाने के दृश्य का वर्णन किया हैं। स्पष्ट प्रतीत होता है कि हिन्दू सभा में सती प्रथा और बाल हत्या का प्रचलन था। बाल विवाह का प्रचलन हिन्दू एवं मुस्लिम दोनों में ही वर्गो में था। पर्दा प्रथा मुस्लिम एवं हिन्दू शासक वर्गो के बीच प्रचलित थी, बहु विवाह प्रथा भी आम थी।

सम्पत्ति के सम्बन्ध में कुछ विद्वान एक पुत्रहीन पति की सम्पत्ति पर उसकी विधवा के अधिकार को स्वीकार किया है। विधवा को इस सम्पत्ति की संरक्षक होने के साथ-2 उसे बेचने का भी अधिकार था। इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि सल्तनत काल में हिन्दू महिला को सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकारों में वृद्धि हुई। इस काल में पर्दा-प्रथा उच्च वर्गीय स्त्रियों के बीच प्रचलित हो गयी थी। इसका कारण था कि लोगों की कामुक दृष्टि से स्त्रियों को ओझल रखने की प्रथा उच्च वर्गीय हिन्दुओं के बीच प्रचलित थी। अरबों एवं तुर्कों ने इस प्रथा को अपनाया। जौहर प्रथा का प्रचलन अधिकतर राजपूतों में था। जब युद्ध स्थल में पति की जीतने की संभावना न दिखायी पड़ती थी तो स्त्रियाँ अपने लाज की रक्षा हेतु अपने को अग्नि की ज्वाला में डालकर जौहर प्रथा को सम्पन्न किया करती थी। धीरे-धीरे इस प्रथा का प्रभाव मुस्लिम समाज भी पर पड़ा और मुस्लिम स्त्रियाँ भी जौहर प्रथा को सम्पन्न करने लगी। तैमूर के आक्रमण के समय भटनेर (हनुमानगढ़) की मुस्लिम महिलाओं ने जौहर प्रथा को सम्पन्न किया था। सल्तनत काल में इस प्रथा को रोकने का प्रयास किया गया। समाज में उच्च वर्ण में हिन्दू एवं मुस्लिम लोगों में बहु विवाह का प्रचलन था। यह प्रचलन केवल उच्च वर्ण तक ही सीमित था। निम्न वर्ग एवं मध्यवर्ग के लोगों में अधिकाशतः एक ही विवाह होता था। सल्तनत काल में बाल विवाह का भी प्रचलन था। बाल विवाह हिन्दू एवं मुसलमान दोनों में नौ अथवा दस की आयु में सम्पन्न कर दिया जाता था। बाल विवाह मुगलकालीन हिन्दू समाज की विशेषता थी। जो कि महिलाओं की दयनीय स्थिति को उजागर करती है। प्राचीन काल से हिन्दू मंदिरों में ''देवदासी प्रथा'' प्रचलित थी। यह प्रथा मुख्यतः दक्षिण भारत में प्रचलित थी। इस प्रथा के अनुसार, हिन्दू लोग अपने देवता की सेवा करने के लिये अपनी पुत्रियों को मंदिरों को समर्पित करते थे। मंदिरों में पुरोहितों द्वारा देवदासियों का शोषण होता था। इस प्रकार देवदासी प्रथा आगे चलकर घृणा की दृष्टि से देखी जाने लगी तथा इस प्रथा ने वैश्यावृत्ति का स्वरूप ग्रहण कर किया। वैश्या वृत्ति का प्रचलन भारत में प्राचीन काल से ही चला आ रहा था। वैश्याओं का नृत्य एवं संगीत से भी घनिष्ठ सम्बन्ध था। जो कि मनोरंजन का साधन था। वैश्यावृत्ति से राज्य की आय होती थी। जिसके कारण इसको समाप्त नहीं किया गया था। अलाउद्दीन खिलजी ने वैश्यावृत्ति का अंत कर दिया तथा नगर की समस्त वैश्याओं को एक निर्धारित समय में विवाह करने को बाध्य किया। मध्यकाल की प्रमुख विशेषता यह थी कि इस काल में हिन्दू एवं मुसलमान एक दूसरे के समीप आये। भक्ति आंदोलन के संतों (कबीर, नानक) तथा सूफ़ी संतों ने हिन्दू एवं मुसलमानों के बीच भेदभाव को मिटाया। दोनों धर्मो के लोगों द्वारा दोनों धर्मो के त्यौहारों का सम्मान किया गया। सल्तनत कालीन समाज, संरचना जीवन स्तर, सामाजिक दृष्टिकोण एवं आदर्शो के स्तर पर निरंतर परिवर्तनशील था। यह समाज बहुवर्गीय विशेषताओं वाला था। यह समाज बहुजातीय भी था। जिस तरह से हिन्दू धर्म में कई जातियाँ दिखायी देती है उसी तरह मुस्लिम धर्म में भी कई जातियों में विभाजन के प्रमाण मिलते हैं। यह समाज बहुजातीय के साथ बहुधार्मिक भी था। धार्मिक दृष्टि से हिन्दू एवं मुसलमान प्रमख समुदाय थे, लेकिन पारसी, जैन, सिख और ईसाई भी समाज में मौजूद थे। निवास क्षेत्र के आधार पर यह समाज शहरी एवं ग्रामीण दो भागों में विभाजित था।

13 वीं शताब्दी तक मुस्लिम समुदाय समाज के प्रमुख घटक के रूप में स्थापित हुआ, जिसमें अमीर वर्ग शीर्ष पर था। इसमें प्रारम्भिक चरण में तुर्क मुसलमानों का वर्चस्व रहा परन्तु खिलजी क्रांति के कारण अफ़गान तथा धर्मान्तरित भारतीय मुसलमानों का महत्व बढ़ा। सामाजिक संरचनों में नये तत्व के रूप में दास थे जो निम्न स्थिति में रहते हुए भी कभी-2 उच्च पदों को प्राप्त कर अपने आपको सर्वोच्च स्थिति में स्थपित करने में सफ़ल हुए जैसे-बलवन। प्राचीन भारत की वर्ण व्यवस्था ने कठोर जाति व्यवस्था का रूप धारण कर लिया था। समाज में शूद्रों को अस्पृश्य समझा जाता था। अलबरूनी के अनुसार, ''यदि कोई शूद्र किसी धार्मिक मंत्र का उच्चारण मात्र कर लेता था तो उसी जीभ काट दी जाती थी। तत्कालीन समाज में ब्राह्मणों के अधिकार असीमित थे। मुसलमानों के भारत आने से ब्राह्मणों का महत्व घटने लगा। हिन्दू जाति व्यवस्था की जटिलता कम होने लगी। क्योकि शूद्र वर्ग इस्लाम धर्म के भ्रातत्व व समता की ओर आकृष्ट होने लगा। इस प्रकार हिन्दू एवं मुस्लिम संस्कृतियों के पारस्परिक प्रभाव के फ़लस्वरूप एक नवीन समाज का निर्माण हुआ। भारतीय नव मुस्लिम ने धर्म परिवर्तन के पश्चात भी अपनी पुरानी रीति-रिवाजों को नहीं छोड़ा। नव मुस्लिम समाज ने पड़ौसी हिन्दुओं के साथ भी अपना सम्बन्ध बनाये रखा तथा एक दूसरे का साथ सुख

दु:ख में देते रहे। मध्यकाल में राष्ट्रीय त्योहारों की भी व्यवस्था थी जिसकों हिन्दू एवं मुस्लिम साथ-2 मनाते थे। वर्तमान शासक का जन्मोत्सव सम्पूर्ण देश में धूम-धूम से मनाया जाता था। समाज में अधिकांश त्यौहार हिन्दू एवं मुस्लिम लोग शामिल होकर मनाते थे। इस प्रकार सल्तकालीन समाज में हिन्दू एवं मुस्लिम समाज में नजदीकियाँ स्पष्ट दिखायी देती है। इसका सबसे बड़ा श्रेय भक्ति आंदोलन एवं सूफी आंदोलन को जाता है। सूफी संतों ने न केवल धर्म और दर्शन के क्षेत्र में योगदान दिया, परन्तु राजनीति और समाज को भी प्रभावित किया। सूफियों ने हिन्दुओं के प्रति धार्मिक सहिष्णुता का दृष्टिकोण अपनाया। इससे भारतीय समाज में सांस्कृतिक मेल-जोल को बढ़ाया और भारतीय समाज एक समन्वयवादी दृष्टिकोण की ओर अग्रसर होने लगा। निजामी के अनुसार, सूफियों की खानकाह में ही उर्दू भाषा का जन्म हुआ। इनका तर्क यह है कि सूफियों को भारत में एक सम्पर्क भाषा की आवश्यकता थी जिससे वे भारतीय प्रजा के बीच अपने विचारों का प्रचार कर सकें।

निष्कर्ष यह है कि सूफियों का सामान्य प्रभाव भारत पर पड़ा। मानवता और बन्धुत्व सूफियों के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्धान्त व्यवहारिक स्तर पर थे। हिन्दू धर्म में तो इसी सिद्धान्त पर ''वसुधैव कुटुम्बकम'' का सिद्धान्त प्रचलित हुआ था। वास्तव में सूफियों का सामाजिक और सांस्कृतिक योगदान अभूतपूर्व था।

सन्दर्भ सूची:-

1. मध्यकालीन भारत इमत्याज अहमद पेज - 121, 122, 123
2. मध्यकालीन भारतीय संस्कृति - डॉ0 लईक अहमद पेज-159, 160, 161, 162, 163, 164, 165
3. मध्यकालीन भारत -सतीशचन्द्र पेज-128 से 175 (दिल्ली संल्तनत 1206 से 1526)
4. मध्यकालीन भारत - हरिशचन्द्र वर्मा
5. ए0एस0 अल्टेकर, दी पॉजीशन ऑव वीमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन पृ0-206
6. के0एम0लाल, टिवलाइट ऑफदि सुल्तानेट पृ0 269
7. के0एस0 अशरफ लाइफएण्ड कंडीशन ऑफदी पीपुल ऑव हिन्दुस्तान पृ0 227
8. के0एस0 लाल, हिस्टी ऑफदी खलजीत, पृ0 227
9. अमीर खुसरो, किरातुल-सलातीन अलीगढ़- 1918 पृ0 30-35

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

भूमंडलीय अर्थव्यवस्था में गांधी जी के दर्शन की प्रासंगिकता

देशराज यादव

सह आचार्य, ला. ब. शा. राजकीय महाविद्यालय, कोटपूतली

भूमंडलीय अर्थव्यवस्था आर्थिक गतिविधियों के अंतरराष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया है, जिसमें वस्तु, सेवा, पूंजी और प्रौद्योगिकी का प्रवाह राष्ट्र की सीमाओं के बंधन से मुक्त होता है। यह गैर बराबरी पर आधारित विकसित देशों के हितों की रक्षा करने के लिए निर्मित की गई वैश्विक अर्थ नीति है। भूमंडलीय अर्थव्यवस्था ने वैश्विक स्तर पर असमानता, शोषण और अन्याय को बढ़ावा दिया है, जिसके परिणामस्वरूप विकासशील देशों में गरीबी, बेरोजगारी, अन्याय और असमानता की प्रवृत्तियां बढ़ी है। पर्यावरण जनित समस्याओं ने मानव जाति के लिए संकट पैदा किया है। इस भूमंडलीय अर्थव्यवस्था में गांधी जी का आर्थिक दर्शन और अधिक प्रासंगिक हो जाता है। गांधीजी ने अपनी आर्थिक दृष्टि में नैतिकता, आत्मनिर्भरता और विकेन्द्रीकरण पर जोर दिया। उन्होंने 'अस्तेय', 'अपरिग्रह' और 'ट्रस्टीशिप' जैसे सिद्धांतों के माध्यम से एक ऐसे आर्थिक मॉडल की कल्पना की, जो शोषण और असमानता के खिलाफ हो। गांधीजी का आर्थिक दर्शन आज भी भूमंडलीय अर्थव्यवस्था के संकटों से निपटने के लिए प्रासंगिक है, क्योंकि यह समाज में समानता और न्याय की स्थापना की दिशा में महत्वपूर्ण मार्गदर्शन प्रदान करता है। प्रस्तुत शोध पत्र में भूमंडलीय अर्थव्यवस्था के दुष्परिणाम से निपटने के लिए गांधी के आर्थिक दर्शन की प्रासंगिकता को प्रस्तुत किया गया है।

संकेताक्षर:–ट्रस्टीशिप, भूमंडलीय अर्थव्यवस्था, अस्तेय, अपरिग्रह, वैश्वीकरण, विकेन्द्रीकरण।

प्रस्तावना:–आज वैश्वीकरण का युग है जिसमें भूमंडलीय अर्थव्यवस्था का विस्तार और इसके प्रभाव ने विश्व की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक संरचनाओं को बदल दिया है। यह एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें पूंजी, श्रम और संसाधन वैश्विक स्तर पर मुक्त रूप से आवाजाही करते हैं। आज के समय में जहां एक ओर तकनीकी और औद्योगिक प्रगति ने दुनिया को एक वैश्विक बाजार में बदल दिया है, वहीं दूसरी ओर इसका प्रभाव अनेक देशों की आर्थिक नीतियों और सामाजिक संरचनाओं पर प्रतिकूल रूप से पड़ा है। विशेषकर विकासशील और गरीब राष्ट्रों में बेरोजगारी, गरीबी, असमानता और शोषण की स्थितियाँ लगातार बढ़ रही हैं। इस संदर्भ में महात्मा गांधी का आर्थिक दर्शन वर्तमान भूमंडलीय अर्थव्यवस्था की समस्याओं से निपटने के लिए एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। गांधीजी का दर्शन, एक विकेन्द्रीकृत, आत्मनिर्भर और नैतिक दृष्टिकोण पर आधारित अर्थव्यवस्था, जो न केवल आर्थिक शोषण और असमानता को समाप्त कर सके, बल्कि सभी के लिए समान अवसर, सुरक्षा और गरिमा सुनिश्चित कर सके, पर आधारित है।

वैश्वीकरण, एक ऐसी प्रक्रिया है जिसने विश्व को एक गांव में बदल दिया है। यह व्यापार, संस्कृति, तकनीक और विचारों का एक ऐसा विशाल जाल है जिसने देशों की सीमाओं को धुंधला कर दिया है। वैश्वीकरण ने रोजगार, सामाजिक सुरक्षा, समाज, संस्कृति, पर्यावरण और जैव विविधता जैसे विभिन्न क्षेत्रों को प्रभावित किया है। सैमुअलसन के अनुसार, 'वैश्वीकरण विश्व की अर्थव्यवस्थाओं, प्रौद्योगिकियों और संस्कृति का ऐसा आपसी एकीकरण है जो मानवता को एक वैश्विक गांव में परिवर्तित करता है।' अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के अनुसार 'वैश्वीकरण आर्थिक गतिविधियों के अंतरराष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया है, जिसमें वस्तु, सेवा, पूंजी और प्रौद्योगिकी का प्रवाह सीमा पार होता है।' गिडेंस का कथन है कि 'वैश्वीकरण सामाजिक संबंधों की तीव्रता है, जो विश्व स्तर पर दूर–दराज के स्थानों को आपस में जोड़ती है।'

भूमंडलीय अर्थव्यवस्था का तात्पर्य एक ऐसी आर्थिक प्रणाली से है, जहाँ पूँजी राष्ट्रीय सीमाओं से परे स्वतंत्र रूप से प्रवाहित होती है और अपने विस्तार के लिए सस्ते श्रम एवं कच्चे माल की खोज करती है। इस व्यवस्था में, अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं और विकसित देशों के दबाव के कारण राज्यों के नियमों एवं नीतियों को कमजोर किया जाता है, और एक मुक्त बाजार व्यवस्था को प्राथमिकता दी जाती है। विश्व की विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं का आपस में जुड़ना ही भूमंडलीय अर्थव्यवस्था की मुख्य धारणा है। भूमंडलीय अर्थव्यवस्था के दो प्रमुख आधार हैं–

1. व्यापार और पूँजी निवेश के संदर्भ में राष्ट्रीय सीमाओं को बाधारहित बनाना।
2. राज्य की भूमिका को केवल कानून–व्यवस्था तक सीमित रखना।

भूमंडलीय अर्थव्यवस्था के प्रमुख दोषों में निम्नलिखित शामिल हैं–

1. **आर्थिक असमानता**: भूमंडलीकरण के कारण धनी और गरीब देशों के बीच आर्थिक अंतर बढ़ता है। इस प्रणाली में विकास की अवधारणा गरीब और विकासशील देशों के शोषण और उनके संसाधनों के दोहन पर आधारित होती है। विकसित देश, बहुराष्ट्रीय कंपनियों के माध्यम से, गरीब राष्ट्रों का आर्थिक शोषण करते हैं। इसके अतिरिक्त, अंतर्राष्ट्रीय मौद्रिक संस्थाएँ और वित्तीय संगठन ऐसे नियम और नीतियाँ लागू करते हैं, जो गरीब देशों के हितों की अनदेखी करते हुए अमीर देशों को और अधिक लाभ पहुँचाने के उद्देश्य से बनाई जाती हैं।

2. **स्थानीय उद्योगों का नुकसान**: वैश्विक प्रतिस्पर्धा के कारण स्थानीय उद्योगों और छोटे व्यवसायों को भारी नुकसान होता है। व्यापार संगठनों के माध्यम से गरीब राष्ट्रों पर यह दबाव डाला जा रहा है कि वे अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और पूंजी निवेश के लिए अपने दरवाजे खोल दें। विदेशी कंपनियां सस्ते उत्पादों और उच्च तकनीकी ज्ञान के साथ बाजार में प्रवेश करती हैं, जिससे स्थानीय उत्पादों की मांग घटती है।

3. **पर्यावरणीय संकट**: भूमंडलीकरण ने प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन को बढ़ावा दिया है, जिसने पर्यावर के लिए संकट पैदा किया है। औद्योगिकीकरण

और शहरीकरण के कारण जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण और जैव विविधता की हानि जैसी समस्याएं उत्पन्न होती हैं।

4. सांस्कृतिक विघटन : भूमंडलीकरण के प्रभाव से स्थानीय सांस्कृतिक पहचान और परंपराओं को खतरा पैदा हुआ है। पश्चिमी जीवनशैली और सांस्कृतिक मान्यताएँ स्थानीय संस्कृति को प्रभावित करती हैं, जिससे पारंपरिक मूल्यों और रीति-रिवाजों में गिरावट आ सकती है।

5. आर्थिक निर्भरता : विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था, विशेष रूप से निर्यात-आधारित होती है, जो उन्हें वैश्विक बाजारों की उतार-चढ़ाव के प्रति संवेदनशील बना देती है। यदि वैश्विक मांग में कमी आती है या वित्तीय संकट उत्पन्न होता है, तो विकासशील देशों की आर्थिक स्थिति गंभीर रूप से प्रभावित हो सकती है।

6. नव साम्राज्यवाद : राजनीतिक साम्राज्यवाद से मुक्त हुए नव स्वतंत्र देशों में भूमंडलीय अर्थव्यवस्था के नाम पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों के माध्यम से नव साम्राज्यवाद को बढ़ावा दिया गया है। उदारीकरण के नाम पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों को खुलेआम शोषण और लूट की छूट दी जा रही है।

7. मूल्यविहीन अर्थनीति : मशीनीकरण और औद्योगीकरण से उत्पन्न नई सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था मानवीय मूल्यों से रहित एक यांत्रिक प्रणाली बन गई है। भारत जैसे देशों में ग्रामीण आत्मनिर्भरता की संरचना खंडित हो गई है। इस व्यवस्था ने शहरीकरण और उपभोक्तावादी संस्कृति को बढ़ावा दिया है। परिणामस्वरूप, यह मूल्यविहीन अर्थनीति असमानता, शोषण, अन्याय और भ्रष्टाचार को बढ़ाकर वैश्विक स्तर पर मानवता को खोखला कर रही है।

गांधीजी का आर्थिक दर्शन :-

गांधीजी के आर्थिक दर्शन के दो प्रमुख आयाम इस प्रकार हैं-

1. नैतिकतोन्मुख आर्थिक प्रणाली : गांधीजी ने अर्थशास्त्र को नैतिकता के साथ जोड़कर देखने की बात की। उनके अनुसार, वह आर्थिक प्रणाली, जो नैतिक और भावनात्मक पक्षों की अनदेखी करती है, वह मानवता के लिए हानिकारक है। उन्होंने कहा, 'जो अर्थशास्त्र नैतिकता से रहित है, वह मृतप्राय है।' वर्तमान भूमंडलीय अर्थव्यवस्था में नैतिक मूल्यों की अनदेखी ने असमानता, शोषण, अन्याय और भ्रष्टाचार को बढ़ावा दिया है।

2. विकेन्द्रीकृत ग्रामीण अर्थव्यवस्था : गांधीजी का मानना था कि आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था ही सामाजिक और आर्थिक समस्याओं का समाधान है। उन्होंने स्वदेशी और स्थानीय संसाधनों के उपयोग पर जोर दिया। उन्होंने औद्योगीकरण और केंद्रीकरण की बजाय लघु उद्योगों और हस्तशिल्प के विकास को प्राथमिकता दी। गांधीजी का आर्थिक चिन्तन न केवल भारत जैसे विकासशील देशों के लिए, बल्कि वैश्विक स्तर पर भी एक मार्गदर्शक सिद्धांत है। यह पूंजीवादी और उपभोक्तावादी अर्थव्यवस्था के दुष्परिणामों का समाधान प्रस्तुत करता है और स्थायी शांति एवं समानता की दिशा में प्रेरणा देता है।

गांधीजी के विचारों का आधुनिक संदर्भ में महत्व :-भूमंडलीय अर्थव्यवस्था में उपेक्षित किसान, बेरोजगार श्रमिक और भूख से पीड़ित आमजन का कल्याण गांधीजी के आर्थिक दर्शन से ही संभव हो सकता है। वर्तमान विश्व अर्थव्यवस्था में, पूंजीवादी व्यवस्था और अपने उद्देश्य खो चुकी समाजवादी व्यवस्था लोक कल्याण की अपेक्षाओं को पूरा करने में असफल रही हैं। गांधीजी का विकेंद्रीकरण और स्वदेशी पर आधारित आर्थिक दर्शन आज भी मानवता के उद्धार का मार्ग प्रशस्त कर सकता है।

1. अपरिग्रह और अस्तेय : संसाधनों का उपयोग केवल अपनी आवश्यकता तक सीमित रखना और अतिरिक्त का त्याग करना। आज की भूमंडलीय अर्थव्यवस्था में जहां संसाधनों का अत्यधिक शोषण हो रहा है, गांधीजी का यह सिद्धांत पर्यावरण संरक्षण और संसाधनों के न्यायसंगत उपयोग के लिए बेहद प्रासंगिक है।

2. ट्रस्टीशिप सिद्धांत : गांधीजी का ट्रस्टीशिप सिद्धांत पूंजीवादी और समाजवादी व्यवस्थाओं के बीच एक संतुलन स्थापित करने का प्रयास है। इसके अनुसार, जिनके पास अधिक संपत्ति या संसाधन हैं, उन्हें इसे अपने निजी लाभ तक सीमित रखने की बजाय समाज के हित में उपयोग करना चाहिए। यह स्वेच्छा पर आधारित है और यह मानता है कि नैतिक शिक्षा के माध्यम से संपन्न लोग अपने कर्तव्य को समझेंगे। संपन्न वर्ग और बड़े उद्योगपतियों के लिए यह एक नैतिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है कि वे अपने धन और संसाधनों को समाज के लिए उपयोग करें। वर्तमान में, ष्टस्क्र (कॉर्पोरेट सोशल रिस्पॉन्सिबिलिटी) इसी विचारधारा की एक झलक है।

3. सामाजिक समानता : गांधीजी का मानना था कि आर्थिक असमानता को समाप्त करना स्थायी शांति और प्रगति के लिए आवश्यक है। भूमंडलीकरण के कारण विकसित और विकासशील देशों के बीच बढ़ती खाई को पाटने में उनके विचार सहायक हो सकते हैं।

4. भौतिकतावाद के प्रति चेतावनी : विलासितापूर्ण जीवन के प्रति अंधी दौड़ समाज को विभाजित करती है। गांधीजी का ध्यान इस ओर था कि भौतिक सुखों के बजाय आत्मिक और नैतिक विकास पर जोर दिया जाए। भोगवादी संस्कृति समाज में असमानता, शोषण, अन्याय और दमन का मुख्य कारण है। गांधीजी ने इसे पहचानते हुए इच्छाओं को संयमित करने पर बल दिया। उनका मानना था कि आवश्यकता से अधिक प्राप्त करने की लालसा ही संचय की प्रवृत्ति को जन्म देती है, जो पूंजीपतियों द्वारा श्रमिकों और साम्राज्यवादी देशों द्वारा उपनिवेशों के शोषण का मूल कारण है। गांधीजी बढ़ती हुई इच्छाओं के घोर विरोधी थे। उन्होंने कहा था, 'मैं इन बढ़ी हुई मांगों का विरोधी हूँ, क्योंकि ये हमारी अंतरात्मा का हनन करती हैं।'

5. विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था : गांधीवादी अर्थव्यवस्था की एक महत्वपूर्ण विशेषता इसका विकेंद्रीकृत स्वरूप है। यह विचार चरखे के अर्थशास्त्र और कुटीर उद्योगों की प्रधानता से जुड़ा है। गांधीजी केंद्रीकरण को हिंसा का प्रतीक मानते थे और उनके अनुसार, आर्थिक क्षेत्र में केंद्रीकरण ही असमानता और शोषण का मूल कारण है। आर्थिक शक्ति के कुछ हाथों में केंद्रीकरण के कारण पूंजीपति वर्ग समाज में उपलब्ध संसाधनों और योग्यताओं का शोषण करने में सक्षम हो जाता है।

6. औद्योगीकरण और मशीनीकरण के प्रति गांधीजी का दृष्टिकोण : गांधीजी औद्योगीकरण और मशीनीकरण के अनियंत्रित विकास के विरुद्ध थे, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि वे विज्ञान, प्रौद्योगिकी और प्रगति के विरोधी थे। उन्होंने 'The Economics of Khadi' में लिखा, 'मैं समय और श्रम की बचत करना चाहता हूँ, किंतु यह लाभ केवल कुछ लोगों तक सीमित न होकर सभी तक पहुँचना चाहिए।' गांधीजी का यह विचार था कि मशीनों का उपयोग यदि केवल कुछ लोगों को करोड़ों की पीठ पर चढ़ाने के लिए हो, तो वह समाज के लिए घातक है।

गांधीवादी दृष्टिकोण की आधुनिक सन्दर्भ में प्रासंगिकता :-आज के समय में, जब वैश्विक अर्थव्यवस्था के केंद्रीकरण और पूंजीवादी प्रवृत्तियों के कारण असमानता और शोषण बढ़ रहा है, गांधीजी के विचार एक प्रासंगिक समाधान प्रस्तुत करते हैं। उनकी विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था, जिसमें स्थानीय संसाधनों और कुटीर उद्योगों पर आधारित विकास को प्रोत्साहित किया जाता है, भारत के ग्रामीण क्षेत्रों के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है। यह न केवल रोजगार के अवसर बढ़ाएगी, बल्कि ग्रामीण आत्मनिर्भरता और समतामूलक विकास को भी बढ़ावा देगी। गांधीजी का दृष्टिकोण आज भी हमें यह सिखाता है कि आर्थिक प्रगति केवल तभी सार्थक है, जब वह समाज के सभी वर्गों को लाभ पहुंचाए और मानवता के नैतिक मूल्यों को बनाए रखे।

गांधीजी का मानना था कि समाज की असली समस्या यह नहीं है कि लोगों के लिए फुर्सत का समय कैसे निकाला जाए, बल्कि यह है कि उनके खाली समय का सदुपयोग कैसे किया जाए। इसी कारण उन्होंने उन मशीनों का स्वागत किया जो झोपड़ियों में रहने वाले लोगों का श्रम कम कर सकें। गांधीजी अंधाधुंध औद्योगीकरण और अनियंत्रित मशीनीकरण के विरोधी थे, क्योंकि यह समाज में विवेकहीन प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देता है और स्वदेशी कारीगरी और हस्तकला को समाप्त कर देता है। मशीनीकरण पर आधारित भूमंडलीय अर्थव्यवस्था ने भूख, बेरोजगारी और संसाधनों की कमी को जन्म दिया है, जिससे समाज में अशांति और अराजकता बढ़ती है। गांधीजी के कुटीर और लघु उद्योगों का समर्थन- गांधीजी बड़े और भारी उद्योगों के विरोधी थे, विशेष रूप से भारत जैसे ग्राम और कृषि प्रधान देश में। उनका मानना था कि बड़े उद्योगों की तुलना में लघु और कुटीर उद्योग समाज के लिए अधिक उपयोगी हैं। जहाँ बड़े उद्योगों में एक लाख रुपये के निवेश से केवल चार लोगों को रोजगार मिलता है, वहीं कुटीर और लघु उद्योगों में इतनी ही पूंजी से दस गुना अधिक लोगों को रोजगार उपलब्ध हो सकता है। गांधीजी ने एक आदर्श ग्रामीण अर्थव्यवस्था की कल्पना की, जिसका मूल मंत्र आत्मनिर्भरता और विकेन्द्रीकरण था। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि यह ग्राम प्रधान अर्थव्यवस्था लघु और कुटीर उद्योगों पर आधारित होगी, जिसमें भारी भरकम और आधुनिक मशीनों का इस्तेमाल नहीं किया जाएगा। इस प्रकार, न तो अत्यधिक उत्पादन होगा और न ही भारी पूंजी निवेश की आवश्यकता पड़ेगी। उत्पादन श्रम प्रधान होगा, और स्थानीय उत्पादन, स्थानीय उपयोग और विवेकपूर्ण वितरण को ग्रामीण अर्थव्यवस्था का प्रमुख मार्गदर्शक सिद्धांत माना जाएगा। गांधीजी के अनुसार, ग्रामीण अर्थव्यवस्था का उद्देश्य एक ऐसे आत्मनिर्भर जीवन की स्थापना करना था, जिसमें अभाव, कटुता, घृणा, द्वेष और भौतिक उपलब्धियों की लालसा के लिए कोई स्थान न हो। उन्होंने कहा था, 'मेरी कल्पना के ग्राम में ग्रामीण व्यक्ति जड़ नहीं होगा, वह शुद्ध चैतन्य होगा। वह गंदगी में, अंधेरे में, पशुवत जीवन नहीं जीएगा। स्त्री और पुरुष स्वतंत्रता से रहेंगे। वहाँ रोग नहीं होगा, न कोई अभाव में जीएगा, और न ऐशो–आराम में रहेगा। सभी को शारीरिक श्रम करना होगा।' आज भारत जैसे विकासशील देशों में कई आर्थिक और सामाजिक समस्याओं का समाधान गांधीजी की विकेन्द्रीत ग्रामीण अर्थव्यवस्था में मिल सकता है। वर्तमान में भारत की एक गंभीर समस्या ग्रामीण बेरोजगारों का शहरों की ओर पलायन है। इस चुनौती का समाधान तभी संभव है जब हम अपनी अर्थव्यवस्था का केंद्र गाँवों की ओर मोड़ें। बढ़ती जनसंख्या और बेरोजगारी के संदर्भ में छोटे और कुटीर उद्योग ही कारगर सिद्ध हो सकते हैं, क्योंकि यह ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार के अवसर प्रदान कर सकते हैं और आत्मनिर्भरता की दिशा में महत्वपूर्ण कदम हो सकते हैं। आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था की दिशा में गांधीजी के दर्शन को अपनाना होगा, जो न केवल व्यावहारिक है, बल्कि वर्तमान परिस्थितियों में अत्यधिक प्रासंगिक भी है। उनके दृष्टिकोण से, संसाधनों का समान वितरण और छोटे उद्योगों के माध्यम से आय की समुचित व्यवस्था स्थापित करके, हम ग्रामीण क्षेत्रों में खुशहाली और समृद्धि ला सकते हैं। गांधीजी का मानना था कि ग्रामों को आत्मनिर्भर बनाने और बेरोजगारी तथा निर्धनता से उनकी रक्षा करने के लिए विकेन्द्रीकरण और श्रम प्रधान अर्थव्यवस्था का पालन किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष:–भूमंडलीय अर्थव्यवस्था में गांधीजी का आर्थिक दर्शन आज भी मार्गदर्शन का स्रोत है। उनकी विचारधारा आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास करती है। यदि उनके सिद्धांतों को वैश्विक स्तर पर अपनाया जाए, तो भय, भूख और भ्रष्टाचार से मुक्ति संभव है। यह न केवल सामाजिक असमानता को समाप्त करेगा, बल्कि मानवता के लिए एक नैतिक और स्थायी विकास का मार्ग भी प्रशस्त करेगा। गांधी का आर्थिक दर्शन नैतिकता पर आधारित है, जो उपभोक्तावादी संस्कृति और आत्मकेंद्रित स्वार्थी मानसिकता को त्याग करने की दिशा दिखाता है। अस्तेय, अपरिग्रह और ट्रस्टीशिप का सिद्धांत पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की बुराइयों को दूर करने का अहिंसक मार्ग है। ग्लोबल अर्थव्यवस्था में विकासशील और गरीब राष्ट्रों पर विकसित राष्ट्रों का वर्चस्व बढ़ गया है, खासकर बहुराष्ट्रीय कंपनियों के माध्यम से। गांधीजी द्वारा प्रतिपादित आर्थिक स्वावलम्बन की नीति ही इन समस्याओं का समाधान हो सकती है। उजड़ते गांवों को फिर से बसाने और ग्रामीण बेरोजगारी को दूर करने के लिए हमें गांधीजी के सिद्धांतों की ओर रुख करना होगा। गांधीजी के आर्थिक दर्शन की आधारशिला नैतिकता, मानव संसाधन की महत्ता, विकेन्द्रीकरण और समता है। आज भले ही ग्लोबल अर्थव्यवस्था में इन सिद्धांतों को गौण बना दिया गया हो, लेकिन मानव जाति को शोषण, असमानता और अन्याय से मुक्त करने के लिए इनकी आवश्यकता सदैव बनी रहेगी। गांधी का आर्थिक दर्शन उस चिराग की तरह है, जो भय, भूख, बेरोजगारी, असमानता, शोषण, अन्याय और अज्ञानता के अंधकार में डूबी हुई विश्व व्यवस्था को आशा की एक किरण दिखाता है।

सन्दर्भ सूची:–

1. पटेल आशा, (2005): ग्रामीण विकास का गांधीवादी दृष्टिकोण, डिसेंट बुक्स, नई दिल्ली।
2. घोष बी.एन., (2006) : 'गांधीवादी राजनीतिक अर्थशास्त्र: सिद्धांत, अभ्यास और नीति', एशगेट पब्लिशिंग लिमिटेड, इंग्लैंड।
3. गांधी एम.के, हरिजन, 27.02.1937
4. डॉ. बी. मधुकर और सूर्य प्रकाश राव, (2008): अहिंसा का अर्थशास्त्र, प्रौद्योगिकी और पर्यावरण: गांधी की प्रासंगिकता, गांधीवादी दर्शन और मानव विकास में (सं.) सरमा पीवी, कनिष्क प्रकाशक, वितरक, नई दिल्ली।
5. सेठी, जय देव. गाँधी की प्रासंगिकता, राधाकृष्ण प्रकाशन,नई दिल्ली, 2005.
6. चतुर्वेदी, दूधनाथ. महात्मा गांधी का आर्थिक दर्शन, काशी विद्यापीठ, वाराणसी.
7. ग्रेग, आर. बी. ए फिलासाफी आफ इंडियन इकोनॉमिक डवलपमेंट.
8. कुमारप्पा, जे. सी. गाँधी अर्थ विचार. आगनवाड़ी कल्पना प्रकाशन,वर्धा.
9. गांधी, एम. के. हिंद स्वराज, नवजीवन प्रकाशन मंदिर,अहमदाबाद.
10. चतुर्वेदी, एम. एस. भारतीय राजनीतिक विचारक. कॉलेज बुक हाउस, जयपुर.
11. Samuelson, Paul A., and William D. Nordhaus. Economics: An Introductory Analysis. v~th ed., McGraw-Hill, 2010,
12. International Monetary Fund. Globalization: Threats or Opportunity? IMF Publications, 2000,
13. Giddens, Anthony. The Consequences of Modernity. Polity Press, 1990,

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

स्त्री विमर्श के परिप्रेक्ष्य में सावित्रीबाई फुले का प्रतिरोध

कुणाल भारती

सीनियर रिसर्च फेलो (एसआरएफ), हिन्दी विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना

विमर्श एक नवीन अवधारणा है जिसके अंतर्गत किसी विषय का समग्रता में मूल्यांकन किया जाता है। विमर्श शब्द की चर्चा करते हुए अजित वडनेरकर लिखते हैं–''आमतौर पर विमर्श कहते हैं किसी खास बिंदु का सम्यक दृष्टि से परीक्षण, उस पर तर्क–वितर्क के साथ भली–भाँति सोच–विचार आदि।''[1]

इस प्रकार जब हम स्त्री विमर्श जैसे महत्वपूर्ण विषयों से गुजरते हैं, उसका संपूर्णता में मूल्यांकन करते हैं और तर्क–वितर्क की कसौटी पर परखते हैं, तब हम पाते हैं कि स्त्री विमर्श मुख्य रूप से स्त्री के अस्तित्व एवं उसकी अपनी अस्मिता से जुड़ी धारणाएँ हैं जहाँ वह अपने तमाम अधिकारों, अपनी हर तरह की स्वतंत्रता के साथ अपने को एक मुकम्मल मनुष्य या आदमी के रूप में स्वीकारे जाने, पहचाने जाने, संदर्भित किए जाने को लेकर आंदोलनरत हैं। स्त्री विमर्श, नारी मुक्ति की संभावनाओं एवं संघर्षों के परिप्रेक्ष्य में जो आधार बनाया उसका संपूर्ण क्षेत्र स्त्री को सिर्फउसकी देह से मुक्त करना ही नहीं बल्कि उसके सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में उसकी समान सहभागिता सुनिश्चित करना रहा है। वह पितृसत्ताहीन समाज की बात करती है साथ ही शिक्षा, संपत्ति और रोजगार में समान भागीदारी की वकालत करती हैं। स्त्री विमर्श से संबंधित सवालों, संघर्षों एवं संभावनाओं को रेखांकित करती हुई अपने संपादकीय लेख 'अभी सूर्य मध्यान्ह काल में नहीं आया है, परंतु आएगा जरूर...' में स्वाति श्वेता लिखती हैं –''भारतीय स्त्री एक पिछड़े हुए समाज और अगड़े समाज दोनों के प्रश्नों के बीच झूल रही हैं। इन्हीं प्रश्नों के बीच महिला मुक्ति, नारी चेतना तथा उससे संबंधित अनेक प्रश्न उठे, बहुत सारे आयोग बने, कानून बदले गए और नए कानून आज तक गढ़े जा रहे हैं। वन्य पशु स्वतंत्र हैं अपने जीवन को लेकर। फ़िर मनुष्य ने यह कब और कैसे निश्चित कर लिया कि स्त्री स्वतंत्रता की हकदार नहीं है। कब ये निर्धारित हो गया कि स्त्री दोयम है। उसे देवी बनाकर पूजा तो जा सकता है पर मानवीय अधिकारों से उसे दूर रखना चाहिए।.... औरतें एक साथ कई भूमिकाओं से लैस हैं। वे पत्नी, बेटी, बहन, बहू, लेखिका, कहानीकार, कवि, आलोचक, चित्रकार, वावर्ची, प्रबंधक और न जाने क्या–क्या हैं। ऐसी स्थिति में उनके अंदर का नारीवाद और बलिष्ठ होता है, कमजोर नहीं।''[2], यहाँ स्त्री जीवन से जुड़ी सभी समस्याओं एवं सवालों को उठाया गया है। स्पष्टतः उनके जीवन के सभी पक्षों को देखा जा सकता है, जो अपनी विविधता में संपूर्ण है। एक मनुष्य के रूप में स्त्री का जीवन अमूल्य होने के बावजूद, उन्हें वह महत्व नहीं मिल सका है जिसकी वो वास्तविक हकदार हैं। हक की यही लड़ाई स्त्री विमर्श के केंद्र में है। इसी तरह वर्जीनिया वुल्फअपनी पुस्तक 'ए रुम ऑफवन्स ऑन' में स्त्रियों की वास्तविक स्थिति को रेखांकित करती हुई लिखती हैं–''काल्पनिक रूप से उसका महत्त्व सर्वोच्च है, व्यावहारिक रूप से वह पूर्णतः महत्वहीन, कविता में वह पृष्ठ दर पृष्ठ व्याप्त है, इतिहास में वह अनुपस्थित है। कथा साहित्य में वह राजाओं एवं विजेताओं की जिन्दगी पर राज करती है, वास्तविकता में वह उस किसी भी लड़के की गुलामी करती है जिसके माँ–बाप उसकी ऊँगली में अंगूठी ठूँस देते हैं। साहित्य में कुछ अत्यंत प्रेरक शब्द, कुछ गंभीर विचार, उसके होठों से झरते हैं। असली जिंदगी में वह कठिनाई से पढ़ सकती है, कठिनाई से बोल सकती है और अपने पति की संपत्ति है।''[3], भद्र समाज का यह पाखंड कहीं–न–कहीं स्त्री व स्त्री चेतना को कमजोर बनाती है। साहित्यिक एवं बुद्धिजीवी वर्ग की कल्पनाओं में स्त्री जितनी महान है, उसका एक हिस्सा भी वास्तविक धरातल पर उतरे तो स्त्री जीवन की कई समस्याएँ सुलझ सकती हैं लेकिन वह भी संभव नहीं हो पाता है। स्त्री महानता की गाथा लिखने से ज्यादा अच्छा होता, उनके जीवन व जीवन स्थितियों की तमाम त्रासदी व विद्रूपताओं को अभिव्यक्त करते। ताकि वह उसमें वांछित सुधार कर सके। इस प्रकार हम स्त्री विमर्श के केंद्र में निहित उद्देश्यों एवं उनसे जुड़े सवालों, उनके संघर्षों व उसके ऐतिहासिक और वर्तमान संदर्भों को समझ सकते हैं। उसकी पहचान कर सकते हैं जहाँ एक तरफस्त्री विमर्श के नाम पर विमर्श कर रहे लोगों में भी छल–छद्म एवं अवसरवादी प्रवृत्ति को देखे जा सकते हैं, वहीं दूसरी तरफइस विमर्श एवं चेतना का नए सिरे से मूल्यांकन करने की भी आवश्यकता है ताकि स्त्री विमर्श के जो मूल प्रश्न है उसका हल निकला जा सके और यह मूल प्रश्न है स्त्री को एक संपूर्ण मनुष्य के रूप में स्वीकार किया जाए। साथ ही ऐतिहासिक पूर्वाग्रहों एवं गलतियों से बचते हुए, स्त्री विमर्श को एक व्यवस्थित एवं व्यवहारिक गति प्रदान किया जा सके। हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श एक साहित्यिक आंदोलन के रूप में बीसवीं शताब्दी के उतरार्ध के आसपास देखने को मिलता है। इस आंदोलन का प्रेरणास्रोत मुख्य रूप से पश्चिम का नारीवादी आंदोलन रहा है, यह नारीवादी आंदोलन नारी अस्मिता, अस्तित्व व अधिकार की चेतना को जगाने का काम करता हैं जो सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक समानता की बात करता है, उसकी लड़ाई लड़ता है। शिक्षा, संपत्ति व रोजगार आदि में पुरुष के समान अपनी भागीदारी की बात करता हैं, उसका एक सशक्त रूप महाराष्ट्र में 19वीं शताब्दी के आसपास देखने को मिलता है, उसका प्रतिनिधित्व ज्योतिबा फुले एवं उनकी पत्नी सावित्रीबाई फुले की सामाजिक–साहित्यिक गतिविधियों में हम देख सकते हैं। यह गतिविधि एक सामाजिक–साहित्यिक प्रतिरोध के रूप में हमारे सामने मौजूद हैं।

रजनी तिलक अपनी संपादित पुस्तक 'सावित्रीबाई फुले रचना

समग्र' की भूमिका में सावित्रीबाई फुले के योगदान एवं तत्कालीन सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों की चर्चा करते हुए कहती हैं – ''जैसा कि हम सब जानते हैं सावित्रीबाई फुले कोई साधारण महिला नहीं थी, जिन्हें इतिहास के गर्भ में छुपा दिया जाए और वह गुमनामी के अंधेरों में छुप जाये। सावित्रीबाई फुले 19वीं शताब्दी कि वह सुनहरी किरण थी जिसने ब्रिटिश उपनिवेशवादी दौर के भीतर न केवल अपनी आभा बिखेरी बल्कि अंधविश्वास, पाखंड, ढोंग, धार्मिक कर्मकांडों को चीर कर ज्ञान के स्रोत को अछूतों और स्त्रियों के लिए रेखांकित किया। तत्कालीन बिहड़ परिस्थितियों में समाज सुधारक क्रांतिज्योति सावित्रीबाई फुले युग नायिका बनकर उभरी। अपनी तीक्ष्ण बुद्धि, निर्भीक व्यक्तित्व, सामाजिक सरोकारों से ओत-प्रोत ज्योतिबा फुले के साथ कंधे से कंधा मिलाकर दकियानूसी समाज को बदलने हेतु इन्होंने अपने तर्कों के आधार पर बहस की। स्त्री जीवन को गौरवान्वित किया एवं सामाजिक न्याय को लक्षित किया।''[4], इस प्रकार स्त्री विमर्श के परिप्रेक्ष्य में सावित्रीबाई फुले की सामाजिक, साहित्यिक एवं वैचारिक दृष्टिकोण को समग्रता में समझा जा सकता है। सावित्रीबाई फुले एक सामाजिक कार्यकर्ता, अध्यापिका, लेखिका एवं चिंतक के रूप में इस समाज में जानी-पहचानी जाती हैं। उनका जीवन संघर्ष तमाम तरह की विपरीत स्थितियों के बावजूद गतिशील रहा है। उनकी सामाजिक सहृदयता, सफलता-असफलता, पुरुषों के समान नारी शिक्षा व रोजगार की वकालत आदि महत्वपूर्ण उदाहरण हैं जहाँ स्त्री विमर्श के वैचारिक आधार को देखा जा सकता है।

नारीवादी आंदोलन के आरंभिक एवं वर्तमान स्वरूप की चर्चा करते हुए डॉक्टर अमरनाथ लिखते हैं-''पहले वे स्त्रियां लोकतांत्रिक अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहे थीं जिसके अंतर्गत शिक्षा और रोजगार का अधिकार, संपत्ति के मालिक होने का अधिकार, मतदान का अधिकार, संसद में प्रवेश का अधिकार, तलाक का अधिकार आदि खास मुद्दे थे।... आज के नारीवाद के अंतर्गत घर के भीतर स्त्री पर पुरुष के दबाव और अधिकार के विरुद्ध संघर्ष, परिवार द्वारा उनके शोषण के विरुद्ध संघर्ष, कार्य स्थान में उनकी गिरी हुई स्थिति, समाज, संस्कृति और धर्म द्वारा दिए गए नीचे दर्जे के विरुद्ध संघर्ष तथा बच्चे पैदा करने और पालने के साथ-साथ उत्पादन के दोहरे बोझ के विरुद्ध संघर्ष भी शामिल हैं। वैचारिक आधार को देखा जा सकता है।''[5], इन संदर्भों के आलोक में सावित्रीबाई फुले की स्त्री मुक्ति संबंधी चिंतन उनकी उपयुक्त ठहरती है जहाँ उनकी चिंता के केंद्र में स्त्री शिक्षा, विधवा विवाह, बाल विवाह, भ्रुण हत्या एवं स्त्री स्वावलंबन से संबंधित बातें प्रमुख रहीं हैं। शिक्षा किसी भी समाज की बुनियादी जरूरत है। शिक्षा व्यक्ति को आत्मसजग बनाती हैं, उनके भीतर जागरूकता एवं आत्मसम्मान की भावना पैदा करती है। उन्हें संदेह एवं सवाल के लिए तैयार करती हैं। उनके भीतर वैज्ञानिक एवं तार्किक दृष्टिकोण पैदा करती हैं। अस्मिता, अस्तित्व और अधिकार बोध की चेतना से संपन्न बनाती हैं। शिक्षा ही वह माध्यम है जो व्यक्ति के संपूर्ण विकास को गति प्रदान करती हैं। यह वह माध्यम है जहाँ हम तमाम तरह की गैर-बराबरी के खिलाफअपनी आवाज बुलंद कर सकते हैं। शोषण-दमन के विरुद्ध अपने अधिकार का इस्तेमाल कर सकते हैं। बाह्याडंबर और अंधविश्वासों से मुक्ति पा सकते हैं। 19वीं शताब्दी का वह दौर जहाँ पितृसत्तात्मक समाज के तले स्त्रियाँ एक वस्तु मात्र समझी जाती थी, वहाँ सावित्रीबाई फुले अपने पति ज्योतिबाबाई फुले के साथ मिलकर स्त्रियों के बीच शिक्षा का अलख जगाती हैं। स्त्रियों को शिक्षा का महत्व समझाती हैं। उन्हें शिक्षा के लिए तैयार करती हैं। उनके पढ़ने-लिखने एवं पढ़ाने की व्यवस्था करती हैं। सीमित संसाधनों एवं प्रतिकूल सामाजिक व्यवस्थाओं के बावजूद वह मजबूती के साथ गतिशील रहती हैं। उनका उद्देश्य स्पष्ट है कि स्त्री को जबतक शिक्षित नहीं किया जाएगा, उन्हें रोजगार से नहीं जोड़ा जाएगा तब तक वह अपने भीतर आत्मसम्मान की भावना को महसूस नहीं कर सकेंगी। इसलिए सावित्रीबाई फुले शिक्षा को माध्यम बनाकर स्त्री के भीतर आत्मसम्मान और अधिकार बोध की चेतना को बढ़ावा देने का काम करती हैं। उन्हें तमाम तरह की गैर-बराबरी के खिलाफ प्रतिरोध के लिए तैयार करती हैं। उन्हें आर्थिक रूप से सक्षम बनाने के लिए पुरुषों के समान रोजगार में भागीदारी की वकालत करती हैं। स्त्रियाँ तब तक अपने अस्तित्व और अस्मिताबोध की चेतना को नहीं समझ सकती, अपने अधिकार का इस्तेमाल नहीं कर सकती, जब तक कि वह शैक्षिक एवं आर्थिक रूप से मजबूत ना हों। सावित्रीबाई फुले स्त्रियों की शिक्षा और रोजगार के लिए उन्हें तैयार करने का काम करती हैं। अपने पति ज्योतिबा को लिखे पत्र में शिक्षा के महत्व को रेखांकित करती हुई कहती हैं ''अज्ञानता और अनपढ़ता मनुष्य के लिए घातक है, अविद्या के कारण ही मनुष्य पशुवत है। ब्राह्मण स्वयं को श्रेष्ठतम समझते हैं, क्योंकि उनकी श्रेष्ठता का आधार ज्ञान अथवा शिक्षा का होना ही है। ज्ञान की महिमा अपार है, जो व्यक्ति या जाति पा लेती है या शिक्षित हो जाती है उसका बौद्धिक विकास होने लगता है। वह अपने अच्छे और बुरे को पहचानने लगता है और अशिक्षा के कारण से मूर्ख, नीच, अनपढ़ जैसे शब्दों और भावों से मुक्ति मिलती है। वह स्वयं श्रेष्ठता की ओर बढ़ने लगता है, उसे सम्मान की नजर से देखा जाता है।''[6], इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षा मनुष्य के लिए बहुत आवश्यक है। शिक्षा मनुष्य एवं मनुष्य की मनुष्यता का एक महत्वपूर्ण आधार है जहाँ वह अपने-आप को एक मनुष्य के रूप में देख पाता है। शिक्षा व्यक्ति को सम्मान दिलाती है और बेहतर मनुष्य बनने की प्रक्रिया में योगदान देती है। अतः बौद्धिक विकास एवं बाह्याडंबरों से मुक्ति के लिए मनुष्य का शिक्षित होना जरूरी है। भारत में स्त्री विमर्श के शुरूआती रूपों की चर्चा करते हुए डॉक्टर अमरनाथ लिखते हैं-''भारत की आरंभिक आंदोलन कर्ताओं में प्रमुख थीं पंडिता रमाबाई और सावित्रीबाई फुले। दोनों ही 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में सक्रिय रहीं। पंडिता रमाबाई ने स्त्रियों के अधिकार के लिए संघर्ष किया, हिंदू धर्म की रूढ़िवादिता पर आघात किया तथा 19वीं शताब्दी के आठवें दशक में स्त्रियों की स्वतंत्रता की बात की। उन्होंने स्वयं सदा स्वाधीन जीवन बिताया। सावित्रीबाई फूले ने स्त्रियों की शिक्षा के लिए जो महत्वपूर्ण काम किया। उनके लिए अलग से स्कूल खोला। एक तरह से हम उन्हें देश की पहली शिक्षिका कह सकते हैं।''[7], इस प्रकार सावित्रीबाई फूले देश की पहली महिला शिक्षिका ठहरती हैं, लेकिन उन्होंने अपने को केवल स्त्री शिक्षा के आंदोलन तक ही अपने को सीमित ना रखीं। वे जाति-धर्म-संप्रदाय की संकीर्णता से ऊपर उठकर स्त्री मुक्ति की ओर अग्रसर होती हैं। वे एक सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में सती प्रथा, बाल विवाह, विधवा विवाह आदि के विरूद्ध न केवल संघर्ष करती हैं, बल्कि उनके उत्थान के लिए, उनकी सुरक्षा और सम्मानपूर्ण जीवन के सभी पहलूओं पर ध्यान देती हैं। सीमित साधन और संसाधन के बावजूद उनके लिए विधवाश्रम व अनाथाश्रम की भी स्थापना करती हैं। जैसा कि रजनी तिलक लिखती हैं-''स्कूली शिक्षा के साथ-साथ ही सावित्रीबाई फुले ने महसूस किया स्त्रियों की स्थिति सुधारने के लिए स्त्रियों को संगठित करना चाहिए। 1842 में उन्होंने 'महिला मंडल' का गठन किया और बाल-विवाह के तहत हुई विधवाओं के साथ हो रहे जुल्म व शारीरिक शोषण का विरोध किया। स्त्रियों के बाल काटने के विरुद्ध नाइयों से अनुरोध किया तथा इसमें सफलता हासिल की। 'भ्रुण हत्या', 'बाल हत्या' के विरुद्ध विधवा माओं को शरण देना शुरू किया। अंततः उनके लिए 1852

में बाल-हत्या प्रतिबंधक गृह की स्थापना की। 1864 में अनाथाश्रम की स्थापना की।''[8], इस प्रकार सावित्रीबाई फुले का जीवन संघर्ष विविधताओं का समुच्चय रहा हैं जहाँ वे एक शिक्षिका, लेखिका, समाजसेविका आदि रुपों में भी सामने आती हैं। उन्होंने ऐसे समय में शिक्षा पर काम करना शुरू किया था, जब शिक्षा के सारे द्वार स्त्रियों के लिए प्रायः बंद थे। उनका जीवन चूल्हे चौके और बच्चे पैदा करने, पति की सेवा करने तक ही सीमित था। उनकी इच्छा-आकांक्षा, रुचि-अभिरुचि, मान-सम्मान व मेहनत का कोई मूल्य नहीं था। एक वस्तु से अधिक उनका कोई मूल्य नहीं था, खासकर निम्नवर्ग की स्त्रियों का। उनकी रचनाओं में स्त्री मुक्ति से संबंधित सवाल और संघर्षों को देखा जा सकता है। अपनी कविता 'जागो ! विद्या पाओ' में वे लिखती हैं –

''चलो दृढ़ निश्चय लेकर उठ खड़े हो जायें
संकल्प ले, संघर्ष करें
घृणाभाव-हीनता को त्यागकर
चौतन्य हो संघर्ष करें''[9],

यहाँ सावित्रीबाई फुले जन संबोधन के माध्यम से लोगों को संकल्प और संघर्ष के लिए तैयार करती हैं। उन्हें शिक्षित होने एवं शिक्षित करने के लिए प्रेरित करती हैं ताकि सदियों पुरानी रुढ़ मानसिकता की गुलामी को तोड़ सकें। वे कहती हैं – बाल बच्चों को पढ़ायें, खुद भी पढ़ें।''[10], चूंकि शिक्षा ही वह कारगर माध्यम है जहाँ व्यक्ति आत्म-मूल्यांकन की क्षमता का विकास करता है। उसके भीतर चेतना आती है। विकास की यह प्रक्रिया उसे आत्मसम्मान एवं अधिकार बोध की चेतना से लैस करती है। अपनी कविता 'मन्नत' में वे स्त्रियों को अंधविश्वास व अंधभक्ति के प्रति सचेत करती हैं। उन्हें तर्क-वितर्क के लिए तैयार करती हैं। जहाँ वे कहती हैं –

''कहे सावित्री
सोचो समझो विचार करो तुम
विवेक से विचार करो
अपनी जीवन दृष्टि दुरूस्त करो
जीवन अपना सार्थक करो''[11],

इस प्रकार सावित्रीबाई फुले स्त्रियों को रुढ़ परंपरा व मानसिकता के प्रति सजग करती है जहाँ वे अपने जीवन के सभी पक्षों को पूर्व जन्मों से जोड़ती हैं, अपनी दयनीय स्थिति के लिए अपने पूर्व जन्म के कर्मों को मानती हैं और इसे अपने जीवन में स्वीकार लेती हैं, साथ ही उस मानसिकता के विरूद्ध भी सचेत करती हैं जहाँ व्यक्ति अपनी हर जरूरत के लिए ईश्वर पर आश्रित हो जाते हैं। तर्क-वितर्क करना, मेहनत करना आदि को छोड़ कर केवल ईश्वर के आगे मन्नत मांगते हैं, भाग्य पर भरोसा करते हैं।

इन सब का मूल कारण वे अशिक्षा को मानते हैं, अज्ञानता को मानते हैं। वे 'अज्ञानता' शीर्षक कविता में कहती हैं –

''एक ही दुश्मन अपना
खदेड़ दे उसे हम, सब मिल कर
उससे ज्यादा खतरनाक न कोई
खोजो खोजो मन के भीतर झाकों

चलो चलो मैं बताती हूँ
उस दुष्ट खतरनाक दुश्मन की पहचान
ध्यान से सुनो उस दुश्मन का नाम
उस दुश्मन को कहते हैं 'अज्ञान' ''[12],

इस प्रकार सावित्रीबाई फुले स्त्रियों की दयनीय स्थिति का मूल कारण अशिक्षा को मानती हैं। सदियों से शिक्षा रहित उनका जीवन उन्हें अज्ञानता की ओर धकेलता चला गया। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि वे अपने अस्तित्व, अस्मिता व अधिकार के लिए प्रतिरोध करना भूल गईं। उनके भीतर आत्मस्वीकृति बोध आ गया और उनका शोषण, दमन एवं वंचन पारिवारिक और सामाजिक दोनों स्तरों पर लगातार होता रहा।

सावित्रीबाई फुले शिक्षा को अपना माध्यम बनाती हैं। शिक्षा वह प्राथमिक जरूरत है जो मनुष्य मात्र की चेतना को उसके सर्वांगीण विकास को गति देती हैं। यह काम वे जाति, वर्ग, वर्ण जैसी संकीर्णता से ऊपर उठकर करती हैं। स्त्रियों को शिक्षित कर उन्हें जीवन के बुनियादी सवालों से जोड़ती हैं। उनके भीतर चेतना को पहचानने की क्षमता का विकास करती हैं। उन्हें शोषण, दमन एवं वंचन के विरूद्ध बोलने के लिए तैयार करती हैं। उन्हें सामाजिक एवं पारिवारिक प्रतिरोध के लिए तैयार करती हैं। उन्हें अपने हक और अधिकार के प्रति जागरूक करती हैं।

सावित्रीबाई फुले शैक्षणिक कार्यों के अलावा जीवन के अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्रों से जुड़ती हैं। वे नारी मुक्ति के साथ-साथ मनुष्य की मुक्ति की भी बात करती हैं। वे एक ओर जहाँ शिक्षा की बात पर जोर देती हैं, वहीं दूसरी ओर सामाजिक बाह्याचारों से स्त्रियों एवं शूद्रों-अतिशूद्रों की मुक्ति को लेकर प्रतिबध्द दिखती हैं। अपने पांच भाषणों की श्रृंखला-'उद्योग, विद्यादान, नेक आचरण, व्यसन (बुरी आदत) और कर्ज' के माध्यम से उन्होंने लोगों को जागरूक करने का काम किया। इन भाषणों में मानवीय जीवन के सभी पहलूओं को उन्होंने बारीकी से उठाया और लोगों तक पहुंचाने, उन्हें प्रेरित करने की दिशा में काम किया। अपना पहला भाषण 'उद्योग' में वे मनुष्य की आर्थिक प्रगति के लिए भाग्य, पुनर्जन्म, अंधविश्वास, किस्मत आदि के प्रति अविश्वास व्यक्त करते हुए य अनुशासन, अभ्यास, अध्ययन, संयम, मेहनत आदि को मनुष्य के लिए आवश्यक माना है। वे धार्मिक कर्मकांडों, पारंपरिक सोच, रूढ़िवादी मान्यताओं के प्रति निम्न वर्ग को सचेत करते हुए उन्हें मेहनत के लिए तैयार करती हैं एवं बाह्याडंबरों से मुक्ति का संदेश देती हुई लिखती हैं-''हम हर बात पर ईश्वर पर भरोसा करके बैठे रहते हैं। ईश्वर एक काल्पनिक मददगार होता है। यह बात सब जानते और समझते भी हैं, परंतु सहायता करने वाला ईश्वर ठोस व परिश्रम के बीच द्वंद्व पैदा करके, मनुष्य को आलसी व निकम्मा बना देता है। परंपरिक सोच पाप और पुण्य को लक्षित करती है। सुख और दुख को पूर्वजन्म के कार्यों से जोड़ कर मनुष्य को भरमाया जाता है।.... शूद्र लोगों की दीन-दुखी अवस्था में बदलाव लाने हेतु कथित ब्रह्मा जी को भी दखल देने का अधिकार नहीं है। इसीलिए अब शूद्रों को चाहिए कि वह पूर्वजन्म के संचित कर्मों से निजात पाकर पशुवत जीवन के विरोध में मुखर होकर प्रतिकार करें। इस प्रकार के विचारों, षड्यंत्रों की गिरफ्त में शुद्र समाज अपना जीवन गुजार रहा है उसे स्वयं के इंसान होने का अहसास तक नहीं इसलिए पूर्वजन्म में किये गये कर्मों पर विश्वास करके, पशु समान जीवन जी रहे हैं और बेगारी गुलामी भरे धंधे करने में मगन है।''[13], इस प्रकार सावित्रीबाई फुले लोगों को मानसिक गुलामी से मुक्त कराने के लिए प्रयासरत हैं। वे खास कर स्त्रियों और निम्नवर्ग के लोगों को इन गैर-जरूरी स्थितियों से परिचित करवाती हैं ताकि वे बदलाव की ओर उन्मुख होकर तरक्की करें। आर्थिक सम्पन्नता किसी भी समाज या समुदाय का एक जरूरी हिस्सा है। जो समाज या समुदाय आर्थिक रुप से जितना उन्नत होगा, उस समाज या समुदाय की सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक स्थिति उतनी ही बेहतर होगी, वह समाज या समुदाय उसी अनुपात में उन्नति भी करता चलेगा। यही कारण है कि सावित्रीबाई फुले जन समुदाय के बीच

जागरूकता की मशाल प्रज्वलित करती दिखती हैं। वे रुढ़ मान्यताओं, धार्मिक पाखंडों, नियतिवाद एवं पारंपरिक सोच-समझ के विरुद्ध वैज्ञानिक चेतना व प्रतिरोध का आह्वान करती हैं।

इस प्रकार सावित्रीबाई फुले का प्रतिरोध अपनी समग्रता में स्त्री विमर्श के करीब ठहरती हैं। समकालीन स्त्री विमर्श में जो मूल प्रश्न है स्त्री मुक्ति का, वह सावित्रीबाई फुले के जीवन संघर्षों एवं विचारों में देखने को मिलता है। मौजूदा स्त्री विमर्श, स्त्री मुक्ति के जिन प्रश्नों को लेकर आगे आता हैं जहाँ विधवा विवाह, भ्रूण हत्या और दहेज के नाम पर स्त्रियों का पारिवारिक वंचन आज भी गंभीर सवाल बना हुआ है। उसे सावित्रीबाई फुले बहुत पहले उठा चुकी होती हैं। जहाँ तक स्त्रियों की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक हिस्सेदारी की बात है, वह थोड़े-बहुत सुधार के साथ आज भी सवाल बना हुआ है। स्त्रियों की अपनी इच्छा, आकांक्षा, रुचि, अभिरुचि के अनुरूप कार्य करने की बात हो या अपनी खुद की स्वतंत्र पहचान को लेकर हो, वहाँ आज भी सामाजिक-पारिवारिक दबाव मौजूद हैं। स्त्रियों एवं निम्न वर्गों के बीच व्याप्त धार्मिक अंध आस्था, पारंपरिक मान्यताओं में विश्वास, भाग्यवाद, नियतिवाद जैसी धारणाओं का खंडन एवं मानसिक गुलामी से मुक्ति का अभियान आज भी जारी है। कुल मिलाकर स्त्री विमर्श के वे सारे सवाल जिन्हें सावित्रीबाई फुले उठाती हैं, उस दिशा में काम करती हैं, वे सारे के सारे सवाल व संदर्भ आज भी कहीं न कहीं स्त्री विमर्श के केन्द्र में मौजूद हैं।

संदर्भ सूची:-

1. वडनेरकर, अजित, 'शब्दों का सफ़र', नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2019, पृ. 402
2. श्वेता, स्वाति, संपा.,'युद्धरत आम आदमी' पत्रिका, वर्ष - 6, अंक- 60 (अंक-180), जनवरी-मार्च, 2019, पृ. 6
3. वुल्फ़ वर्जीनिया, अनु., मोजेज माइकल, 'अपना एक कमरा', नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2011, पृ. 52
4. तिलक, रजनी, संपा., 'सावित्रीबाई फुले रचना समग्र', नई दिल्ली: द मार्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, 2017, पृ. 9
5. डॉ. अमरनाथ, 'हिन्दी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली', नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2020, पृ. 386
6. तिलक, रजनी, संपा., 'सावित्रीबाई फुले रचना समग्र', नई दिल्ली: द मार्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, 2017, पृ. 104
7. डॉ. अमरनाथ, 'हिन्दी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली', नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2020, पृ. 386
8. तिलक, रजनी, संपा., 'सावित्रीबाई फुले रचना समग्र', नई दिल्ली: द मार्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, 2017, पृ. 12
9. तिलक, रजनी, संपा., 'सावित्रीबाई फुले रचना समग्र', नई दिल्ली: द मार्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, 2017, पृ. 62
10. तिलक, रजनी, संपा., 'सावित्रीबाई फुले रचना समग्र', नई दिल्ली: द मार्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, 2017, पृ. 62
11. तिलक, रजनी, संपा., 'सावित्रीबाई फुले रचना समग्र', नई दिल्ली: द मार्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, 2017, पृ. 57
12. , तिलक, रजनी, संपा., 'सावित्रीबाई फुले रचना समग्र', नई दिल्ली: द मार्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, 2017, पृ. 77
13. तिलक, रजनी, संपा., 'सावित्रीबाई फुले रचना समग्र', नई दिल्ली: द मार्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, 2017, पृ. 110

राजेन्द्र दानी की कहानियों में नगरीय जीवन का संत्रास

तरूण कुमार साहू
डॉ. प्रेम लता गौरे

1. शोधार्थी, हिन्दी विभाग, शासकीय विश्वनाथ यादव तामस्कर स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दुर्ग, छ.ग.
2. शोध निर्देशक व प्राचार्य, नवीन महाविद्यालय, बेरला, जिला – बेमेतरा, छ.ग.

शोध सार–नगर में निवासरत लोगों की जीवन शैली तथा उनके जीवन का वास्तविक चित्र नगरीय कथाओं में मिलता है।स्वतंत्रता के बाद भारत में नगरों का विकास तीव्र गति से हुआ है। ग्रामीणों नेभूखमरी दूर करने तथा नगरों की आधुनिक चकाचौंध से आकर्षित हो कर नगर की ओर पलायन करना शुरू किया। पलायन सिर्फ ग्रामीणों का ही नहीं बल्कि कथाकारों तथा कथावस्तु का भी हुआहै। इसी कारण मुंशी प्रेमचंद, फणीश्वरनाथ रेणु, शिवप्रसाद सिंह तथा शेखर जोशीके बाद ग्रामीण अंचल की कहानियां कम लिखी गई।अब अधिकांश कहानियां नगरीय जीवन तथा मध्यवर्गीय परिवार से संबंधित हैं। नगरीय जीवन का भयावह यथार्थ बाहरी चकाचौंध से दिखाई नहीं देता, उसे देखने के लिए कहानी की गहरी पड़ताल करना पड़ता है। जगमगाते नगर में निवासरत लोगों के जीवन में? आने वाला एकाकीपन, तनाव, कुंठा, संत्रास, मानवीय मूल्यों का पतन तथा नैतिक मूल्यों का विघटन इन सभी समस्याओं से जुझते मनुष्यों की कहानीको राजेन्द्र दानी की कहानियों में व्यापक फलक पर देखा जा सकता है। व्यापक विविधता का संयोजन किए हुए कहानी में नगरीय जीवन का भयावह यथार्थ को गंभीरतासे कहानीकार राजेन्द्र दानी ने अभिव्यक्त किया है।

बीज शब्द:–नगरीय जीवन, भयावह, संत्रास, अकेलापन, विसंगति, इक्कीसवीं सदी, चिलचिलाती धूप, सम्पन्नता, परिवर्तन, हृदयघात, चिकित्सालय, गर्भपात, पीड़ा।

मूल आलेख:–वरिष्ठ एवं हिन्दी के महत्वपूर्ण कहानीकार राजेंद्र दानी ऐसे रचनाकार हैं जो समाज की आंतरिक पड़ताल कर परिवर्तन, नई धारणाओं तथा नये व्यवहारों को परिभाषित करते हैं। मनुष्य जीवन में आने वाली विसंगतियों को रेखांकित करते हुए चार दशक से अनवरत लेखन कर रहे हैं। राजेन्द्र दानी कहानी को कल्पना में नहीं गढ़ते, बल्कि कहानी की कथावस्तु उनके आस–पास के भोगे हुए जीवन का अनुभव है, जिसे जीवंत भाषा में कहानी का रूप देते है। राजेन्द्र दानी का रचनात्मक वैशिष्ट्य यह है कि वे समय को गंभीरता से पकड़ते है। अपनी सीधी–सपाट लेखन शैली में गंभीर और भयावह परिस्थितियों को सूक्ष्मता से कहानी में रख देते है।

तीव्र गति से हो रहे परिवर्तन के इस दौर में समय तथा समाज अपनी स्थिरता खो रही हैं। जीवन मूल्यों का होनाअब सिर्फ औपचारिकता मात्र बची हुई है। राजेन्द्र दानी इन्हीं बदलाओं को सूक्ष्मता से रेखांकित करते हैं,पर उन तथ्यों को नहीं जो एकदम से सामने दिख जायें, जैसे नगर के ढांचे का बदलना, राजनीतिक भाषा का बदल जाना। इन सब से अलग राजेन्द्र दानी उस परिवर्तन को देख लेते है जो सामान्य नजरों से दिखाई नहीं देते। राजेन्द्र दानी अपनी सूक्ष्म दृष्टि से चुपचाप हो रहे जीवन के आंतरिक परिवर्तनको एक कवि के जैसे दर्ज करते हैं।

ऐसे वक्त जब समाज तथा पूरा संसार कोलाहल से भरा हुआ है, राजेन्द्र दानी कामर्यादित स्वर कुछ हद तक आश्चर्य भी करता है। उनकी प्रतिनिधि कहानियों का संग्रह 'पारगमन' हैं जिसमें नगरीय जीवन का भयावह स्थिति को चिन्हित किया गया हैं। इक्कीसवीं शताब्दी के प्रारंभ से भारत तथा विकासशील देशों में, बाजार का एक विकराल रूप दिखाई देता है। जिसमें बहुराष्ट्रीय कंपनियों से निर्मित घरेलू वस्तुओं से लैस बाजार अब खुशियों का जरिया बन गया है। खुशियों का खरीददारी से बहुत ही अच्छा तालमेल देखने को मिलता है। लेकिन इस खुशी की आवश्यकता मिसेस खरे को नहीं है, वह 'अकेली रह रही हैं पर खुश रहना चाहती हैं। यह होता नहीं, पर करना पड़ता है।'[1] आधुनिक युग में भौतिक वस्तुओं का भोग ही लोगों को खुशियां प्रदान करती है, ऐसा लोगों का मानना है। किन्तु राजेन्द्र दानी 'पारगमन' कहानी में मिसेस खरे को भौतिक सुविधाओं से लैस होते हुए भी दु:खी और एकाकीपन से जूझते हुए दिखाते है। जो पारिवारिक पीड़ा को गुप्त रोग की तरह सहती है। कॉलोनी के लोग उनके बाह्य जीवन को देख कर बधाई देते थकते नहीं, कहते हैं 'अभी गर्मियों के ठीक पहले बेटा आया था तो उनके बेडरूम में एक महंगा स्प्लिटएयरकंडीशनर लगवा गया। कहने को सुख और आराम और भी बढ़ गया। अगले साल आएगा तो कुछ और बढ़ा जायेगा।'[2] लेकिन उनके आंतरिक जीवन के दु:ख को कोई नहीं पहचान पाता। मिसेस खरे साधन सम्पन्न होने के बावजूद काम वाली बाई ज्योति को सौभाग्यशाली मानती है, क्योंकि जीवन के अंतिम पड़ाव में अपने परिवार के बीच खुशी से रह रही है, हर वक्त वह अपनों के साथ है। मिसेस खरे अकेली है, इसी बात का दु:ख उनको होता है। काम वाली बाई के छोटे बच्चों को देख मिसेस खरे के अंदर ममता उमड़ आती है। रसोई में सब कुछ होते हुए भी चिलचिलाती धूप में ज्योति को प्याज और आलू लेने भेज देती है। और ज्योति से कहती हैं 'बच्चों को यहीं रहने दो लौट कर लेते जाना, अब धूप इतनी चढ़ आई है कि बच्चों को लू लग सकती है।'[3] ये बात इसलिए कहती है ताकि वो कुछ समय के लिए उन बच्चों पर अपनी स्नेह बरसा सके। बड़ी विडंबना है मध्यवर्गीयसमाज में माता– पिता अपने बच्चों का परवरिश कर उन्हें बड़ा कर देते हैं उनमें शिक्षा, समझ विकसित कर देते हैं, यहीं महत्वाकांक्षा लिए कि बड़ा हो कर हमारे बुढ़ापे का सहारा बनेगा, लेकिन यहां ठीक उल्टा होता है। जीवन की अंतिम पड़ाव में उन्हे पारिवारिक सुख से वंचित रहना पड़ता है। संतान सोचते हैं कि पैसे की कोई कमी नहीं है तो उन्हें चिंता और दु:ख किस

बात की होगी। 'भूलने का रास्ता' पंद्रह कहानियों का संग्रह है। इस संग्रह के ज्यादातर पात्र मध्यवर्गीय हैं। राजेन्द्र दानी कहानियों के माध्यम से बताते हैं कि एक ओर मध्यवर्गीय समाज में समृद्धि आयी तो वही दूसरी ओर रिश्तों में दूरियां बढ़ती गयी। अकेलापन एकदम भयावह हो गया। संग्रह की दूसरी कहानी 'मेंडोलिन' उसी मध्यवर्गीयआचरण को प्रस्तुत करता है जो अचानक आयी सम्पन्नतासे उच्च वर्ग में शामिल होते ही अपना व्यवहार बदल लेता है, और अपनी पुरानी जिंदगी के संघर्ष को भूल जाता है। वह उन्हें भी भूल जाता है जिन्होंने उसको आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएं थे। इस कहानी में सुर्रू को क्या पता था कि एस. एस. किशोर की प्रतिभा को पहचानना उसके लिए प्राणघाती होगा। यह कहानी पाठक को झकझोर कर रख देती है और चेतावनी देते हुए कहती हैं कि अपने अभिन्न मित्र को हर समय एक जैसा मत पुकारो, वक्त के साथ पद, प्रतिष्ठा आ जाने से वो पुराने जैसा नहीं रहता। कहानी की शुरुआत शहर के वातावरण में आई परिवर्तन से होता है। 'मेरा शहर बड़ा ही अजीब है, जब मैं यह कहता हूं तो लोग कहते हैं कि 'तुम्हारा ही नहीं यार यह तो सब जगह की हालत है, इसमें नई बात क्या है भला!'[4] इस कहानी में मेंडोलिन एक प्रकार का विलुप्त होता वाद्य यंत्र है, जिसे आस पास में सिर्फ सुर्रू ही बजाने जानता था। ये उनको रक्त में मिला था। सुर्रू एस. एस. किशोर के गीत गाने की प्रतिभा को पहचान लेता है। उसके गाने की प्रशसां करते हुए कहता है, 'क्या गजब गाते हो यार, कहां थे साले तुम अब तकज्कल से तुम मेरे आर्केस्ट्रा में गाओगे।'[5] बाद में एस. एस. किशोर की पहचान बड़ी हस्ती के रूप में होता है। एस. एस. किशोर का विवाह शहर के सबसे अमीर परिवार में होता है। एक दिन उसी चौक पर एस. एस. किशोर और उसकी पत्नी किसी काम से आते हैं। उसे देख सुर्रू पुकारता है, 'कायबे किशोर.. उसकी यह आवाज बहुत दूर तक गई और कार चलाते चलाते एस.एस. किशोर तक भी पहुंची। उसने क्षण-भर को हमारी ओर देखा।'[6] उसके क्षण-भर देखने में एक अलग ही दृष्टि थी जिससे सुर्रू अपराधबोध से भर जाता है। साधारण व्यक्ति जब अपनी प्रतिभा से असाधारण बन जाता है, तो अपने मित्रों का पुराना व्यवहार उसे बुरा लगने लगता और कहता है 'अब देखो यार, मैं पहले जैसा तो रहा नहीं कि लोग पहले जैसा ही मुझसे व्यवहार करें।'[7] दौलत और शोहरत प्राप्त करने के बाद एस. एस. किशोर को पुराने अंदाज में सुर्रू का पुकारना उसके सम्मान को ठेस पहुंचा देता है और बिना प्रतिक्रिया दिये चले जाता है। सुर्रू के लिए ये बात ह्रदयघात का कारण बन जाता है। बिना किसी रोग, बिना शिकायत अपनी प्राण त्याग देता है। इस बात का जरा भी अफसोस एस. एस. किशोर को नहीं होता, अपने मित्रों की स्थिति परिस्थिति को पूछता भी नहीं। यह कहानी बदलती दुनिया के यथार्थ को उद्घाटित करती हुई प्रश्न करती है। क्या सम्पन्न होते ही लोगों में संवेदना मर जाती है?, भावुक व्यक्ति का समाज में अब कोई स्थान नहीं बचा? इन प्रश्नों का उत्तर इस कहानी में ढूंढने का प्रयास किया गया है।

'नेपथ्य का अंधेरा' राजेन्द्र दानी की चर्चित कहानी है। यह 1965 के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था में आयी बदलाव से जुड़ी कहानी है। जिसमें पूंजीवाद एक नया रूप के साथ भारत में प्रगट होता है। अखबारों में आने वाला विज्ञापन लोगों के जीवन से चैन की कड़ी के समान जुड़ गया हैं। बाजार विज्ञापन के जरिए आम जनता को लुभाने में कामयाब होने लगा है। सभी का बाजारीकरण कर दिया गया है, चाहे वह सुख हो, दु:ख हो, इच्छा तथा आकांक्षा। अब बाजारीकरण का प्रभाव चिकित्सा और शिक्षा को कस कर पकड़ लिया है। पूंजी के निवेश ने चिकित्सालय को भी नहीं छोड़ा। इस कहानी की अंतर्वस्तु चिकित्सा की व्यवस्था को बेनक़ाब करती हैं। चिकित्सा एक समय में सेवा भाव से किया जाता था। लेकिन आज भंयकर व्यापार बना हुआ है। चिकित्सा को व्यापार बनाने वाले लोगों के अंदर संवेदना बिल्कुल नहीं होती। मरीज़ की मृत्यु हो जाने पर उसकी सूचना उनके परिजनों को तब तक नहीं देते जब तक पूरी राशि जमा न कर दें। आज के समय में यह चिकित्सालयों का यथार्थ है। कम उम्र में बड़ी उपलब्धियों का प्रमाण पत्र लिए शहरों में बहुत से डॉक्टर मिलेंगे जो अपनेक्लीनिक को फिल्मी रेस्तरां के जैसे चमकदार बना कर रखे हैं। कहानी का नैरेटर कहता है कि 'सीढ़ियां मुझे सीधे चिकित्सक के स्वागत -कक्ष में ले गई। वह जगह बहुत रौशन थी, बाहर से ज्यादा। वहां बड़े-बड़ेगद्देदार मखमली सोफों पर बहुत सारे स्त्री - पुरूषबैठे हुए थे।'[8] चिकित्सा के नाम पर मरीजों को लूटने का काम डॉक्टर कर रहे हैं। बड़ी -बडी़ उपलब्धियां हासिल करने वाले डॉक्टर नवारूण गुप्ता और उसकी बहुत ही कम उम्र की नर्स जो चिकित्सालय का यथार्थ बयां करती है। कैंसर का सफल ऑपरेशन की चर्चा बड़े बड़े होडिंग तथा अखबारों में यशस्वी डॉ नवारूण गुप्ता का होता है, लेकिन कुछ ही दिनों बाद उस व्यक्ति की मौत हो? जाती है उसकी चर्चा कोई नहीं करता। 'मेरी व्यग्रता न बढ़े और पूछ लेंने में क्या हर्ज है, सोचकर उससे पूछा ङ्क'क्यों, तुमने रामभरोसे की मृत्यु का समाचार बनाया?'[9] पूंजी ने सभी को जकड़ लिया है स्वयं नैरेटर अखबार से जुड़े होने के बावजूद रामभरोसे की मौत की खबर अखबार में लगा कर डॉ. गुप्ता की असफलता को छाप नहीं पाता। इस कहानी के माध्यम से लेखक की बेचैनी को महसूस किया जा सकता है कि पूंजी के दबाव में सच को समाने लाना कितना मुश्किल है।

'ठंडी तेज रफ्तार' कहानी आज के समय मेंस्त्री और पुरुष के बीच चंद दिनों के लिए बने रिश्तों के मजबूतियों पर प्रश्न चिन्ह लगती है। आधुनिकता तथा पाश्चात्य संस्कृति भारतीय सभ्यता और समाज को सबसे ज्यादा प्रभावित किया है। इस कहानी में रीमा आज की नयी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करती है जो अपनी जिंदगी को अपने अंदाज में जीना चाहती है। वो पारिवारिक बंदिशों को बिल्कुल नहीं मानना चाहती। पहले के समय में किसी लड़की का अन्य किसी पुरुष से वार्तालाप बदनामी का कारण बन जाता था। रीमा की मां स्वयं अपनी बेटी के लिए विचार करती है, 'सुमित्रा खुश हुई थी यह देखकर कि रीमा को वे वर्जनाएं नहीं झेलनी पड़ रही हैं जो उन्होंने रीमा की उम्र में झेली थीं। उस समय पुरुष मित्र की कल्पना नहीं थी।'[10] बिल्कुल सच बात है आज से लगभग बीस वर्ष पिछे जाने पर पता चलता है कि विवाह से पूर्व पुरूष से संबंध होने का पता लगने से जिंदगी बदनामी से अभिशाप बन जाती थी। आज के खुलापन बंदिशों से मुक्त जीवन लोगों के अंदर से सभ्यता को ही खत्म कर दिया है। विवाह के पूर्व किसी स्त्री का गर्भवती होना भारतीय समाज में सबसे बड़ा अभिशाप माना गया है। लेकिन इक्कीसवीं शताब्दी में गर्भवती होना और गर्भपात करवाना सामान्य सी बात हो गई है। रीमा और अंकित असुरक्षित यौन संबंध बनाते हैं जिससे रीमा गर्भवती हो जाती है,रीमाअंकित को गैर जिम्मेदार ठहराते हुए उससे दूर होने का फैसला खुद ले लेती है। और अपनी मां से बहुत ही सहज और सामान्य समस्या के जैसे कहती है 'मैं बता देना चाहती हूं कि आई एमप्रेगनेंट एंड यूनीड नाटटूवरी अबाउटइट, आई विलफेसइटअलोन। मैंने डॉक्टर से समय ले लिया है। आज चार पांच घंटे में सब कुछ ठीक हो जाएगा।'[11] समय ने जब करवट बदली तो लोगों के अंदर से जज़्बात खत्म होने लगा है। लोग संतान प्राप्ति के लिए अनेक कामनाएं करते हैं। एक स्त्री मां नहीं बन पाने के दुख झेलती है, लेकिन रीमा अंकित को पुराने विचारों वाला समझ करसब खत्म कर देती हैं। इस कहानी को कहानीकार ने पंद्रह वर्ष पूर्व लिखा था। आज के

संदर्भ में देखें तो कहानी हमारे आस-पास ही घटित होती नजर आती है। राजेन्द्र दानी अकेलेपन की भयावहता को कई दृश्यों में उठाते हैं। कहानियों की अंतर्वस्तु व्यापक फलक पर चलती हुई हमारे समाज के उन व्यक्तियों की पीड़ा को रेखांकित करते हैं। जो एक समय के बाद उनकाघर में होना औपचारिकता ही रहता है। उनका होना घर वालों के लिए एक समस्या के जैसे लगता है। वह अपनो के बीच रहते हुए भी एकदम अकेला पड़ जाते हैं। यह अकेलापन इस लिए भयावह है कि लोग अब सम्पन्न होते जा रहे हैं। 'सम्पन्नता' राजेन्द्र दानी की कहानी है। जो नवधनाढ्य लोगों के परिवार का आंतरिक पड़ताल कर बुना गया है। राजेन्द्र दानी की अधिकतर कहानियों में सम्पन्नता मध्यवर्गीय समाज में अभिशाप बन कर उभरती है। ठीक उसी प्रकार जवाहरलाल अपने बच्चों के व्यवहार में परिवर्तन तथा रूपया का मूल्य न समझ कर खर्च करते जाना उसके लिए बहुत ही पीड़ादायक होता है।'जवाहरलाल जी इस बात को कभी नहीं समझ पाते कि खुशी और खरीददारी में कैसा रिश्ता है अबके दौर में?'[12] खुशियां बंटना तथा पाने के लिए रिश्तों की जरूरत अब नहीं है। बाजार ही हमारा खुशियों का साथी बनते जा रहा है। जवाहरलाल इस बदलाव को स्वीकार इस लिए नहीं करता क्योंकि वह अपने बच्चों पर बहुत ही भरोसा और प्रेम करते हैं। एक पिता अपने बच्चों को बनाने में पूरा जीवन लगा देता है,बाद में वही बच्चे उनके संघर्षों के दिनों को एक क्षण में खत्म कर देते हैं कि आज जो कुछ भी बना हूं अपने मेहनत पर बना हूं। राजेन्द्र दानी की दृष्टि जगमगाते दुनिया के कोने में पड़े पात्र पर पड़ती है जिसने अपनी पूरी जिंदगी लगा कर उस दुनिया को रौशन किया है। सभी ऊपर की चमक देखते हैं लेकिन उसके भीतर एक बेचैन दुनिया भी है वह कितना अकेला और असहाय है उसको राजेन्द्र दानी जी देखते हैं। 'राजेन्द्र दानी की कहानियांअकेलेपन, स्वार्थ, वासना और पूंजी के इस अबाध प्रवाह में बह गये मानवीय संबंधों की कहानियांहैं। उनके पात्र इस व्यवस्था में अकेले हैं, उनके दुख अलग-अलग हैं लेकिन दुखों की तीव्रता एक जैसी है।'[13]

निष्कर्षः-इक्कीसवीं सदी तथा उसके पिछले दशक से भारतीय अर्थव्यवस्था में जो परिवर्तन आया है उसने मध्यवर्गीय समाज और उनके जन जीवन को पूरी तरह तहस-नहस कर के रख दिया है। पहले के लोग सादगी से मर्यादित जीवन यापन करते थे। लेकिन अब पूंजी और आधुनिक सुविधाओं ने उनके जीवन में कई तरह की आकांक्षाएं उत्पन्न कर दी हैं, जिसके कारण व्यक्ति आंतरिक रूप से टूट गया तथा बाह्य रूप से एकदम अकेला पड़ गया है। राजेन्द्र दानी इसी अकेलेपन की भयावह स्थिति को व्यापक परिदृश्य में रेखांकित करते हैं। राजेन्द्र दानी की कहानियों में एक अलग तरह की पीड़ा छुपी हुई है। ये कहानीकार की पीड़ा नहीं है ये सामान्य जनता की पीड़ा है। जिसको हम घर परिवार के बीच रह रहे उन तमाम लोगों में देखते हैं, जो अपनों के बीच अपने आप को अकेला पाते हैं।

संदर्भ सूचीः-

1. दानी, राजेन्द्र, पारगमन, साहित्य भंडारः इलाहाबाद 2016. पृष्ठ 91
2. वही, पृष्ठ 91
3. वही, पृष्ठ 95
4. दानी, राजेन्द्र, भूलने का रास्ता,नयी किताब : दिल्ली 2015. पृष्ठ 15
5. वही, पृष्ठ 16
6. वही, पृष्ठ 18
7. वही, पृष्ठ 19
8. दानी, राजेन्द्र,नेपथ्य का अंधेरा, मेघाबुक्सः नवीन शाहदरा दिल्ली, संस्करण 2016.पृष्ठ 10
9. वहीं, पृष्ठ 26
10. दानी, राजेन्द्र, कछुए की तरह, साहित्य भंडारः चाहचंद प्रयागराज, प्रथम संस्करण 2019.पृष्ठ 66
11. वही, पृष्ठ 71
12. दानी, राजेन्द्र, पुराना घरपुरानी बस्ती, नयी किताब प्रकाशनः नवीन शाहदरा दिल्ली, प्रथम संस्करण 2019. पृष्ठ 13
13. शुक्ल स्मृति. कहानीकार के रोशनदानः अनुज्ञा बुक्स शाहदरा दिल्ली. प्रथम संस्करण 2023. 62

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

अनुवाद और उसकी विश्वव्यापी उपादेयता

डॉ. अनिल कुमार पाण्डेय

डी. ए – वी. पी. जी. कॉलेज, कानपुर, उत्तर प्रदेश

अनुवाद शब्द आज के परिवेश में अपने परिचय का मोहताज नहीं है, अपितु इसने समाज में भाषा और साहित्य के क्षेत्र में अपना चिर–परिचित अस्तित्व कायम कर लिया है। यह अनुवाद शब्द रचना की दृष्टि से दो शब्दों से मिलकर बना है– अनु+वाद। अनु उपसर्ग का आशय अनुमान करना होता है। इसी प्रकार वाद शब्द संस्कृत की 'वद्' धातु से निष्पन्न है जिसका आशय कहने या बोलने के बाद बोलना होता है।

'एक भाषा में व्यक्त विचारों को यथासम्भव समान और सहज अभिव्यक्ति द्वारा दूसरी भाषा में व्यक्त करने का प्रयास अनुवाद है।'

– डॉक्टर भोलानाथ तिवारी।'[1]

'स्रोत भाषा में प्रस्तुत रचना और लक्ष्य भाषा में प्रस्तावित रचना के मध्य निकटतम सहज समतुल्यता की स्थापना ही अनुवाद है।'

–डॉक्टर राम प्रकाश

अनुवाद प्रक्रिया का प्रचलन अति प्राचीन काल से है। वैदिक युग में शिक्षा व्यवस्था वर्तमान परिवेश जैसी नहीं थी। उस समय शिष्य गुरू के गुरुकुल में अन्तेवासी शिष्य के रूप में शिक्षा प्राप्त करते थे। अध्ययन की प्रक्रिया अनुवादाश्रित थी क्योंकि गुरु या आचार्य वृन्द कुछ मंत्रों का उच्चारण शिष्यों के समक्ष करते थे और शिष्यगण उन कथनों एवं मंत्रों को पीछे–पीछे दोहराते थे। इसी प्रक्रिया को अनुवचन या अनुवाद कहा जाता था। संस्कृत साहित्य में व्याकरण के आदि स्रोत एवं विश्व पटल पर अपनी अमिट छाप छोड़ने वाले व्याकरणाचार्य पाणिनि ने भी अपने कालजयी ग्रंथ 'अष्टाध्यायी' में अनुवाद शब्द का प्रयोग किया है–'अनुवादे चरणानाम्' अर्थात् किसी बात को कहने के संदर्भ में माना है।

वर्तमान परिवेश में अनुवाद शब्द को हम जिस अर्थ में ग्रहण करते हैं वह संस्कृत भाषा में प्रयुक्त हो रहे अनुवाद शब्द के अर्थ में कुछ पृथक भाव रखता है। आज विज्ञान एवं तकनीकी के इस मशीनी युग में अनुवाद शब्द आंग्ल भाषा के Translation शब्द के पर्याय रूप में ग्रहण किया जाता है। आंग्ल भाषा का यह Translation शब्द लैटिन भाषा के शब्दों 'Trans' तथा 'Lation' से बना है जिसका अर्थ होता है पार ले जाना। अतः अनुवाद की प्रक्रिया में हम एक भाषा के भाव–विचार किसी दूसरी भाषा में ले जाते हैं। आज अनुवाद का यही अर्थ सर्वग्राही और विश्वव्यापी बन गया है। 'किसी भाषा में अभिव्यक्ति विचारों को दूसरी भाषा में यथावत प्रस्तुत करना अनुवाद है इस विशेष अर्थ में ही अनुवाद का अभिप्राय सुनिश्चित है। जिस भाषा से अनुवाद किया जाता है वह मूल भाषा या स्रोत भाषा है। उससे जिस भाषा में अनुवाद करना है वह प्रस्तुत भाषा या लक्ष्य भाषा है। इस तरह स्रोत भाषा में प्रस्तुत भाव या विचार को बिना किसी परिवर्तन के लक्ष्य भाषा में प्रस्तुत करना ही अनुवाद है।'[2] अनुवाद की प्रक्रिया को पाँच चरणों से होकर गुजरना होता है प्रथम रूप में पठन–पाठन जिसके अंतर्गत हम सामग्री का भाषिक अर्थ की दृष्टि से तथा विषयगत अर्थ की दृष्टि से समझने हेतु पठन–पाठन करते हैं और दूसरे चरण में पाठ विश्लेषण, तीसरे में भाषांतरण व चौथे में समायोजन तथा पांचवें चरण में मूल से तुलना की जाती है। व्यापक संदर्भ में देखने पर अनुवाद का स्वरूप तीनों रूपों में प्राप्त होता है–

1. अन्तः भाषिक अनुवाद
2. अन्तर भाषिक अनुवाद
3. अन्तर प्रतीकात्मक अनुवाद

आज के प्रेरक प्रसंग में देखने पर प्रतीत होगा कि सम्पूर्ण विश्व में अनुवाद की आवश्यकता का अनुभव किसी न किसी रूप में अवश्य किया जाता है। विभिन्न भाषा–भाषी समुदायों के बीच संप्रेषण प्रक्रिया का महत्वपूर्ण घटक बनकर अनुवाद हमारे सामने आता है। आज संसार की किसी भी रूप में कोई नई खोज होती है, कोई नया विचार सामने आता है तो हर व्यक्ति यही चाहता है कि उसकी सूचना अति शीघ्र उसे प्राप्त हो जाए। यही नहीं वर्तमान शताब्दी में आते–आते अनुवाद सम्पूर्ण विश्व पटल पर अनिवार्यता बनकर उभरा है एशिया से लेकर यूरोप, अमेरिका, अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया आदि महाद्वीपों एवं राष्ट्रों में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, और सांस्कृतिक क्षेत्रों में नित्य नूतन परिवर्तन और उतार–चढ़ाव आते हैं और विश्व के कोने–कोने में उनका परचम लहराना अनुवाद का कार्य है। आज किसी आवश्यक बिंदु पर जब संयुक्त राष्ट्रसंघ में कोई वक्तव्य पढ़ा जाता है तो दुनिया भर के देशों में जो भाषाई रूप में अपना पृथक अस्तित्व रखते हैं, में उसकी जानकारी का आधार अनुवाद ही है। अतः आज की वैश्विक मंच पर अनुवाद की कितनी महत्ता और आवश्यकता है, तथा किस प्रकार विश्व भर के राष्ट्र भाषाई पृथकता रखने के बावजूद भी एक–दूसरे के कितने निकट हैं, इस अनुवाद प्रक्रिया के द्वारा हम स्वयं अनुभव कर सकते हैं।

अनुवाद की प्रक्रिया विश्वव्यापी महत्ता को हम प्रथम दृष्टया या राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में अवलोकन कर सकते हैं भारत जैसे देश में जिसकी प्रमुख विशेषता की विविधता में एकता हो, जहाँ भाषाओं और बोलियों के रूप 'कोस– कोस पर बदले पानी, चार कोस पर वाणी', लोकोक्ति को चरितार्थ कर रहे हों तथा कश्मीर से कन्याकुमारी तक जिस देश की पहचान विविध तत्वों और भाषा–भाषी लोगों के बीच बिखरी हुई हो, वहाँ राष्ट्रीय एकता कायम रखने तथा सभी के मध्य संपर्क व संप्रेषण में अनुवाद ने सेतु की भूमिका निभाई है। यह अनुवाद का भगीरथ प्रयास है कि उसने अपने प्रयत्नों से प्रमाणित किया कि मध्यकालीन विजातीय युग में जब हतोत्साहित जनता,

अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए त्राहि-त्राहि कर रही थी और जीवन को गति देने के लिए आलम्बन तलाश रही थी उस समय पूज्यपाद गोस्वामी तुलसीदास जन-मानस में आशा और ऊर्जा का संचार करने के लिए हिंदी में रामचरितमानस लिख रहे रहे थे तो यही पुनीत कार्य कृत्तिवास ने बंगला में कृत्तिवास रामायण, बलराम ने उड़िया रामायण, शंकर देव ने असमिया रामायण, एकनाथ ने मराठी रामायण, तमिल में कम्बन रामायण तथा भानु दत्त ने नेपाली भाषा में किया। यह अनुवाद ही है जिसने हिंदी उपन्यास सम्राट प्रेमचंद और बंगला भाषा के सितारे शरतचंद्र के उपन्यासों में सामाजिक संवेदना की झलक एक समान दिखाई देती है तथा हिंदी के व्यंग्यकार शरद जोशी और गुजराती के विनोद भट्ट की रचनाओं में विसंगतियों का समान व्यंग शैली में निर्देशन किया है।

आज के इस वैश्वीकरण के दौर में अंतरराष्ट्रीय छवि काफी महत्वपूर्ण हिस्सा बनती जा रही है। विश्व साहित्य के अध्ययन व अध्यापन की आधारशिला अनुवाद ही है। विश्व के समस्त देश जिस आधुनिकीकरण की अवधारणा से प्रभावित हैं, वह अनुवाद की देन है। भारत के साथ-साथ विश्व के देशों में जाति, परिवार, वंश, नातेदारी, ईश्वर, धर्म, स्त्री-शिक्षा, मानवीय मूल्य, कृषि, व्यापार एवं मानवीय जीवन में अनेक परिवर्तन हुए हैं। वस्त्र, फर्नीचर, मकान की डिजाइन, केश विन्यास, पूजन विधि, अभिवादन आदि कार्यों में आधुनिकता आई है।'[3]

अनुवाद के द्वारा हम विश्व साहित्य को कोने-कोने तक प्रत्येक देश की भाषा में पहुँचा सके हैं। शेक्सपियर के नाटक 'मर्चेंट ऑफ वेनिस' का भारतेंदु द्वारा 'दुर्लभ बंधु' नाम से तथा गोल्डस्मिथ के ग्रंथ 'हरमिट' का श्रीधर पाठक द्वारा 'एकान्तवासी योगी' नाम से हिंदी भाषा में किया गया। आज अनुवाद का ही श्रेय है प्रख्यात कहानीकार टॉलस्टॉय के उपन्यासों को, शेक्सपियर के चमत्कारी नाटकों को, सार्त्र के और बैकन के विचारों को ए. जी. गार्डिनर के प्रेरणाप्रद निबंधों को जान पाए हैं। तथा अनुवाद प्रक्रिया ने ही प्लेटों के विचारों को, अरस्तु के विरेचन सिद्धांतों को, लोंजाइनस की उदात्तता को, वर्ड्सवर्थ की काव्यभाषा को, कॉलरिज की ललित कल्पना को तथा टी. एस. इलियट के विचारों को जन-जन से परिचित कराया है। जर्मनी में विराजमान कवि गेटे ने कालिदास प्रणीत नाटक 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' को अनुवाद रूप में पढ़ कर अपनी आँखों से अनमोल मोती टपकाने में पीछे नहीं रहे हैं। 'हिंदी साहित्य में भी फ्रेंच विद्वान गार्सा द ताँसी द्वारा रचित फ्रेंच भाषा में इतिहास ग्रंथ 'इस्त्वार द ला लितरेत्युर ऐन्दुई ऐन्दुस्तानी' जिसका हिंदी अनुवाद 1952 ई. में डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय द्वारा 'हिंदी साहित्य का इतिहास' नाम से किया गया तथा अंग्रेज विद्वान जॉर्ज ग्रियर्सन द्वारा रचित 'द मॉडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर ऑफ हिंदुस्तान' का अनुवाद किशोरीलाल गुप्त द्वारा 1957 ई. में 'हिंदी साहित्य का प्रथम इतिहास' नाम से किया गया।[4] शिक्षा के क्षेत्र में अनुवाद अपरिहार्य हैं। आज के वैज्ञानिक युग में प्रतिदिन नए-नए अविष्कार शिक्षा जगत में हो रहे हैं तथा देश काल के अनुसार नवाचार अपनाया जा रहा है, तो देश- देशांतर ज्ञान-विज्ञान से परिचय प्राप्त करने के लिए तथा अपने देश के युवाओं को सही दिशा प्रदान करने के लिए एवं विश्व में अपनी पहचान बनाने के लिए प्रत्येक राष्ट्र सतत् प्रयासशील हैं। क्योंकि शिक्षा विकास की धुरी है-'शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो मनुष्य की जन्मजात शक्तियों के स्वाभाविक और सामंजस्य पूर्ण विकास में योग देती है। व्यक्ति की वैयक्तिकता का पूर्ण विकास करती है। उसे वातावरण सामंजस्य स्थापित करने में सहायता देती है। उसे जीवन और नागरिकता की कर्तव्यों, दायित्वों के लिए तैयार करती है और उसके व्यवहार, विचार और दृष्टिकोण में ऐसा परिवर्तन करती है जो समाज देश और विश्व के लिए हितकर होता है।'[5] इस दृष्टिकोण से अनुवाद का महत्व शिक्षा जगत में और व्यापक हो जाता है। और खासकर उन देशों के लिए जहाँ शिक्षा का माध्यम एक से अधिक भाषाएं हों। भारत जैसे बहुभाषी देश के लिए जहाँ संविधान की अष्टम अनुसूची में 22 भाषाएं शामिल हैं तथा हिंदी के अलावा माध्यमिक से लेकर उच्चतर तक अंग्रेजी, बंगला, असमिया, उड़िया कन्नड़, गुजराती , तमिल, तेलुगू , पंजाबी, मराठी ,सिन्धी, बोडो, डोंगरी , मैथिली, संथाली, नेपाली, उर्दू और संस्कृत भाषा में शिक्षा दी जाती है। इसके अतिरिक्त केंद्रीय विद्यालयों में रसियन, स्पेनिश, फ्रेंच एवं जर्मन भाषाओं को भी प्रमुखता दी गई है अतः बहुभाषी समाज में शिक्षा व्यवस्था की उत्कृष्टता बनाए रखने के लिए अनुवाद ही मील का पत्थर है, आधार स्तंभ है क्योंकि इसके माध्यम से पाठ्य-सामग्री की दिशा व दशा समानांतर रखी जा सकती है एवं आवश्यकता अनुरूप अतिशीघ्र निर्माण भी किया जा सकता है।

व्यवसाय की दृष्टि से आज प्रत्येक राष्ट्र विश्व की मण्डी के रूप में उभर रहा है। चीन, जापान, स्पेन, फ्रांस, इटली,पेरिस, इग्लैंड, अमेरिका आदि देशों ने एक-दूसरे के परिक्षेत्र में अपनी औद्योगिक कम्पनियां एवं बाजार स्थापित किए हैं। अभी कोरोना काल में संचार माध्यमों के द्वारा बताया गया कि चीन में जापान की 300 से ज्यादा कंपनियाँ कार्यरत थी जो वापस चली गईं। यही नहीं भारत में भी चीन, जापान जैसे देशों से निर्मित वस्तुएं उपलब्ध हैं जिसके व्यापार हेतु विज्ञापन की भाषा हिंदी की सख्त जरूरत होती है अतः रोजगार के क्षेत्र में अनुवाद का महत्व व्यापक और अपरिहार्य है। व्यापार में जहाँ यह अंतर भाषाई क्षेत्र में व्यापार की दृष्टि से अपेक्षित है वही उद्योग-धंधों के क्षेत्र में तकनीकी और औद्योगिक जानकारी को प्राप्त करने और उसके उपयोग की दृष्टि से अपेक्षित होता है। जैसे भारत में सूती वस्त्र उद्योग से संबंधित कोई नई खोज की जाती है और विश्व का दूसरा देश उस खोज का लाभ लेना चाहता है तो उसे उसी देश की भाषा में उपलब्ध कराना होगा अर्थात यदि सूती वस्त्र उद्योग की नई जानकारी स्पेन को चाहिए तो स्पेनिश में, अमेरिका को अंग्रेजी में और चीन को चीनी भाषा में उपलब्ध होने पर ही इसका प्रतिफल प्राप्त हो सकेगा।

आज पर्यटन भी एक उद्योग के रूप में परिणत हो गया है। और यह उद्योग केवल राष्ट्रीय ही नहीं अपितु वैश्विक स्तर पर भी फल- फूल रहा है। अतः इस क्षेत्र में अनुवाद का क्षेत्र व्यापक हो जाता है और महत्त्व अनिवार्य। क्योंकि यात्रा, आवास, मनोरंजन, मार्गदर्शन तथा पर्यटन स्थलों की सम्यक जानकारी, उनका प्रचार-प्रसार करने हेतु अनुवाद की महती आवश्यकता है। देश-विदेश से आने वाले दर्शकों उनके आने-जाने के लिए यातायात सुविधाओं के सफल संचालन, उनके निवास स्थान होटलों एवं भोजनालयों तथा यात्री के साथ उनका मार्गदर्शन करने के लिए जाने वाले गाइडों को कई भाषाओं की जानकारी रखनी होती है। अतः इस उद्योग की सफलता का आधारशिला अनुवाद ही है।

वर्तमान युग संचार और तकनीक का युग कहा जाता है। तकनीकी अविष्कारों ने वर्तमान शताब्दी के द्वार पर दस्तक देकर वैश्विक मंच पर जनसंचार माध्यमों का विलक्षण जादुई लोक प्रतिष्ठापित कर दिया है जो एक चमत्कार है। जीवन की गति को प्रमाणित करने वाले संसार के कोने-कोने में बैठे लोगों में हम सब एक हैं, का बोध कराने वाले तथा विश्व पटल पर सामान्य जन की पहचान बताने वाले जीवंत और कारगर साधन के रूप संचार ने अपनी भूमिका प्रस्तुत की है। विज्ञान, वाणिज्य, उद्योग, शिक्षा-संस्कृति, प्रशासन एवं अर्थ जगत में सर्वत्र संचार ही सक्रिय भूमिका निभा रहा है।

संचार माध्यमों में दो प्रकार के माध्यम आते हैं – पहला प्रिंट मीडिया दूसरा इलेक्ट्रॉनिक मीडिया। दोनों माध्यमों की कार्यप्रणाली की सफलता और लोकप्रियता अनुवाद पर ही टिकती है। अतः संचार क्षेत्र में अनुवाद उसका आवश्यक अंग बन गया है। समाचार एजेंसियां अनेक भाषाओं में समाचार प्रस्तुत करती हैं और समाचार-पत्र, पत्रिकाएँ,रेडियो और टेलीविजन ने अपनी आवश्यकतानुसार भाषान्तरित करते हैं। यही नहीं लिखित अनुवाद के अलावा बहुत से कार्यक्रमों में रूपांतर आशु अनुवाद भी चलता है। जैसे अभी किसी देश में राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री के चुनाव के उपरांत परिणाम के अवसर पर दूरदर्शन द्वारा चुनाव विश्लेषण कार्यक्रम प्रस्तुत किया जाता है जिसमें विदेशी मेहमान भी प्रतिभाग करते हैं तो उन विदेशी निर्माणों के स्वागत कार्यक्रम को प्रस्तुत करते समय रूपांतरण आशु अनुवाद ही चलता है। यही नहीं माननीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का पसंदीदा कार्यक्रम 'मन की बात' जो रविवार को प्रातः 11:00 प्रस्तुत होता है। कार्यक्रम के पश्चात उसे सर्वव्यापी और जन-जन ग्राही बनाने के लिए क्षेत्रीय भाषाओं एवं विदेशी भाषाओं में अनुवाद करके प्रस्तुत किया जाता है। आज तक, न्यूज़ नेशन, डी.डी. न्यूज़, 24 घंटा, ए.बी.पी. न्यूज, इण्डिया न्यूज आदि चैनलों द्वारा प्रसारित समाचार कार्यक्रमों और विशिष्ट संबोधनों को दिखाते समय भी क्षेत्रीय भाषाओं का ध्यान रखा जाता है। जैसे अमेरिका राष्ट्रपति ट्रंप के वक्तव्य पट्टिका के रूप में अंग्रेजी के साथ-साथ हिंदी में भी प्रसारित किए जाते हैं।'[6]

हाँ इतना जरूर है कि संचार माध्यम पर होने वाले अनुवाद की इतनी विशेषता है कि इनमें स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा की भूमिका बदलती रहती है। देश-काल वातावरण के अनुरूप कभी अंग्रेजी स्रोत भाषा होती है तो कभी लक्ष्य भाषा और कभी यह अनुवाद एक से अधिक भाषाओं में साथ-साथ प्रस्तुत किया जाता है। और जब इसे भारत के संदर्भ में देखते हैं तो अनुवाद का महत्व और भी बढ़ जाता है क्योंकि यह बहुभाषी देश है और इस देश में सरकारी नीतियों, कल्याणकारी योजनाओं तथा आवश्यक सूचनाओं को जन-जन तक पहुँचाने के लिए संचार माध्यमों को प्रादेशिक भाषाओं में अनुवाद करना ही पड़ता है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि अनुवाद मात्र एक साहित्यक कार्य नहीं है बल्कि इसकी पहचान जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में तथा हर देशकाल, वातावरण में सक्रिय साधन के रूप में उभरी है। शासन-प्रशासन,मानव कल्याण व चिकित्सा, कला एवं संस्कृति, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, रक्षा-प्रतिरक्षा, अनुसंधान, व्यापार, पत्रकारिता एवं जनसंचार के क्षेत्र में इसने अपनी विशिष्ट पहचान बना ली है। आज विश्व जब समानता और विश्व बंधुत्व का जयघोष करता है तो उसके पीछे अनुवाद का ही सफल योगदान है जहाँ भारतीय ऋषियों ने अपने ज्ञान-विज्ञान से विश्व को प्रभावित किया, वहीं दूसरे देशों के साहित्य कला एवं विज्ञान ने हमें प्रभावित किया। इस प्रकार अनुवाद का क्षेत्र विस्तृत ही नहीं व्यापक भी है।

वर्तमान परिदृश्य में इसकी उपयोगिता को दृष्टिगत रखते हुए हम सबको इसके विकास और शुचिता की ओर अग्रसर होना होगा। जैसे विज्ञान की भाषा में जीवों का क्रमिक विकास जैव विकास है उसी तरह साहित्यिक भाषा में मानव सभ्यता और संस्कृति का क्रमिक विकास अनुवाद की देन है। विश्व के सभी धर्मों, संप्रदायों, भाषाओं, साहित्यों एवं महापुरुषों के वक्तव्यों तथा वैज्ञानिक उपलब्धियों को एक दूसरे से सुपरिचित कराने का श्रेय अनुवाद को है। अतः हम सबको मिलकर इस समय संकल्प बद्ध तरीके से कदम बढ़ाना होगा, अनुवाद प्रक्रिया की गति निर्बाध गति से चले तथा इसी प्रकार सकल विश्व को कल्याण मार्ग से जोड़ती रहे क्योंकि जब तक मानव का अस्तित्व इस धरा पर है तब तक प्रत्येक क्षेत्र में नवीन खोजें जारी रहेगी और इतिहास में नए उतार-चढ़ाव आते रहेंगे। प्रत्येक राष्ट्र को अपनी छवि सुदृढ़ करने के लिए दूसरे देश का मार्गदर्शन लेना जारी है और अनुवाद इस कार्य को सफलतापूर्वक निर्वाह करता रहेगा।

संदर्भ सूचीः-

1. डॉ भोलानाथ तिवारी – 'हिंदी भाषा', किताब महल एजेंसीज इलाहाबाद, संस्करण 2009 ,पृष्ठ संख्या 306
2. धीरेंद्र वर्मा – 'हिंदी भाषा का इतिहास' हिंदुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद, संस्करण 2002, पृष्ठ संख्या 189
3. डॉक्टर बाल्मीकि त्रिपाठी – 'प्रयोजनमूलक हिंदी', ग्रंथम प्रकाशन कानपुर, संस्करण 2006, पृष्ठ संख्या 364
4. गोविन्द पाण्डेय व सरस्वती पाण्डेय –'हिंदी साहित्य एवं भाषा का वस्तुनिष्ठ इतिहास', अभिव्यक्ति प्रकाशन इलाहाबाद, पृष्ठ संख्या 67,68,180
5. प्रोफेसर एम. एल. गुप्ता, एवं डॉक्टर डी. डी. शर्मा–'भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र', साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा, पृष्ठ संख्या 210
6. ममता कोठारी, –'शिक्षा और समाज', अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा, पृष्ठ संख्या 02

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

गढ़वा जिले में शुष्क कृषि की संभावनाएँ और चुनौतियाँ - एक भौगोलिक अध्ययन

शिवपूजन प्रजापति
डॉ. उमेश चन्द्र नाथ तिवारी

1. शोधार्थी, भूगोल विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची
2. शोध निर्देशक व असिस्टेंट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची

सारांश :- यह अध्ययन गढ़वा जिले में शुष्क कृषि की संभावनाओं और चुनौतियों की जांच करता है। जिसका अक्षांशीय विस्तार 23° 33′ 53′′ N से 24° 32′ 7′′ N एवं देशांतरीय विस्तार 83°19′ 56′′ E से 84°4′17′′ E तथा कुल क्षेत्रफल 4044 वर्ग किमी है। जो एक कृषि प्रधान क्षेत्र है जहां सिंचाई की सीमित पहुंच और वर्षा आधारित कृषि पर निर्भरता है। शुष्क खेती, सिंचाई के बिना फसल उगाने की प्रथा, किसानों की आजीविका का केंद्र है। मिश्रित शोध पद्धति के अंतर्गत प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों का उपयोग करते हुए यह शोध गढ़वा जिले में शुष्क खेती को प्रभावित करने वाले ऐतिहासिक संदर्भ, कृषि जलवायु स्थितियों, कृषि प्रथाओं का विश्लेषण करता है। यह टिकाऊ शुष्क कृषि प्रणालियों की संभावनाओं और जलवायु परिवर्तनशीलता, मिट्टी की बाधाओं और बदलती कृषि गतिशीलता से उत्पन्न चुनौतियों का पता लगाता है। अध्ययन नवीन तकनीकों, सूखा प्रतिरोधी फसल किस्मों और समुदाय-आधारित पहलों की पहचान करता है जो किसानों के सामने आने वाली सामाजिक-आर्थिक चुनौतियों का समाधान करते हुए शुष्क खेती की व्यवहार्यता को बढ़ाते हैं। यह गढ़वा जिले में शुष्क कृषि समुदायों को समर्थन देने के लिए नीतिगत हस्तक्षेप और क्षमता निर्माण कार्यक्रमों के महत्व को भी रेखांकित करता है। इस क्षेत्र में शुष्क खेती के बहुमुखी पहलुओं पर प्रकाश डालते हुए, इस शोध का उद्देश्य नीति निर्माताओं, कृषि चिकित्सकों और विकास एजेंसियों को सूचित करना है, जो जलवायु परिवर्तन और संसाधन बाधाओं के सामने लचीलापन और खाद्य सुरक्षा को बढ़ावा देने के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं।

मुख्य शब्द :- शुष्क कृषि, अर्ध-शुष्क क्षेत्र, मिट्टी की बाधाएँ, जलवायु परिवर्तन एवं नीतिगत हस्तक्षेप।

परिचय :- शुष्क खेती से तात्पर्य किसी भी प्रकार की सिंचाई के बिना केवल प्राकृतिक वर्षा पर निर्भर फसलों की खेती से है।[1] यह उन क्षेत्रों में की जाने वाली खेती की एक विधि है जहां मिट्टी की नमी सीमित है, जो चावल और गन्ने जैसी जल-गहन फसलों के विकास को रोकती है। शुष्क भूमि वाले क्षेत्रों में सिंचाई सुविधाओं तक सीमित पहुंच के साथ कम और अनियमित वर्षा होती है। शुष्क भूमि कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह कुल खाद्य उत्पादन में लगभग 44 प्रतिशत योगदान देती है।[2] और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। छोटे पैमाने के किसानों का एक बड़ा हिस्सा अपनी आजीविका के लिए शुष्क भूमि क्षेत्रों पर निर्भर करता है। भारत की चौथी पंचवर्षीय योजना के अनुसार, शुष्क भूमि क्षेत्रों को 375 मिमी से 1125 मिमी के बीच वार्षिक वर्षा प्राप्त करने वाले क्षेत्रों के रूप में परिभाषित किया गया है।[3], जहां सिंचाई सुविधाएं गंभीर रूप से सीमित हैं। ये क्षेत्र आर्थिक रूप से नाजुक हैं और पर्यावरणीय तनाव और झटकों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील हैं। कम मिट्टी की नमी धारण क्षमता, आवश्यक पोषक तत्वों की कमी और भूजल स्तर में गिरावट, शुष्क भूमि कृषि में फसल की पैदावार में कमी और मिट्टी के क्षरण में योगदान करती है।[4] दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए, शुष्क भूमि खेती में सामाजिक-आर्थिक संसाधनों, एकीकृत जल शेड विकास, बेहतर वर्षा जल संचयन तकनीकों, पशुधन खेती, वैकल्पिक भूमि उपयोग और विविध कृषि जैसे विभिन्न घटकों पर सावधानीपूर्वक विचार किया जाना चाहिए और प्राथमिकता दी जानी चाहिए।शुष्क खेती सीमित मिट्टी में कुशल नमी प्रबंधन, फसलों के लिए उपलब्ध नमी के उपयोग को अनुकूलित करने और उपयुक्त फसल किस्मों और खेती तकनीकों को नियोजित करने पर बहुत अधिक निर्भर करती है।[5] सामान्य प्रथाओं में नमी को संरक्षित करने के लिए कटाई के बाद तुरंत मिट्टी की जुताई करना शामिल है, हालांकि कुछ अक्षांशों में, बर्फ को फंसाने के लिए कटाई के बाद खेतों को परती छोड़ दिया जाता है। फसल की खेती के दौरान, प्राथमिक ध्यान खरपतवारों को नियंत्रित करने और पानी के बहाव को रोकने पर होता है, जिसमें नमी की हानि को कम करने पर जोर दिया जाता है। आदर्श रूप से, ऊपरी मिट्टी खरपतवारों से मुक्त रहती है, और अपवाह और कटाव को रोकने के लिए पर्याप्त नाली या कार्बनिक पदार्थ मौजूद होते हैं। शुष्क खेती के लिए उपयुक्त फसलें आमतौर पर या तो सूखा प्रतिरोधी होती हैं या सूखा-सहिष्णु होती हैं। सूखा-प्रतिरोधी फसलें, जैसे ज्वार, सीमित नमी उपलब्धता की अवधि के दौरान वाष्पोत्सर्जन (नमी रिलीज) को कम करने में सक्षम हैं, अक्सर स्थिति अधिक अनुकूल होने तक विकास को रोक देती हैं। दूसरी ओर, सूखा-सहिष्णु फसलें आम तौर पर तेजी से और छोटे आकार में परिपक्व होती हैं, जिससे उन्हें शुष्क परिस्थितियों में पनपने की अनुमति मिलती है। इन फसलों को आमतौर पर अधिक जगह आवंटित की जाती है, खासकर आर्द्र परिस्थितियों में।

यह अच्छी तरह से स्थापित है कि भारत कृषि भूमि क्षेत्र और अपने कृषि उत्पादन के समग्र मूल्य दोनों के मामले में विश्व स्तर पर शीर्ष स्थान रखता है।[6] दुनिया की गरीब आबादी का एक बड़ा हिस्सा, लगभग 70 प्रतिशत, भारत के ग्रामीण इलाकों में रहता है और अपनी आजीविका के लिए वर्षा आधारित कृषि पर निर्भर है।[7] भारत में वर्षा आधारित क्षेत्र लगभग 31.7 मिलियन हेक्टेयर के विशाल क्षेत्र को कवर करते हैं, जिसमें से 41.5 प्रतिशत भूमि खेती के लिए उपयुक्त है, जबकि 19 प्रतिशत भूमि को बंजर भूमि के

रूप में वर्गीकृत किया गया है।'[8] ये वर्षा आधारित क्षेत्र मुख्य रूप से देश के उत्तरी-पश्चिमी और दक्षिणी भागों में केंद्रित हैं। विशेष रूप से, भारत के कई क्षेत्र, जिनमें पश्चिमी राजस्थान (19.62 मिलियन हेक्टेयर), उत्तर-पश्चिमी गुजरात (6.2 मिलियन हेक्टेयर), दक्षिण-पश्चिमी पंजाब (1.45 मिलियन हेक्टेयर), दक्षिण-पश्चिमी हरियाणा (1.28 मिलियन हेक्टेयर), आंध्र प्रदेश (2.16 मिलियन हेक्टेयर), शामिल हैं। कर्नाटक (0.86 मिलियन हेक्टेयर), और महाराष्ट्र (0.13 मिलियन हेक्टेयर), कठोर कृषि-जलवायु और नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र की चुनौतियों का सामना करते हैं।'[9] इन क्षेत्रों में शुष्क भूमि क्षेत्रों में वार्षिक वर्षा 100 से 500 मिमी तक होती है, जिसमें वर्षा में भिन्नता का गुणांक 40 प्रतिशत से 70 प्रतिशत तक होता है, जिसके परिणामस्वरूप अप्रत्याशित और कम वर्षा का स्तर होता है। यह अत्यधिक तापमान, कम सापेक्ष आर्द्रता और उच्च संभावित वाष्पीकरण मूल्यों से जुड़ा है, जो क्षेत्र के पूर्वी और पश्चिमी हिस्सों के बीच क्रमशः 1600 मिमी और 1800 मिमी के मूल्यों के साथ भिन्न है।'[10] वैज्ञानिक रूप से परिभाषित शुष्क भूमि कृषि को उनके वार्षिक वर्षा स्तर के आधार पर तीन समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है।'[11]

i. **सूखी खेती**: सूखी खेती में 750 मिमी से कम वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में फसलें उगाना शामिल है, जहां लंबे समय तक शुष्क अवधि के कारण फसल की विफलता आम है। इन शुष्क क्षेत्रों में कृषि को बनाए रखने के लिए नमी संरक्षण तकनीकों को नियोजित किया जाता है, और वैकल्पिक भूमि उपयोग प्रणालियों की सिफारिश की जाती है।

ii. **शुष्क भूमि खेती**: शुष्क भूमि खेती 750 मिमी और 1150 मिमी के बीच वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में फसल की खेती से संबंधित है। हालाँकि सूखे के दौर आ सकते हैं, फसल की विफलता कम होती है। इन क्षेत्रों में प्राथमिक चुनौती कुल वर्षा की तुलना में उच्च वाष्पीकरण-उत्सर्जन है। सफल शुष्क भूमि खेती के लिए मिट्टी और नमी संरक्षण उपायों को लागू करना महत्वपूर्ण है, खासकर अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में। जल निकासी सुविधाएं भी आवश्यक हो सकती हैं, विशेषकर काली मिट्टी वाले क्षेत्रों में।

iii. **वर्षा आधारित खेती**: वर्षा आधारित खेती में 1150 मिमी से अधिक वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में फसलें उगाना शामिल है। इन क्षेत्रों में सूखे के कारण फसल बर्बाद होने का जोखिम न्यूनतम है। आमतौर पर पर्याप्त वर्षा उपलब्ध होती है, और मुख्य चुनौती अक्सर अतिरिक्त नमी और जल निकासी का प्रबंधन करना होता है। वर्षा आधारित खेती आमतौर पर अधिक आर्द्र क्षेत्रों में की जाती है।

अध्ययन के उद्देश्य:-गढ़वा जिले में शुष्क कृषि की समस्याएँ कुछ महत्वपूर्ण उद्देश्यों पर केंद्रित है जो निम्नलिखित हैं:

1. प्रस्तुत शोध गढ़वा जिले के क्षेत्र में कृषि परिदृश्य की विवेचना का प्रयास करेगा।
2. यह शोध गढ़वा जिले के अर्ध-शुष्क कृषि की समस्याएँ समस्याओं का चिंतन करने तथा रेखांकित करेगा।
3. यह शोध अर्ध-शुष्क कृषि की समस्याओं का अवलोकन करेगा तथा जलवायु परिवर्तन एवं नीतिगत हस्तक्षेप की विवेचना करेगा।

डेटा स्रोत:-निम्नलिखित शोध पत्र द्वितीयक और तृतीयक डेटा स्रोतों पर आधारित है। द्वितीयक डेटा स्रोतों में भारत के सर्वेक्षण से स्थलाकृतिक शीट, भारतीय मौसम विज्ञान विभाग से वर्षा डेटा, शोध पत्र, किताबें, केंद्रीय भूजल बोर्ड की रिपोर्ट शामिल हैं।

अध्ययन क्षेत्र:-गढ़वा जिला भारतीय राज्य झारखंड के चौबीस प्रशासनिक प्रभागों में से एक है, जो पलामू डिवीजन के भीतर स्थित है। इसका प्रशासनिक केंद्र गढ़वा शहर में स्थित है। भौगोलिक दृष्टि से, जिला 23° 33′ 53′′ N से 24° 32′ 7′′ N उत्तरी अक्षांश और 83°19′ 56′′ E से 84°4′ 17′′ E पूर्वी देशांतर तक है तथा कुल क्षेत्रफल 4044 वर्ग किमी है। इसकी सीमाएं उत्तर में सोन नदी, पूर्व में झारखंड के पलामू जिले, दक्षिण में छत्तीसगढ़ के बलरामपुर जिले और पश्चिम में उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जिले से लगती हैं।

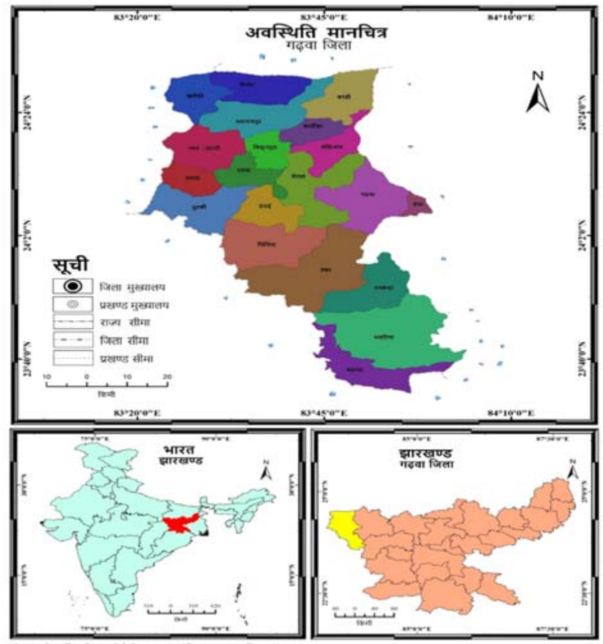

मानचित्र 1, अध्ययन क्षेत्र- गढ़वा जिला

अर्ध-शुष्क क्षेत्र में कृषि परिदृश्य: गढ़वा जिला:-गढ़वा जिला मुख्य रूप से एक अर्ध-शुष्क कृषि क्षेत्र जहाँ औसत से काम वर्षा तथा मिटटी पहाड़ी संरचना की है, जहाँ अधिकांश निवासी कृषि संबंधित गतिविधियों में शामिल हैं।'[12] जिले के अधिकांश हिस्सों में परिदृश्य घने जंगलों और चट्टानी इलाके की विशेषता है। दक्षिणी भाग में, जंगलों का महत्वपूर्ण विस्तार है, और आदिवासी समुदाय अपनी आजीविका के लिए वन उत्पादों पर निर्भर हैं। इसके विपरीत, उत्तरी क्षेत्र में वन क्षेत्रों को कृषि भूमि में परिवर्तित होते देखा गया है। यहां, किसान चावल, मक्का, रागी और बाजरा जैसी अन्य फसलें उगाते हैं। इसके अतिरिक्त, उत्तरी क्षेत्रों में समतल मैदान, जहां सिंचाई सुविधाओं तक पहुंच है, जिसके फलस्वरूप चावल, गेहूं और सब्जी उत्पादन में विस्तार हुआ है। भूमि उपयोग और कृषि पद्धतियों में बदलाव गढ़वा जिले के भीतर विविध आर्थिक गतिविधियों और कृषि परिदृश्य का धोतक है। जिले में खेती योग्य भूमि को दो मुख्य प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है:1. ऊपरी भूमि और 2. निचली भूमि। नदी के किनारे स्थित निचली भूमि प्राकृतिक रूप से उपजाऊ है, जिससे न्यूनतम उर्वरक उपयोग के साथ भी मजबूत फसल की पैदावार होती है। इसके विपरीत, ऊपरी भूमि कम उपजाऊ होती है और सफल खेती के लिए उर्वरकों और सिंचाई दोनों की पर्याप्त मात्रा में आवश्यकता होती है। इन क्षेत्रों में किसान आम तौर पर रबी और ख़रीफ़ दोनों फ़सलें बोते हैं। गढ़वा जिला मुख्य रूप से अपने मुख्य आर्थिक चालक के रूप में कृषि और संबंधित गतिविधियों पर निर्भर करता है, इसके अधिकांश निवासी खेती में लगे हुए हैं। जिले के अधिकांश हिस्सों में परिदृश्य घने जंगलों

और चट्टानी इलाके की विशेषता है। जिले में खेती योग्य भूमि को दो मुख्य श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः ऊपरी भूमि और निचली भूमि। निचली भूमि, जो नदी के किनारे स्थित हैं, उपजाऊ होती हैं, जिससे न्यूनतम उर्वरक उपयोग के साथ अच्छी फसल की पैदावार होती है। इसके विपरीत, ऊपरी भूमि कम उपजाऊ होती है और खेती के लिए पर्याप्त मात्रा में उर्वरकों और सिंचाई की आवश्यकता होती है। इस क्षेत्र में आम तौर पर रबी और ख़रीफ़ दोनों फ़सलें उगाई जाती हैं। हालाँकि, पहाड़ी इलाका होने के कारण जिले को सिंचाई के संबंध में चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इसके बावजूद, छोटे प्राकृतिक नाले हैं जिनका उपयोग अक्सर सिंचाई उद्देश्यों के लिए किया जाता है, जिससे क्षेत्र में कृषि गतिविधियों को बनाए रखने में मदद मिलती है। पहाड़ी इलाका होने के कारण जिले में सिंचाई से संबंधित चुनौतियाँ उत्पन्न होती हैं, जिससे व्यापक सिंचाई प्रणाली स्थापित करना मुश्किल हो जाता है। फिर भी, जिले को छोटे, प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले नालों से लाभ होता है, जिनका उपयोग अक्सर कृषि उद्देश्यों के लिए सिंचाई प्रदान करने के लिए किया जाता है, जिससे क्षेत्र में कृषि गतिविधियों को बनाए रखने में मदद मिलती है।

अर्ध-शुष्क कृषि की समस्याएँ:-कई अन्य क्षेत्रों की तरह, गढ़वा जिले में सूखी खेती को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। जिले में अप्रत्याशित वर्षा पैटर्न का अनुभव होता है, जिससे फसल की वृद्धि के लिए प्राकृतिक वर्षा पर निर्भर रहना चुनौतीपूर्ण हो जाता है। सिंचाई सुविधाओं तक सीमित पहुंच के परिणामस्वरूप शुष्क अवधि के दौरान अपर्याप्त नमी होती है। मिट्टी का कटाव एक चिंता का विषय है, जिससे मिट्टी की उर्वरता और नमी बनाए रखने में कमी आती है। सूखी खेती पानी की कमी के कारण फसल के विकल्पों को सूखा प्रतिरोधी किस्मों तक सीमित कर देती है, जिससे विविधता कम हो जाती है।'[13] लंबे समय तक सूखे के कारण फसल बर्बाद हो सकती है और वित्तीय नुकसान हो सकता है। मिट्टी की गुणवत्ता अलग-अलग होती है, कुछ क्षेत्रों में मिट्टी खराब और पोषक तत्वों की कमी वाली होती है। आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकी एवं तकनीकों का अभाव उत्पादकता में बाधा डालता है। किसानों को अपनी उपज बेचने के लिए बाजारों तक पहुंचने में संघर्ष करना पड़ सकता है, जिससे आर्थिक व्यवहार्यता प्रभावित होगी। इन चुनौतियों से निपटने में जल संरक्षण, मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार, लचीली फसल किस्मों को बढ़ावा देना, प्रौद्योगिकी पहुंच बढ़ाना और टिकाऊ कृषि पद्धतियों का निर्माण करना शामिल है। गढ़वा जिले में शुष्क खेती के लिए कुछ प्रमुख समस्याएं हैंः

- **अनियमित वर्षा:** गढ़वा जिले में शुष्क खेती प्राकृतिक वर्षा पर बहुत अधिक निर्भर करती है, और जिले में असंगत या अप्रत्याशित वर्षा पैटर्न है। अनियमित मानसून से फसल की वृद्धि के लिए नमी अपर्याप्त है।
- **पानी की कमी:** गढ़वा जिले में पानी की कमी एक महत्वपूर्ण मुद्दा है, खासकर सूखे के दौरान। सिंचाई सुविधाओं तक पहुंच की कमी के कारण जल संकट के दौरान फसलों को पर्याप्त नमी प्रदान करना चुनौतीपूर्ण हो जाता है।
- **मिट्टी का कटाव:** जिले में मिट्टी के कटाव की समस्या है, जो मिट्टी की उर्वरता और नमी बनाए रखने पर नकारात्मक प्रभाव डालती है। शुष्क कृषि के लिए कटाव नियंत्रण उपाय महत्वपूर्ण हैं।
- **सीमित फसल विकल्प:** गढ़वा जिले में शुष्क कृषि, अक्सर पानी की सीमाओं के कारण उगाई जा सकने वाली फसलों के प्रकारों को प्रतिबंधित करती है। किसान सूखा-प्रतिरोधी फसलों तक ही सीमित रहते हैं, जिससे फसल विविधता कम होती है।
- **सूखे के प्रति संवेदनशीलता:** गढ़वा जिले में लंबे समय तक शुष्क कृषि के प्रयासों को तबाह करता है, जिससे फसल बर्बाद होती है और किसानों को वित्तीय नुकसान होता है।
- **मिट्टी की गुणवत्ता:** गढ़वा जिले में मिट्टी की गुणवत्ता अलग-अलग है, और कुछ क्षेत्रों में मिट्टी खराब है जिसमें पोषक तत्वों और कार्बनिक पदार्थों की कमी है। मृदा स्वास्थ्य में सुधार एक चुनौती है।
- **प्रौद्योगिकी तक पहुंच:** गढ़वा जिले में आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकी और तकनीकों तक सीमित पहुंच जिले में शुष्क कृषि पद्धतियों में बाधा उत्पन्न करती है।
- **बाज़ार तक पहुँच:** किसानों को अपनी उपज बेचने के लिए बाज़ारों तक पहुँचने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है, जिससे उनकी आर्थिक व्यवहार्यता प्रभावित हो सकती है।

इन चुनौतियों का समाधान करने और गढ़वा जिले में शुष्क कृषि प्रथाओं को बढ़ाने के लिए, जल संरक्षण उपायों को लागू करना, मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करना, सूखा प्रतिरोधी फसल किस्मों को बढ़ावा देना और कृषि प्रशिक्षण और प्रौद्योगिकी तक पहुंच प्रदान करना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, लचीली और टिकाऊ कृषि पद्धतियों के निर्माण से बदलते मौसम के पैटर्न और सूखे के प्रभाव को कम करने में मदद मिल सकती है।

वर्षा की स्थिति, सिंचित भूमि तथा भूजल की स्थिति:-इस क्षेत्र की जलवायु ऐसी है जिसे उच्च स्तर की आर्द्रता के साथ उपोष्णकटिबंधीय के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। सर्दी के मौसम के बाद, जो नवंबर में शुरू होता है और फरवरी के अंत तक जारी रहता है, गर्मी का मौसम आता है, जो जून की शुरुआत तक जारी रहता है। मानसून के मौसम की शुरुआत जून के मध्य में होती है, और यह अक्टूबर के मध्य तक रहता है। इस क्षेत्र को वर्षा आधारित क्षेत्र के रूप में वर्गीकृत किया गया है और इसमें वार्षिक भिन्नता काफी मात्रा में है। पिछले पांच वर्षों (2015-2019) के दौरान विशिष्ट क्षेत्र में औसतन 917.02 मिलीमीटर (मिमी) वर्षा हुई है। प्रत्येक जिले की औसत वर्षा कांडी प्रखंड में 503.88 मिलीमीटर से लेकर भंडरिया प्रखंड में 1297.5 मिलीमीटर तक है। जुलाई से अगस्त के पहले भाग में सबसे अधिक वर्षा होती है, जो वर्ष की कुल वर्षा का लगभग आधा है। कुल वार्षिक वर्षा का लगभग 85 प्रतिशत मानसून के मौसम के कारण होता है। हालाँकि, जुलाई और अगस्त के महीनों के दौरान, चार से आठ दिनों तक शुष्क अवधि रहना असामान्य बात नहीं है। मानसून के मौसम में सापेक्षिक आर्द्रता का औसत मान 85ल है, जबकि अप्रैल और मई के महीनों में सापेक्षिक आर्द्रता का मान केवल 27ल है। मानसून के मौसम में सबसे अधिक आर्द्रता देखी जाती है। सामान्य तौर पर, अन्य मौसमों में जलवायु शुष्क होती है और मानव आराम के लिए स्वीकार्य सीमा के भीतर आती है। जिले के लिए वर्षा की जानकारी, महीने और वर्ष (2015-2019) के अनुसार विभाजित, तालिका 1 में है। वार्षिक वर्षा का कुल योग और प्रत्येक प्रखंड पर होने वाली वर्षा की औसत मात्रा तालिका 1 में विस्तृत है, जो नीचे देखा जा सकता है.

तालिका 1, गढ़वा जिले का वार्षिक एवं औसत वर्षा (मिमी)

क्र स	प्रखंड	विगत पाँच वर्षों का वार्षिक वर्षा (मिमी)					औसत वर्षा
		2015	2016	2017	2018	2019	(मिमी)
1	गढ़वा	760.7	1495.2	479.3	448.0	483.1	733.26
2	मेराल	668.5	1143.1	390.4	440.0	422.3	612.86
3	डंडई	692.5	1523.9	-	-	-	1108.2
4	मझिआंव	684.2	1442.5	726.9	782.9	834.1	894.12

5	कांडी	410.5	884.0	223.0	260.0	741.9	503.88
6	रंका	1068.2	1924.0	317.7	453.5	888.0	930.28
7	चिनिया	412.0	1459.6	872.0	1058.9	1190.9	998.68
8	रामकांडा	813.4	1561.4	607.3	725.5	675.1	876.54
9	भंडरिया	1260.6	1703.7	1033.0	1609.5	880.7	1297.5
10	नगर उटारी	551.3	1315.0	804.0	1131.4	1006.0	961.54
11	रमणा	641.8	1479.8	745.5	708.3	1136.5	942.38
12	धुर्की	667.5	1517.6	923.0	825.0	1414.3	1069.48
13	भवनाथपुर	645.8	1383.5	686.3	865.3	1008.3	917.84
14	खरौंधी	292.8	1639.3	981.9	1189.6	855.5	991.82

स्रोत: केंद्रीय भूजल बोर्ड, गढ़वा जिला, जल संसाधन, नदी विकास और गंगा संरक्षण विभाग, जल शक्ति मंत्रालय, भारत सरकार

सारणी1, गढ़वा जिले का वार्षिक एवं औसत वर्षा (मिमी)

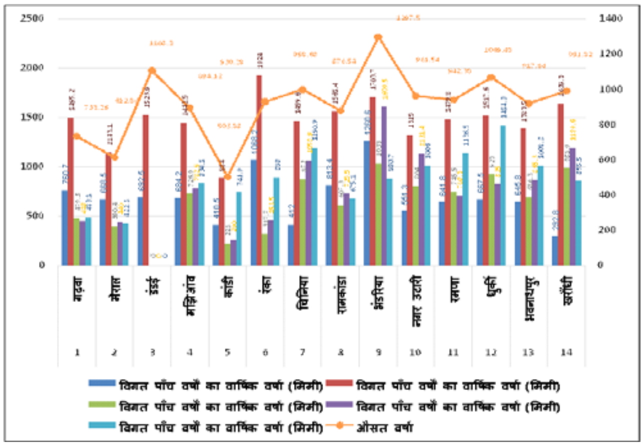

स्रोत: केंद्रीय भूजल बोर्ड, गढ़वा जिला, जल संसाधन, नदी विकास और गंगा संरक्षण विभाग, जल शक्ति मंत्रालय, भारत सरकार, 2022

जिले के भीतर, कुल बारह बड़ी और मध्यम आकार की परियोजनाएं पूरी हो चुकी हैं। जब इन परियोजनाओं को पहली बार विकसित किया गया था तो उनका उद्देश्य ख़रीफ़ और रबी सीज़न के दौरान पानी उपलब्ध कराना था। तालिका 2 इनमें से प्रत्येक की जानकारी प्रदान करती है।

तालिका 2, गढ़वा जिले में प्रमुख सिंचाई परियोजनाओं का विवरण

क्र स	परियोजना का नाम	प्रखंड	नहर (किमी में)	नदियाँ	कुल सिंचाई क्षमता ('000 हेक्टेयर में)		
					खरीफ	रबी	कुल
1	अनराज परियोजना	गढ़वा	14.97	13.14	4.17	1.50	5.67
2	दानरो परियोजना	डंडई	28.0	-	3.25	1.62	4.87
3	चिरका परियोजना	चिनिया	15.01	8.12	1.00	0.44	1.44
4	फुलवरिया सिंचाई परियोजना	मेराल	6.11	-	0.60	-	0.60
5	सरस्वती सिंचाई परियोजना	गढ़वा	17.97	-	0.87	-	0.87
6	पंडरवा प्रोजेक्ट	नगर उटारी	6.10	2.01	0.64	0.60	1.24
7	बनयी बांकी परियोजना	नगर उटारी	10.5	0.80	1.10	0.10	1.20
8	बनयी बांकी परियोजना	रमणा, मझिआंव	52.90	18.55	5.27	0.81	6.08
9	चटनिया घाट परियोजना	भवनाथपुर	6.03	-	0.42	-	0.42
10	बभनीखंड परियोजना	नगर उटारी	3.6	6.46	0.54	0.12	0.66
11	उत्तमाही सिंचाई परियोजना	धुर्की	6.61	-	0.60	-	0.60
12	कवलदाग सिंचाई परियोजना	भवनाथपुर	9.14	8.95	1.20	0.20	1.40

स्रोत: केंद्रीय भूजल बोर्ड, गढ़वा जिला, जल संसाधन, नदी विकास और गंगा संरक्षण विभाग, जल शक्ति मंत्रालय, भारत सरकार, 2022

ऊपरी गंगा बेसिन में स्थित, गढ़वा जिला सोन उप-बेसिन के निर्माण में योगदान दे रहा है। जिले की सबसे महत्वपूर्ण नदी उत्तरी कोयल नदी है, जो दक्षिण से उत्तर दिशा में बहती है और जिले के उत्तर और पूर्व भागों के बीच सीमा के रूप में कार्य करती है। सोन नदी, जो पश्चिम से पूर्व की ओर बहती है, जिले की उत्तरी सीमा के रूप में कार्य करती है और विपरीत दिशा में बहती है। जिला दक्षिण-पश्चिम में कनहर नदी से घिरा है, जो एक और बड़ी नदी है जो उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व तक बहती है और जिले की सीमा को परिभाषित करती है। प्रमुख नदी, जो दक्षिण कोयल है, उसकी सहायक नदियाँ ऐसी दिशा में बहती हैं जो लगभग पश्चिम से पश्चिम की ओर है। इनमें से प्रत्येक जल निकासी की पहचान सतह से तेज बहाव के कारण होती है। इनमें से प्रत्येक नदी का प्रवाह मौसम के साथ बदलता रहता है। वृक्ष के समान अपवाह तंत्र का वर्णन मानचित्र 2 में देखा जा सकता है:

मानचित्र 2, अपवाह तंत्र- गढ़वा जिला

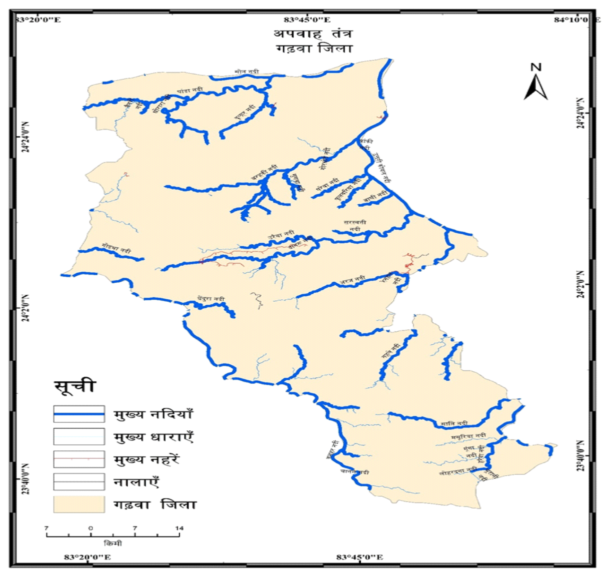

स्रोत: भारतीय सर्वेक्षण विभाग (टोपोशीट्स: 63P/07, 63P/08, 63P/11, 63P/12, 63P/15, 63P/16, 64M/09, 64M/13 एवं 64M/14), 2010

वर्षा और अन्य स्रोतों सहित विभिन्न स्रोतों से फिर से भूजल स्तर की मात्रा के मौसमी अध्ययन के निष्कर्ष तालिका 3 में दिखाए गए हैं, और विश्लेषण फिर से भूजल स्तर की मात्रा पर किया गया था। वर्षा के परिणामस्वरूप होने वाला पुनर्भरण मानसून के मौसम के दौरान उच्चतम घटक 24600.47 ham देता है, जबकि अन्य स्रोतों के परिणामस्वरूप होने वाला पुनर्भरण 2392.72 ham का योगदान देता है। दूसरी ओर, गैर-मानसून सीज़न के दौरान जब मानसून नहीं होता है, तो वर्षा से पुनर्भरण 1051.99 ham[16] प्रदान करता है। वर्षा की कुल मात्रा 917.02 मिमी है, जबकि प्रति वर्ष औसतन भूजल पुनर्भरण की कुल मात्रा 1847.12 ham है। होने वाले किसी भी प्राकृतिक निर्वहन को ध्यान में रखने के बाद, यह अनुमान लगाया गया है कि कुल वार्षिक भूजल संसाधन 27991.49 ham है जिसका संचयन किया जा सकता है।

तालिका 3, गढ़वा जिले में भूजल कि स्थिति (मिमी)

क्र स	प्रखंड	औसत वर्षा (मिमी)	भूजल स्तर (Ham)
1	ग?वा	733.26	2090.04
2	मेराल	612.86	1998.12

3	डंडई	1108.2	701.4
4	मझिआंव	894.12	705.68
5	कांडी	503.88	2627.32
6	रंका	930.28	1640.99
7	चिनिया	998.68	1481.93
8	रामकांडा	876.54	1215.41
9	भंडरिया	1297.5	4550.26
10	नगर उटारी	961.54	1680.23
11	रमणा	942.38	1009.54
12	धुर्की	1069.48	1077.06
13	भवनाथपुर	917.84	3234.60
14	खरौंधी	991.82	1240.32
औसत		917.02	1847.12

स्रोत : केंद्रीय भूजल बोर्ड, गढ़वा जिला, जल संसाधन, नदी विकास और गंगा संरक्षण विभाग, जल शक्ति मंत्रालय, भारत सरकार

अर्ध-शुष्क क्षेत्र और जलवायु परिवर्तन एवं नीतिगत हस्तक्षेप

गढ़वा जिले जैसे अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में कम और अनियमित वर्षा होती है, जो उन्हें जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति संवेदनशील बनाती है। गढ़वा जिले में अर्ध-शुष्क क्षेत्रों और जलवायु परिवर्तन से संबंधित कुछ प्रमुख बिंदु शामिल हैं :

1. **वर्षा स्वरूप में परिवर्तन** : गढ़वा में, औसत वार्षिक वर्षा आमतौर पर 873.3 मिमी है, जिसमें से 89.5त्न मानसून के मौसम के दौरान होती है, और शेष 10.5 प्रतिशत गुप्ता के 2018 के निष्कर्षों के अनुसार मानसून के बाद की अवधि में होती है। मौसमी वर्षा के आंकड़ों से पता चलता है कि कुल वार्षिक वर्षा का 82 प्रतिशत हिस्सा जून से सितंबर तक चलने वाले मानसून के मौसम के चार महीनों के भीतर केंद्रित होता है।[14]

2. **कृषि सूखा** : गढ़वा क्षेत्र में कृषि सूखे के विश्लेषण से दो महत्वपूर्ण अवधियों की उपस्थिति का पता चला : प्रारंभिक मौसम सूखा (22 वें और 28 वें मानक मौसम विज्ञान सप्ताह - एसएमडब्ल्यू के बीच होता है) और देर से मौसम सूखा (36 वें और 42 वें एसएमडब्ल्यू के बीच के परिणामों से संकेत मिलता है कि अधिकांश प्रखंडों में शुरुआती सीज़न के सूखे की तुलना में देर से मौसम का सूखा अधिक प्रचलित है। गढ़वा जिला में सीज़न के अंत में सूखा (38 प्रतिशत वर्षों में) और शुरुआती सीज़न में सूखा (31 प्रतिशत वर्षों में) दोनों का अनुभव हुआ। देर से मौसम में सूखे की सबसे अधिक घटना गढ़वा ब्लॉक (38 प्रतिशत) में दर्ज की गई, इसके बाद मझिआंव (31 प्रतिशत), मेराल (23 प्रतिशत) और धुरकी (23 प्रतिशत) में दर्ज की गई। शेष ब्लॉकों में, वर्ष के अंत में सूखे की घटना 8 प्रतिशत से 15 प्रतिशत तक रही। शुरुआती सीज़न में सूखे की घटनाएं अलग-अलग ब्लॉकों में 8 प्रतिशत से 31 प्रतिशत के बीच रहीं, अधिकांश ब्लॉकों में 13 साल की अवधि के भीतर 8 प्रतिशत और 15 प्रतिशत के बीच उतार-चढ़ाव आया। विभिन्न एसएमडब्ल्यू के दौरान कृषि सूखे की इसी तरह की घटनाओं को 2002 में तोमर और रानाडे और 2008 में राय और सिंह द्वारा भी प्रलेखित किया गया है।[15]

3. **जल विभाजन प्रबंधन** : गढ़वा जिले में जल विभाजन प्रबंधन में एक विशिष्ट वाटरशेड क्षेत्र के भीतर जल संसाधनों के संरक्षण और प्रबंधन के लिए रणनीतियों की योजना और कार्यान्वयन शामिल है। प्राथमिक लक्ष्य कृषि उत्पादकता बढ़ाना, पानी की उपलब्धता सुनिश्चित करना और जलवायु संबंधी जोखिमों के प्रभाव को कम करना है। इसके अतिरिक्त विभाजन प्रबंधन का उद्देश्य पानी की उपलब्धता में सुधार करना, कृषि उत्पादकता में वृद्धि करना और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति स्थानीय समुदायों की संवेदनशीलता को कम करना है। यह टिकाऊ भूमि और जल संसाधन प्रबंधन के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण है जो जिले में पर्यावरण और लोगों की आजीविका दोनों को लाभ पहुंचाता है। जलवायु परिवर्तन और अनियमित मानसून के प्रभाव के कारण, शुष्क क्षेत्रों का विस्तार बढ़ रहा है। गढ़वा जिले जैसे अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न चुनौतियों का समाधान करने के लिए विभिन्न नीतिगत हस्तक्षेप आवश्यक हैं। कुछ नीतिगत उपायों में शामिल हो सकते हैं :

- इस चुनौती से निपटने के लिए, शुष्क भूमि कृषि के लिए प्रौद्योगिकी को आगे बढ़ाने पर प्राथमिक ध्यान देने के साथ एक शुष्क भूमि अनुसंधान संस्थान स्थापित करने की योजना है।
- प्रमुख प्राथमिकताएँ इसमें छोटे खेत तालाबों के माध्यम से जल संचयन तकनीकों का कार्यान्वयन, सूखा प्रतिरोधी फसल किस्मों का विकास और खेत पर अनुसंधान करने की योजना प्रस्तावित है।
- प्रस्तावित 'ड्राईलैंड अनुसंधान संस्थान卐 फसल की किस्मों को बढ़ाने, मिट्टी और जल संसाधनों के प्रबंधन और क्षेत्रीय फसलों और बागवानी दोनों के लिए प्रासंगिक कृषि उपकरण विकसित करने पर ध्यान केंद्रित करेगा। यह संस्था शुष्क परिस्थितियों के लिए उपयुक्त फसलों पर ऑन-साइट और ऑन-फार्म अनुसंधान पर जोर देगी।
- इसके अलावा, अनुसंधान प्रयास आंवला, बेर, कस्टर्ड सेब जैसे फलों और शुष्क बागवानी के व्यापक क्षेत्र तक विस्तारित होंगे।

निष्कर्ष :-गढ़वा जिले में अपेक्षाकृत कम और उतार-चढ़ाव वाली वार्षिक वर्षा होती है, इसके विभिन्न ब्लॉकों में महत्वपूर्ण परिवर्तनशीलता होती है। भवनाथपुर को छोड़कर जिले के अधिकांश ब्लॉकों में वार्षिक और मानसूनी वर्षा कम हो रही है। भंडरिया और गढ़वा जिलों में कुल वार्षिक वर्षा में तेजी से गिरावट देखी जा रही है, जो भविष्य में फसल उत्पादन का समर्थन करने के लिए इन क्षेत्रों में जल संरक्षण रणनीतियों की संभावित आवश्यकता का सुझाव देता है। इसके अतिरिक्त, प्रारंभिक और देर से कृषि सूखे का प्रतिशत वितरण जिले के सभी ब्लॉकों में भिन्न होता है। गढ़वा जिला की जलवायु का बदलता स्वरूप, शुष्क कृषि रणनीतियों और अनुसंधान प्राथमिकताओं की समीक्षा करने की मांग करता है। इन रणनीतियों का सबसे महत्वपूर्ण पहलू फसलों की गर्मी प्रतिरोधी किस्मों को विकसित करना और पौध-प्रजनकों द्वारा मौजूदा किस्मों में ऐसे लक्षण को जोड़ना है। बदलती जलवायु से निपटने के लिए अन्य महत्वपूर्ण पहलू 'मिट्टी और जल प्रबंधन' और 'मौसम आधारित फसल प्रबंधन' होंगे। इन नीतिगत हस्तक्षेपों का उद्देश्य जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को संबोधित करना और बदलती पर्यावरणीय परिस्थितियों के लिए गढ़वा जिले और इसी तरह के अर्ध-शुष्क क्षेत्रों की लचीलापन बढ़ाना है।

संदर्भ सूची :-

1. स्टीवर्ट, बी.ए., कूहाफकन, पी., और राममूर्ति, के. (2006), शुष्क भूमि कृषि की परिभाषा और विश्व के लिए इसका महत्व। शुष्कभूमि कृषि, पृष्ठ 23, 1-26.
2. विजयन, आर.ओ.एस.एच.एन.आई. (2016), भारत में शुष्क भूमि कृषि-समस्याएँ और समाधान। एशियाई जे. पर्यावरण. विज्ञान, 11(2), पृष्ठ171-177.

3. शिवनप्पन, आर.के. (1995), भारत की शुष्क भूमि में मिट्टी और जल प्रबंधन। भूमि उपयोग नीति, 12(2), पृष्ठ 165–175.
4. सिंह, एच.पी., शर्मा, के.डी., सुब्बा रेड्डी, जी., और शर्मा, के.एल. (2004), भारत में शुष्क भूमि कृषि. शुष्क भूमि कृषि की चुनौतियाँ और रणनीतियाँ, 32, पृष्ठ 67–92।
5. सेराज, आर., और सिद्दीकी, के.एच. (2012), शुष्क क्षेत्रों में संरक्षण कृषि. क्षेत्र फसल अनुसंधान, 132, पृष्ठ 1–6.
6. सिंह, एस.जे., क्रॉसमैन, एफ., गिंगरिच, एस., हैबरल, एच., एर्ब, के.एच., लैंज़, पी. और टेम्पर, एल. (2012), भारत की जैव–भौतिकीय अर्थव्यवस्था, 1961–2008। राष्ट्रीय और वैश्विक संदर्भ में स्थिरता। पारिस्थितिक अर्थशास्त्र, पृष्ठ 76, पृष्ठ 60–69।
7. शर्मा, आर.एस. (2018), भारत का प्राचीन इतिहास. ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटि प्रेस।
8. श्रीनिवासराव, सी., कुंडू, एस., लक्ष्मी, सी.एस., बाबू, एम.वी.एस., गभाने, वी.वी., सरमा, पी.के. और कुमारी, एच.ए. (2020), भारत की वर्षा आधारित शुष्क भूमि उत्पादन प्रणालियों में खाद बनाम उर्वरक। मिट्टी और उर्वरक–पर्यावरण पदचिह्न का प्रबंधन। सलाह. मृदा विज्ञान. सीआरसी प्रेस, टेलर और फ्रांसिस ग्रुप, बोका रैटन, स्नरु पृष्ठ 131–168।
9. मीना, ए.के., बंसल, पी., और कुमार, एस. (2009), आयुर्वेदिक औषधियों के संभावित स्रोत के रूप में पौधे–हर्बल संपदा। एशियन जे ट्रेडिट मेड, 4(4), पृष्ठ 152–70।
10. यादव, पी., और सोनी, टी. (2008), भारतीय बीमा क्षेत्र में बीआई विकास: एक केस स्टडी। आईसीएफएआई जर्नल ऑफ इंटरनेशनल बिजनेस, 3(1) ।
11. रेड्डी, के.एस. (2018), भारत में शुष्क भूमि कृषि: स्थिति और आगे का रास्ता।
12. आनंद, आर., जाना, एन.सी., और सिंह, एस.के. (सं.) (2009), आपदा प्रबंधन और सतत विकास: उभरते मुद्दे और चिंताएँ। पेंटागन प्रेस.
13. टिराडो, आर., और कॉटर, जे. (2010), पारिस्थितिक खेती: सूखा प्रतिरोधी कृषि। एक्सेटर, यूके: ग्रीनपीस रिसर्च लेबोरेटरीज।
14. राय एस.के., सिंह के.ए. (2018) उत्तर बिहार के दो जिलों में सूखे की तीव्रता और आवृत्ति का विश्लेषण, कृषि मौसम विज्ञान जर्नल; 10(2): पृष्ठ 228–230.
15. सी.के. गुप्ता और आर. कुमार, (2018), गढ़वा जिले, झारखंड की वर्षा भिन्नता और प्रवृत्ति विश्लेषण: स्थानिक और मौसमी परिवर्तनशीलता का आकलन, जर्नल ऑफ फार्माकोग्नॉसी एंड फाइटोकेमिस्ट्री; 7(5): पृष्ठ 2143–2145।
16. स्रोत: केंद्रीय भूजल बोर्ड, गढ़वा जिला, जल संसाधन, नदी विकास और गंगा संरक्षण विभाग, जल शक्ति मंत्रालय, भारत सरकार, 2022।

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

पत्नी प्रेम से दीक्षित : कवि शिरोमणि तुलसीदास

अशोक कुमार प्रमाणिक

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, योगदा सत्संग महाविद्यालय, जगन्नाथपुर, राँची

सारांश:-तुलसीदास हिन्दी साहित्य के इतिहास में सगुण भक्ति शाखा के महान दार्शनिक कवि हैं, जिन्होने रामचरितमानस जैसा अमर ग्रन्थ सनातन धर्म को देकर सनातन संस्कृति को विश्वगगन तक पहुँचा दिया। उनकी लेखनी समस्त प्राणियों के उत्थान के लिए चली जो काकभुशुण्डी जैसे तुच्छ से तुच्छ पक्षी को मोक्ष के द्वार तक पहुँचा दिया। भारतीय संस्कृति में स्त्री का स्थान देवी के रूप में हुआ है। स्त्री विभिन्न रूपों में अवतरित होकर मानव समाज में नया परिवर्तन लाने का काम किया है। असुरों के संहार हेतु माँ शक्ति ने दुर्गा का रूप धारण कर देवों की रक्षा की है। आधुनिक समाज में किंवदंती के अनुसार, तुलसीदास के जीवन में उनकी पत्नी रत्नावली के प्रति उनका अगाध प्रेम ने एक अद्वितीय परिवर्तन लाया। रत्नावली के व्यंग्य स्वर ने तुलसीदास के जीवन को सांसारिक मोह से निकाल कर ईश्वर भक्ति की ओर प्रेरित किया। तुलसी की प्रसिद्धि के पीछे रत्नावली के कठोर वचनों की अहम् भूमिका है। एक पुरुष के पीछे स्त्री का क्या महत्व होता है। इस पुरुष सत्तात्मक समाज में समाज के निर्माण और विकास में नारी की जो भूमिका है उसे इस लेख के माध्यम से बताने का प्रयास किया है। रत्नावली और तुलसीदास की जीवन गाथा इसका जीता जागता अनमिट उदाहरण है। पत्नी की इस सीख से प्रेरित होकर तुलसीदास ने सांसारिक जीवन की मोह, माया और ममता का त्यागकर प्रभु राम की भक्ति में अपना सारा जीवन समर्पित कर मानव कल्याण के लिए अपने विचारों का सार दिया।

रामायण हमारी जातीय स्मृति और सनातन संस्कृति की विरल उपलब्धि है। भारतीय संस्कृति के विकास की विचार यात्रा महर्षि वाल्मीकि से आरंभ होकर गोस्वामी तुलसीदास की कलम से पुष्ट होकर आधुनिक काल के राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की पंचवटी में अविरल धारा की तरह बहते हुए जनमानस के हृदय में निवास करती रही है। भारतीय संस्कृति में स्त्री पुरुष की अर्धांगिनी के रूप अवतरित है। पुरुष के बिना नारी अधूरी और नारी के बिना पुरुष अधूरा। यह परम्परा आदि-अनादि काल से चली आ रही है। मानस में तुलसीदास लिखते हैं-

जिय बिनु देह, नदी बिनु बारी।
तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी॥[1]

यह भारतीय वांग्मय के विकास का ऐसा पड़ाव है जिसकी छत्रछाया में संकट पूर्ण स्थिति में मानव की रक्षा करने हेतु तटस्थ एवं सक्षम है। यह विचार यात्रा भले ही भारत के विभिन्न संस्कृतियों के प्राण तत्वों को अपने विराट व्यक्तित्व में आत्मसात कर लिया हो लेकिन सच्चाई यह है कि राम स्वयं हमारी संस्कृति के जीते जागते रूप हैं उनसे संस्कृति निर्मित होती हैं। राम के इस विराट स्वरूप को सफल बनाने के पीछे देवियों का योगदान है- एक तो लक्ष्मी स्वरूपा भूमिजा सीता और दूसरा आदि शक्ति दुर्गा। अपनी प्रिया सीता की मान-मर्यादा और प्राप्ति हेतु सम्पूर्ण राक्षस समाज से विध्वन्सकारी भीषण संघर्ष किया और माँ दुर्गा जिसके कारण समस्त राक्षस जाति का विनाश संभव हो सका। इसलिए हमारे ऋषि-मुनियों और संत महात्माओं ने उन्हें ब्रहम का साक्षात रूप मान लिया है। श्री राम वास्तविक रूप में पुरुषोत्तम हैं, महामानव लोकनायक, धर्म रक्षक और प्राज्ञपुरुष है। आततायी रावण और राम के इस भीषण संग्राम में आदि शक्ति ने राम को वरदान देकर विजयघोष का विगुल फूंका। निराला ने 'राम की शक्ति पूजा' में इस संग्राम को जीत-हार का भयंकर परिणाम के रूप में घोषित किया है-

होगी जय, होगी जय हे! पुरुषोत्तम नवीन।
कह महाशक्ति राम के बदन में हुई लीन।।[2]

महर्षि वाल्मीकि अगर इस तमसा तट पर स्नान के लिए न गए होते और गए भी होते और अगर उस क्रौंच पक्षी के विरह से विचलित ना होते तो शायद हमें रामायण जैसा ग्रंथ ना मिलता, हमें राम जैसा नायक और भरत जैसा भाई न मिलता। नहीं हमें राम कथा का ज्ञान होता। अतः समयानुकूल परिस्थिति में कोई देवता ही मानव रूप में आकर ऐसे ग्रंथों की रचना के लिए अवतरित होते हैं। वाल्मीकि के श्री राम का लोक दर्शन दुर्लभ और अनूठा है। वाल्मीकि ने आने वाली पीढ़ी को ऐसा महान ग्रंथ दे गया जिसको पाकर मानव धन्य और पवित्र हो गया। इसके पीछे एक ही कारण है- बहेलिया द्वारा कामवासना में लीन क्रौंच पक्षी के जोड़े में से नर क्रौंच का वध करना और उसी के वध होने से विरह में मादा क्रौंच तड़पकर मृत्यु का वरण करना तथा सबसे खास एवं विशिष्ट बात वाल्मीकि जी का विचलित होकर अनायास ही उसके मुखारविंद से इस छंद का प्रस्फूटित होना -

मां निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।।[3]

अर्थात हे!निषाद तुमको अनंत काल तक (प्रतिष्ठा) शांति न मिले क्योंकि तुमने प्रेम प्रणय क्रिया में लीन और असावधान क्रौंच पक्षी के जोड़े में से एक की हत्या कर दी। इतना कहकर महर्षि जी आश्रम जाकर ध्यान मग्न हो गए। ध्यान करने मात्र से ब्रह्मा के दर्शन हुए और उन्होंने नारद जी के द्वारा सुनाए राम कथा का स्मरण कराया। स्मरण आने मात्र से रत्नाकर ने राम कथा लिखना प्रारंभ कर दिया और उसी समय से रत्नाकर वाल्मीकि रामायण की रचना कर महर्षि वाल्मीकि कहलाए। इस घटना के पीछे भी मादा क्रौंच की वेदना सामने आती है और इसी का परिणाम स्वरुप है कि हमें रामायण जैसा अविरल ग्रंथ प्राप्त हुआ। जिस तरह रत्नाकर क्रौंच पक्षी के विरह से विचलित होकर संस्कृत वांग्मय में वाल्मीकि रामायण की रचना की, ठीक उसी प्रकार गोस्वामी तुलसीदास पत्नी के तीक्ष्ण और व्यंग्य पूर्ण वाणी ने रामबोला को तुलसीदास बना दिया। वाल्मीकि के प्रसंग में भी एक अबला पक्षी (मादा) का ही विरह था और तुलसी के प्रसंग में भी एक अबला नारी की ही फटकार है। गोस्वामी तुलसीदास राम कथा के अच्छे वाचक थे। पत्नी के उपदेश से अनुरक्त प्रेमी का जीवन विरक्ति में बदलने की अनमोल गाथा कही जाती है। इस गाथा के पीछे एक रोचक कहानी है जो काफी मार्मिक है-

गोस्वामी तुलसीदास का जन्म सोलहवीं शताब्दी में राजापुर गांव के उत्तर प्रदेश में हुआ। वह बचपन से ही राम के अनन्य भक्त थे। उनकी शिक्षा-दीक्षा संस्कृत और लोक क्षेत्रीय भाषाओं से हुई। गोस्वामी तुलसीदास भिक्षाटन में दूर के गांव में चले गए और इधर उनकी पत्नी रत्नावली किसी आवश्यक काम से अपने मायके चली गई। जब तुलसीदास भिक्षाटन से थका-हारा घर पहुँचे तो देखा कि घर में कोई नहीं है। पत्नी को घर में न पाकर तुलसीदास प्रेम में व्याकुल हो उठे। पत्नी को न पाकर विचलित होकर इधर-उधर रत्नावली की खोज करने लगे। जब ना मिली तो तुलसीदास पत्नी प्रेम के इस विरह को न सह सके, तब तक दिन ढल चुका था। संध्या की बाहों में सूरज की रोशनी समा चुकी थी। तुलसीदास पत्नी प्रेम में इतने डूब चुके थे कि पल भर के लिए यह विरह असहनीय हो गया, अपने को रोक न सका। आव देखा ना ताव घनघोर अंधेरी रात में धुआंधार चलती बरसात में ही एक लाश को लकड़ी का कुंदा समझ कर उफनती बड़ी नदी को तैर कर पार कर गए और रत्नावली के गाँव पहुँच गए। रात के समय तुलसीदास अपने ससुराल पहुँचे। जब रात के समय सब अपने-अपने कमरे में सो रहे थे, उसी समय तुलसीदास रत्नावली के कमरे के समीप पेड़ पर लटके सांप को रस्सी समझकर ऊपर चढ़ गए और सीधे व्याकुलतावश रत्नावली के कमरे में जा पहुँचे। रात का समय था तुलसीदास का इस तरह से आना रत्नावली को अच्छा नहीं लगा। इस पर रत्नावली ने तुलसीदास को फटकार लगाई। रत्नावली ने उन्हें बहुत धिक्कारा और भाव भरे मार्मिक लहजे में स्वरचित दोहा सुनाया-

लाज ना लागत आपको दौड़े आयहु साथ।
धिक-धिक ऐसे प्रेम को कहा कहौं मैं नाथ।।
अस्थि-चर्ममय देह मम तामे जैसी प्रीत।
तैसों जो श्री राम महँ होति ना तौँ भवभीत।।[4]

अर्थात हे! नाथ आपको लाज नहीं लगती जो इस तरह मेरे पीछे-पीछे यहाँ तक भागे चले आए। मैं इस प्रेम को धिक्कारती हूँ। मेरे इस हाड़-मांस के शरीर के प्रति आपकी जितनी आसक्ति है उसकी आधी भी अगर प्रभु से होती तो आपका जीवन ही संवर गया होता। ऐसा सुनते ही तुलसीदास सन्न रह गए। उनके हृदय में यह बात अतल गहराई तक उतर गई और उनके ज्ञान चक्षु खुल गए। उनको अपनी मूर्खता का एहसास हो गया। वह एक क्षण भी रुके बिना वहाँ से चल दिए। उनका हृदय परिवर्तन हो चुका था। इन्हीं शब्दों की शक्ति ने तुलसीदास के हृदय का प्रेम, मोह, माया और ममता को विरक्ति में बदल दी। तुलसीदास उल्टे पाँव वहाँ से विचलित होकर निकल पड़े। रत्नावली की इस फटकार ने गोस्वामी तुलसीदास के जीवन को बदलकर रख दिया और वहीं से विरक्ति होकर भक्ति की राह को अपना लेते हैं और वहाँ से चलकर सीधे काशी चले जाते हैं। उनके इस प्रकार की जीवन लीला को कई लोगों ने अपनी रचनाओं में एक सीख के रूप में इसे ग्रहण किया। उसी समय से लेकर गोस्वामी तुलसीदास फिर पीछे मुड़कर नहीं देखते हैं और भक्ति की राह में पूरी तरह से रम जाते हैं। पत्नी प्रेम की व्याकुलता ने उसे इस तरह बदल के रख दिया कि तुरंत राम के परम भक्त बन गए। पत्नी के उपदेश से तुलसीदास के मन में वैराग उत्पन्न हो गया और उसी क्षण तुलसीदास भोगी से जोगी बन गए।बाबा नरहरिदास के आश्रम में रहकर उन्होंने वेद, पुराण, उपनिषद और रामायण जैसे प्रमुख सनातन ग्रंथों का गहन अध्ययन किया।तुलसीदास काशी जाकर बाबा नरहरिदास से दीक्षा ली। गुरु नरहरिदास से दीक्षा लेने के क्रम में ही शेष सनातन की शिष्य परम्परा में भी रहे। शेष सनातन के सान्निध्य में रहकर पुराण, उपनिषद, बाल्मीकि रामायण, वेद शास्त्र जैसे ग्रंथों का मनोयोगपूर्वक अध्ययन किया। इनका समय भक्ति काल का था। उस समय भारतीय संस्कृति में मुस्लिम शासकों का राज व बोलबाला था। साथ ही, साहित्य संसार में सगुण-निर्गुण का भेदाभेद था। इन्होंने सगुण और निर्गुण के भेद को समाप्त कर दोनों में कोई भेद नहीं है कि सीख दी। उस समय भारत की शासकीय व्यवस्था भी शिथिल व जर्जर हो चुकी थी। हिंदू के मंदिरों को मुस्लिम शासकों द्वारा विध्वंश कराया जा रहा था। उस समय लड़ने के लिए मुसलमानों के पास तलवार, बरछा, भाला, तोप, बारूद जैसी हत्यारें होती थी लेकिन हिंदू के पास ऐसी कोई हथियार नहीं थी जिसका कि उसका सामना किया जा सके। उन आक्रमणकारियों के पास हत्यारें होती थी लेकिन हमारे पास कुछ भी नहीं। हम सारी शक्ति लगाकर लड़ने के पश्चात भी हार जाते थे। उसी समय पत्नी प्रेम से दीक्षित एक वैराग्य पुरुष का उदय हुआ, जिसका नाम आज सम्मान और आदरपूर्वक लिया जाता है। जो रामबोला की यात्रा तय कर गोस्वामी तुलसीदास बन जाते हैं। गोस्वामी तुलसीदास ने सनातन संस्कृति को रामचरितमानस जैसा ग्रंथ दिया। गोस्वामी तुलसीदास का उदय मुसलमान के आक्रमणकारी दौर में हुआ जिस समय सनातन संस्कृति संकट की स्थिति में थी उसी समय गोस्वामी तुलसीदास का उदय होता है और उन्होंने समस्त सनातन संस्कृति को अन्य संस्कृति से लड़ने के लिए एक रामचरितमानस जैसा ग्रंथ हथियार के रूप में देता है जिसका सामना करने के लिए अन्य संस्कृतियों के पास कोई हथियार नहीं था। न केवल यह हथियार था बल्कि समस्त मानव कल्याण का पोषक था। सदियों के महानायक राम के अनन्य भक्त और हनुमान के सेवक तथा जनमानस के हितकारी महाकवि गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस जैसा पवित्र ग्रंथ दिया जिसमें डुबकी लगाकर पापी मनुष्य भी इस ग्रंथ का सहारा लेकर भव सिंधु को पार कर सकता है। तुलसीदास ने अपने समय के सभी ग्रंथों को पढ़ा और उन्होंने अपने ढंग से सजाकर अपने भावों और विचारों का एक ऐसा ग्रंथ तैयार किया जो लोकमंगल के लिए सार्थक और मंगलकारी सिद्ध हुआ। जिसके महानायक प्रभु श्री राम हैं। तुलसीदास ने रामचरितमानस में राम को साधु संत, जन, पशु-पक्षी के रक्षक व आराध्य के रूप में स्थापित किया है। उन्होंने लिखा है -

जब-जब होहिं धर्म की हानी। बा?हि असुर अधम अभिमानी।।
तब तब धरि प्रभु विविध शरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।[5]

ऐसे तो भक्ति काल में कई अनूठे और बिरले महाकवियों का उदय हुआ है। उसमें से भी अलग हटकर एक सगुण उपासक राम भक्त कवि गोस्वामी तुलसीदास का उदय हुआ। एक तरफ तुलसीदास ने सुगण उपासना छोड़कर निर्गुण उपासना करने वाले भक्तों को गुण के महत्व को प्रतिपादित करते हुए लिखा-

ग्यान के अग्यान बिनु, तम बिनु कई प्रकास।
निरगुन कहै जो सगुन बिनु सो गुरु तुलसीदास।।[6]

अर्थात् जो अज्ञान के बिना ज्ञान की बात करें, जो अंधकार से ऊपर उठकर प्रकाश की बात करे, जो सगुण के बिना निर्गुण की बात करे, संसार में वही असली गुरू है। अपने धर्म ग्रंथ रामचरितमानस को एक अस्त्र और शस्त्र के रूप में सनातन संस्कृति को दिया जहाँ राम को धनुष-तरकश के साथ खड़ा कर दिया। जिसकी शक्ति के बराबर कोई दूसरी शक्ति नहीं थी। तुलसीदास की यह विराट कल्पना संसार में एक मिसाल बन गयी।तुलसी के संबंध में हिंदी साहित्य के मूर्धन्य विद्वान आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने साहित्य ग्रंथ 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में लिखा है-'गोस्वामी के प्रादुर्भाव को हिंदी काव्य क्षेत्र में एक चमत्कार समझना चाहिए। हिंदी काव्य की शक्ति का पूर्ण प्रसार उनके रचनाओं में ही पहले पहल दिखाई पड़ा। वीरगाथा के कवि अपने संकुचित क्षेत्र में काव्य भाषा के पुराने रूप को लेकर एक विशेष शैली की परंपरा निभाते आ रहे थे।'[7]

तुलसीदास ने अपने इस ग्रंथ में एक विशेष शैली को जन्म देकर मानव कल्याण के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस ग्रंथ की रचनाकर तुलसी ने कीर्तिमान स्थापित की जो लोकमंगल का काम किया। जिस पावन ग्रंथ पर डूबकी लगाकर मानव भव सिंधु रूपी बंधन से छुटकारा पा सकता है। एक स्त्री की फटकार का ही फलाफल है कि हमें इस महान ग्रंथ का दर्शन हुआ और इसका अध्ययन कर मोक्ष के द्वार तक ले जाता है। भारतीय वांग्मय

में रामचरितमानस एक अनूठा, पवित्र और कल्याणकारी ग्रंथ है जिसको पढ़ने मात्र से मनुष्य भव सिंधु रुपी संसार से तर जाते हैं। जिस प्रकार तुलसीदास पत्नी रत्नावली के प्रेम सिंधु से तर गए ।रामचरितमानस का प्रभाव एक बड़े क्षेत्र में दिखाई पड़ता है। भारतीय जनमानस को एक निश्चित दिशा दिखाने के लिए एक सक्षम ग्रंथ के रूप में हम पाते हैं। तुलसीदास की अनूठी प्रतिभा से प्रभावित निराला के विचारों को आलोचक रामविलास शर्मा ने 'निराला की साहित्य साधना' के प्रथम खण्ड में लिखा है-'अंग्रेजी और बांग्ला के अनेक कवियों के नाम गिनाने के बाद एक दिन निराला बोले- 'इन सब बड़ेन क पढ़ति है तो ज्यू जरूर प्रसन्न होत है पर जब तुलसीदास क पढ़ति है तो सबका अलग धरि देइत है। हमार स्वप्न इहै सदा रहा कि गंगा के किनारे नहाय के भीख मांगिके रही और तुलसीदास कै पढ़ी।'[8] इस तरह तुलसीदास के प्रेम व मोह भंग होने से जनमानस के हृदय में बस गए और सदा-सदा के लिए बस गए। जब प्रेमी अपनी पराकाष्ठा तक पहुँचता है और उस पराकाष्ठा में पहुँचे हुए प्रेमी को तिरस्कृत का सामना करना पड़ता है ऐसी विकट परिस्थिति में या तो वह प्रेमी पागल बन जाता है या तो कवि बन जाता है। इसी के साक्षात प्रतिरूप है- गोस्वामी तुलसीदास। पत्नी की फटकार ने मोह भंग कर दिया। उस तिरस्कृत घायल प्रेमी जिसे आज के मंदबुद्धि मानव को एक ऐसा ग्रंथ दिया जिसे पाकर मानव समाज धन्य हो गया। उस तिरस्कृत को बर्दाश्त कर लिया तो गोस्वामी तुलसीदास बन गए। तुलसीदास अपनी पत्नी से दीक्षित होने के पश्चात मोह, माया, प्रेम और सर्वस्व जीवन अपने इष्टदेव प्रभु श्री राम के चरणों में समर्पित कर दिया। रामचरितमानस में उन्होंने लिखा है-

कामहि नारी पिआरि जिमि, लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय, लागहु मोहि राम।।[9]

अर्थात जैसे कामी पुरुष को स्त्री प्यारी लगती है और लोभी को धन प्यारा लगता है। वैसे ही हे! रघुनाथ जी, हे! राम जी आप मुझे निरंतर प्रिय लगिए। इस दोहे से हम अनुभव कर सकते हैं कि स्त्री से विरक्त पुरुष स्त्री के प्रति जितना मृदुल था विरक्ति के पश्चात् उससे कहीं अधिक कठोर बन जाता है। मानव हृदय जब तक प्रेम, मोह, माया, भाई-बंधु में आसक्त रहता है तब तक कोमल है और जहाँ इन सारी भावनाओं से हृदय विरक्त हुआ, इससे ज्यादा कठोर वस्तु संसार में और कुछ भी नहीं है। जब हृदय आत्मग्लानि से भर जाता है तो वैराग्य लाभ का रसास्वादन करता है। तुलसीदास अपने पत्नी से फटकार ना पाए होते तो शायद हमें रामचरितमानस जैसा बेजोड़ ग्रंथ न मिलता और न ही तुलसीदास कवि शिरोमणि की उपाधि से विभूषित होते। जब ईश्वर को मानव से रूबरू होने की इच्छा होती है तो वे या कवि या लेखक के मुखारविंद से या कलम की स्याही के स्पष्ट अक्षरों के रूप में पाठक के हृदय में समाकर परम सुख की अनुभूति और आनंद प्राप्त करते हैं। तुलसीदास इसके साक्षात विग्रह रूप है। तुलसीदास अपने प्रिय रत्नावली को हृदय में बसाए फिरते थे लेकिन हृदय में बसने वाली ने ऐसी फटकार लगाई कि तुलसीदास बैरागी बन गए। उसी फटकार ने तुलसीदास के हृदय में छिपी भक्ति व कवि भावनाओं को जगाई। वे प्रभु श्रीराम के दास बन गए और रामचरितमानस जैसा महाकाव्य की रचनाकर सबके हृदय में अमिट छाप छो? गए। उससे पहले लाख निकालने का प्रयास भी करता तो प्रयास हाथ जोड़कर खड़ा हो जाए यद्यपि रत्नावली के इस फटकार से तुलसीदास के हृदय में बसी प्रेमासक्त रत्नावली फटकार मात्र से छिटक कर बाहर आ गई। इसी का फलाफल है, इसी का परिणाम है कि हमें रामचरितमानस जैसा विशाल समग्र साहित्य हमें प्राप्त हुआ। जो तुलसी का यह ग्रंथ हृदय की अतल गहराई में इस तरह जगह बना चुका है कि इसके बिना अब सब कुछ अधूरा-सा प्रतीत होता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है-'सारांश यह कि हिन्दी काव्य की सब प्रकार की रचना शैली के ऊपर गोस्वामी तुलसीदास ने अपना ऊँचा आसन प्रतिष्ठित किया है। यह उच्चता और किसी को प्राप्त नहीं।'[10] तुलसीदास ने जो स्थान साहित्य में हासिल किया है, वैसा किसी और साहित्यकार के लिए स्थान पाना असंभव है। इनका साहित्य के क्षेत्र में अविस्मरणीय योगदान रहा है। इनका रामचरितमानस हिंदी साहित्य का अमर महाकाव्य है। सरल अवधी भाषा में भगवान राम के चरित्र और आदर्शों को एक नए ढंग में प्रस्तुत किया। उन्होंने भक्ति आंदोलन के इस दौर में समाज के लोगों को एक नई दिशा दी और मानव समाज में राम को सनातन संस्कृति के रक्षकके रूप में प्रतिष्ठित किया। राम को मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में स्थापित किया। एक स्त्री रत्नावली ने अपने पति का मोह भंग कर सच्ची राह पर चलने के लिए प्रेरित की। रत्नावली का विचार तुलसीदास के लिए दर्शन का काम किया। हृदय की व्याकुलता प्रेम के बंधन को तोड़कर स्वहित के लिए एक निश्चित दिशा की और कदम ब?ाया। उस कदम ने सम्पूर्ण समाज के लिए प्रेरणास्रोत बन गया।

निष्कर्ष:-पत्नी प्रेम से विरक्त तुलसीदास ने राम के गुण का आश्रय लिया। तुलसीदास की रामभक्ति भावनाएँ और साहित्यिक कृतियां न केवल भक्ति आंदोलन का प्रमुख आधार बनीं, बल्कि उन्होंने सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और नैतिक की राह पर समाज को चलने के लिए प्रेरित किया। उनका जीवन और कृतित्व इस बात का प्रमाण है कि सांसारिक प्रेम से ईश्वर की भक्ति का मार्ग प्रशस्त हो सकता है। एक स्त्री ने तुलसीदास को इतनी बड़ी सीख देकर न केवल तुलसीदास के जीवन में परिवर्तन लाया बल्कि समस्त मानव कल्याण के उद्धार हेतु राम शब्द की महिमा को भी प्रतिष्ठित किया।

सन्दर्भ सूची:-

1. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी - राग-विराग, सं. रामविलास शर्मा, लोकभारती प्रकाशन,महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद संस्करण - 2014, पृष्ठ संख्या - 104
2. शर्मा, रामविलास- निराला की साहित्य साधना, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण-1981, पृष्ठ संख्या-535
3. तुलसीदास, गोस्वामी- रामचरितमानस, गीता प्रेस गोरखपुर, बालकाण्ड, दोहा संख्या-120, चौपाई-3, पृष्ठ संख्या - 52
4. वही, अयोध्या कांड, दोहा संख्या -63, चौपाई- 4, पृष्ठ सं.- 327
5. वही, उत्तरकाण्ड, पृष्ठ संख्या-672
6. शर्मा, डॉ. करुणा- वाल्मीकि रामायण और रामकीर्ति एक तुलनात्मक अध्ययन, भारतीय दूतावास बैंकॉक, पृष्ठ संख्या- 07
7. शुक्ल, आ. रामचंद्र - हिन्दी साहित्य का इतिहास, श्री प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, नवीन संस्करण, पृष्ठ संख्या - 99
8. वही, पृष्ठ संख्या - 102
9. वही, पृष्ठ संख्या - 96
10. शुक्ल, आ. रामचंद्र - गोस्वामी तुलसीदास, इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग, संस्करण-1933, पृष्ठ संख्या- 76

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

निर्मल वर्मा और उनके परिंदे

डॉ. प्रशांत गौरव

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, गोस्सनर कॉलेज, राँची, राँची विश्वविद्यालय, राँची

निर्मल वर्मा नई कहानी के सशक्त कथाकार हैं। परिंदे (1959) इनका पहला कहानी संग्रह है। सात कहानियों के इस संग्रह की कहानी 'परिंदे' को नई कहानी आन्दोलन में एक नया मोड़ उपस्थित करने वाली कहानी माना गया। यह रूमानी प्रेम की कहानी है। इस कहानी में मुख्य आठ चरित्र हैं- लतिका, ह्यूबर्ट, मेजर गिरीश नेगी, डॉ. मुखर्जी, मिस वुड, फ़ादर आलमंड, करीमुद्दीन और जूली। सभी चरित्र एक विशेष वर्ग और वातावरण से आए हैं। हर पात्र अंग्रेजियत के रंग में रंगा है। इसमें भी प्रधानता है लतिका की। कहानीकार ने इसके माध्यम से आधुनिक समाज में संपर्कों के लिए ललकती, किन्तु संपर्कों से कटी उस नारी का चित्रण किया है, जो अपने ही एकांत में बंद परिंदे की तरह छटपटाती है। सभी चरित्र कथा के अनुकूल तो हैं ही साथ ही स्वाभाविक, स्वतंत्र व्यक्तित्व से युक्त और वर्तमान नगरीय जीवन से संबंधित है ।

'परिंदे' कहानी की मुख्य पात्र लतिका एक पहाड़ी विद्यालय की अध्यापिका है और हॉस्टल की वार्डन। लतिका की बात करें तो इसी पहाड़ी कसबे में उसे कैप्टन नेगी से प्रेम हो गया, लेकिन उसे इस बात का गहरा सदमा लगा कि उसका प्रेमी कैप्टन गिरीश नेगी की एक प्लेन दुर्घटना में असमय मृत्यु हो गई। वह उस पहाड़ी स्कूल में अध्यापन कर रही थी और प्रेमी की मृत्यु बाद घोर अकेलापन झेल रही थी। उसके साथ कैप्टन नेगी की स्मृतियाँ हैं, जिनके सहारे वह एकाकी जीवन जी रही है। कहानी के और भी पात्र उसी स्कूल में उसके सहयोगी हैं जो अकेलेपन से त्रस्त हैं और विगत में ही जीना चाहते हैं।

लतिका को एक शिक्षक ह्यूबर्ट उसको प्रेम-पत्र लिखता है, लेकिन लतिका पहले तो दूसरे जीवन साथी की ओर कदम नहीं बढ़ाना चाहती है, हालाँकि उसके मन में मिस्टर ह्यूबर्ट के प्रति हमदर्दी है और वह हमदर्दी न जाने कब प्रेम में बदल जाता है- लेकिन ह्यूबर्ट को जब लतिका की प्रेम कहानी डॉक्टर मुकर्जी से सुनता है तो वह लतिका से उस पत्र के लिए क्षमा माँग लेता है। लतिका का प्रेम अचानक पहले ही कदम पर टूट जाता है और वह अपने में एक बदलाव का अनुभव करती है और जूली नाम की छात्र जिससे उसने एक तरह से प्रेम करने का अधिकार छिनते हुए उससे प्रेम-पत्र छीन। जब एक रात लतिका होस्टल की कुछ छात्राओं को नियम विरुद्ध छात्रा सुधा के रूम में मुट्ठीभर आसमान ढूँढ़ते, आनन्द में उन्मुक्त उड़ते दीखते हैं, तब उनकी हँसी-ठिठोली का शोर सुन कर लतिका उनके लिए कठोर हो जाती है। उसने कमरे का दरवाजा खोला तो देखा कमरा अँधेरा है-

'कमरे में अँधेरा क्यों कर रखा है?' लतिका के स्वर में हल्की-सी झिड़क का आभास था।

'लैंप में तेल ही खत्म हो गया, मैडम'

यह सुधा का कमरा था, इसलिए उसे ही उत्तर देना पड़ा। होस्टल में शायद वह सबसे अधिक लोकप्रिय थी। क्योंकि सदा छुट्टी के समय या रात के डिनर के बाद आस-पास के कमरों में रहने वाली लड़कियों का जमघट उसी के कमरे में लग जाता था। देर तक गपशप, हँसी-मजाक चलता रहता।'[1]

यही होस्टल कल्चर होता ही है- कैद में पड़ी छात्राएँ, मित्रों में परिवार ढूँढ़ लेती हैं, नियम-प्रतिबंधों को तोड़ती हुई, कमरे में आसमान ढूँढ़ लेती हैं। कौन बंधन नहीं तोड़ता? नदियाँ किनारा तोड़ती हैं, समुद्र की लहरें किनारा लाँघती हैं, पानी के अन्दर बना बुलबुला पानी के सतह पर आ कर फूटता है और उसमें कैद हवा अपना संसार पा लेती है, बुलबुले में कैद हवा आजाद हवा में घुल जाती है ! आजादी और प्रेम पूरित परिवार सभी खोजते हैं, लेकिन समय ने मनुष्य को व्यक्तिवादी बना दिया है। समय ने पारिवारिक सम्बन्धों को लाभ-हानि के आधार पर चलने और टूटने वाला बना दिया है। पारिवारिक सदस्य सहयोग और प्रेम-स्नेह से विलग हो गए हैं और संबंधों को तराजू पर तौलते हैं, लाभ-हानि देखते हैं।

लतिका खुद को भी एक चिड़ियाघर के परिंदे की तरह पाती है, तो उसके अन्दर उसका अपना जीवन कौंध जाता है। वह छात्राओं के प्रति अपनी जिम्मेदारी देखती हुई कभी कठोर होती है, और जैसे ही वह अपने अंतर्मन में जाती है, उनके प्रति नरम दिल हो जाती है- वह तो छात्राओं से भी अकेली है। वह मन आकाश में भी उड़ नहीं सकती। उसका परिवार कहने को है, पर है नहीं। उसको कोई जीवन साथी नहीं मिला और जो मिला था वह मर चुका है, लेकिन वही उसके अन्दर जीवित है, शेष कोई नही- न वह किसी को आने देना चाहती है।

लतिका से सहकर्मी मिस्टर ह्यूबर्ट ने प्रेमी बनना चाहा लेकिन उसके प्रस्ताव को भी उसने ठुकरा दिया। उसे जब अनुभव हुआ कि परिवार के सदस्य उसके न हुए, नाते-रिश्ते के बीच प्रेम-स्नेह न रहा फिर एक नया प्रेमी इस भौतिवादी समाज में कितने दिन उसे अपने संसार में स्थान देगा और कितने दिनों तक वह प्रेमगीत गाती अपने दूसरे प्रेमी के साथ प्रेम गगन में उड़ पाएगी? उसका मन अनिश्चय की स्थिति में था और वह अपने प्रथम प्रेमी कैप्टन नेगी को भूल नहीं सकती।

बहरहाल लतिका दूसरे ब्लॉक की एक लड़की जूली को सुधा के कमरे में देखती है तो फिर से क्रोधित हो कर पूछती है-

'जूली अब तक इस ब्लॉक में क्या कर रही हो?'[2]

जूली क्या बोलती वह तो अकेलेपन का अँधेरा दूर करने के लिए सुधा के अँधेरे कमरे में एक लड़की से चिपक कर बैठी थी और अन्य लड़कियों के साथ हँसी-मजाक कर रही थी। उसने आँखें झुका लीं और ओठ सिल लिए। सुधा ने लतिका को कोमल स्वर में कहा-

'मैडम, कल से (सर्दियों की) छुट्टियाँ शुरू हो जाएँगी, इसलिए आज रात हम सबने मिलकर... और सुधा पूरी बात न कह कर हेमंती की ओर देखते हुए मुस्कुराने लगी।

'हेमंती के गाने का प्रोग्राम है, आप भी कुछ देर बैठिए न![3]

सुधा के इस अनुरोध ने लतिका को होस्टल की जिन्दगी की हकीकत की याद दिला दी, इतना ही नहीं, उसके अपने जीवन की हकीकत दिखलाने के लिए उसके स्मृति-द्वार खोल दिए। वह भी तो उन्हीं की तरह एक पंखहीन परिंदा ही है, और होस्टल उनके लिए एक चिड़ियाघर ही तो है, जहाँ मित्र के रूप में मिस्टर ह्यूबर्ट, डॉक्टर मुकर्जी जरूर मिल सकते हैं, जो खुद ही अकेलेपन से जूझते रहते हैं, लेकिन उनकी विवशता है कि कोई किसी से प्रेम नहीं कर सकता, बस एक दूसरे के साथ समय काट सकते हैं! वे समय को काटते हुए कुछ सुख के पल ढूँढ़ सकते हैं, अपनी यादों से कुछ पल के लिए मुक्ति पा सकते हैं, लेकिन यादें ऐसी हैं, जो छूटती नहीं और न कोई अपनी यादों को भूलना चाहता है, क्योकिं यादें ही तो उनके जीने का सहारा हैं, अकेलेपन के साथी हैं। लतिका को अनुभव हुआ कि उसने छात्राओं को दो पल का सुख ढूँढने में व्यवधान उपस्थित कर अनुचित किया है-

'लतिका को उलझन मालूम हुई। इस समय यहाँ आकर उसने उनके मजे को किरकिरा कर दिया। इस छोटे-से हिल स्टेशन पर रहते उसे खासा अर्सा हो गया, लेकिन कब समय पतझड़ और गर्मियों का घेरा पार कर सर्दी की छुट्टियों की गोद में सिमट जाता है, उसे कभी याद नहीं रहता।

चोरों की तरह चुपचाप वह देहरी से बाहर हो गई। उसके चेहरे का तनाव ढीला पड़ गया। वह मुस्कुराने लगी।'[4]

अपनी स्मृति से बंधे रहने के कारण लतिका को मौसम के आने-जाने का पता भी नहीं चलता। वह पीले पत्ते के झरने का मनोहर दृश्य नहीं देख पाती, पत्तों के बिना सूनी डालियों को नहीं देख पाती-अच्छा ही है, उसकी भी जिन्दगी पीलेपन का शिकार हो कर यूँ ही पीले पत्तों की तरह झर जाएगी-बूढ़ी हो जाएगी।... गर्मियों के ताप का अनुभव किए बिना ही लतिका सर्दी के मौसम में अपने को देख कर उसे अनुभव होता है कि पतझड़ और गर्मी के मौसम आए और चुपचाप चले गए! जब मनुष्य अपनी यादों के घेरे से निकलता नहीं है तो वह दौड़ते समय के साथ नहीं चल पाता। लतिका ने अपने को कैप्टन नेगी की स्मृतियों से बाँध रखा था।

निर्मल वर्मा लतिका को बदलता देखते हैं-लतिका ने यह अफ़वाह सुनी थी कि जूली एक मिलिट्री अफ़सर के साथ घूमती देखी गई है। इसी सम्बन्ध में उसने जूली को एक पत्र देते हुए उस पत्र के बारे में बहुत कठोरता से पूछा था। लतिका देख चुकी थी कि उस पर कुमाऊँ रेजीमेंटल सेंटर की मुहर लगी है। जूली ने झूठ बोला कि वह उसके भाई का पत्र है, लेकिन उसके हाथ से लतिका ने पत्र छीन लिया- वह पत्र उससे प्रेम करने वाले आर्मी अफ़सर का पत्र था। लतिका ने उससे पत्र छीन लिया था। जूली को उदास कर दिया था। अपने इस व्यवहार के साथ लतिका को अपने पहले प्रेम कैप्टन नेगी की याद आती है। उसके मन आकाश में प्रश्नों की बौछार हो जाती है- पहले प्रेम की हर निशानी, हर प्रेम सम्वाद को प्रेमी अपनी छाती से चिपकाए ही तो दुनिया छोड़ते हैं। मैंने भी तो नेगी को न भूलने की कसम खा रखी है। वह जानती थी कि उसने जूली से उसके प्रेम करने अधिकार को छीना है-

'शायद, कौन जाने, शायद जूली का यह प्रथम परिचय हो, उस अनुभूति से, जिसे कोई भी लड़की बड़े चाव से संजोकर, सँभालकर अपने में छिपाए रहती है एक अनिर्वचनीय सुख...'[5]

पहले नई कहानी युग के कथाकारों ने विवाह को अनावश्यक माना था, स्त्री-पुरुष के बीच एक ही सम्बन्ध माना था- यौनिक संबंध। अज्ञेय ने तो अपने उपन्यास 'शेखरः एक जीवनी' के शेखर को अपनी मौसेरी बहन से प्रेम को उकेरा था और शेखर उस सम्बन्ध को अपने जीवन का आधार मानता था- हालाँकि इस प्रसंग की खूब आलोचना हुई थी। लेकिन जूली ने तो मात्र अपना पहला प्रेम किया था, उस व्यक्ति से जो उसका किसी तरह से सगा नहीं था- इस युग में किसी लड़की को प्रेम करने से रोकना उचित नहीं था। लतिका अपनी यादों को खोना नहीं चाहती है। जीवन में आगे बढ़ने की बात युगानुरूप नहीं सोचती। क्या लतिका को इन यादों से निकल कर ह्यूबर्ट का प्रेम प्रस्ताव स्वीकार कर लेना चाहिए? क्या ह्यूबर्ट को कोशिश करनी चाहिए कि लतिका उसके प्रेम प्रस्ताव को स्वीकार कर ले। निर्मल वर्मा उत्तर ढूँढने के लिए लतिका सहित चार पुरुष पात्रों- ह्यूबर्ट, डॉ. मुखर्जी, फ़ादर एल्मंड, करीमुद्दीन और एक वृद्ध प्राचार्या मिस वुड की ओर बढ़ते हैं।

लतिका ह्यूबर्ट के प्रेमपत्र को उसका बचपना मानती है, लेकिन वह ह्यूबर्ट को यह साफ़ नहीं करना चाहती कि वह उससके प्रेम को स्वीकार नहीं कर सकती ताकि वह उसे यह भ्रम बना रहे कि आज न कल लतिका उसके प्रेम प्रस्ताव को स्वीकार कर लेगी। यह भ्रम उसके जीवन में एक उन्माद पैदा करता रहेगा, उसे जीने के लिए सहायक सिद्ध होगा-

'लतिका को ह्यूबर्ट की इस बचकाना हरकत पर हँसी आई थी, किंतु भीतर-ही-भीतर प्रसन्नता भी हुई थी उसकी उम्र अभी बीती नहीं है, अब भी वह दूसरों को अपनी ओर आकर्षित कर सकती है। ह्यूबर्ट का पत्र पढ़कर उसे क्रोध नहीं आया, आई थी केवल ममता। वह चाहती तो उसकी गलतफ़हमी को दूर करने में देर न लगाती, किंतु कोई शक्ति उसे रोके रहती है, उसके कारण अपने पर विश्वास रहता है, अपने सुख का भ्रम मानो ह्यूबर्ट की गलतफहमी से जुड़ा है।'[6]

लतिका चाहती तो वह ह्यूबर्ट से साफ़ कह सकती थी कि उसके प्रेम प्रस्ताव को अस्वीकार करती है, लेकिन उसने ऐसा नहीं किया- ऐसा कर उसने ह्यूबर्ट के प्रति कोई एहसान नहीं किया था, बल्कि लतिका को मिला प्रेम-प्रस्ताव तो इस बात का प्रमाण-पत्र था कि वह प्रिंसिपल मिस वुड की तरह बूढ़ी और चिड़चिड़ी नहीं हुई है, यानी उसमें अभी वह उम्र शेष है जो किसी मर्द को आकर्षित कर सकता है। लतिका ह्यूबर्ट का मन पढ़ती है और निर्मल वर्मा लतिका का मन पढ़ते हैं और दो अनोखे मनो-चित्र बनाते हैं! इसके बाद निर्मल वर्मा वे सारे मनोवैज्ञानिक दृश्य पाठक को दिखलाते हैं जो किसी के अंतर्मन का द्वार खोलते हैं-

एक सुबह करीमुद्दीन लतिका के कमरे में चाय पहुँचाते हुए उसे बताता है- 'ह्यूबर्ट साहब तो कल ही चले जाएँगे, कल रात उनकी तबीयत फ़िर खराब हो गई। आधी रात के वक्त मुझे जगाने आए थे। कहते थे, छाती में तकलीफ़ है। उन्हें यह मौसम नहीं रास आता। कह रहे थे, लड़कियों की बस में वह भी कल ही चले जाएँगे।'[7]

यह सूचना पाते ही लतिका की इच्छा हुई कि वह ह्यूबर्ट के कमरे मे जाकर उनकी तबीयत की पूछताछ कर आए लेकिन वह ऐसा नहीं करती बल्कि वह ह्यूबर्ट को दयनीय देखती है- अपनी स्मृति में-

'ह्यूबर्ट का चेहरा जब उसे देखकर सहमा-सा दयनीय हो जाता है, तब लगता है कि वह अपनी मूक निरीह याचना में उसे कोस रहा है-न वह उसकी गलतफ़हमी को दूर करने का प्रयत्न कर पाती है, न उसे अपनी विवशता की सफ़ाई देने का साहस होता है। उसे लगता है कि इस जाले से बाहर निकलने के लिए वह धागे के जिस सिरे को पकड़ती है, वह खुद एक गाँठ बनकर रह जाता है...।'[8]

वस्तुतः लतिका नहीं चाहती कि ह्यूबर्ट उससे उसका नकारात्मक जवाब पा ले और उसका इन्तजार न करे- लतिका के मन में उसके प्रति शायद प्रेम भी अंकुरित होने लगा था और दया का भाव भी। वह ह्यूबर्ट की गलतफ़मी को स्थाई देखना चाहती थी ताकि उसे लगे कि अभी उसका एक प्रेमी है और वह अभी बूढ़ी नहीं हुई है। यही कारण है वह ह्यूबर्ट से नहीं कहती कि वह उसके प्रेम प्रस्ताव को अस्वीकार करती है। उसके लिए उसकी स्मृति में उसका पहला प्रेमी कैप्टन नेगी बैठा हुआ था। ऐसी अवस्था में वह चाहती है कि कोई न कोई उसका प्रेमी बना रहे और यह उसके लिए बस एक प्रमाणपत्र होगा कि वह बूढ़ी नहीं हुई है।

लतिका भी भ्रम में जीना चाहती थी कि उसकी उम्र इतनी नहीं हुई कि उसे कोई प्रेमी नहीं मिल सके। लतिका चाहती थी कि ह्यूबर्ट लतिका के

द्वारा प्रेम प्रस्ताव की स्वीकृति का सुखद इंतजार करता ही रहे– यह इंतजार अनंत घड़ी तक चले। लेकिन एक दिन लतिका को ह्यूबर्ट ने चौंका दिया, दुखित कर दिया–

'मिस लतिका, ह्यूबर्ट ने धीरे से कहा। वह चलते–चलते रुक गया था। लतिका ह्यूबर्ट के भारी स्वर से चौंक–सी गई।

'क्या बात है मिस्टर ह्यूबर्ट?'

'वह पत्र, उसके लिए मैं लज्जित हूँ। उसे आप वापस लौटा दें, समझ लें कि मैंने उसे कभी नहीं लिखा था।'[9]

लतिका चाहती थी कि ह्यूबर्ट उसका प्रेम पाने के लिए इंतजार करता रहे, लेकिन ह्यूबर्ट ने अपने प्रेम पत्र के लिए लतिका से क्षमा माँग कर उसे हतप्रभ कर दिया। दोनों का भ्रम टूट गया था। ह्यूबर्ट ने अपना भ्रम खुद तोड़ा था और उसके भ्रम टूटने की जानकारी उसी से पाकर लतिका का भी भ्रम टूट गया था कि वह बूढ़ी नहीं होने वाली! लेकिन लतिका ने अपने दु:ख को पी लिया, जैसे ह्यूबर्ट की क्षमा याचना से उसने कुछ खोया ही न हो। लतिका का ह्यूबर्ट के लिए प्रेम छलकने की पृष्ठभूमि बनने लगी थी–

करीमुद्दीन लतिका को मिस्टर ह्यूबर्ट के बीमार होने की सूचना देकर उसे चिंतित कर देता है। वह पूछती है कि क्या ह्यूबर्ट अपने कमरे में हैं? करीमुद्दीन बताता है कि वह न जाने कहाँ घूमने निकल पड़े हैं। लतिका अपनी चिंता को छिपा कर यह प्रयास करती है कि कैप्टन नेगी के आलावा किसी दूसरे व्यक्ति से उसका प्रेम उजागर न हो।

दूसरी ओर, डॉक्टर मुकर्जी मनोवैज्ञानिक की तरह लतिका के अंतर्मन में ह्यूबर्ट के लिए प्रेम है या नहीं, इसका अन्वेषण करते हैं। साथ चलते हुए डॉक्टर मुकर्जी लतिका को बताते हैं कि ह्यूबर्ट का स्वास्थ्य ठीक नहीं है, उसे फेफड़े का एक्सरे करा लेना चाहिए–मेरा भ्रम दूर होना चाहिए। करीमुद्दीन ने ह्यूबर्ट के बीमार होने की सूचना दे दी थी, डॉक्टर मुकर्जी ने लतिका को ह्यूबर्ट की बीमारी की गंभीरता का संकेत दे दिया था। लतिका सहसा चलते–चलते रुक गई। उसका चेहरा पीला पड़ गया। डॉक्टर मुकर्जी और लतिका के बीच एक संवाद हुआ जो संवाद वस्तुत: एक मनोवैज्ञानिक और एक मानसिक रूप से परेशान एक स्त्री के बीच का था। लतिका खुल गई थी– ह्यूबर्ट के प्रति उसके मन में दबाया गया प्रेम था, जो छलक जाना चाहता है–

'डॉक्टर!' लतिका का स्वर भर्राया हुआ था।

'क्या बात है मिस लतिका, आप रुक क्यों गई?'

'डॉक्टर, क्या मिस्टर ह्यूबर्ट....'

'डॉक्टर ने अपनी टार्च की मद्धिम रोशनी लतिका पर दी– उसने देखा लतिका का चेहरा एकदम पीला पड़ गया है और वह रह–रहकर पत्ते–सी काँप जाती है।'[10]

लतिका को लगा कि ह्यूबर्ट का जीवन खतरे में है, हो सकता है उसे टीबी हो गया हो!

लतिका के अंतर्मन में ह्यूबर्ट के प्रति दबा हुआ प्रेम छलक पड़ा। वह रोने–रोने को हो गई थी। चेहरा मुरझा गया था। वह ह्यूबर्ट की मृत्यु की कल्पना कर अपने प्रेम की मृत्यु देख रही थी– वह काँप उठी। उसे याद आने लगा नशे में हिचकियों के बीच गाता हुआ ह्यूबर्ट–

'इन ए बैक लेन ऑफ द सिटी, देयर इज ए गर्ल, हू लव्ज मी...' लतिका ने उस लड़खड़ाते हुए ह्यूबर्ट को गुड नाइट कहा लेकिन ह्यूबर्ट ने कोई जवाब नहीं दिया और सोने की मुद्रा में चला गया। लतिका अकेली थी और इस गुड नाईट के बाद वह नितांत अकेली हो गई थी। लतिका के शरीर में सिहरन सी दौड़ गई। इसी समय लतिका के मन में जूली के प्रति अपने व्यवहार का उसे अपराध बोध हुआ, जिसे उसने अपने प्रेमी से दूर कर उसे अकेलपन के अँधेरे में धकेल कर दुखी कर दिया था। उसने तेजी से निर्णय लिया– मुझे प्यार मिला था, वह मैंने खो दिया, तो क्या जूली को भी उसका पहला प्यार खो देने दूँ? इस अपराध बोध के साथ वह जूली के कमरे की ओर गई–'कॉरीडोर में चलते हुए उसने देखा, जूली के कमरे से प्रकाश की एक पतली रेखा दरवाजे के बाहर खिंच आई है। लतिका को कुछ याद आया। वह कुछ क्षणों तक साँस रोके जूली के कमरे के बाहर खड़ी रही। कुछ देर बाद उसने दरवाजा खटखटाया। भीतर से कोई आवाज नहीं आई। लतिका ने दबे हाथों से हलका–सा धक्का दिया दरवाजा खुल गया। जूली लैंप बुझाना भूल गई थी। लतिका धीरे–धीरे दबे पाँव जूली के पलंग के पास चली आई। जूली का सोता हुआ चेहरा लैंप के फीके आलोक में पीला–सा दिख रहा था। लतिका ने अपनी जेब से वही नीला लिफाफा निकाला और उसे धीरे से जूली के तकिए के नीचे दबाकर रख दिया।'[11]

लतिका को अपना प्यार नहीं मिला लेकिन वह जूली के प्रेम को नहीं छीन सकती– ऐसा करने का अधिकार उसका नहीं है। उसे प्रेम नहीं मिला तो क्या वह जूली को मिला हुआ प्रेम छीन लेगी? वह अकेलेपन के अंधकार में भटक रही है, तो क्या वह अपनी जैसी अँधेरी जिन्दगी जूली को भी दे दे? इस भौतिकवादी–व्यक्तिवादी युग में लोग यह नारा ले कर चलने लगे कि 'मुझे नहीं, तो तुझे भी नहीं!' इस नारे पर लतिका चलती तो कभी भी वह जूली को उसके प्रेमी का पत्र नहीं लौटाती। इस कहानी में निर्मल वर्मा ने व्यक्तिवाद और समाजवाद के बीच एक संतुलन बनाया है। नई कहानी युग में व्यक्तिवादी कहानियों का प्रचलन था, लेकिन निर्मल वर्मा ने नई कहानी के घेरे को तोड़ कर एक नया प्रयोग किया और अपने जीवन की एक श्रेष्ठ कहानी लिख डाली, जिसमें सच्चा प्रेम है, संवेदना का प्रवाह है और अभिव्यक्त भावों में असीम गहराई है और दूसरों के अधिकार पर विचारने की दृष्टि है। नामवर सिंह ने लिखा है–

'परिंदे से यह शिकायत दूर हो जाती है कि हिंदी कथा–साहित्य अभी पुराने सामाजिक संघर्ष के स्थूल धरातल पर ही 'मार्कटाइप' कर रहा है। समकालीनों में निर्मल वर्मा पहले कहानीकार हैं जिन्होने इस दायरे को तोड़ा है– बल्कि छोड़ा है, और समाज के मनुष्य की बाह्य–आतंरिक समस्या को उठाया है।'[12]

जीवन में अकेलापन मात्र कुछ लोगों के साथ रहने से दूर नहीं होते– ललिता, ह्यूबर्ट और डॉ. मुकर्जी तीनों अपने–अपने जीवन में अकेले पड़ गए थे। लतिका का प्रेमी गुजर गया था और वह उसकी यादों के सहारे अपना अकेला जीवन गुजारना चाहती थी और जब उसके अकेलेपन तोड़ने के लिए ह्यूबर्ट प्रस्तुत होता है तो लतिका उसका साथ नहीं देती। ह्यूबर्ट भी उसकी यादों को मिटाना नहीं चाहता और अपने अकेलेपन को शराब के हवाले कर देता है। दूसरी ओर डॉ. मुकर्जी अपने अकेलेपन को हँस कर उड़ा देना चाहता है या सिगार के धुएँ से ढकना चाहता है। शायद वह अंतिम साँस तक बर्मा जाने के लिए तरसेगा जहाँ उसकी पत्नी की मृत्यु हो गई थी। तीनों की जिन्दगी अभिशप्त है। वे किसी से जुड़ नहीं पाते हैं।

दूसरों से न जुड़ पाने, अकेले रह जाने– अलगाव बोध की स्थिति को निर्मल वर्मा ने अपनी कहानियों का मुख्य विषय बनाया है। अलगाव कहें या अकेलापन इस युग में खत्म नहीं कर पाते हैं। भौतिकवादी युग में लोगों में अकेलापन किसी भी उम्र के मनुष्य झेलने के लिए विवश हैं। यह एक वैश्विक समस्या है। बच्चे, बूढ़े और टूटे दिलों वाले अकसर अकेलापन के शिकार हो जाते हैं।

रामदरश मिश्र की टिप्पणी है–

'परिंदे प्रतीक हैं, उन टूटे हुए प्रेमियों के जो अपनी–अपनी जगहों से टूटकर उस पहाड़ी स्थान पर एकत्र हो गए हैं। डॉक्टर मुकर्जी, मिस्टर ह्यूबर्ट भी तो परिंदे ही हैं किन्तु परिंदे तो एक ठहराव के बाद उड़ जाएँगे किन्तु ये तीनों कहाँ जाएँगे? वे तो उसी सुनसान पहाड़ी स्थान पर एक साथ होते हुए भी अलग–अलग रहने के लिए अभिशप्त हैं।'[13]

'परिंदे' कहानी में परिंदे प्रतीक हैं, उन परिदों के जो अपने–अपने प्रेमियों से दूर हैं और अपने–अपने मूल स्थान से दूर एक पहाड़ी स्थान पर

आ गए हैं, साथ रहते हैं, बस जीवन काटने के लिए, लेकिन परिंदों की तरह अपनी मंजिल की और कभी उड़ नहीं पाते–उनको कहाँ जाना है, यह पता नहीं है या वे अपनी स्मृतियों से अलग नहीं हो पाते। वे अपनी–अपनी यादों के घेरे में कैद हैं। यहीं वे परिंदों के जीवन से बहुत अलग हो जाते हैं। परिंदे प्राकृतिक जीवन जीते हैं और अपना स्थान अपने जीवन को जीने के लिए बदलते हैं, लेकिन टूटे हुए दिल लिए ये प्रेमी अपनी–अपनी प्रेमिका की यादों में भटकते रहते हैं– जीवन को यादों के कैद से बाहर नहीं ले जाना चाहते। डॉक्टर मुकर्जी, मिस्टर ह्यूबर्ट भी लतिका की तरह परिंदे ही हैं। परिंदे तो एक मौसमी–ठहराव के बाद उड़ जाते हैं, किन्तु ये तीनों कहाँ जाएँ, इनको पता नहीं है।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि परिंदे एक विशेष मूड और मनः स्थिति की कहानी है। जिसे कुछ विशेष क्षणों में भोगा परखा जा सकता है। इस कहानी में लेखक का पूरा ध्यान मानसिक स्मृतियों और अंतर्द्वंद्व0 में लगा है। इस प्रकार घटनाएं बाह्य कम और आंतरिक (मानसिक) अधिक है। जिनको स्मृतियों के माध्यम से श्रृंखलित किया गया है। आधुनिक संदर्भों में निरंतर अकेले होते जा रहे व्यक्ति के अंतर्मन की अनुभूतियों से युक्त इसकी कथावस्तु स्वाभाविक, रोचक और अदृश्य यथार्थ से युक्त बन पड़ी है।

आलोचक कृष्णदत्त पालीवाल लिखते हैं– 'परिंदे के प्रकाशन से हिंदी पाठकों, बौद्धिकों एवं आलोचकों के कान क्यों खड़े हुए थे? इसलिए न की नई कहानियों को पहली बार ऐसा कहानीकार मिला था ,जो यथार्थ को भीतर से उतर कर रचता है। इस तरह की कहानियां इस दौर में ना कमलेश्वर, मोहन राकेश लिख रहे थे, न कामतानाथ, भैरव प्रसाद गुप्त और शिव प्रसाद सिंह। इसलिए अपने सभी समकालीनों के बीच निर्मल वर्मा की कहानियों की अपनी अलग पहचान बनती है।'[14]

यूरोप प्रवास के दौरान निर्मल वर्मा ने भौतिकता के अंधी दौड़ में खोए मनुष्य को देखा जिसका संकेत उनकी रचनाओं में मिलता है। पालीवाल आगे लिखते हैं– 'यूरोप की समृद्ध सभ्यता और संस्कृति के संपर्क ने निर्मल वर्मा के मानस को बदला है। लेकिन इतना नहीं बदला कि वह अपनी जड़ों से उन्मूलित हो जाए। उनके विदेश के अनुभवों में अकेलापन, अलगाव ,आत्म–केंद्रित मनुष्य, आत्मनिर्वासन, उदासी– अवसाद– पीड़ा, नर–नारी के बीच का खालीपन तथा पश्चिमी जगत के अन्य.. का जो परिचय हिंदी पाठक ने पाया है– वह हमें पश्चिमी सभ्यता ,संस्कृति और आधुनिकता के प्रति सचेत रहने की दृष्टि देता है। लेकिन हम हैं कि भूमंडलीकरण और उपभोक्तावादी संस्कृति के पीछे पागल है।'[15]

सन्दर्भ सूची:-

1. निर्मल वर्मा, परिंदे, 2010, भारतीय ज्ञानपीठ, 18, इंस्टीट्यूशनल एरिया , दिल्ली–32, पृष्ठ–106
2. वही, पृष्ठ–107
3. वही, पृष्ठ–107
4. वही, पृष्ठ–107
5. वही, पृष्ठ–131
6. वही, पृष्ठ–131
7. वही, पृष्ठ–115
8. वही, पृष्ठ–115
9. वही, पृष्ठ–115
10. वही, पृष्ठ–127
11. वही, पृष्ठ–139–140
12. नामवर सिंह, कहानीः नई कहानी, 2006, लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली–2, पृष्ठ–52
13. रामदरश मिश्र, हिंदी कहानीः अन्तरंग पहचान, 2007, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–2, पृष्ठ– 150
14. कृष्णदत्त पालीवाल, भारतीय साहित्य के निर्माता निर्मल वर्मा, 2009, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली–2, पृष्ठ– 36
15. वही, पृष्ठ–37

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

भारतीय लोकतंत्र के विकास एवं उसकी प्रगति में दलबदल विरोधी कानून का एक विश्लेषण

रोशनी खातून

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, सारन, एनएलएस कॉलेज, जैतपुर, दौड़पुर, छपरा

शोध सार:–1985 में 52वें संविधान संशोधन के माध्यम से लागू किए गए दल-बदल विरोधी कानून का उद्देश्य राजनीति में अनुशासन बनाए रखना और निर्वाचित जनप्रतिनिधियों को उनकी पार्टी के प्रति जवाबदेह बनाना था। इस कानून ने आरंभिक चरण में राजनीतिक स्थिरता को बढ़ावा दिया लेकिन दीर्घकालिक प्रभाव में यह कानून विवादास्पद रहा है। दल-बदल विरोधी कानून ने दलबदल को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई परंतु इसके साथ कुछ गंभीर चुनौतियां भी सामने आईं। यह कानून निर्वाचित प्रतिनिधियों की स्वतंत्रता को सीमित करता है क्योंकि उन्हें पार्टी की नीतियों और निर्देशों का पालन करना अनिवार्य हो जाता है। इसने राजनीति में नैतिकता और अनुशासन की स्थापना का प्रयास किया लेकिन कई बार इसका दुरुपयोग भी हुआ है। इसके अलावा यह कानून लोकतंत्र के मूल सिद्धांत यानी विचारों की स्वतंत्रता के विपरीत जाता हुआ प्रतीत होता है। यह जनप्रतिनिधियों को पार्टी व्हिप के अधीन बांध देता है जिससे स्वतंत्र सोच और निर्णय क्षमता प्रभावित होती है। कई मामलों में इस कानून को लोकतांत्रिक विचारों की स्वतंत्रता के लिए बाधा के रूप में देखा गया है। फिर भी दल-बदल विरोधी कानून भारतीय राजनीति में एक आवश्यक उपाय साबित हुआ है। इसने राजनीतिक स्थिरता, जवाबदेही और पारदर्शिता को बढ़ावा दिया है। हालांकि इसके प्रभावों का संतुलित विश्लेषण यह दर्शाता है कि इस कानून में सुधार की आवश्यकता है ताकि यह लोकतंत्र और स्वतंत्रता के बीच सही संतुलन स्थापित कर सके।

मुख्य शब्द:–दल-बदल , राजनीतिक अस्थिरता, लोकतंत्र, Anti Defection law.

भारतीय लोकतंत्र के विकास एवं उसकी प्रगति का इतिहास:– भारतीय लोकतंत्र की यात्रा एक अद्वितीय और प्रेरणादायक कहानी है जिसमें विविधता, संघर्ष और सामाजिक परिवर्तन की गाथाएँ समाहित हैं। स्वतंत्रता संग्राम से लेकर आज तक भारतीय लोकतंत्र ने कई उतार-चढ़ाव देखे हैं और इसके विकास ने देश की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक धारा को गहराई से प्रभावित किया है। भारतीय लोकतंत्र का आधार स्वतंत्रता संग्राम के दौरान पनपा। 1947 में भारत ने ब्रिटिश शासन से स्वतंत्रता प्राप्त की और एक लोकतांत्रिक गणतंत्र बनने की दिशा में कदम बढ़ाया। संविधान सभा ने भारतीय लोकतंत्र की नींव रखी। डॉ. भीमराव अंबेडकर जो प्रारूप समिति के अध्यक्ष थे, इनके अध्यक्षता में संविधान का निर्माण हुआ जो कि एक समावेशी और सशक्त लोकतांत्रिक व्यवस्था को सुनिश्चित करता है। भारतीय संविधान ने न्याय, समानता और स्वतंत्रता के मूलभूत अधिकारों को सुनिश्चित किया और एक संघीय प्रणाली को अपनाया। स्वतंत्रता के बाद भारत ने लोकतांत्रिक संस्थाओं को मजबूत करने की दिशा में कई कदम उठाए। पहले आम चुनाव 1951-52 में हुए जिसमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने प्रमुख विजय प्राप्त की। इस समय भारत ने एक स्थिर और प्रभावशाली लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना की जिसमें स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव, विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका का गठन किया गया। 1960 और 1970 के दशक में भारतीय लोकतंत्र ने कई सामाजिक और आर्थिक बदलाव देखे। इस समय के दौरान भूमि सुधार, हरित क्रांति और औद्योगिकीकरण जैसी नीतियों ने देश के विकास को गति दी। इसी दौर में भारत में पहली बार आपातकाल लागू किया गया जिसका विरोध व्यापक स्तर पर हुआ और इससे लोकतंत्र की महत्वपूर्णता और स्थिरता की चर्चा हुई। आपातकाल के बाद लोकतांत्रिक मूल्यों की पुर्नस्थापना के लिए जनमत ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 1990 के दशक में आर्थिक उदारीकरण और वैश्वीकरण ने भारतीय लोकतंत्र को नई दिशा दी। आधुनिक युग में डिजिटल तकनीक और सोशल मीडिया ने लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को अधिक पारदर्शी और सुलभ बना दिया। भारतीय लोकतंत्र ने कई सफलताएँ प्राप्त की हैं लेकिन अभी भी चुनौतियाँ बरकरार हैं। जातिवाद, धर्मनिरपेक्षता और भ्रष्टाचार जैसी समस्याएँ लोकतंत्र की प्रगति में बाधाएँ उत्पन्न कर सकती हैं। हालांकि निरंतर सुधार और जन जागरूकता के माध्यम से इन चुनौतियों का समाधान संभव है। स्वतंत्रता संग्राम से लेकर आधुनिक युग तक भारतीय लोकतंत्र ने अपनी ताकत और स्थिरता को साबित किया है। यह एक ऐसी प्रणाली है जो निरंतर विकास और सुधार की दिशा में अग्रसर है और भविष्य में भी इसे सशक्त और प्रभावी बनाए रखने की दिशा में प्रयास जारी रहेंगे।

भारतीय राजनीति में राजनीतिक दलों द्वारा दल बदलना और अस्थिरता का आना:–भारतीय राजनीति में दल-बदल और अस्थिरता एक महत्वपूर्ण और जटिल मुद्दा है। यह विषय भारतीय लोकतंत्र की स्थिरता और विश्वसनीयता पर गहरा असर डालता है। दल-बदल की प्रवृत्ति ने भारतीय राजनीतिक परिदृश्य को कई बार प्रभावित किया है। भारतीय राजनीति में दल-बदल की प्रवृत्ति लंबे समय से चलन में है। यह प्रक्रिया तब होती है जब एक निर्वाचित सांसद या विधायक अपने वर्तमान दल को छोड़कर किसी अन्य दल में शामिल हो जाता है। इस प्रथा को लोकतांत्रिक राजनीति में व्यक्तिगत स्वार्थ और अवसरवाद का संकेत माना जाता है। दल-बदल का उद्देश्य आमतौर पर सत्ता प्राप्ति या व्यक्तिगत लाभ होता है न कि जनहित। 1967 के चुनाव के बाद भारत की राजनीति में दल-बदल एक प्रमुख समस्या बन गई। इस समय तक देश की राजनीति में वैचारिक समर्थन या पार्टी निष्ठा का महत्त्व था लेकिन चुनाव के बाद यह प्रवृत्ति धीरे-धीरे बदलने लगी। कई कारण इसके लिए जिम्मेदार थे जिनका विवरण नीचे दिया गया है:

राजनीतिक असंतोष और महासंघर्ष:–1967 के विधानसभा और लोकसभा चुनाव में कांग्रेस पार्टी को पहली बार कुछ राज्यों में स्पष्ट बहुमत नहीं मिल पाया। कांग्रेस की शक्ति कम होने लगी थी और दूसरी पार्टियों के नेता इसका फायदा उठाने लगे। बिना मजबूत नेतृत्व और अंदर के असंतोष की वजह से कई लोग अपने व्यक्तिगत हितों के लिए कांग्रेस या अन्य पार्टियों

से अलग होने लगे। राजनीतिक दलों की भूमिका इस परिदृश्य में महत्वपूर्ण होती है। दलों के अंदर आंतरिक लोकतंत्र की कमी, अनुशासनहीनता और नेताओं की सत्ता पर निर्भरता दल-बदल की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करती है। कई बार नेताओं को पार्टी के सिद्धांतों और नीतियों के बजाय व्यक्तिगत लाभ की ओर आकर्षित किया जाता है।

गठबंधन सरकार की मजबूरी :-जब कांग्रेस को कुछ राज्यों में स्पष्ट बहुमत नहीं मिला, तब उसने छोटी पार्टियों के साथ गठबंधन करके सरकार बनाने का प्रयास किया। इस दौरान कई पार्टियों के नेता अपने व्यक्तिगत हितों के लिए पार्टियां बदलने लगे ताकि उन्हें मंत्री पद या अन्य राजनीतिक लाभ मिल सके।

विरोधी दलों का बढ़ता प्रभाव :-इस दौरान कांग्रेस के विरोध में कई नई पार्टियों का जन्म हुआ जैसे जनता पार्टी, भारतीय जनसंघ, और कम्युनिस्ट पार्टियां। इन नए दलों का उदय कांग्रेस के घटते प्रभाव के कारण था और ये नए दल कांग्रेस के सदस्यों को अपनी ओर खींचते रहे। जब विधायकों और नेताओं के बीच बार-बार दल बदलने की स्थिति उत्पन्न होती है तो यह सरकार की स्थिरता को खतरे में डालता है। अस्थिर सरकारें स्थायी नीतिगत निर्णय लेने में असमर्थ होती हैं जिससे प्रशासनिक और विकासात्मक कामकाज प्रभावित होता है। यह चुनावों की अनिवार्यता को जन्म देता है। इस स्थिति का सामना करने के लिए बार-बार चुनाव कराना आर्थिक संसाधन की दृष्टि से एक बड़ी चुनौती होती है और आम जनता को भी इसका खामियाजा भुगतना पड़ता है।

भारतीय राजनीति में लोकतंत्र को मजबूत करने के लिए दल-बदल विरोधी कानून (52वीं और 91वीं संविधान संशोधनद्ध) :-भारतीय राजनीति में लोकतंत्र की मजबूती सुनिश्चित करने के लिए दल-बदल विरोधी कानून एक महत्वपूर्ण पहलू है। इस कानून ने भारतीय राजनीति की स्थिरता को बनाए रखने और राजनीतिक प्रक्रिया की विश्वसनीयता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

52वीं संविधान संशोधन (1985) :-1980 और 1985 के दशक में भारतीय राजनीति में दल-बदल की प्रवृत्ति बढ़ गई। यह स्थिति राजनीति में अस्थिरता और जनविरोधी सरकारों के गठन का कारण बन रही थी। इस प्रवृत्ति को नियंत्रित करने और लोकतंत्र की स्थिरता को बढ़ावा देने के लिए, 1985 में 52वीं संविधान संशोधन को लागू किया गया।

52वां संशोधन के अंतर्गत, 10वीं अनुसूचि में इस कानून ने दल-बदल को रोकने के लिए निम्नलिखित प्रमुख प्रावधान किए :

डिस्क्वालिफिकेशन : यदि कोई सदस्य अपने दल के खिलाफ मतदान करता है या पार्टी के निर्देशों का उल्लंघन करता है तो उसे अयोग्य घोषित किया जा सकता है। लेकिन यदि 15 दिन के अंदर पार्टी माफकर देती है तो फिर उस पर कोई कारवाई नहीं होगी।

यदि कोई सांसद या विधायक अपने दल के निषान पर निर्वाचित होने के बाद या कोई निर्दलीय त्यागपत्र देते हैं या किसी दूसरे दल में शामिल होते हैं। इनकी भी सदस्यता खत्म हो जाती है।

मनोनित सदस्य 6 माह के बाद ऐसा करते हैं तब इनकी भी सदस्यता खत्म हो जाती है।

यदि पार्टी में 1/3 से टूट (split) हो जाती है तब दल बदल नहीं है। (52^{nd} के अनुसार)

यदि किसी पार्टी में 2/3 से विलय करते हैं तब दल बदल नहीं है।

इस कानून के लागू होने से दल-बदल की प्रवृत्ति में कमी आई और राजनीति में स्थिरता आई। हालांकि कुछ मुद्दों और दुरुपयोग की घटनाओं ने इस कानून की प्रभावशीलता पर सवाल उठाए। पीठासीन अधिकारियों द्वारा मनमाने निर्णय दिये गए।

पार्टी में split का मुद्दा का दुरूपयोग हुआ इसलिए 91वीं संविधान संशोधन (2003) किया गया।

52वीं संविधान संशोधन के प्रभावी कार्यान्वयन में कुछ समस्याएँ थीं जिनमें दल-बदल के मामलों में न्यायालय की भूमिका और विधायकों की अनुशासनहीनता शामिल थी। इन समस्याओं को देखते हुए 2003 में 91वीं संविधान संशोधन को लागू किया गया जिसने दल-बदल विरोधी कानून को और अधिक सख्त बना दिया। पार्टी में split का मुद्दा को भी दल बदल के अर्न्तगत रखा गया।

सेक्शन 7 में संसद या राज्यों में विधानमंडल का अध्यक्ष दल बदल पर अंतिम निर्णय लेगा। और इनके आदेश को चुनौती नहीं दी जा सकती। हालांकि इसे सुप्रीम कोर्ट ने इसे निरस्त कर दिया। क्योंकि इसने न्यायलय के उसके न्यायिक पुर्नविलोकन की शक्ति से वंचित कर रहा था। इसमें किहोतो होलोहान बनाम जचिल्हु (1992) वाद को महत्वपूर्ण माना जाता है। जिसमें इस मामले पर स्पीकर की शक्तियों पर सुप्रीम कोर्ट ने उसके विवेकाधिकार शक्ति को बरकरार रखा और यह निर्णय लिया कि दलबदल विरोधी कानून के तहत स्पीकर द्वारा की गई अयोग्यता की समीक्षा न्यायालय में की जा सकती है अर्थात न्यायिक समीक्षा के अधीन होगा।

कमियां और दुरुपयोग :-वास्तविक उद्देश्य से हटकर दल बदल कानून के द्वारा पुराने कानून को अपडेट करने के बजाय कभी-कभी इसका उपयोग विशेष राजनीतिक एजेंडों का समर्थन करने के लिए किया जाता है। इससे असली समस्याओं का समाधान निकालने की बजाय केवल राजनीतिक लाभ के लिए कानून को बदला जाता है। कानून बदल तो जाता है लेकिन उसके कार्यान्वयन और निगरानी के लिए उचित तंत्र नहीं होते। इससे नए कानून की प्रभावशीलता कम हो जाती है और पुराने समस्याएं जारी रहती हैं। दल बदल कानून एक आवश्यक विधिक प्रक्रिया है लेकिन इसका दुरुपयोग तब होता है जब इसे राजनीतिक एजेंडों को पूरा करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है और पारदर्शिता और निष्पक्षता के सिद्धांतों की अनदेखी की जाती है। भारत में दल-बदल की घटनाएं कई राज्यों में देखी गई हैं और दल-बदल कानून के दुरुपयोग के उदाहरण भी विभिन्न क्षेत्रों में उभर कर सामने आए हैं। यहाँ कुछ राज्यों के उदाहरण दिए गए हैं जहाँ दल-बदल की घटनाएँ हुईं:

कर्नाटक (2019) :-कर्नाटक में 2019 में दल-बदल कानून के कथित दुरुपयोग का एक स्पष्ट बड़ा उदाहरण देखा गया जब कांग्रेस और जनता दल (सेक्युलर) की गठबंधन सरकार के 17 विधायकों ने इस्तीफ़ा दिया और भारतीय जनता पार्टी में शामिल हो गए। इसके परिणामस्वरूप कर्नाटक सरकार गिर गई और ठश्रच् सत्ता में आई। इस घटना को ऑपरेशन लोटस के तहत देखा गया है।

मध्य प्रदेश (2020) :-मध्य प्रदेश में 2020 में दल-बदल की एक और महत्वपूर्ण घटना हुई जब कांग्रेस के वरिष्ठ नेता ज्योतिरादित्य सिंधिया ने अपने समर्थक 22 विधायकों के साथ कांग्रेस छोड़ दी और बीजेपी में शामिल हो गए। इसके कारण कमलनाथ की कांग्रेस सरकार गिर गई और बीजेपी की सरकार बनने का मार्ग प्रशस्त हुआ।

गोवा (2019):-गोवा में भी 2019 में दल-बदल की स्थिति उत्पन्न हुई जब कांग्रेस के 10 विधायकों ने पार्टी छोड़कर बीजेपी में शामिल हो गए।

अरुणाचल प्रदेश (2016) :-2016 में अरुणाचल प्रदेश में बड़ी राजनीतिक उथल-पुथल हुई जब मुख्यमंत्री नबाम टुकी की कांग्रेस सरकार के 43 में से 21 विधायकों ने पार्टी छोड़ दी। इस घटना ने कांग्रेस सरकार को गंभीर रूप से कमजोर कर दिया और राष्ट्रपति शासन लागू करना पड़ा। बाद में ये विधायक भारतीय जनता पार्टी के समर्थन से एक नई सरकार बनाने में सफल हुए।

उत्तराखंड (2016) :-उत्तराखंड में भी 2016 में दल-बदल कानून का महत्वपूर्ण मामला सामने आया जब कांग्रेस के नौ विधायकों ने पार्टी से

विद्रोह कर दिया और बीजेपी में शामिल हो गए। इस विद्रोह के परिणामस्वरूप राज्य में राजनीतिक अस्थिरता पैदा हो गई और मुख्यमंत्री हरीश रावत की सरकार गिरने के कगार पर पहुंच गई। हालांकि बाद में सुप्रीम कोर्ट के आदेश के तहत बहुमत परीक्षण हुआ और हरीश रावत ने बहुमत साबित किया।

मणिपुर (2017):-मणिपुर में 2017 में हुए विधानसभा चुनावों के बाद भाजपा ने बहुमत न होने के बावजूद कई कांग्रेस विधायकों को अपने पक्ष में करके सरकार बनाई। कई कांग्रेस विधायकों ने पार्टी छोड़कर भाजपा का समर्थन किया जिससे कांग्रेस के पास बहुमत नहीं रहा और भाजपा ने गठबंधन सरकार बना ली।

इन राज्यों में दल-बदल की घटनाएँ बताती हैं कि राजनीतिक अस्थिरता को दूर करने के उद्देश्य से बनाए गए दल-बदल कानून की खामियों का उपयोग सत्ता समीकरण बदलने के लिए किया गया है। इन घटनाओं से यह स्पष्ट होता है कि दल-बदल कानून को और मजबूत करने की आवश्यकता है ताकि लोकतांत्रिक प्रक्रिया पर इसका गलत प्रभाव न पड़े। वर्तमान में भारत में दल-बदल कानून की प्रासंगिकता और इस कानून से जुड़ी चुनौतियां एक बार फ़िर से चर्चा में हैं क्योंकि पिछले कुछ वर्षों में कई राज्यों में राजनीतिक अस्थिरता और सत्ता परिवर्तन के लिए इस कानून का दुरुपयोग देखा गया है। आज के राजनीतिक परिदृश्य में इसके कुछ प्रावधान अप्रभावी साबित हो रहे हैं। भारत के साथ साथ अगर अन्य देषों को देखें तो वहां भी राजनीतिक दल बदल होना सरकार को अस्थिर करना आम बात है। वहां भी ऐसे कानून बनाकर इस अस्थिरता को रोकने का प्रयास किया गया है। उदाहरण के लिए बांग्लादेष, अफ्रिका, इथोपिया, इजरायल, केन्या आदि। हालांकि इसके स्वरूप और प्रभाव में भिन्नता है। इन उदाहरणों के माध्यम से भारतीय संदर्भ को बेहतर समझा जा सकता है। दक्षिण अफ्रीका 1994 में लोकतंत्र की स्थापना के बाद दक्षिण अफ्रीका ने भी दलबदल विरोधी कानून लागू किया। यहां का कानून भारत से भिन्न है क्योंकि यह संसद सदस्यों को सीमित परिस्थितियों में दल बदलने की अनुमति देता है। इससे कुछ हद तक राजनीतिक अस्थिरता को रोका गया।

बांग्लादेश ने भी भारत की तर्ज पर दलबदल विरोधी कानून को अपनाया। 1972 के संविधान में 14वें संशोधन के माध्यम से अनुच्छेद 70 से यह कानून लागू किया गया। बांग्लादेश का कानून भी सख्त है जिसमें संसद सदस्य अपनी पार्टी की मंजूरी के बिना दल बदलने पर अपनी सदस्यता खो सकते हैं। केन्या में 2008 में दलबदल विरोधी कानून लागू हुआ। इसके तहत, संसद सदस्य अगर अपनी पार्टी छोड़कर दूसरी पार्टी में जाते हैं या निर्दलीय बनते हैं तो उन्हें अपनी सीट से इस्तीफ़ा देना पड़ता है। इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि विभिन्न देशों में दलबदल विरोधी कानूनों का स्वरूप उनके राजनीतिक और सामाजिक संदर्भ के अनुसार ढाला गया है। भारतीय कानून की तुलना में अन्य देशों में अधिक लचीलेपन और कठोरता के मिश्रित दृष्टिकोण देखने को मिलते हैं। इन अनुभवों से भारतीय लोकतंत्र में सुधार और कानून के बेहतर कार्यान्वयन के लिए सीख ली जा सकती है। यदि हम उपरोक्त विवेचना को देखें तो हम कह सकते हैं कि दल बदल को रोकने के लिए और प्रषासनिक स्थिरता को बनाए रखने के लिए यह कानून और भी कठोर होना चाहिए। वर्तमान में इसकी प्रासंगिकता है क्योंकि इस वजह से कई राज्यों में दल-बदल के कारण सरकारें अस्थिर हो रही हैं जो लोकतांत्रिक प्रक्रिया को कमजोर करता है। कानून की सख्ती को बढ़ाने की जरूरत है ताकि नेता अपनी व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं के कारण सत्ता का दुरुपयोग न कर सकें। राजनीतिक नैतिकता के संकट का भी संकेत है। विधायक और नेता अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए पार्टी बदलते हैं, जो जनता के साथ विश्वासघात है। लेकिन कहीं न कहीं यह भी सवाल उठता है कि लोकतंत्र की स्थिरता को बनाए रखने के लिए हम दूसरे मूल अधिकारों पर आघात कर रहे हैं। जैसे व्यक्तिगत स्वतंत्रता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, संघ बनाने की स्वतंत्रता आदि। यह कहीं ना कहीं निर्वाचित सदस्यों के अधिकारों का हनन करता है। यह अधिकार हमारे लोकतंत्र की मूल भावना को मजबूती प्रदान करता है। लोकतंत्र के विकास लिए आवष्यक है कि राजनीतिक दल बदल और इसे रोकने के उपाय के साथ साथ संविधान में दिए हुए अधिकारों के साथ संतुलन बनाया जाए। वर्तमान समय की परिस्थितियों को देखते हुए इस संबंध में कुछ सुझाव दिए जा सकते हैं ताकि लोकतंत्र को मजबूत किया जा सके और आने वाले समय में हम एक स्वस्थ लोकतंत्र में रह सकें।

सुधार के सुझाव:-

सख्त दंड: दल-बदल करने वाले विधायकों पर सख्त प्रतिबंध और दंड लगाने की आवश्यकता है। वर्तमान में विधायकों को इस्तीफ़ा देकर फ़िर से चुनाव लड़ने की छूट है, जो दल-बदल को बढ़ावा देती है। इस छूट को खत्म करके दल-बदल करने वाले विधायकों पर कम से कम 5 साल तक चुनाव लड़ने पर प्रतिबंध लगाना चाहिए।

न्यायपालिका की त्वरित समीक्षा: दल-बदल से संबंधित मामलों की सुनवाई में अदालतों की त्वरित कार्रवाई सुनिश्चित की जानी चाहिए। फ़िलहाल, कई दल-बदल से संबंधित मामलों में अदालतों से निर्णय आने में देरी होती है, जिससे राजनीतिक अस्थिरता लंबे समय तक बनी रहती है।

स्पीकर की भूमिका में सुधार: वर्तमान में दल-बदल के मामलों पर निर्णय लेने का अधिकार विधानसभा अध्यक्ष के पास होता है, लेकिन यह प्रक्रिया राजनीति से प्रभावित हो सकती है। एक स्वतंत्र न्यायिक निकाय या चुनाव आयोग को इस प्रक्रिया में शामिल करना उचित हो सकता है ताकि निष्पक्ष निर्णय हो सके।

दल-बदल कानून में सुधार करते समय यह भी महत्वपूर्ण है कि नेताओं की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और जनता के मत का सम्मान बनाए रखा जाए। इसके लिए कुछ सुझाव दिए जा सकते हैं:-

आंतरिक लोकतंत्र को प्रोत्साहन:-पार्टियों के भीतर आंतरिक लोकतंत्र को बढ़ावा देने से नेताओं को अपनी राय और असहमति व्यक्त करने की स्वतंत्रता मिलेगी जिससे उन्हें पार्टी बदलने की जरूरत कम महसूस होगी। दलों को अपने विधायकों को खुली बहस और चर्चा के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए ताकि विचारधारा और नीतियों पर सहमति बन सके।

निर्दलीय विकल्प का समर्थन:-विधायकों को निर्दलीय के रूप में चुनाव लड़ने का विकल्प दिया जा सकता है यदि वे अपनी पार्टी की नीतियों से असहमत हैं। इससे जनता के मत का सम्मान होगा और नेताओं की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भी बनी रहेगी। निर्दलीय रूप से चुनाव लड़कर वे जनता के सामने अपनी स्थिति स्पष्ट कर सकते हैं और जनता का निर्णय ही अंतिम होगा। यदि कोई विधायक पार्टी बदलना चाहता है तो उसे अपनी निर्वाचन क्षेत्र के मतदाताओं से जनमत संग्रह कराने की प्रक्रिया से गुजरना चाहिए। इन सुधारों से नेताओं की स्वतंत्रता और जनता के मत दोनों का संतुलन बना रहेगा। जनता को भी अपनी राजनीतिक जिम्मेदारी समझनी होगी और ऐसे नेताओं और दलों को पहचानना होगा जो दल-बदल की प्रवृत्ति में लिप्त हैं। जनता का जागरूक होना और चुनावों में विवेकपूर्ण मतदान अस्थिरता को कम करने में मदद कर सकता है। भारत के लोकतंत्र को मजबूत करने में दल-बदल कानून की महत्वपूर्ण भूमिका है। यह कानून विधायकों को पार्टी से असहमति के आधार पर बिना कारण बदलने से रोकता है जिससे राजनीतिक स्थिरता बनी रहती है। यह विधायकों को पार्टी की नीतियों के प्रति निष्ठावान बनाए रखने और जनता के मत का सम्मान सुनिश्चित करने में सहायक है। हालांकि इसके दुरुपयोग और खामियों के कारण राजनीतिक अस्थिरता भी देखी गई है। इसलिए कानून में सुधार की आवश्यकता है ताकि नेताओं की स्वतंत्रता और जनता के मत का सम्मान दोनों कायम रह सकें। यह कानून जनता के मत का सम्मान सुनिश्चित करता है, क्योंकि इसे विधायकों को पार्टी की नीतियों के प्रति निष्ठावान बनाए रखने

के लिए लागू किया गया है। हालांकि कुछ मामलों में इसके दुरुपयोग से राजनीतिक अस्थिरता भी बढ़ी है। इसलिए इसे और अधिक पारदर्शी और निष्पक्ष बनाने के लिए सुधार आवश्यक हैं ताकि नेताओं की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और लोकतंत्र की जड़ें और मजबूत हो सकें।

संदर्भ सूची :-

1. गोस्वामी, भाल चन्द्र, (1995) दल–बदल निरोधी कानून 1985 : दशा–दिशा, बुक एनक्लेव, जयपुर
2. कोठारी, रजनी , (1967) पार्टी सिस्टम एण्ड इलेक्शन स्टडीज, ओमेगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली।
3. चौधरी, अनिल, (2001) भारत में दल–बदल कानून के प्रासंगिकता, नेहा पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर, आगरा, नई दिल्ली।
4. Tesfay, L. M. (2020). Anti-Defection Laws in Ethiopia: Is There Any Constitutional Room? Indonesian Journal of Social and Environmental Issues (IJSEI), 1(3), 227-233.

Links:-

1. दल.बदल विरोधी कानून - Drishti IAS Oct 21, 2023
2. Kihoto Hollohan vs Zachillhu And Others on 18 February, 1992
3. http://dspace.ewubd.edu:8080/handle/123456789/3922
4. Critical Evaluation of the Article 70 of the Constitution of Bangladesh and its Contravention with the Constitution
5. Anti-Defection Law And Its Impact Over Constitutionalism In Bangladesh: An Analytical Study
6. Anti-Defection Laws in Ethiopia: Is There Any Constitutional Room? https://doi.org/ 10.47540/ijsei.v1i3.69
7. Changing patterns of party unity in the Knesset: The consequences of the Israeli anti-defection lawhttps://doi.org/10.1177/1354068819836037
8. The adoption of anti-defection laws in parliamentary democracies https://doi.org/10.1089/elj.2015.0345
9. The regulation of party switching in Africa

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

मंजूर एहतेशाम के कथा साहित्य में धार्मिक रूढ़ियाँ अंधविश्वास

नन्दिनी तिवारी

शोधार्थी, हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.

मंजूर एहतेशाम हिंदी और उर्दू के प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। मंजूर एहतेशाम के व्यवहार में साहित्य झलक दिखाई देती थी। वह साहित्य के लिए पूर्ण समर्पित रहे, जिनके व्यक्तित्व में मानवीय मूल्यों की झलक दिखाई देती है। उनका किसी विचारधारा की ओर झुकाव उनके मानवीय मूल्य रहे हैं। इसलिए उनका मार्क्सवाद और गाँधीवादी, वैचारिक दृष्टिकोण उनकी विचारधारा रही है। मंजूर एहतेशाम का जन्म भोपाल में 3 अप्रैल 1948 को मध्यमवर्गीय मुस्लिम परिवार में हुआ। साहित्य की ओर रुझान बचपन से रहा था। साहित्यकार ने 12 वर्ष की उम्र से लिखना शुरू किया था।

मंजूर एहतेशाम के उपन्यास एवं कहानीयाँ मध्यवर्गीय मुसलमान समाज से सम्बन्धित है। लेखन को वह साँस लेने जैसा मानते हैं। लेखक का कहना है कि हम सब अपने अस्तित्व में विराजते हैं। उस समय की अलग-अलग अनुभूतियाँ हमारा प्यार, नफ़्रत या लापरवाही सबके रास्ते कहीं अतीत में है। और जीते जी जो उतना प्रत्यक्ष नहीं होता लेकिन लेखन का दायित्व उतना ही महत्वपूर्ण होता है जिसमें शोर मचाऐ अपनी बातों को समझना। अर्थात एक साथ व्यतीत किए गए समय के सबको अलग-अलग अनुभव होते हैं। और इसी के अनुभव को लेखन का विषय माना गया है। मंजूर एहतेशाम ने अनेक उपन्यासों और कहानियों के साथ नाटक साहित्य भी लिखा लेकिन नाटक साहित्य उनकी स्वतंत्रत रचना न होकर उनके दोस्त सत्येन के साथ दिया गया है उनके उपन्यास 'कुछ दिन और', 'सूखा बरगद', 'दास्तान-ए-लापता', 'बशारत मंजिल', 'पहर ढ़लते', 'मदरसा' उपन्यास श्याामिल है।

कहानियों में दो कहानी संग्रह लिखे गए हैं 'तमाशा तथा अन्य कहानियाँ और तसबीह'। नाटक साहित्य जिसके सह लेखक सत्येन है, एक बादशाह और 'गौतम'। व्यक्ति अपने आन्तरिक और व्याग्र व्यक्तित्व के विकास के लिए जिसे धारण करता है, वही धर्म कहलाता है धर्म समाज का अनिवार्य तत्व है। जीव आत्मा और परमात्मा धर्म में स्वतः ही समाहित हो जाते हैं। व्यक्ति ईश्वर प्राप्ति के लिए रीति रिवाज को अपनाता है। वे धार्मिक रीतियाँ कहलाती है परन्तु कई बार, व्यक्ति अज्ञानता, अंधविश्वास, स्वार्थ तथा संकीर्ण विचारों के वशीभूत होकर अनेक उन रीति नीतियों को धर्म के नाम पर अपना लेता है, और जिनका धर्म से कोई संबंध नहीं रह जाता है वह रीति नीतियाँ, धार्मिक, रूढ़ियाँ कहलाती है और समाज इन रूढ़ियों में जकड़ता चला जाता है। धर्म के नाम पर प्रचलित ऐसी अनेक रूढ़ियों का चित्रण मंजूर एहतेशाम के कथा साहित्य में भी किया गया है। धार्मिक रूढ़ियों एवं अंधविश्वास को चित्रित किया गया है भारतीय मुस्लिम समाज जो रूढ़ियों और अंधविश्वास से भरा हुआ है। हर तरफ धार्मिक रूढ़ियों एवं श्वास का जाल सा बिछा हुआ है। हर काम को करने के लिए धर्म को आगे रखा जाता रहा है और धर्म के अनुसार ही निर्णय लिया जाता है। अंधविश्वास को समझ में ऊपर रखा जाता रहा है। धर्म के नाम अंधविश्वास को बढ़ावा दिया जा रहा है। यही सब मंजूर एहतेशाम के उपन्यास में देखने को मिला है।

'सुखा बरगद' उपन्यास में लेखन में मुस्लिम समाज की धार्मिक रूढ़ियों और अंधविश्वास का वर्णन किया है। रशीदा और सुहेल धार्मिक शिक्षा लेने फफूके घर जाते थे, फफूधर्म के प्रति खासी पाबंदी रखतीं थी, वह घर में बने मदरसे में बच्चों को शिक्षा देती थी धर्म के साथ अंधविश्वास भी होता था, वह सिखाती थी ''बिस्मिल्लाह पढ़ खाने से पहले...... क्यों यह सर का दुपट्टा कहाँ है तेरा बेशर्म शैतान नंगे सिरपर छप्प लगता है।''[1] इससे यह स्प-ुनवजयट दिखाई देता है कि मुस्लिम समाज धार्मिक रूढ़ियों से नहीं अंधविश्वास से भी जकड़ा हुआ है। खाने से पहले ईश्वर का नाम पढ़ना, सिरपर दुपट्टा होना ईश्वर सिरपर मारते हैं। जैसे धार्मिक रूढ़ियाँ और अंधविश्वास को परम्परागत बातों को फफू शिक्षा का माध्यम कर बच्चों को सिखाती है। इस्लाम में तस्वीर खींचना गुनाह माना जाता है फफूइस विषय में बच्चों को सम-हजयाती हुई कहती है, ''जो मरदद तस्वीरे बनाएगा, उसे कयामत के दिन उन तस्वीरों में जान डालना पड़ेगी और खुदा के अलावा क्या कोई किसी मुर्दा में जान डाल सकता है? यह सब गुनहगार है, चाहे तस्वीर बनाएँ है या और इनका घर जहन्नुम है।''[2] अभिप्राय है कि जो तस्वीर बनाता या खिंचवाता है, उसे उन तस्वीरों में जान डालना पड़ती है और जिंदा करना पड़ता है, और तस्वीर में जान तो केवल ईश्वर ही डाल सकता है। व्यक्ति कैसा ऐसा कर सकता है। इस प्रकार फफू उन्हें धार्मिक अंधविश्वास की शिक्षा देती है। सुहेल फफू से सवाल करता है कि उनके मदरसे में अजान क्यों नहीं दी जाती है। तब फफू उसे बताती हैं कि उनके मदरसे में कोई नमाज पढ़ने वाला नहीं है, तभी सुहेल फ़फ़ूसे कहता है कि वह खुद क्यों नमाज नहीं पढ़ते हैं। और फफूउसे बताती हैं कि ''नमाज पढ़ने वाला जिसे ईमान कहते हैं। कोई औरत नहीं हो सकती'' सुहेल के क्यों के जवाब में फफू उसे बताती है ''क्योंकि अल्लाह और उसके रसूल ने मना किया है, वैसे आमतौर पर मजहब में औरतों को मस्जिद में जाने से भी मना किया जाता है''[3] इस प्रकार मुस्लिम धर्म में स्त्रियों को लेकर भी अनेक रूढ़ियाँ प्रचलित है स्त्रियों का नमाज न पढ़ना, मस्जिद में न जाने देना जैसी धार्मिक रूढ़ियों में मुस्लिम समाज आज भी जकड़ा हुआ है। वहीं होली और रमजान का एक दिन आने पर इसका परिणाम यह हुआ कि हिन्दू-मुस्लिम दंगा हो गया। रशीदा इस दंगे का कारण बताती है ''जिसकी खाल पर होली रंग लग जाएगा वह जहन्नुम में जलेगा?''[4] इससे तात्पर्य यह है कि इस्लाम धर्म में शरीर पर रंगों का लगना सही नहीं मानते है इसी कारण जब किसी हिन्दू ने मुसलमान पर लगा दिया तो वह दंगे का कारण बन गया था और पहला हिन्दू-ंमुस्लिम फ़्साद हो गया, रशीदा के माध्यम से मुस्लिम धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन बताया गया है।

एक रात सुहेल और रशीदा घर पर अब्बू के साथ होते हैं। और सुहैल को बाहर से अब्बू के बारे में कुछ बात पता चलती है कि अब्बू ने सुअर खाया है और उसे रात वह अब्बू से इस विषय में बात करता है और उत्तर में मिलता है कि उन्होंने सूअर खाया है। इस पर सुहेल अब्बू से कहता है कि

''सूअर तो खाना हराम है कैसा ही सूअर हो हम उसे कैसे खा सकते हैं, इस प्रकार धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन करते हुए सुहेल की धार्मिक आस्था को ठेस पहुँचती है कि उसके अब्बू ऐसा कैसे कर सकते हैं। जबकि धर्म में सूअर को खाना गलत माना गया है। लेकिन अब्बू उसे समझाते हैं कि ऐसा करने का कारण क्या था, वहीद खान अपने कुछ दोस्तों के साथ होटल में खाना खाने गए हुए थे। वहाँ सूअर का मॉस भी था। वही उनके दोस्त उसे मॉस खाने के लिए जोर देते हैं पर वह मना कर देता है और इस पर ही उसके दोस्त उससे कहते हैं ''अरे मियाँ साफ-साफक्यों नहीं कहते कि हलाल-हराम का मामला है। ईमान खतरे में पड़ जाएगा।''[4] अभिप्राय यह है कि ईस्लाम में सूअर का माँस खाना हराम माना गया है क्योंकि इस्लाम में हलाल किया हुआ नहीं खाया जाता है इस तरह वहीद खान के दोस्तों के माध्यम से धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन किया गया है। वहीं वहीद खान पेशे से वकील है और इस्लाम में वकील के पेशे को हराम का माना जाता है। लेकिन वहीद खान अपने बेटे सुहेल को समझाते हुए कहते हैं कि ''कहाँ जाता है ना कि वकीलों की कमाई हराम की होती है सच को झूठ और झूठ को सच साबित करना ही एक वकील का सबसे बड़ा हुनर समझा जाता है खानदान के बुजुर्गों का यह ख्याल था कि वकील ईमानदारी से कुछ कर ही नहीं सकता। कमाने के लिए उसे वह सब करना ही होगा जो मजहब की नजर में हराम है।''[5] इस प्रकार वहीद खान अपने पेशे के माध्यम से समाज में फैली रूढ़िवादिता को व्यक्त करते हैं। सुहेल के जीवन में एक लड़की आती है। जिसका नाम गीता है और सुहेल उससे प्यार करने लगता है परन्तु उसका विवाह कहीं और हो जाने से सुहेल का जीवन दु:खी और निराशा से भर जाता है। और वहीं सुहेल गीता और उसके गहरे रिश्ते जिसमें वह सभी हदे पार कर चुके थे, को सोच कर धार्मिक और रूढ़िवादिता से जकड़ व्यक्ति बना देते हैं। इसी सोच पर वह अपना डर बनाता जाता है। जिसमें वह अंधविश्वास पर भरोसा करने लगता है की पाबन्दी से नमाज पढ़ने लगता है और अपनी डायरी में लिखता है ''मुसलमान होने के नाते बहरहाल कुछ सैकड़ो की बरकत से साल दोजख का कुन्दा बनने के बाद कलमा शारीफ की बरकत से अल्लाह मियाँ को जन्नत की कुंजी तो देनी ही पड़ेगी। ''तात्पर्य यह है कि सुहेल पहले मुसलमान धर्म की गलतियाँ निकलता रहा, लेकिन अब नर्क का डर उसे सताने लगा है धार्मिक पुस्तकों में बताया गया है। कि कलमा शारीफ पढ़ लेने से पहले किए पापों को धो लोगे तो उसे स्वर्ग मिल जाएगा। 'दस्तान-ए-लापता' उपन्यास में धार्मिक रूढ़ियों एवं अंधविश्वास का वर्णन किया गया है दुल्हन चची जमीर एहमद खान से धार्मिक पुस्तक मांगती है लेकिन उस पुस्तक के विचार उन्हें रुढ़िगत लगते हैं जमीर एहमद खान मुस्लिम समाज की धार्मिक रूढ़ियों और अंधविश्वास को दुल्हन चची द्वारा उजागर करता है। जो पुस्तक वह धार्मिक समझकर पड़ती है। उसमें उन्हें अल्लाह मियाँ से ज्यादा शैतान का जिक्र किया गया है ''अरे इस किताब में अल्लाह मियाँ से ज्यादा जिक्र तो शैतान का है। जो कुछ भी बंदा करता है शैतान के बहकावे में आकर करता है हर अमल की जिम्मेदारी शैतान के सर है''[5] स्पष्ट है कि व्यक्तियों की गलतियों का जिम्मेदार शैतान को ठहराया गया है दुल्हन चची धार्मिक रूढ़ियों और अंधविश्वासों का वर्णन करती है। दुल्हन चची हज करने जाती है, वहाँ से लौटकर वह लोगों की श्रद्धा और अंधविश्वास का वर्णन करती है। ''वह धक्का-मुक्की और कुश्तमपछाड़ कि अल्लाह की पनाह और सब जान दिए दे रहे हैं, सगे असवद का बोसा लेने के लिए'' दुल्हन चची धार्मिक अंधविश्वास का वर्णन करती हुई कहती है कि काबे में रखा हुआ वह काला पत्थर जिसे मुसलमान पवित्र समझते हैं और हज करते समय उसे चूमना आवश्यक होता है। लोग उसे अपनी आस्था मानकर परम्परा का निर्वहन करने के लिए इसे चूम रहे थे। इस धार्मिक रूढ़ि और अंधविश्वास का खण्डन करती हुई दुल्हन चची कहती हैं ''एक बड़ा सा काला पत्थर बोसा देने वाले दीवानों का थूक से लथपथ, वहाँ जड़ा है उसे सभी लोग चूम रहे हैं, बस चल नहीं रहा, नहीं तो शायद चबा भी डालें। हमारे मुँह से यू एक बलिश्त दूर रह गया था और हम उसे चुमने ही जा रहे थे कि उस थुक के देखकर ऐसी घिन आई कि हमने अपना मुँह अलग कर लिया।'' इस प्रकार दुल्हन चची के द्वारा धार्मिक रूढ़ियों और अंधविश्वास का खण्डन किया गया है। जमीर एहमद खान अपने दोस्तों के साथ कब्रिस्तान में जाते थे और गुलेल से गिरगिट को मारते थे। मारने के बाद उसकी पूँछ काटकर मुसलमान होने का फर्ज पूरा करते थे। मुस्लिम समाज की धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन किया है। जमीर एहमद खान कहता है ''बिना पूछे-ताछे मस्जिद में सिपारा पढ़ने वाले हाफ़िज साहब और कुछ अन्य बुजुर्गनुमा बूढ़ों का कहा मान लिया था। क्योंकि गिरगिट रंग बदलता है इसलिए काफ़िर है। उसे करने के बाद दूम काटकर मुसलमान करने का बहुत सवाब मिलता है।''[6] इसका तात्पर्य यह है कि मुसलमानों के अनुसार उनसे दूसरे धर्म को मानने वाला इसलिए उसे मारने पर मुसलमान होने का प्रमाण देना होता है। इस परम्परा को अंधविश्वास रूढ़ियों कहा जा सकता है। जबकि गिरगिट एक बहुत सीधा-साधा जीव होता है। जो वातावरण के अनुसार आपको रंग बदलकर सुरक्षित रखता है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है मंजूर एहतशान के उपन्यास में अंधविश्वास और रूढ़ियों को दिखाने का प्रयास किया गया है किसी तरह व्यक्ति आज भी अंधविश्वास में जकड़ा हुआ है समाज में कई बार ऐसे अज्ञानता, अंधविश्वास, स्वार्थ तथा संकीर्ण विचारों के वशीभूत होकर अनेक उन रीति-नीतियों को भी धर्म के नाम पर अपना लेता है जिनका संबंध धर्म से होता ही नहीं है यही रीति रिवाज ही धार्मिक अंधविश्वास और रूढ़ियाँ कहलाती है जिसको मंजूर एहतेशाम ने कथा साहित्य में वर्णित किया है।

सन्दर्भ सूची :-

1. मंजूर एहतेशाम 'सूखा बरगद' उपन्यास, राजकमल प्रकाशन, प्रा.. लि., संस्करण 1968 पृ. 19
2. वही पृ. 18
3. वही पृ. 21,22
4. वही पृ. 43
5. वही पृ. 55
6. मंजूर एहतेशाम 'दास्तान-ए-लापता' उपन्यास, राजकमल प्रकाशन, प्रा.. लि., संस्करण 1995 पृ. 40
7. वही पृ. 42
8. वही पृ. 43
9. वही पृ. 47

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025

MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

हिन्दी कथा साहित्य में विनोद कुमार शुक्ल का योगदान

मृत्युंजय द्विवेदी
डॉ. आस्था तिवारी

1. शोधार्थी, हिन्दी, शा. वि. या. ता. स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, दुर्ग, छ. ग.
2. शोध निर्देशक एवं सहायक प्राध्यापक, हिंदी, शासकीय नवीन महाविद्यालय, बेरला, बेमेतरा, छ. ग.

शोध सार:-विनोद कुमार शुक्ल ऐसे हिंदी साहित्य के सुप्रसिद्ध कथाकार हैं जिन्होंने अपनी कहानियों और उपन्यासों के माध्यम से गहरी छाप छोड़ी है। इनके कथा साहित्य में साधारण आय वाले मामूली मध्यवर्गीय लोग, उनके छोटे-छोटे जीवन संघर्ष तथा उनका प्रकृति से अपना जुड़ाव व्यक्ति की स्मृतियों को एक अलग ही संसार में ले जाता है। सच तो यह है कि विनोद कुमार शुक्ल के कल्पना जगत में भी वास्तविक संसार ऐसा है जो जीवंत और रचनात्मकता के आनंद से भरा पूरा है। 'महाविद्यालय' को शुक्ल जी की प्रतिनिधि कहानी माना जाता है जहां मनुष्य और बाजार का द्वंद हमारे समय की विद्रूप का बखान करता है। 'आदमी की औरत' और 'मछली' शुक्ल के कथा संसार का स्त्री पक्ष ही नहीं है, बल्कि यह पितृसत्तात्मक विचार के विरुद्ध कथाकार की अपनी अर्जित की हुई दृष्टि है। 'रुपए और बोझ' जैसी उनकी कहानियां मामूली लोगों के जीवन में कठिन परिश्रम से कमाए गए रुपयों के मूल्य की कहानियां हैं जिसमें खास -सजयंग का परिवेश और बातों का मिजाज कहानियों को अविस्मरणीय बनाता है तो वही पेड़ पर 'कमरा', 'गोदाम', 'तीसरा दोस्त', 'एक कहानी', कहानियां तथा 'हरी घास की छप्पर वाली झोपड़ी और बौना पहाड़', 'एक चुप्पी जगह' उपन्यासों के माध्यम से बच्चों और बड़ों को प्रकृति से जुड़े रहने का संदेश देते हैं। विनोद कुमार शुक्ल की सुक्ष्म निरीक्षण शक्ति का ही कमाल है कि इनके हर कहानियों और उपन्यासों को पढ़ने के बाद जिंदगी के अनगिनत मार्मिक तथ्य दिमाग में तारीखवार दर्ज होते चले जाते हैं। उनके छोटे-ेछोटे वाक्यों में अनुभव और यथार्थ का पैनापन है, जिसकी मारक शक्ति केवल तिलमिलाहट ही पैदा नहीं करती, बल्कि बहुत अंदर तक भेदती चली जाती है।

परिचय:-विनोद कुमार शुक्ल का जन्म 1 जनवरी 1937 ईस्वी को छत्तीसगढ़ के राजनांदगांव में हुआ। विनोद कुमार शुक्ल जी के पिता का नाम शिव गोपाल शुक्ल और माता का नाम रुकमणी देवी है। बचपन में ही इनके पिताजी का देह आसन हो गया था और उसके बाद उनकी मां के देखरेख में उनका बचपन व्यतीत हुआ। पिता की मृत्यु के बाद परिवार में उत्पन्न अभावों के कारण विनोद कुमार बचपन में ही प्रौढ़ बन गए और एक वयस्क व्यक्ति की तरह सोचने लगे। स्वयं विनोद कुमार शुक्ल कहते हैं-'मेरा बचपन राजनांदगांव में ही बीता। पिता का अकाली देहांत होने से मैं बचपन में ही प्रौढ़ बन गया था आदमी अपनी तरह से बड़ों की तरह सोचने की तरीके से बचपन गुजरा। बचपन में दुख अच्छा समझने में आता था। सुख बहुत अच्छे से सम-हजयने में नहीं आता था। बचपन कुछ खास नहीं बीता।' बचपन में उनकी मां उन्हें रविन्द्र नाथ टैगोर, शरदचंद की कहानियां सुनाया करती थी इन सब का परिणाम यह हुआ कि विनोद कुमार को साहित्य के प्रति गहरी रुचि रुचि उत्पन्न हो गई। विनोद कुमार शुक्ल कहते है-'जब पढ़ना कुछ ठीक से शुरू किया तभी अम्मा ने कहा था कि संसार की जो अच्छी किताब हो वही पढ़ना। टैगोर, बंकिम, शरतचंद के नाम लेती थी। पहली किताब शरद चंद की 'विजया' मैंने 12 आने में खरीदी थी।'

विनोद कुमार शुक्ल का साहित्यिक जीवन एवं योगदान-विनोद कुमार को लेखन का पहला पाठ घर की पाठशाला में हीं सीखने को मिला। चचेरे बड़े भाई श्री भगवती प्रसाद स्वयं लिखते पढ़ते रहते थे और इनसे विनोद कुमार सहज रूप से जुड़े हुए थे। इसके बाद इनके बड़े भाई श्री संतोष जी ने विनोद कुमार की लेखन के प्रति रुझान देखकर गजानन माधव मुक्तिबोध से परिचय करवाया। विनोद कुमार शुक्ल के लिए यह एक सुखद संयोग था कि उनकी रचना यात्रा के आरंभिक चरण में ही उन्हें मुक्तिबोध और हरिशंकर परसाई जैसे आधुनिक चेतना संपन्न और सुल-हजये हुए रचनाकारों का सहज सानिध्य मिला। परिणाम यह हुआ कि रचना की तलाश और सही दिशा की शुरुआत, प्रारंभ से ही मिलने लगी, जो किसी भी नवोदित रचनाकार के लिए मात्र सबल न होकर एक वरदान भी सिद्ध होती है। इस संदर्भ में स्वयं विनोद कुमार शुक्ल कहते हैं-ेउचय मेरे पीछे मुक्तिबोध और परसाई की प्रेरणा रही। मुक्तिबोध की कविताओं को सुनने के बाद मैं पारदर्शी बन जाता था और नशे में झूमता था। जहां पैर रखता था वहा अधिक गहराई में जम जाता था। अजीब-सा लगता था मन पर मुक्तिबोध की कविताएं छा जाती थी। मुझ में मुक्तिबोध की कविताओं ने बदलाव लाया। मुक्तिबोध की कविताओं में जो समय अहोता था, वह अपनी संपूर्णता के साथ होता था, मुक्तिबोध कविताओं का पठन, कला और समग्रता को समेटना जैसा था। मुक्तिबोध की प्रेरणा से विनोद कुमार की आरंभिक कविताएं श्रीयुत श्रीकांत वर्मा के संपादन में 'कृति' पत्रिका में प्रकाशित हुई। आगे चल कर कृति के अंकों में ही उनकी कविताओं का एकमुश्त प्रकाशन हुआ। विनोद कुमार शुक्ल प्राथमिक दृष्टि से एक कवि व्यक्तित्व को लेकर पाठकों के समक्ष उपस्थित होते हैं। किसी भी कविता के सुक्ष्मतम भाव बोध के सहारे अनेक जीवन अनुभवों को पाठकों तक सहज रूप से संप्रेषित नहीं किया जा सकता। इसके लिए कथा साहित्य की मुखर विधा का आश्रय लेना पड़ता है। इसलिए अपनी युवा मानसिकता की संवेदनशीलता की अभिव्यक्ति के लिए विनोद कुमार शुक्ल ने कहानियां और उपन्यासों को भी लिखना प्रारम्भ किए। इनकी पहली कहानी हैदराबाद से प्रकाशित होने वाली बद्रीप्रसाद पित्ति के संपादन में निकलने वाली प्रमुख साहित्यिक पत्रिका 'कल्पना' में प्रकाशित हुई।

'कल्पना' के साथ ही विनोद कुमार शुक्ल की कहानियां देश की प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में स्थान पाने लगी। जिसमें 'धर्मयुग' में 'आदमी की औरत' और 'भीड़ का फालतू वक्त' जैसी कहानियां युगीन बोध को प्रकाशित हुई। इसी प्रकार विकल्प (संपादन -शैलेंद्र मटियानी) में 'झुंड' नामक कहानी 'अणिमा' (संपादन शरद देवड़ा) में 'पेड़ पर कमरा' नामक कहानी प्रकाशित हुई। जबलपुर से प्रकाशित पत्रिका पहल (संपादन ज्ञानरंजन) में 'महाविद्यालय' कहानी काफ़ी चर्चित हुई। संभावना प्रकाशन से उनका पहला उपन्यास 'नौकर की कमीज' 1989 में छपा। 1988 में पूर्वाग्रह सीरीज में उनकी कहानियों का संग्रह 'पेड़ पर कमरा' प्रकाशित हुआ। 1996 आधार प्रका-रु39यान से 'खिलेगा तो देखेंगे', 2004 में वाणी प्रकाशन से 'दीवार में एक खिड़की रहती थी, 2017 में हार्पर प्रकाशन से 'यासि रासा त', 2018 में राजकमल प्रकाशन से 'हरी घास की छप्पर वाली झोपड़ी और बना पहाड़', 2018 में जुगनू प्रकाशन से 'एक चुप्पी जगह' प्रकाशित हुई।

कहानी-विनोद कुमार शुक्ल प्रथम कहानी संग्रह 'पेड़ पर कमरा' 1988 और दूसरा कहानी संग्रह 'महाविद्यालय' सन 1996 में प्रकाशित हुआ। भले ही उनके दो कहानियां संग्रह हो, परंतु उन दोनों कहानी संग्रहों में जो कहानियां है, वह एक ही है अर्थात पेड़ पर कमरा कहानी संग्रह में जो कहानियां है, उन्हीं कहानियों को संग्रहित करके उन्होंने 'महाविद्यालय' नामक कहानी संग्रह का प्रकाशन किया। विनोद कुमार शुक्ल ऐसे कथाकार है जिन्होंने कम कहानियां लिखकर भी इस विधा पर अपनी गहरी छाप छोड़ी है। साधारण आए वाले मामूली लोग, उनके छोटे-छोटे जीवन संघर्ष और स्मृतियों का संसार उनकी कहानियों का निर्माण करते हैं। 'रुपए' और 'बोझ' जैसी उनकी कहानियां मामूली लोगों के जीवन में कठिन परिश्रम से आए कमाए गए रुपयों के मूल्य की कहानियां है जिसमें खास ढंग का परिवेश और पात्रों का मिजाज कहानियों को अविस्मरणीय बनाता है। 'पेड़ पर कमरा' प्रकृति और मनुष्य के साहचर्य की कथा है तो गोष्टी साहित्य में तानाशाही का विरल चित्र है। 'महाविद्यालय' को शुक्ल जी की प्रतिनिधि कहानी माना जाता है जहां मनुष्य और बाजार का द्वंद हमारे समय के विद्रूप का बखान करता है। 'आदमी की औरत' और 'मछली' शुक्ल के कथा संसार का स्त्री पक्ष ही नहीं है, बल्कि यहां पितृसत्तात्मक विचार के विरुद्ध कथाकार की अपनी अर्जित की हुई दृष्टि है। 'महाविद्यालय' संग्रह की कहानियों की भंगिमाएं कहानी के ख़ास शुक्ल शिल्प का उदाहरण बन गई है। अपनी तरह की कथा रस से भरी इन कहानियों को पढ़ना स्मृति और जीवन के संसार में प्रवेश करना है जहां कहानीकार आशा और उजास की तमाम संभावनाएं बचाए रखता है।

उपन्यास-विनोद कुमार शुक्ल के उपन्यासों में भारतीय जीवन के यथार्थ और आदमी की कशमकश, निम्न मध्यवर्गीय भारतीय परिवार की यथास्थिति, मनुष्य का पर्यावरण से जुड़ाव तथा बच्चों के मन में होने वाली कल्पनाशीलता को अभिव्यक्त करती है। उनका पहला उपन्यास 'नौकर की कमीज' भारतीय जीवन के यथार्थ और आदमी की कशमकश को प्रस्तुत करने वाला उपन्यास है। इस उपन्यास के संदर्भ में ज्योतिष जोशी लिखते हैं: 'इस उपन्यास में निम्न मध्यवर्गीय भारतीय परिवार के एक क्लर्क की यातना को दिखाते हुए भारतीय व्यवस्था की विडंबना को तार-तार कर दिया है। इसके साथ-साथ यह उपन्यास एहसान फरामोश लोगों के सहारे व्यंग्यात्मक शैली में एक माहौल तैयार करता है।' इस उपन्यास की सबसे बड़ी खासियत यह है कि इसके पात्र मायावी नहीं बल्कि दुनियावी है, जिसमें कल्पना और यथार्थ के स्वर एक साथ पिरोए हुए हैं। कहीं भी ऐसा नहीं लगता कि किसी पात्र को अनावश्यक रूप से महत्व दिया गया हो। हर पात्र की अपनी महत्ता है। केंद्रीय पात्र सत्तू बाबू एक ऐसा दुनियावी पात्र है जो घटनाओं को रस्ता नहीं बल्कि उनसे जूझने के लिए विवश है और साथ ही इस समाज के हाथों इस्तेमाल होने के लिए भी। आज आज की ब्यूरोक्रेसी और एहसान फ़रामोश लोगों पर यह उपन्यास सीधा प्रहार ही नहीं करता, बल्कि छोटे-छोटे वाक्यों के सहारे व्यंग्यात्मक शैली में एक माहौल भी तैयार करता चलता है।

विनोद कुमार शुक्ल द्वारा रचित 'खिलेगा तो देखेंगे' दूसरा बहुत चर्चित उपन्यास है। जिसमें एक देहाती जीवन के यथार्थ स्वरूप का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास की कथावस्तु में गांव के निम्न मध्यवर्गीय परिवार की उनकी सरल सहज जिंदगी को दर्शाया गया है। इस संदर्भ में विष्णु खरे लिखते हैं कि 'भारतीय निम्न मध्यवर्ग को लेकर जितनी गहरी निगाह समझ और सहानुभूति विनोद कुमार शुक्ल के पास है, उतनी और किसी उपन्यासकार में दिखाई नहीं देती। मेरे मन में इसे लेकर जरा भी संदेह नहीं है कि फणीश्वर नाथ रेणु के बाद वे स्वतंर्त्योत्तर हिंदी साहित्य के सबसे बड़े उपन्यासकार है।' विनोद कुमार शुक्ल द्वारा रचित 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' तीसरा बहुत चर्चित उपन्यास है। इस उपन्यास में भारतीय निम्न मध्यवर्गीय परिवार का चित्रण किया गया है। निम्न मध्यवर्गीय परिवार का रहन-सहन एक दूसरे के प्रति आत्मीयता, अपनापन और उनका सहज सादगीपूर्ण जीवन यही इस उपन्यास की कथावस्तु है। उनके जीवन में अभाव होने के बावजूद भी वे खुशी से अपना जीवन निर्वाहन करते रहते हैं। उनके जीवन में न अहंकार है न स्वार्थ। उनमें तो केवल आत्मीयता और अपनापन ही दिखाई देता है। उसी के सहारे ये अपने अभावग्रस्त जीवन को भी खुशी से जी लेते हैं। प्रस्तुत उपन्यास के अधिकांश पात्र युवा है। यह पात्र शिक्षित और नौकरी पेशा से जुड़े हुए हैं। इन पात्रों की आमदनी का साधन नौकरी है। इनमें एकाध पात्र ही अशिक्षित होने के बावजूद वजह से व्यवसाय से जुड़े हुए हैं। प्रस्तुत उपन्यास में मुख्य पात्र के रूप में रघुवीर प्रसाद और सोनसी है और अन्य पात्रों में साधु, विभाग अध्यक्ष, अम्मा, पिता, छोटू, बीड़ी पीनेवाला लड़का, उसका पिता पड़ोसी तथा हाथी है। उपन्यास में रघुवर प्रसाद और सोनसी का चित्रण सुक्ष्मता से चित्रित हुआ है। विनोद कुमार शुक्ल द्वारा रचित 'यासि रासा त', 'हरी घास की छप्पर वाली झोपड़ी और बना पहाड़' और 'एक चुप्पी जगह' ये सभी उपन्यास बाल केन्द्रित है। इन उपन्यासों में बच्चों की मित्रता के साथ ही अमलताश वाला पेड़ है, हरेवा नाम का पक्षी है, बुलबुल, कोतवाल, शौबीजी, किलकिला, दैयार, दर्जी मधुमक्खी का छत्ता, बजरंग पहलवान का होटल और छोटा पहाड़ है। इसे फैंटेसी कहें या जादुई यथार्थवाद या फ़िर हो सकता है कि आलोचकों को विनोद जी की इस भाषा, शैली और कल्पनाशीलता के लिए कोई नया ही नाम गढ़ना पर पड़े। फ़ंतासी की इस बुनावट में एक ताजगी और नयापन है। गल्फव कल्प की जुगलबंदी में गद्य और पद्य की सीमा रेखा मिट्टी जाती है। सच तो यह है कि विनोद कुमार शुक्ल ने कल्पना जगत में भी वास्तविक संसार ऐसा है जो जीवंत और रचनात्मकता के आनंद से भरा पूरा है। उपन्यासों में बच्चों की सपनीली दुनिया जैसी सुंदर बातें हैं। भाषा की चमक के साथ भाषा का संगीत भी कथा को मोहक बनाता है। भाषा का आंतरिक गठन कथ्य के साथ ही वर्तमान के बोध को भी जीवंत बनाता है। विनोद कुमार शुक्ल की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति का ही कमाल है कि सभी उपन्यासों को पढ़ने के बाद जिंदगी की अनगिनत मार्मिक तथ्य दिमाग में तारीख वार दर्ज होते चले जाते हैं उनके छोटे-छोटे वाक्यों में अनुभव और

यथार्थ का पैनापन है, जिसकी मारक शक्ति केवल तिलमिला उठी पैदा नहीं करती, बल्कि बहुत अंदर तक भीड़ थी चली जाती है।

निष्कर्ष :-विनोद कुमार शुक्ल के कहानियों और उपन्यासों में चित्रित व्यक्ति समाज का साधारण व्यक्ति है। जो अपने छोटी-छोटी घटनाओं में प्रसन्न और दुखी होता है। इनकी कथाओं में कहीं पर भी अतिशयोक्ति का प्रयोग नहीं किया गया है इसलिए यह कहानी और उपन्यास हमें अपने जीवन के निकट लगती हैं। इनसे पाठक वर्ग सहज रूप से जोड़ जाता है और अपनी अनुभूति को लेखक की अनुभूति के साथ सरलता से जोड़ पाता है। इन सभी के कारण ही विनोद कुमार शुक्ल की स्वतंर्त्योत्तर हिंदी कथा साहित्य में अपनी एक विशिष्ट पहचान बन गई है।

संदर्भ सूची :-

1. शुक्ल विनोद कुमार, दीवार पर खिड़की रहती है, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
2. शुक्ल विनोद कुमार, खिलेगा तो देखेंगे, आधार प्रकाशन, पंचकूला (हरियाणा)
3. शुक्ल विनोद कुमार, हरी घास की छप्पर वाली झोपड़ी और बोना पहाड़, राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली
4. शुक्ल विनोद कुमार, नौकर की कमीज, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
5. शुक्ल, विनोद कुमार. यासि रासा त, नौएडा : हार्परकॉलिंस पब्लिशर्स इंडिया
6. शुक्ल, विनोद कुमार. एक चुप्पी जगह, नई दिल्ली : जुगनू प्रकाशन
7. शुक्ल, विनोद कुमार. घोड़ा और अन्य कहानियाँ, नई दिल्ली : जुगनू प्रकाशन
8. तिवारी, आस्था. कवि कथाकार विनोद कुमार शुक्ल का साहित्य, रायपुर : शताक्षी प्रकाशन
9. तिवारी, योगेश, विनोद कुमार शुक्ल खिड़की के अंदर और बाहर, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

विकसित भारत के संदर्भ में बालिकाओं की माध्यमिक शिक्षा की वर्तमान स्थिति का अध्ययन

सानू सुभांगी

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

शोध सार:-शिक्षा एक राष्ट्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है क्योंकि शिक्षा ही वह माध्यम है, जिससे मानव संसाधन तैयार होते हैं। भारत को एक विकसित भारत बनने के लिए बालिकाओं के माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता को बेहतर बनाना और उस पर ध्यान देना आवश्यक है। विकसित भारत के लिए बालिकाओं के माध्यमिक शिक्षा की बुनियादी ढांचे और प्रौद्योगिकी को विकसित करने और इसे देश के विभिन्न क्षेत्रों तक भी उपलब्ध कराने की तत्काल आवश्यकता है। 'बेटी बचाओ और बेटी पढ़ाओ' इस दशक का नारा रहा है जो लैंगिक भेदभाव को समाप्त करने की बात करता है। इसके लिए सबसे पहले उन बाधाओं की पहचान करना आवश्यक है जो बालिकाओं को माध्यमिक शिक्षा तक पहुंचने से रोकती है। पाठ्यक्रम का मूल्यांकन कराकर,शिक्षक प्रशिक्षण और विकास में निवेश करके, नियमित रूप से शिक्षा में आवश्यक संसाधन प्रदान करके और माता-पिता से प्रतिक्रिया प्राप्त करके बालिकाओं की माध्यमिक शिक्षा में सुधार किया जा सकता है। बालिका शिक्षा को बढ़ावा देकर हम विकसित भारत के सपने को साकार कर सकते हैं।

मुख्य शब्द:-विकास, बालिका शिक्षा, गुणवत्ता, जागरूकता, बुनियादी ढांचा।

प्रस्तावना:-भारत में शिक्षा को समाज के विकास का महत्वपूर्ण आधार माना जाता है। विशेष रूप से बालिकाओं की शिक्षा राष्ट्र की उन्नति में प्रमुख भूमिका निभाती हैं। बालिकाओं को जब गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिलती है तो न केवल अपने जीवन को सुधारती है, बल्कि अपने साथ-साथ अपने समाज के लिए भी योगदान देती हैं। वर्तमान में बालिकाओं की माध्यमिक शिक्षा में कई चुनौतियां विद्यमान हैं। एक विकसित भारत के निर्माण के लिए बालिकाओं की शिक्षा को सशक्त करना एवं इन चुनौतियों को दूर करना अत्यंत आवश्यक है। आज हमें प्रजातंत्र की सुरक्षा, मानवता के प्रसार, राष्ट्रीय समृद्धि का विकास, विश्व शांति और चरित्रवान योग नागरिकों की आवश्यकता है। आज की तेजी से विकसित होती दुनिया में शिक्षा ही वह कुंजी है जिसे विकास और अवसर की अनगिनत दरवाजे खोलती है। यह एक सार्वभौमिक अधिकार है जो लिंग की परवाह किए बिना सभी के लिए सुलभ होना चाहिए। हमने शिक्षा में लैंगिक स्तर को बांटने में पर्याप्त प्रगति की है फिर भी बहुत काम किया जाना अभी बाकी है। खासकर यह सुनिश्चित करने में की लड़कियों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सामान मिले।

स्वतंत्र भारत में स्त्रियों की शिक्षा में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं फिर भी वर्तमान में बालिका शिक्षा की स्थिति असंतोषजनक है। बालिका शिक्षा का विकास जिस गति से होना चाहिए उस गति से नहीं हो पा रहा है। अनेक समस्याएं और बाधाएं बालिका शिक्षा के विकास को अवरोध कर रही है जैसे, लैंगिक भेदभाव, बुनियादी सुविधाओं की कमी गरीबी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अभाव इत्यादि।

शिक्षा अपने वास्तविक अर्थों में सत्य की खोज है। मनुष्य को मानवीय गरिमा के साथ जीने के लिए शिक्षा आवश्यक मानी जाती है। हमारे देश में स्त्री शिक्षा की स्थिति बहुत दयनीय है। देश की लगभग आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करने वाली स्त्री शक्ति का आधा से अधिक भाग आज अज्ञानता, निरक्षरता एवं शिक्षा के अधिकार के लिए भटक रहा है। भारत में माता को प्रथम गुरु की श्रेणी में रखा गया है, यदि गुरु ही अशिक्षित होगी तो वह अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा, संस्कार एवं जीवन मूल्य कैसे दे सकती हैं (वी.एम. शर्मा, 2014)।

बालिका शिक्षा को बढ़ावा देना एक राष्ट्रीय चिंता और वैश्विक अनिवार्यता है। शिक्षा के माध्यम से बेहतर मानव संसाधन तैयार होता है, जो देश के अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देता है। अगर कोई स्त्री नौकरी करेगी तो उसके साथ-साथ देश का भी भविष्य उज्जवल हो सकता है और देश का विकास भी हो सकता है। हमारे राष्ट्र को एक विकसित भारत बनने के लिए बालिकाओं के माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता पर ध्यान देना और उसे बेहतर बनाना आवश्यक है। क्योंकि हम 2047 तक विकसित भारत की आकांक्षा रखते हैं, इसलिए बालिकाओं के माध्यमिक शिक्षा की बुनियादी ढांचे और प्रौद्योगिकी को विकसित करने और इसे देश के दुरदराज के क्षेत्रों तक भी उपलब्ध कराने की तत्काल आवश्यकता है। एक विकसित राष्ट्र के लिए शिक्षा के माध्यम से आवश्यक ज्ञान तकनीक कौशल और जानकारी प्रदान करती है तथा उन्हें अपने परिवार, मातृभूमि और समाज के प्रति उनके अधिकार और कर्तव्य को जानने में उन्हें सक्षम बनाती है। देश में पितृ सत्तात्मक व्यवस्था के कारण भी महिलाओं में विषमता है। उच्च जाति की महिलाएं परंपरागत तौर पर खेतों पर काम करने नहीं जाती हैं। कृषक तथा दलित जाति की महिलाएं ही खेतों के काम में हाथ बँटाती हैं। उच्च जाति की महिलाएं शारीरिक श्रम से परहेज करती हैं। कृषक जाति तथा दलित जातियों में श्रम के प्रति अपार निष्ठा है। जाहिर है कि भारतीय सामाजिक संरचना के अंतर्गत महिलाओं के विकास में घोर असंतुलन है। एक तरफ कल्पना चावला का अमर स्मारक है तो दूसरी तरफ भारी संख्या में उन महिलाओं का चेहरा दिखाई देता है जिन्होंने स्कूल के दरवाजे पर दस्तक तक नहीं दी। वातानुकूलित कक्ष में अपने लैपटॉप के साथ बैठी महिलाएं भी दिखाई पड़ती हैं और भारतीय रेल के विभिन्न स्टेशनों पर फटेहाल वस्त्रो में दातून बेचती हुई गरीब महिलाओं की हकीकत भी मौजूद है। एक तरफ लोग स्त्री स्वतंत्रता की बात करते हैं तो दूसरी तरफ दहेज के नाम पर दुल्हन को जिंदा जला दिया जाता है। अब आंकड़ों का खेल नहीं चल सकता है ठोस पहल की आवश्यकता है।

भारत में बालिका शिक्षा के लिए गठित समिति और आयोग:-श्री सत्यनारायण खींची (भारत में महिला शिक्षा के वर्तमान स्थिति) ने भारत में महिला शिक्षा के वर्तमान स्थिति को बताते हुए विभिन्न समिति और आयोग के गठन में बालिका शिक्षा पर अपने महत्वपूर्ण सुझाव दिए हैं।

राधाकृष्णन आयोग (1948 – 49)

- स्त्रियों के लिए शिक्षा संबंधी सुविधाओं को बढ़ाया जाए।
- शिक्षित महिलाओं के बिना शिक्षित व्यक्ति नहीं हो सकते।
- पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जो बालिकाओं को समाज के उच्च स्थान एवं सम्मान दिला सके।
- स्त्रियों के लिए व्यवसायिक शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए। राष्ट्रीय महिला शिक्षा समिति (1958)
- इस समिति को दुर्गाबाई देशमुख समिति कहकर भी पुकारा जाता है।
- सरकार को प्रत्येक राज्य में स्त्री शिक्षा की प्रगति के लिए सुविधा संपन्न विद्यालयों की व्यवस्था करनी चाहिए।
- गांव में स्त्री शिक्षा के प्रसार के लिए विशेष प्रयास करने चाहिए।
- स्त्री शिक्षा के प्रसार के लिए राज्यों में लड़कियों तथा महिलाओं की शिक्षा की राज्य परिषदें गठित की जानी चाहिए।

कोठारी आयोग (1964 – 66)

- इंटरमीडिएट स्तर पर बालिकाओं के लिए अलग विद्यालय खोले जाने चाहिए।
- बालिकाओं के लिए अल्पकालिक तथा व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।
- बालिकाओं के अनिवार्य शिक्षा के लिए और अधिक प्रयत्न किए जाने चाहिए।
- स्त्री शिक्षा के लिए अनुसंधान इकाइयों की स्थापना की जानी चाहिए।
- स्त्री शिक्षा के रास्ते में आने वाली सभी कठिनाइयों को समाप्त करने के लिए राज्य एवं केंद्र को मिलकर निर्णय लेना चाहिए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986)

- लिंग भेद जैसे उत्पन्न हो रहे विषयों को जड़ से समाप्त करना चाहिए।
- स्त्रियों की प्राथमिक शिक्षा के रास्ते में आने वाली समस्याओं का समाधान करने की उचित व्यवस्था करनी चाहिए।
- स्त्रियों की प्रगति के लिए विभिन्न कला–कौशलों से उत्पन्न संस्थाओं को खोलना चाहिए।

महिला समाख्या (1989)

- वर्तमान में इस कार्यक्रम को 10 राज्यों के 104 जिलों में चलाया जा रहा है।
- महिला समाख्या का अर्थ है शिक्षा द्वारा महिलाओं को सामानता देना।
- स्त्री शिक्षा के विकास हेतु 1955 में हिंदू विवाह अधिनियम तथा 1952 में बना विशेष विवाह अधिनियम है।
- सन 1983 में आपराधिक दंड संहिता अधिनियम तथा महिला का अश्लील प्रस्तुतीकरण विरोध अधिनियम 1986 में बनाया गया।

प्रो. राममूर्ति समिति (1990)

- विद्यालय में बाल विकास पोषण तथा स्वास्थ्य का समावेश करना चाहिए।
- स्त्रियों की शिक्षा के लिए धन की व्यवस्था करनी चाहिए।
- विद्यालय में अधिक से अधिक अध्यापिकाओं की नियुक्ति होनी चाहिए।
- छात्र तथा छात्राओं के लिए छात्रवृत्तियों तथा मुख्य पाठ पुस्तकों का वितरण करना चाहिए।

वर्तमान समय में भारतीय शिक्षित नारी का समाज एवं राष्ट्र के प्रगति में अनूठा योगदान है। शिक्षा ,व्यवसाय ,वाणिज्य, तकनीकी, ज्ञान विज्ञान, प्रशासन और उन क्षेत्रों में नई योगदान निरंतर अपनी प्रगति पथ पर अग्रसर हो रहा है। प्रत्येक क्षेत्र में नारी अपनी शक्ति को व्यक्त कर शक्ति नाम को सार्थक करने में जुटी हुई है। जननी की गोद विश्व की सर्वप्रथम और सबसे प्रभावशाली पाठशाला होती है। नारी में सबसे अधिक सृजन एवं निर्माण शक्ति होती है। शिक्षित नारी संतान को महानतम बना सकने में सर्वदा सफल होती है। आज के संदर्भ में महिला शिक्षा अत्यंत अनिवार्य हो गई है। यदि सांस्कृतिक धरोहर को संजोय रखा जाना है और साथ ही देश का चहुंमुखी विकास करना है तो भारत की प्रत्येक बालिका को शिक्षा उपलब्ध करानी होगी अन्यथा एक पक्षीय विकास बहुत लंबे समय तक राष्ट्र एवं समाज की प्रगति को वहन नहीं कर सकेगा (नंद किशोर आचार्य, 2009)।

विकसित देशों में महिलाओं की स्थिति बहुत हद तक ठीक है। वहां पर महिलाओं को पुरुषों के बराबर दर्जा दिया गया है। सभी क्षेत्रों में महिलाएं भी पुरुषों के बराबर कार्य कर रही हैं। सभी क्षेत्रों में महिलाएं चाहे वह ट्रक चलाने का कार्य हो, रिक्शा हो या फिर हवाई जहाज चलाने का वह किसी भी क्षेत्र में पुरुषों से पीछे नहीं है। भारतीय सामाजिक संरचना के अंतर्गत महिलाओं को प्राचीन समय में वेद पढ़ने का अधिकार प्राप्त नहीं था कुछ अपवादों को छोड़कर महिलाओं को पाठशाला में शिक्षा ग्रहण करने का भी अधिकार नहीं था। परंतु भारतीय पुनर्जागरण आंदोलन तथा पश्चिमीकरण की प्रक्रिया महिलाओं की मुक्ति में सहायक सिद्ध हुई है। ईश्वरचंद्र विद्यासागर ने महिलाओं की शिक्षा के विकास एवं विस्तार हेतु संघर्ष किया। अनेक महिला विद्यालयों की स्थापना किए। उन्होंने अनेक महिला विद्यालयों की स्थापना में सहयोग प्रदान किया। आधुनिक शिक्षा आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के प्रमुख आधार एवं प्रस्थान बिंदु है। आधुनिक शिक्षा तथा वैज्ञानिक दृष्टि के बीच तर्क पूर्ण संबंध मौजूद है। आधुनिक शिक्षा वैश्विक दृष्टि एवं धर्मनिरपेक्ष चिंतन से संबंधित है। बंगाल की धरती से उठती हुई लहर संपूर्ण देश में फैलती चली गई। भारत के कोने–कोने का यह आलम है कि सुबह सवेरे आंखों में एक सपने संजोए स्कूली वस्तों और टिफिन बॉक्स के साथ लड़कियां स्कूल जाने के लिए अपने घरों से निकलती हैं। शिक्षा ने महिलाओं के संघर्ष को सुसंगठित आधार तथा रचनात्मक दिशा प्रदान किया है। यह आधुनिक शिक्षा की ही देन है कि इंडियन इंस्टीट्यूट आफ साइंस, बैंगलोर, आई0आई0एम0, आई0 आई0 टी0 जैसे देश के प्रमुख शिक्षण संस्थानों में महिलाओं का प्रदर्शन उत्कृष्ट है। भारत में सभी को शिक्षा उपलब्ध कराना संवैधानिक प्रतिवधता है। 1951 में शिक्षा का स्तर काफी कम था पुरुषों में 25 प्रतिशत और महिलाओं में 9 प्रतिशत था। जिसकी वजह से यह सोचा गया था कि अगले 10 सालों में पूर्ण शिक्षा लक्ष्य प्राप्त कर लिया जाएगा। लेकिन यह लक्ष्य अभी तक पूर्ण नहीं किया गया है। पिछले 75 सालों के अनुभव से यह नजर आता है कि शिक्षा की नीतियों को प्राथमिकता भर देने से यह सुनिश्चित नहीं हो जाता है कि इसके लिए प्राप्त साधन उपलब्ध हो जाए और ना ही इससे यह सुनिश्चित होता है कि हशिए पर रह रहे तबको को राष्ट्रीय कार्यक्रमों से लाभ हो रहा है। शिक्षा प्राप्ति के मामले में महिलाओं और पुरुषों के बीच लिंग विभेद बरकरार है। महिलाओं और पुरुषों में अंतर के साथ दलित वर्ग में उन वर्गों की अपेक्षा शिक्षा का स्तर काफी कम है। मजदूरी करने वालों में पैसे में लगे समूह की तुलना में शिक्षा काफी कम है। जनसंख्या की विशाल आकार की वजह से सर्व शिक्षा प्राप्ति की चुनौतियां काफी बढ़ी हुई है (एम0 नैय्यर,2020)।

स्वाधीनता के बाद सरकारी एवं गैर सरकारी स्तर पर महिलाओं की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति पर गंभीर चिंता व्यक्त की गई। भारत सरकार ने 1971 में स्त्री की स्थिति जानने हेतु एक समिति को मनोनीत किया। समिति ने1974 में एक विस्तृत प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। यह महिलाओं की स्थिति के संबंध में यह एक बहु आयामी प्रतिवेदन था। इस प्रतिवेदन के निष्कर्ष ने वस्तुतः भारतीय महिलाओं के सामाजिक यथार्थ को स्पष्ट किया। साथ ही इस प्रतिवेदन ने शिक्षित तथा जागरूक महिलाओं को संघर्ष के लिए एक नई उत्तेजना प्रदान की (शुभा,2011)।

जब बालिकाओं को शिक्षा का अवसर मिलता है, तो वह समाज में हो रहे अन्याय और असमानता के प्रति जागरूक हो जाती हैं। इससे वह अपने अधिकारों के लिए लड़ने की क्षमता प्राप्त कर पाती हैं, चाहे वह कामकाजी जीवन में समान वेतन की बात हो या घरेलू हिंसा के खिलाफ संघर्ष, शिक्षित महिलाएं अपने हक की मांग करना जानती हैं। शिक्षित महिलाएं अपने समाज, राज्य और देश की राजनीतिक में सक्रिय रूप से भाग ले सकती हैं। वे न केवल चुनाव में अपने मत का सही उपयोग कर सकती हैं बल्कि वह स्वयं भी नेतृत्वकारी भूमिका निभा सकती हैं। इससे समाज में लोकतांत्रिक मूल्यों को बल मिलता है और समाज अधिक समावेशी और प्रगतिशील बनता है। जब बालिकाएं शिक्षित होंगी तो वह अपने जीवन के फैसलों को लेकर अधिक स्वतंत्र और जागरूक हो जाएंगी। शिक्षा पा कर वे कम उम्र में शादी के खिलाफ आवाज उठा पाएंगी और अपने शिक्षा और करियर को प्राथमिकता देंगी। इससे न केवल उनकी स्वतंत्रता सुनिश्चित होती है, बल्कि यह समाज में महिलाओं के अधिकारों की दिशा में भी एक महत्वपूर्ण कदम है। ग्रामीण और शहरी क्षेत्र में बालिकाओं की शिक्षा में एक बड़ा अंतर देखा जाता है। शहरी क्षेत्र में बालिकाओं को शिक्षा प्राप्त करने के अधिक अवसर मिलते हैं, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में यह स्थिति अक्सर उल्टी होती है। गरीबी, सामाजिक बंधन और संसाधनों की कमी के कारण ग्रामीण बालिकाओं को शिक्षा से वंचित रहना पड़ता है। सरकारी और गैर सरकारी संगठनों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि ग्रामीण क्षेत्रों में भी बालिकाओं को समान शिक्षा के अवसर प्राप्त हो। बालिकाओं की शिक्षा के मार्ग में अनेक चुनौतियां हैं। कई परिवारों में यह धारणा होती है कि बालिका की शिक्षा पर खर्च करने से कोई लाभ नहीं है, क्योंकि वह अंततः विवाह कर घर संभालने वाली है। इस मानसिकता को बदलने के लिए हमें समाज में जागरूकता अभियान चलाना जरूरी है। इसके अलावा स्कूलों में सुविधाओं की कमी, बालिकाओं के लिए अलग शौचालय की उपलब्धता की कमी और सुरक्षित परिवहन जैसे मुद्दे भी उनकी शिक्षा में बाधा बनते हैं। अगर शिक्षा में बाधा होगी तो देश के विकास में भी बाधा होगी। भारत राष्ट्र का विकास तभी संभव है जब हर घर की बालिकाएं पढ़ेंगी और रोजगार के क्षेत्र में आगे बढ़ेंगी। बालिकाओं का शिक्षा का महत्व निम्नलिखित दृष्टिकोण से देखा जा सकता है

- **व्यक्तिगत सशक्तिकरण**:-शिक्षा एक व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाती है। जब बालिकाएं शिक्षित होंगे तो वह अपने जीवन के महत्वपूर्ण निर्णय स्वयं ले पाएंगी। इससे उन्हें आत्मविश्वास बढ़ता है और वह अपने सारे अधिकारों के प्रति जागरूक होती हैं। एक शिक्षित बालिका जीवन में किसी भी कठिनाई का सामना कर सकते हैं और अपने दम पर अपने भविष्य को अपने अनुसार आकार देने में सक्षम होती हैं
- **समाज का समुचित विकास**:-शिक्षित महिलाएं समाज की रीड होती हैं एक शिक्षित बालिका न केवल अपनी पीढ़ी को प्रभावित करती है बल्कि अपनी आने वाली हर वीडियो को भी सशक्त बनाती है वह अपने परिवार समाज को शिक्षा और नैतिक मूल्यों का महत्व सिखाती है और साथ ही समझ में जागरूकता और विकास करती हैं।
- **आर्थिक स्वतंत्रता**:-शिक्षा बालिकाओं को आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनाती हैं। वे विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार के अवसर प्राप्त कर सकती हैं और अपने आर्थिक स्थिति को मजबूत कर सकती हैं। इससे न केवल उनकी जिंदगी में सुधार होता है बल्कि उनके पूरे परिवार की आर्थिक स्थिति भी सुदृढ़ होती है। जब महिलाएं कमाई करती है तो वे अपने परिवार और समाज की उन्नति में योगदान दे सकती हैं। जब महिलाएं समाज की उन्नति में योगदान देगी तो फिर देश का भी विकास संभव है।
- **स्वास्थ्य और जीवन स्तर में सुधार**:-शिक्षित महिलाएं स्वास्थ्य के प्रति अधिक जागरूक होती हैं। वे अपने और अपने परिवार के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने के लिए सही निर्णय ले सकती हैं। यह उनके बच्चों की मानसिक और शारीरिक विकास में भी सहायक होता है। शिक्षित महिलाएं परिवार नियोजन और महिलाओं से संबंधित स्वास्थ्य मुद्दों के बारे में उचित जानकारी रखती हैं, जिससे कि वह खुशहाल और स्वस्थ जीवन जी सकती हैं।
- **लैंगिक समानता को प्रोत्साहन**:-शिक्षा बालिकाओं को समाज में समानता का अधिकार दिलाने का एक सशक्त माध्यम है। जब बालिकाएं शिक्षित होती है तो वह खुद को लड़कों के बराबर समझती हैं और समाज में अपना स्थान बनाने के लिए निरंतर प्रयास करती हैं। इससे समाज में लैंगिक भेदभाव को कम करने में मदद मिलती है और महिलाओं को समान अवसर और समान अधिकार मिलता है
- **अन्याय और अपराध से बचाव**:-शिक्षा बालिकाओं को अपने अधिकारों के प्रति सजग करती हैं। वह सामाजिक कुरीतियों जैसे बाल विवाह, घरेलू हिंसा और दहेज प्रथा आदि के खिलाफ खड़ी हो सकती हैं। एक शिक्षित महिला को अपराध और अन्याय का शिकार होने की संभावना कम होती है, क्योंकि वह अपने अधिकारों को समझती हैं और अन्याय के विरोध करने में सशक्त होती हैं। शिक्षा किसी भी समाज के विकास और उन्नति में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। जब हम भारत को विकसित राष्ट्र के रूप में देखना चाहते हैं तो बालिकाओं की शिक्षा पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। भारत में महिला साक्षरता दर में सुधार के लिए पिछले कई दशकों से अथक प्रयास किए गए हैं, लेकिन अभी भी यह चुनौती पूर्ण विषय बना हुआ है। बालिकाओं को शिक्षा प्रदान करना न केवल व्यक्तिगत विकास है बल्कि पूरे समाज और देश के प्रगति के लिए अति आवश्यक है। बालिका शिक्षा पर स्वामी विवेकानंद ने कहा था कि 'हमें नारियों को ऐसी स्थिति में पहुंचा देना चाहिए जहां वह अपनी समस्या को अपने ढंग से स्वयं सुलझा सके, उनके लिए यह काम ना कोई कर सकता है ना किसी को करना ही चाहिए' (news prahari jan 14, 2022)।

यूनिसेफ देश में लड़कियों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के लिए भारत सरकार के साथ मिलकर काम कर रही है। यूनिसेफ के अनुसार दुनिया भर में129 मिलियन लड़कियां स्कूल से बाहर है। वास्तव में यदि गंभीरता के साथ देखा जाए तो यही ज्ञात होगा कि भारत के पतन और अवनति का एक प्रमुख कारण स्त्रियों की अशिक्षा है। स्त्री शक्ति की सजीव प्रतिमा है। मनु ने कहा कि 'जहां स्त्रियों का आदर होता,वहां देवता प्रसन्न रहते हैं, और जहां उनका आदर नहीं होता, वहां सारे कार्य और प्रयास नि- सफल होजाते हैं। (संगीता राज, जुलाई 2023)। यूनिफाइड डिस्ट्रिक्ट इंफॉर्मेशन सिस्टम फॉर एजुकेशन प्लस (यूडीआईएसई+) वर्ष 2018-19 में शिक्षा मंत्रालय के स्कूल शिक्षा और साक्षरता विभाग द्वारा विकसित एक एप्लीकेशन है। शिक्षा मंत्रालय ने भारत में स्कूली शिक्षा पर 'यूनिफाइड डिस्ट्रिक्ट इंफॉर्मेशन सिस्टम फॉर एजुकेशन प्लस (यूडीआईएसई+) 2021-22' शीर्षक से एक विस्तृत रिपोर्ट जारी की है और आंकड़े दिलचस्प हैं। जहां माध्यमिक वर्गों में नामांकन में सुधार हुआ है, वहीं प्राथमिक विद्यालय स्तर पर यह खराब हुआ है। यह डेटा नीति निर्माताओं के लिए चुनौतियां पेश करता है। 2021-22 में प्राथमिक से उच्चतर माध्यमिक तक 12.29 करोड़ से अधिक लड़कियों का नामांकन हुआ, जो 2020-21 में लड़कियों के नामांकन की तुलना में 8.19 लाख की वृद्धि दर्शाता है। सकल नामांकन अनुपात (जीईआर) के लिंग समानता सूचकांक (जीपीआई) के अनुसार शिक्षा मंत्रालय ने कहा कि उच्चतर माध्यमिक शिक्षा में जीईआर में उल्लेखनीय सुधार हुआ है और यह 2021-22 में 53.8 प्रतिशत से बढ़कर 57.6 प्रतिशत हो गया है (शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार)।

पिछले तीन वर्षों में उच्चतर माध्यमिक खंड में छात्राओं के नामांकन में उछाल देखा गया। 2019-20 में कुल 1.26 करोड़ लड़कियों को स्कूलों में दाखिला मिला, जो 2020-21 में बढ़कर 1.30 करोड़ हो गई। अगले वर्ष यह संख्या 1.38 करोड़ हो गई।

यह डेटा विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि भारत में पारंपरिक रूप से उच्च शिक्षा में छात्राओं की संख्या कम देखी गई है। 2015 में, नरेंद्र मोदी सरकार ने बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ अभियान शुरू किया, जिसका उद्देश्य स्कूलों में महिला लिंगानुपात और महिला नामांकन को बढ़ाना था। जो दोनों देश में, विशेष रूप से उत्तरी राज्यों में चिंताजनक रूप से कम थे। उपरोक्त आँकड़ों के अनुसार, अभियान सफल रहा है, विशेष रूप से लड़कियों की माध्यमिक शिक्षा में। हालाँकि, प्राथमिक और उच्च प्राथमिक में नामांकित लड़कियों की संख्या में गिरावट आई है, जो चिंता का विषय है। कई योजनाओं और बेहतर जागरूकता की बदौलत भारत में स्कूलों में दाखिला लेने वाली लड़कियों की संख्या में वृद्धि हुई है, हालाँकि, उन्हें विद्यालय की शिक्षा पाने हेतु अभी भी समस्याएं बनी हुई है। (शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार)।

हमारे देश में जब विकास के दर धीमी होने लगी, तब यह विचार आया कि इसके कई कारणों में से एक कारण अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भूमिका की उपेक्षा करना है। अतः महिलाओं की शिक्षा पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा। उन्हें भी देश के अर्थव्यवस्था एवं विकास कार्यों में बराबरी से भाग लेने की समुचित अवसर प्रदान किए जाने चाहिए। वे धीरे-धीरे शिक्षा के प्रति जागरूक हो रही है एवं इसके महत्व को समझ रही हैं। ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं की शिक्षा और उनके सशक्तिकरण के लिए चलाया गया महिला समाख्या एक ठोस कार्यक्रम था, जो विशेषकर सामाजिक और आर्थिक रूप से हाशिए पर आने वाली महिलाओं के समूह के लिए था इसका क्रियान्वयन आंध्र प्रदेश, गुजरात, केरल, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल, बिहार, झारखंड, मध्य प्रदेश और असम के 9000 गांव में किया गया। इस योजना का उद्देश्य था कि महिलाओं के आत्मविश्वास में वृद्धि करना। एक ऐसा वातावरण निर्मित करना, जहां महिलाएं ज्ञान और सूचनाएं प्राप्त कर सके, जिससे उन्हें समाज में एक सकारात्मक भूमिका निभाने में मदद मिल सके। महिलाओं और किशोरियों को शिक्षा के अवसर मिल सके और औपचारिक और एवं औपचारिक क्षेत्र शिक्षा कार्यक्रमों में उनकी भागीदारी को बढ़ावा मिले आदि। भारत गांवों का देश है और ग्रामीण परिवेश में बालिकाओं को पढ़ाई के लिए प्रेरित करना और सुविधा उपलब्ध कराना अत्यंत आवश्यक है । देश का विकास गांव से ही संभव है। जब गांव विकास करेगा, तो देश अपने आप विकास करेगा।

बालिकाओं की शिक्षा में सुधार के लिए उपाय:-

1. सरकारी नीतियों और योजनाओं का क्रियान्वयन:-सरकार ने बालिकाओं की शिक्षा के लिए कई योजनाएँ चलाई हैं, जैसे:-

बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ: इस योजना का उद्देश्य बालिकाओं को शिक्षा के महत्व को समझाना और उनके जीवन में सुधार करना है।

सुकन्या समृद्धि योजना: यह योजना बालिकाओं की उच्च शिक्षा के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करती है।

कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना:इस योजना के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में बालिकाओं को निःशुल्क शिक्षा और आवास की सुविधा प्रदान की जाती है।

इन योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाना चाहिए ताकि बालिकाओं को वास्तविक लाभ मिल सके। योजनाओं के तहत वित्तीय और अन्य संसाधनों का सही तरीके से उपयोग होना चाहिए, जिससे बालिकाओं की शिक्षा को प्रोत्साहन मिले।

2. सामाजिक जागरूकता अभियान:-बालिकाओं की शिक्षा के महत्व को समाज में फैलाने के लिए व्यापक जागरूकता अभियान चलाए जाने चाहिए। ये अभियान विशेष रूप से ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में चलाए जा सकते हैं, जहाँ बालिकाओं की शिक्षा को अभी भी महत्वपूर्ण नहीं माना जाता। मीडिया, रेडियो, टेलीविज़न, और सोशल मीडिया का उपयोग करके बालिकाओं की शिक्षा के लाभों को जन-जन तक पहुँचाया जा सकता है।

3. शिक्षा तक पहुंच में सुधार:-ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूलों की कमी और लंबी दूरी भी एक बड़ी समस्या है। सरकार को ऐसे क्षेत्रों में अधिक स्कूल स्थापित करने और बालिकाओं के लिए परिवहन की सुविधाएँ उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। स्कूलों में सुविधाजनक शौचालय, स्वच्छता और सुरक्षा का उचित प्रबंध होना चाहिए, ताकि बालिकाएँ सुरक्षित महसूस करें और उनकी स्कूल में नियमित उपस्थिति बनी रहे।

4. शिक्षकों की गुणवत्ता में सुधार:-बालिकाओं के लिए रोल मॉडल के रूप में महिला शिक्षकों की उपस्थिति भी बहुत महत्वपूर्ण है। अधिक महिला शिक्षकों को नियुक्त करके बालिकाओं को प्रेरित किया जा सकता है। साथ ही, शिक्षकों की गुणवत्ता में सुधार लाकर शिक्षण विधियों को अधिक रोचक और प्रासंगिक बनाया जाना चाहिए।

5. परिवार और समुदाय की भागीदारी:-बालिकाओं की शिक्षा में सुधार के लिए परिवार और समुदाय की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। माता-पिता और अभिभावकों को समझाना आवश्यक है कि बालिकाओं की शिक्षा उनके भविष्य के लिए कितना महत्वपूर्ण है। पंचायत, सामुदायिक नेताओं और गैर-सरकारी संगठनों को मिलकर ऐसे कार्यक्रमों को बढ़ावा देना चाहिए, जिनमें बालिकाओं की शिक्षा को प्राथमिकता दी जाए।

6. तकनीकी शिक्षा और डिजिटल लर्निंग:-21वीं सदी में तकनीकी शिक्षा का महत्व बढ़ता जा रहा है। बालिकाओं को विज्ञान, प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग और गणित (स्न्नश्वरू) के क्षेत्रों में प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। डिजिटल लर्निंग प्लेटफ़ॉर्म और ऑनलाइन शिक्षा बालिकाओं के लिए एक नई राह खोल सकते हैं, खासकर उन क्षेत्रों में जहाँ स्कूलों की सुविधा कम है।

7. सुरक्षा के मुद्दों का समाधान:-बालिकाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करना सबसे महत्वपूर्ण कदमों में से एक है। स्कूल जाते समय या स्कूल में बालिकाओं को सुरक्षा की भावना देना बहुत आवश्यक है। इसके लिए सरकार को पुलिस और प्रशासन के साथ मिलकर काम करना चाहिए। सुरक्षा की दृष्टि से सीसीटीवी कैमरे, महिला सुरक्षाकर्मियों की नियुक्ति और सख्त कानूनों का प्रावधान किया जाना चाहिए।

8. माहवारी स्वच्छता जागरूकता:-भारत में अभी भी माहवारी के दौरान बालिकाएँ स्कूल जाना छोड़ देती हैं, क्योंकि उन्हें स्वच्छता के बारे में जानकारी नहीं होती या स्कूलों में उचित स्वच्छता सुविधाएँ नहीं होती। इस समस्या को हल करने के लिए स्कूलों में माहवारी स्वच्छता के बारे में जागरूकता फैलानी चाहिए और बालिकाओं को सस्ती और सुरक्षित स्वच्छता उत्पाद उपलब्ध कराए जाने चाहिए।

9. समय पर विवाह और बालिकाओं के अधिकारों की रक्षा:-बालिकाओं के समय पर विवाह का मुद्दा भी उनकी शिक्षा में बाधा बनता है। कई परिवार बालिकाओं की जल्दी शादी करने पर जोर देते हैं, जिससे उनकी शिक्षा अधूरी रह जाती है। इस स्थिति को रोकने के लिए समाज में जागरूकता फैलानी होगी और बालिकाओं के अधिकारों की रक्षा करनी होगी।

भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में विकास के लिए महिलाओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। जब महिलाएं शिक्षित होती हैं, तो वे न केवल अपने जीवन को बेहतर बनाती हैं, बल्कि वे अपने परिवार और समाज को भी सकारात्मक दिशा में ले जाती हैं। शिक्षित महिलाओं के कई फायदे होते हैं, जैसे:-

1. स्वास्थ्य सुधार: शिक्षित महिलाएं बेहतर स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं का लाभ उठाती हैं, जिससे शिशु मृत्यु दर कम होती है और परिवार का समग्र स्वास्थ्य स्तर बेहतर होता है।

2. आर्थिक स्वतंत्रता: शिक्षा महिलाओं को रोजगार के अधिक अवसर प्रदान करती है, जिससे वे आर्थिक रूप से स्वतंत्र हो सकती हैं और समाज में अपनी भागीदारी बढ़ा सकती हैं।

3. सामाजिक न्याय: शिक्षा से महिलाओं में जागरूकता बढ़ती है, जिससे वे अपने अधिकारों के लिए आवाज उठा सकती हैं और लैंगिक समानता की

दिशा में समाज को प्रेरित कर सकती हैं।

4. परिवार नियोजन : शिक्षित महिलाएं परिवार नियोजन के महत्व को समझती हैं और छोटे परिवार की योजना बनाती हैं, जिससे देश की जनसंख्या वृद्धि दर नियंत्रित होती है।

निष्कर्ष :–विकसित भारत के लिए बालिकाओं की शिक्षा अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि शिक्षा से ही वह अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकती हैं, और देश की तरक्की में भागीदार बन सकती है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी ने विकसित भारत @ 2047 में 'युवाओं की आवाज' कार्यक्रम में शिक्षा के महत्व पर जोर दिया था। बालिकाओं को शिक्षित करने से न केवल उनका व्यक्तित्व विस्तृत होता है बल्कि वह अपने परिवार, समाज को भी सशक्त बना सकती हैं। शिक्षा से ही वह अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो सकती है। बालिकाएं शिक्षा के माध्यम से अपने सारे सपने को पूरा कर सकती हैं। इसलिए बालिकाओं की शिक्षा को प्राथमिकता देना अत्यंत आवश्यक है। जिस प्रकार शिक्षा किसी भी मनुष्य के विकास के लिए साधन उपलब्ध करवाती है, उसी तरह देश के विकास में भी बालिकाओं की शिक्षा महत्वपूर्ण साधन बनकर देश का विकास करती हैं। हालांकि गत वर्षो में बालिकाएं शिक्षा के क्षेत्र में भारत में काफी उन्नति की हैं। देश के बड़े–बड़े शिक्षण संस्थाओं पर बालकों की तुलना में बालिकाओं ने भी अपना परचम लहराया है। बालिका शिक्षा के दिशा में किए गए कार्य के सकारात्मक परिणाम मिल रहे हैं।

संदर्भ सूची :–

1. वी0 एम0 शर्मा, (2014), टीचर ट्रेंनिंग एंड एजुकेशन रिसर्च, कॉमन वेल्थ पब्लिशर्स नई दिल्ली, पृ.89
2. नंद किशोर आचार्य, (2009), शिक्षा का सत्याग्रह, वागदेवी प्रकाशन, बीकानेर, पृ.89
3. शुभा, (2011), शिक्षा का मनुष्य के व्यक्तित्व पर प्रभाव, सीवांक प्रकाशन, ग्वालियर, पृ.147
4. एम. नैय्यर, (2020), नारी शिक्षा के बदलते रूप, मोतीलाल पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ.125
5. शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार
6. श्री सत्यनारायण खींची, (भारत में महिला शिक्षा की वर्तमान स्थिति) International Journal of Education, Modern Management,Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)ISSN :2581-9925,Impact Factor: 6.340,Volume 04, No. 01(I),January-March, 2022,pp.175-180
7. IJCRT/VOLUME11,ISSUE 7 JULY 2023 ISSN:23202882
8. https://m.punjabkesari.in/blogs/news/serious-situation-of-girl-education-in-india-1882680
9. https://www.newsprahari.com/2022/01/blog-post_346.html

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

लोक-जीवन में स्त्री-चरित्र के वैमर्शिक विवेचन

डॉ. दीपा सिंह सिकरवार

अतिथि विद्वान, हिंदी, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, ग्वालियर, मप्र.

हिन्दी कहानी में ग्राम्य, लोक-जीवन विश्वसनीयता के साथ मुंशी प्रेमचन्द की कहानियों में दिखाई देता है। प्रेमचन्द के काल में गाँव जिस विस्तार और वैविध्य के साथ रेखांकित हुआ है, वैसा विस्तार और वैसी विविधता आधुनिक कहानी में दिखाई नहीं देती। गाँव महज एक शानदार अतीत बन गया है। प्रेमचन्द की यह परम्परा रेणु के बाद क्रमशः समाप्तप्रायः हो गई है। लेकिन कुछेक कथाकारों ने गाँव की खोती हुई ज़मीन को फिर से अपनी कहानी की कथा-वस्तु बनाया है। इन कथाकारों के सामने प्रेमचन्द द्वारा निर्मित गाँव की छवि ही प्रमुख थी। गाँव का कथित राजनीतिक अनुभव उस दौर के तमाम ग्राम-कथाकारों ने नक्सलवादी आन्दोलन और उसके बाद की वर्ग-विद्रोही घटनाओं द्वारा प्राप्त किया था।

तमाम प्रतिबद्धता के बाद भी गाँव की सांस्कृतिक-सामाजिक हक़ीक़तों को प्रगतिशील सम्वेदनशीलता के साथ अपनी अनुभूति में उतारने का न तो प्रेमचन्द जैसा संयम था न रेणु जैसी सजीव अनुभवगम्यता। नौवें दशक और उसके बाद की कहानियाँ जिस मोड़ पर हैं, वहाँ दृश्य से गाँव का नक्शा या तो गायब है या वह अनचीन्हा और बदला हुआ है। इस दशक के पूर्व के गाँवों की छवियों में क़ैद मानसिकता के आलोचक-विचारक आज के कथा-दृश्य में शामिल नवीनताओं को एक भोली निराशा और स्तब्धचेतन भाव से देख रहे हैं।

देश के प्रथम प्रधानमंत्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने अपनी पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा सिर्फ़ शहरों का नक्शा नहीं बदला बल्कि गाँवों की सूरत और सीरत बदलने का भी प्रयास किया। आधुनिकीकरण की इस प्रक्रिया ने ग्राम्य-जीवन की परिस्थितियों को भी बदला, वर्ग अन्तर्विरोधों में नया मोड़ आना शुरू हो गया था। हिन्दी कहानी के यथार्थ में यह पहला मोड़ था। आज जबकि पूरा विश्व परिवर्तन की प्रक्रिया में एक सर्वथा भिन्न मोड़ पर पहुँच गया है, हमें गाँव को उसके क्लासिक भोलेपन में देखने की आदत से मुक्त होना पड़ेगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि गाँव सड़क, बिजली से जगमगाने के बाद भी चिर दरिद्रता और सँकरी मानसिकता से मुक्त नहीं हो पाया है, लेकिन इस दरिद्रता का सन्दर्भ एकदम बदल गया है। पुराने वर्ग सम्बन्धों का स्वरूप यद्यपि समाप्त नहीं हुआ है, लेकिन उसको बनाए रखने वाली शक्तियों ने अपने पुराने वस्त्र उतारकर फेंक दिए हैं, अब उसकी पहचान नए समीकरणों के भीतर से ही की जा सकती है।

नौवें दशक और उसके बाद लिखी गई कहानियों में लोक-जीवन के स्त्री-चरित्रों पर कथाकारों ने विमर्श किया है। दलित वर्ग के स्त्री- चरित्र भी कहानी की कथा-वस्तु बने हैं। जाति भेद और सामाजिक असमानता का प्रश्न अब गरीबी के प्रश्न से बड़ा और प्राथमिक हो गया है। गाँव का 'सोशल स्ट्रेक्चर' भीतर ही भीतर बदल रहा है। बेशक यह बदलाव अभी वर्गीय धरातलों पर उतना उजागर नहीं हो रहा है। आधुनिक कथाकार गाँव की नई और पुरानी दोनों तस्वीरों के साक्षी हैं, फिर इनका झुकाव पुराने स्थान पर नए में अधिक है। युवा कथाकार श्रीधरम की कहानी 'नवजात (क) कथा' में चित्रित स्त्री और दलित अस्मिता का उग्र उभार आज का सबसे प्रबल उभार है आज के गाँव का नया यथार्थ यह है कि पण्डित गणेश झा की बेटी फूकन मोची के साथ भाग जाती है और झा साहेब को अपनी इज्जत बचाने के लिए क़ानून की तिकड़म के अलावा और कोई रास्ता नहीं सूझता। जोर-जबरदस्ती का पुराना हथकण्डा अब सवर्णों के हाथ से खिसक कर दलितों का हथियार बनता जा रहा है। स्त्री-चरित्रों और दलितों को यह शक्ति जनतंत्री हुकूमत से ही प्राप्त हुई है। पिछले दो दशकों में गाँव और शहर के बीच की विभाजक रेखा प्रायः धूमिल होने लगी है। शहर बढ़कर गाँवों तक पहुँच गए हैं, इसलिए गाँवों पर भी शहरी संस्कृति प्रभावी होने लगी है। उपभोक्तावादी संस्कृति ने गाँवों की पुरानी व्यवस्था के भीतर ही अपने बाज़ार के लिए स्पेस तलाश लिया है। इस नई बाज़ारू संस्कृति के विकृत संस्करणों से प्रदूषित गाँव अब पुरानी पहचान में नहीं रह गया है। यहाँ की मरती सामूहिकता का चित्रण महेश कटारे ने अपनी कहानी 'कुआँ' में किया है।

आज की कहानी में स्त्री-विमर्श और दलित-विमर्श का मुहाबरा पूरी तरह हावी है, यहाँ गाँव सिर्फ़ कथाभूमि के तौर पर इस्तेमाल किया गया है। मैत्रेयी पुष्पा की कहानी 'उज्ज्रदारी' और एस.आर. हरनोट की 'मुट्ठी में गाँव' कहानियाँ स्त्री-अस्मिता का आख्यान रचती हैं। रामचन्द्र सरोज की कहानी 'जमीन' गाँवों में होने वाले ज़मीनों के हेरफेर की कहानी कहती है। कहानी की नायिका हिरमनिया को केन्द्र में रख कथाकार गाँव की उस चौधराहट का विरोध करता है, जिसके द्वारा ये गाँव की बहू-बेटियों पर कुदृष्टि रखते हैं और उसे पाने के लिए गरीब की ज़मीन अपनी जमीन में मिलवा लेते हैं। राम गरीब सब सुनता रहा, बोला कुछ नहीं। लेखपाल ने टोका-'कुछ जवाब नहीं दिया तुमने रामगरीब... अभी तो सब कुछ ए.सी.ओ. के ही हाथ में है।' राम गरीब बिफर पड़ा-'हमारी मेहरारू न तो जमीन है और न पतुरिया... आप लोगन की होती होगी।' राम गरीब क्रोध को दबाए आगे बढ़ गया। लेखपाल एकदम भौचक-सा खड़ा देखता रहा। रामगरीब का पलटवार उसे अन्दर से चोटिल कर गया था।' इसी तरह 'राशिद जहाँ की कहानियाँ' में राशिद की कहानी 'छिद्दा की माँ' में सास के पास कोई बहू नहीं टिक पाती - ऐब ही ऐब नज़र आते। सास ने देखा बहू (छिनाल?)... ईदू से हँस रही थी। बुढ़िया बहू को पीट रही थी और छिद्दा भी। कुआँ, जमीन, उजदारी, छिद्दा की माँ जैसी अनेक कहानियों में लोक-जीवन के स्त्री-पात्रों का विमर्श किया

गया है। नौवें दशक के बाद की कहानियों में कथाकार गाँव और शहर की दूरियाँ भी समाप्त करता दिखाई दे रहा है। ये कहानी शहरी और ये कहानी ग्रामीण परिवेश की है, इसकी पकड़ उसकी भाषा और बोली से ही की जा सकती है। कथानक के स्तर पर पात्र का सिर्फ़ परिवेश ही बदल रहा है। शहरी महिलाओं की जो समस्याएँ हैं, कमोवेश वे ही ग्रामीण नारी की भी हैं। जिस तरह से नारी, उससे संघर्ष कर अपना स्थान बना रही है, वही और वैसा ही संघर्ष ग्रामीण नारी कर रही है।

सन् 1990 से लेकर आज तक जितनी भी कहानियाँ लिखी गई, कहीं न कहीं नारी सदैव केन्द्र में रही है। उत्तर-आधुनिकता और स्त्री-विमर्शवादियों ने हिन्दी-कथा-साहित्य में समाज के सभी क्षेत्रों में स्त्री-विमर्श पर ध्यान दिया है। सांस्कृतिक, सामाजिक, नैतिक, मनोवैज्ञानिक, भौतिक, आर्थिक, राजनीतिक और लोकजीवन के स्त्री- चरित्रों को भी स्त्री-विमर्श की दृष्टि से देखने का प्रयास किया गया है। यह सच है कि पुरुष और स्त्री के मध्य असमानता की खाई इतनी लम्बी हो चुकी है कि इस भावना से न तो पुरुष बाहर निकल पा रहा है और न स्त्री। लेकिन जैसे-जैसे जागरूकता, शिक्षा का प्रचार-प्रसार हुआ है, वैसे-वैसे स्त्री-पुरुष की सोच में परिवर्तन हुआ है। वर्तमान शिक्षित महिला का प्रथम लक्ष्य स्वावलम्बी होना भी रहा है। जैसे ही वह स्वावलम्बी हुई, उसे भौतिक, आर्थिक समस्याओं से मुक्ति प्राप्त हुई है। समाज की दूसरी दूसरी समस्याओं से भले ही वह आज तक मुक्त न हो सकी हो, लेकिन आज नहीं तो कल वे समस्याएँ भी समाप्त हो जाएंगी। चिंता सिर्फ़ इस बात की है कि आज की स्त्री को जिस तरह से 'भौतिक उत्पाद' बनाने के प्रयास हो रहे हैं, उस पर अंकुश लगना चाहिए, अन्यथा हर तरह से स्वतंत्र होने के बाद भी स्त्री परतंत्र ही रहेगी। स्त्री-विमर्शवादियों को इस दिशा में भी चिंतन करना होगा तभी उसकी अस्मिता सुरक्षित रह सकेगी।

सन्दर्भ सूची:-

1. कथा में गाँव : सम्पादक सुरेश चन्द्र कुशवाह
2. जमीन : रामचन्द्र सरोज : पृष्ठ 43 कथाक्रम अक्टूबर-दिसम्बर 2006, लखनऊ

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

वर्तमान में भारत-अमेरिका संबंधः वैश्विक शांति और स्थिरता के लिए प्रयास

जबरूल रब्बानी

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

परिचय:-भारत और अमेरिका के बीच द्विपक्षीय संबंध 21वीं सदी के सबसे महत्वपूर्ण और प्रभावशाली साझेदारियों में से एक हैं। इन दोनों देशों के संबंधों का प्रभाव न केवल एशिया और अमेरिका महाद्वीप तक सीमित है बल्कि यह वैश्विक स्तर पर शांति और स्थिरता के प्रयासों को भी मजबूत करता है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि:-भारत और अमेरिका के संबंधों का आरंभ भारत की स्वतंत्रता के साथ हुआ। हालांकि शुरुआती वर्षों में इन संबंधों में ठहराव रहा परंतु समय के साथ-साथ यह साझेदारी नई ऊँचाइयों पर पहुंची। शीत युद्ध के बाद और विशेष रूप से 21वीं सदी में दोनों देशों के संबंधों में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। भारत और अमेरिका के बीच संबंधों का आधार उनकी साझा लोकतांत्रिक मूल्य प्रणाली, आर्थिक और सैन्य सहयोग और वैश्विक चुनौतियों के प्रति समान दृष्टिकोण है। दोनों देश आतंकवाद, जलवायु परिवर्तन और वैश्विक आर्थिक अस्थिरता जैसी समस्याओं का समाधान निकालने के लिए साथ काम करते हैं। अमेरिका की इंडो-पैसिफिक रणनीति में भारत को एक महत्वपूर्ण साझेदार के रूप में देखा जाता है। इसी प्रकार भारत की 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' और अमेरिका की 'पिवट टू एशिया' रणनीति ने दोनों देशों को और करीब लाया है। रक्षा और सुरक्षा सहयोग पर बात किया जाए तो भारत और अमेरिका के बीच रक्षा सहयोग तेजी से बढ़ा है। दोनों देशों ने कई महत्वपूर्ण रक्षा समझौते किए हैं जैसे जनरल सिक्युरिटी ऑफ मिलिट्री इन्फॉर्मेशन एग्रीमेंट (GSOMIA 2002), लॉजिस्टिक एक्सचेंज मेमोरेंडम ऑफ एग्रीमेंट (LEMOA 2016) और कम्युनिकेशन्स कम्पेटिबिलिटी एंड सिक्योरिटी एग्रीमेंट (COMCASA 2018) एवं बेसिक एक्सचेंज एंड कोऑपरेशन एग्रीमेंट (BECA 2020) । साथ ही अमेरिका ने भारत को उन्नत सैन्य तकनीक और उपकरण प्रदान किए हैं जिससे भारत की रक्षा क्षमता में वृद्धि हुई है। भारत और अमेरिका के बीच आर्थिक संबंध भी बेहद मजबूत हैं। अमेरिका भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है और दोनों देशों के बीच व्यापारिक संबंध हर साल नए रिकॉर्ड स्थापित कर रहे हैं। सूचना प्रौद्योगिकी, स्वास्थ्य सेवा, ऊर्जा और स्टार्टअप्स के क्षेत्र में दोनों देशों के बीच गहरा सहयोग है। भारतीय प्रवासियों ने भी अमेरिका में व्यापार, शिक्षा और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। शिक्षा और सांस्कृतिक आदान-प्रदान भारत-अमेरिका संबंधों का एक महत्वपूर्ण पहलू है। हर साल हजारों भारतीय छात्र उच्च शिक्षा के लिए अमेरिका जाते हैं जिससे दोनों देशों के बीच सांस्कृतिक और सामाजिक संबंध मजबूत होते हैं। वैश्विक शांति और स्थिरता के लिए प्रयासों में भारत और अमेरिका ने कई अंतरराष्ट्रीय मंचों पर मिलकर काम किया है। वे संयुक्त राष्ट्र, जी-20 और क्वाड जैसे समूहों में साझेदारी करके जलवायु परिवर्तन, वैश्विक स्वास्थ्य संकट और आतंकवाद जैसी समस्याओं का समाधान खोजने का प्रयास करते हैं। दोनों देशों की यह साझेदारी एशिया-प्रशांत क्षेत्र में स्थिरता बनाए रखने और अंतरराष्ट्रीय कानून के पालन को सुनिश्चित करने में सहायक है।

भारत और अमेरिका के बीच संबंधों में चुनौतियाँ और समाधान:-भारत और अमेरिका के बीच संबंधों का इतिहास गहराई और विविधता से भरा हुआ है। दोनों देश लोकतांत्रिक मूल्यों, रणनीतिक साझेदारी और आर्थिक सहयोग को साझा करते हैं। हालाँकि इन संबंधों में कई अवसरों के साथ-साथ चुनौतियाँ भी मौजूद हैं। इन चुनौतियों को समझना और उनका समाधान ढूँढना द्विपक्षीय संबंधों को और अधिक मजबूत बनाने में सहायक हो सकता है। भारत-अमेरिका संबंधों में कई अवसरों के साथ-साथ चुनौतियाँ भी हैं। व्यापार विवाद, वीजा नीति और मानवाधिकारों को लेकर मतभेद दोनों देशों के बीच प्रमुख मुद्दे हैं। व्यापार विवाद मुख्यतः आयात-निर्यात शुल्क और बौद्धिक संपदा अधिकारों को लेकर है। वीजा नीति, विशेष रूप से एच1-बी वीजा भारतीय आईटी पेशेवरों के लिए एक संवेदनशील मुद्दा है। मानवाधिकारों से जुड़े सवाल कई बार द्विपक्षीय संवाद में बाधा उत्पन्न करते हैं।

चुनौतियाँ:-

व्यापार विवाद:-भारत और अमेरिका के बीच व्यापारिक संबंधों में कई विवाद देखने को मिलते हैं। मुख्य विवाद आयात-निर्यात शुल्क और बौद्धिक संपदा अधिकारों को लेकर हैं। अमेरिका, भारतीय कृषि उत्पादों, फार्मास्यूटिकल्स और वस्त्र उद्योग पर सख्त नियम लागू करता है जबकि भारत अमेरिकी उत्पादों पर लगाए गए शुल्कों को लेकर आलोचना का सामना करता है।

वीजा नीति:-विशेष रूप से एच1-बी वीजा नीति भारतीय आईटी पेशेवरों के लिए एक संवेदनशील मुद्दा है। अमेरिका द्वारा वीजा नियमों को सख्त करने और भारतीय पेशेवरों के लिए अवसरों को सीमित करने से आईटी उद्योग पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

मानवाधिकारों से जुड़े मुद्दे:-दोनों देशों के बीच मानवाधिकारों को लेकर मतभेद कभी-कभी तनाव का कारण बनते हैं। अमेरिका ने कई बार भारत में धार्मिक स्वतंत्रता और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता जैसे मुद्दों पर सवाल उठाए हैं, जबकि भारत इसे आंतरिक मामला मानता है।

रणनीतिक और सुरक्षा मुद्दे:-भारत की रूस के साथ पारंपरिक मित्रता और अमेरिका का पाकिस्तान के साथ ऐतिहासिक सहयोग भी रणनीतिक संबंधों में जटिलता पैदा करता है।

समाधान के उपाय:-

सकारात्मक संवाद:-द्विपक्षीय संवाद को मजबूत करना किसी भी चुनौती का समाधान निकालने का पहला कदम है। दोनों देशों को विवादित मुद्दों पर खुलकर बातचीत करनी चाहिए। यह प्रक्रिया गलतफहमियों को दूर करने और साझा समाधान निकालने में मदद करेगी।

व्यापार समझौते:-व्यापार विवादों को सुलझाने के लिए द्विपक्षीय व्यापार समझौतों का मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है। यह समझौते आयात-निर्यात शुल्क में कटौती, बौद्धिक संपदा अधिकारों की सुरक्षा और निवेशकों के लिए स्थिर वातावरण सुनिश्चित कर सकते हैं।

वीजा सुधार:-भारतीय पेशेवरों के लिए वीजा प्रक्रिया को सरल और पारदर्शी बनाने पर जोर दिया जाना चाहिए। एच1-बी वीजा की संख्या बढ़ाने और प्रक्रिया को तेज करने से आईटी और अन्य क्षेत्रों में कौशल आदान-प्रदान को बढ़ावा मिलेगा।

मानवाधिकार सहयोग:-मानवाधिकारों के मुद्दों पर दोनों देशों को एक दूसरे के दृष्टिकोण को समझने और सम्मान देने की आवश्यकता है। साझा मंचों और संवाद के माध्यम से इन मुद्दों पर सहयोग बढ़ाया जा सकता है।

साझा परियोजनाएँ:-जलवायु परिवर्तन, विज्ञान, तकनीकी विकास और स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों में संयुक्त परियोजनाओं से संबंधों को और मजबूती मिलेगी। उदाहरण के तौर पर अक्षय ऊर्जा और अंतरिक्ष अनुसंधान के क्षेत्र में दोनों देशों के बीच कई संभावनाएँ हैं।

रणनीतिक सहयोग:-क्षेत्रीय और वैश्विक चुनौतियों जैसे इंडो-पैसिफिक क्षेत्र में स्थिरता और आतंकवाद से निपटने के लिए रणनीतिक साझेदारी को गहरा करना होगा। रक्षा क्षेत्र में साझेदारी और तकनीकी सहयोग से आपसी विश्वास को बढ़ावा मिलेगा। भारत और अमेरिका के बीच संबंधों की जटिलता चुनौतियों और अवसरों का मिश्रण है। इन चुनौतियों को सकारात्मक संवाद, पारस्परिक सम्मान और संयुक्त प्रयासों के माध्यम से हल किया जा सकता है। दोनों देशों के बीच मजबूत और स्थायी साझेदारी न केवल इन दोनों के लिए बल्कि वैश्विक स्थिरता और विकास के लिए भी महत्वपूर्ण है। इनके बीच संबंधों में चुनौतियाँ जरूर हैं, लेकिन दोनों देशों की आपसी समझ और साझेदारी इन समस्याओं को हल करने की क्षमता रखती है। यह साझेदारी न केवल दोनों देशों के लिए बल्कि पूरी दुनिया के लिए शांति, स्थिरता और प्रगति का मार्ग प्रशस्त कर सकती है। वैश्विक शांति और स्थिरता के लिए भारत और अमेरिका के प्रयासों पर सुझाव भारत और अमेरिका दो शक्तिशाली लोकतंत्र, वैश्विक शांति और स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। उनकी साझेदारी न केवल उनके राष्ट्रीय हितों को प्रोत्साहित करती है बल्कि दुनिया को स्थिर और समृद्ध बनाने में भी योगदान करती है। नीचे कुछ प्रमुख सुझाव दिए गए हैं जो इन दोनों देशों को वैश्विक शांति और स्थिरता के लिए अपनाने चाहिए।

1. सुरक्षा और आतंकवाद-रोधी सहयोग को बढ़ावा देना:-भारत और अमेरिका को आतंकवाद के खिलाफ संयुक्त रणनीतियाँ बनानी चाहिए। इंटेलिजेंस साझा करने, साइबर सुरक्षा में सहयोग बढ़ाने और सीमा पार आतंकवाद के खिलाफमजबूत नीतियां लागू करने पर जोर देना चाहिए। दोनों देशों को संयुक्त सैन्य अभ्यास और प्रशिक्षण कार्यक्रमों का विस्तार करना चाहिए ताकि क्षेत्रीय और वैश्विक सुरक्षा को मजबूत किया जा सके।

2. संयुक्त राष्ट्र और अन्य अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों में सुधार:-दोनों देशों को मिलकर संयुक्त राष्ट्र जैसी संस्थाओं को अधिक प्रभावी और लोकतांत्रिक बनाने के लिए काम करना चाहिए। भारत को संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता दिलाने के लिए अमेरिका को समर्थन करना चाहिए ताकि भारत की आवाज और प्रभाव वैश्विक मंच पर बढ़ सके।

3. जलवायु परिवर्तन और सतत विकास के लिए सहयोग:-वैश्विक स्थिरता के लिए जलवायु परिवर्तन के खतरों का समाधान आवश्यक है। भारत और अमेरिका को नवीकरणीय ऊर्जा, ग्रीन टेक्नोलॉजी और कार्बन उत्सर्जन में कटौती के लिए मिलकर प्रयास करना चाहिए। दोनों देशों को विकासशील देशों के लिए सस्ती और टिकाऊ ऊर्जा तकनीकों को बढ़ावा देने में सहयोग करना चाहिए।

4. आर्थिक सहयोग और वैश्विक व्यापार को बढ़ावा देना:-दोनों देशों को मुक्त और निष्पक्ष वैश्विक व्यापार को बढ़ावा देने के लिए सहयोग करना चाहिए। आर्थिक असमानताओं को कम करने और वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला को स्थिर बनाने के लिए नई पहल शुरू करनी चाहिए। दोनों देशों को उभरते बाजारों में निवेश को प्रोत्साहित करना चाहिए जिससे स्थिरता और समृद्धि सुनिश्चित हो।

5. हिंद-प्रशांत क्षेत्र में स्थिरता बनाए रखना:-हिंद-प्रशांत क्षेत्र में चीन के बढ़ते प्रभाव को संतुलित करने के लिए भारत और अमेरिका को साथ मिलकर काम करना चाहिए।

क्वाड पर विचार :-क्वाड (Quadrilateral Security Dialogue) अमेरिका, भारत, जापान और ऑस्ट्रेलिया का एक रणनीतिक समूह है, जिसका उद्देश्य एक मुक्त, समावेशी और नियम-आधारित इंडो-पैसिफिक क्षेत्र को बढ़ावा देना है। भारत क्वाड को अपनी एक्ट ईस्ट नीति के हिस्से के रूप में देखता है। यह मंच भारत को हिंद-प्रशांत क्षेत्र में चीन के बढ़ते प्रभाव का संतुलन साधने में मदद करता है। हालांकि भारत ने इसे सीधे तौर पर चीन के खिलाफगठबंधन के रूप में परिभाषित करने से बचते हुए इसे आर्थिक विकास, समुद्री सुरक्षा और आपदा प्रबंधन जैसे मुद्दों पर सहयोग का साधन माना है। अमेरिका क्वाड को चीन की आक्रामकता का सामना करने और इंडो-पैसिफिक में अपनी प्रभुत्व बनाए रखने के साधन के रूप में देखता है। बाइडन प्रशासन ने इसे इंडो-पैसिफिक रणनीति का अहम हिस्सा माना है। अमेरिका इसे लोकतांत्रिक देशों का समूह मानते हुए क्षेत्रीय स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण मानता है।

इंडो-पैसिफिक रणनीति पर विचार:-

भारत इस रणनीति को अपनी भू-राजनीतिक स्थिति को मजबूत करने और क्षेत्र में संतुलन बनाए रखने के अवसर के रूप में देखता है। अमेरिका इसे क्षेत्रीय सहयोग बढ़ाने और चीन की आर्थिक व सैन्य चुनौती का सामना करने के लिए लागू कर रहा है। दोनों के दृष्टिकोण में समानता सहयोग और क्षेत्रीय स्थिरता बनाए रखने पर आधारित है। इन संगठनों को मजबूत करने और क्षेत्रीय सहयोग को बढ़ावा देने के लिए दोनों देशों को अपने प्रयास तेज करने चाहिए।

6. वैश्विक स्वास्थ्य और महामारी प्रबंधन में सहयोग:-कोविड-19 महामारी ने वैश्विक स्वास्थ्य प्रणाली की कमजोरियों को उजागर किया। भारत और अमेरिका को वैक्सीन निर्माण, स्वास्थ्य देखभाल तकनीकों और महामारी प्रबंधन के लिए अनुसंधान और विकास में साझेदारी करनी चाहिए।

7. शिक्षा और सांस्कृतिक विनिमय को बढ़ावा देना:-शांति और समझ के लिए शिक्षा और सांस्कृतिक आदान-प्रदान महत्वपूर्ण हैं। दोनों देशों को छात्रों, शोधकर्ताओं और सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से आपसी समझ बढ़ानी चाहिए।

8. मानवाधिकार और लोकतंत्र को बढ़ावा देना:-भारत और अमेरिका को दुनिया भर में लोकतंत्र, मानवाधिकार और स्वतंत्रता के पक्ष में मजबूत रुख अपनाना चाहिए। उन क्षेत्रों में समर्थन देना चाहिए जहां स्वतंत्रता और मानवाधिकार खतरे में हैं। भारत और अमेरिका का सहयोग न केवल उनके राष्ट्रीय हितों के लिए लाभकारी है, बल्कि वैश्विक शांति और स्थिरता के लिए भी अनिवार्य है। इन सुझावों को अपनाकर दोनों देश एक सुरक्षित, समृद्ध और स्थिर विश्व का निर्माण कर सकते हैं।

9. चीन की बढ़ती शक्ति ने वैश्विक राजनीति में एक नई ध्रुवीयता पैदा की है जिसका भारत और अमेरिका पर सीधा प्रभाव पड़ा है। दोनों देशों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से चीन की चुनौती का सामना करने के लिए रणनीतियां तैयार की हैं।

भारत का दृष्टिकोण:-भारत चीन को एक सामरिक प्रतिद्वंद्वी मानता है खासतौर पर 1962 के युद्ध और सीमा विवादों के बाद। चीन की बढ़ती सैन्य और आर्थिक शक्ति, बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव (BRI) और हिंद-प्रशांत क्षेत्र में उसकी आक्रामकता ने भारत की सुरक्षा चिंताओं को बढ़ा दिया है। भारत ने क्वाड (Quad) जैसे मंचों में शामिल होकर अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया के साथ रणनीतिक साझेदारी मजबूत की है। इसके अलावा भारत स्वदेशी रक्षा क्षमताओं को विकसित करने और अपने आर्थिक संबंधों में विविधता लाने की कोशिश कर रहा है ताकि चीन पर निर्भरता कम हो।

अमेरिका का दृष्टिकोण:-अमेरिका चीन को अपने वैश्विक प्रभुत्व के लिए सबसे बड़ा चुनौतीकर्ता मानता है। ट्रेड वॉर, तकनीकी प्रतिस्पर्धा (जैसे 5ळ और सेमीकंडक्टर्स) और ताइवान जैसे मुद्दों पर अमेरिका चीन का मुखर विरोध करता है।

साझा दृष्टिकोण:-भारत और अमेरिका दोनों लोकतंत्र, मुक्त व्यापार और क्षेत्रीय स्थिरता को बनाए रखने के पक्षधर हैं। चीन की विस्तारवादी नीतियों का सामना करने के लिए दोनों देशों ने आर्थिक, सैन्य और कूटनीतिक सहयोग बढ़ाने पर जोर दिया है। इससे स्पष्ट है कि चीन के उदय के प्रति दोनों का दृष्टिकोण भले ही अलग हो लेकिन उद्देश्य समान हैं।

भारत-अमेरिका संबंधों का भविष्य: बदलते वैश्विक परिदृश्य में संभावनाएँ :-भारत और अमेरिका के संबंध हाल के वर्षों में अभूतपूर्व ऊँचाई पर पहुँचे हैं। ये संबंध सिर्फद्विपक्षीय सहयोग तक सीमित नहीं हैं बल्कि वैश्विक राजनीति, आर्थिक स्थिरता और सुरक्षा में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बदलते वैश्विक परिदृश्य में भारत और अमेरिका के रिश्ते और मजबूत होने की संभावनाएँ हैं।

1. भारत-अमेरिका संबंधों का भविष्य:-भारत और अमेरिका के बीच संबंध रणनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से लगातार मजबूत हो रहे हैं। दोनों देशों ने प्रौद्योगिकी, रक्षा, ऊर्जा और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में मजबूत साझेदारी बनाई है। भविष्य में यह साझेदारी उभरती तकनीकों जैसे आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, साइबर सुरक्षा और ग्रीन एनर्जी पर केंद्रित हो सकती है। इसके अतिरिक्त, हिंद-प्रशांत क्षेत्र में स्थिरता बनाए रखने के लिए दोनों देशों का सैन्य सहयोग और भी गहरा होने की उम्मीद है। अमेरिका भारत को एक उभरती हुई आर्थिक शक्ति और वैश्विक स्थिरता के लिए एक आवश्यक भागीदार के रूप में देखता है। भारत अपने हिस्से में अमेरिका को तकनीकी और वित्तीय प्रगति के लिए एक भरोसेमंद सहयोगी मानता है। भविष्य में ये संबंध ;फ्नंकद्ध जैसे बहुपक्षीय मंचों के माध्यम से अधिक सुदृढ़ होंगे।

2. दोनों देशों के नेताओं की प्राथमिकताएँ:-भारत और अमेरिका दोनों के नेता घरेलू और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर शांति और स्थिरता को प्राथमिकता देते हैं। भारतीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी आत्मनिर्भर भारत और वैश्विक मंच पर भारत की भूमिका को बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। वहीं अमेरिकी राष्ट्रपति जलवायु परिवर्तन, लोकतंत्र की रक्षा और वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला को स्थिर करने पर जोर दे रहे हैं। दोनों नेताओं की प्राथमिकताओं में समानता है, जैसे हरित ऊर्जा संक्रमण को बढ़ावा देना और उभरती हुई तकनीकों का समावेश। उदाहरण के लिए इंडो-यूएस क्लाइमेट एंड क्लीन एनर्जी एजेंडा 2030 पहल दोनों देशों की पर्यावरणीय प्राथमिकताओं को दर्शाती है।

3. बदलते वैश्विक परिदृश्य में भारत-अमेरिका संबंधों की भूमिका :-वर्तमान में वैश्विक परिदृश्य कई बदलावों से गुजर रहा है। चीन का उदय, रूस-यूक्रेन युद्ध और वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला की समस्याएँ दोनों देशों को एकजुट होने के लिए प्रेरित कर रही हैं। हिंद-प्रशांत क्षेत्र में चीन के प्रभाव को संतुलित करने के लिए भारत और अमेरिका एकजुट होकर काम कर रहे हैं। इसके अलावा दोनों देश आतंकवाद के खिलाफलड़ाई में सहयोग कर रहे हैं। दक्षिण एशिया में स्थिरता बनाए रखने और अफ्ग़ानिस्तान में शांति स्थापित करने के लिए दोनों का समन्वय महत्वपूर्ण है।

निष्कर्ष:-भारत और अमेरिका के संबंध वैश्विक स्थिरता, शांति और विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। दोनों देशों के पास एक-दूसरे को सहयोग देकर न केवल अपने नागरिकों के लिए बल्कि पूरी दुनिया के लिए एक बेहतर भविष्य बनाने की अपार संभावनाएँ हैं। प्रौद्योगिकी, ऊर्जा और सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में साझेदारी बढ़ाकर ये संबंध भविष्य में और भी मजबूत हो सकते हैं। बदलते वैश्विक परिदृश्य में, भारत और अमेरिका मिलकर लोकतंत्र, शांति और प्रगति के मार्ग पर अग्रसर हो सकते हैं।

संदर्भ सूची :-

1. Ayres, Alyssa, and C. Raja Mohan, eds. Power Realignments in Asia: China, India and the United States. Thousand Oaks, CA: SAGE, 2009.
2. Schaffer, Teresita C. India and the United States in the 21st Century: Reinventing Partnership. Washington, DC: CSIS Press, 2010.
3. Bandyopadhyaya, Jayantanuja. General Theory of Foreign Policy. New Delhi, India: Allied Publishers, 2004.
4. Hayes, Jarrod. Constructing national security: US relations with India and China. Cambridge University Press, 2013. Retrieve from URL [BOOK] Constructing national security: US rela tions with India and China
5. Chacko, Priya. "A new "special relationship"? : Power transitions, ontological security, and India-US relations." International Studies Perspectives 15.3 (2014): 329-346. Retrieve from URL A new "special relationship"?: Power transitions, onto logical security, and India-US relations

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

शरद सिंह के कथा साहित्य में सामाजिक चेतना

प्रीति
डॉ. नमिता जैन

1. शोधार्थी, हिंदी, दिगंबर जैन कॉलेज, बड़ौत, बागपत
2. शोध निर्देशक व असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी, दिगंबर जैन कॉलेज, बड़ौत, बागपत

शोध सारांश:-प्रस्तुत शोध आलेख शरद सिंह के कथा साहित्य की सामाजिक चेतना का अध्ययन करता है। प्रस्तुत आलेख में शरद सिंह के उपन्यास और कहानियों के माध्यम से जानने का प्रयास किया गया है कि उनके विषयों में सामाजिक सरोकार कितना है? सामाजिक परिस्थितियों, समस्याओं, वर्ग तथा व्यापक सामाजिक संरचनाओं के बारे में, शरद सिंह के कथा साहित्य का विश्लेषण किया गया है। शोध आलेख उन विषयों को समझने का प्रयास करता है जहाँ लेखिका ने समाज के पिछड़े तबकों से लेकर आधुनिक बदलते संबंधों पर अपनी कलम चलाई है। शरद जी का सम्पूर्ण साहित्य समाज के विभिन्न पहलुओं को उजागर करता है। खासतौर से आदिवासी, जनजातीय समुदाय के औरतों की समस्या। जो दिन प्रतिदिन विकट होती जा रही है। व्यवस्था और परिस्थितियों के दंश से उपजी बदहाली इस समाज की नियति है।

बीज शब्द:-पूंजीवादी सभ्यता, यथार्थवादिता, जीवन मूल्य, मूर्ति कला, बेड़ियां जनजाति, वेश्यावृति, यौन शोषण, रखैल, सामाजिक सरोकार, सहजीवन, मानसिकता, चेतना संपन्न, समतावादी दृष्टि।

मूल आलेख:-हिंदी कथा साहित्य के अंतर्गत गद्य की दो विधाओं का अध्ययन किया जाता है, उपन्यास और कहानी। इन दोनों विधाओं का जन्म आधुनिक काल में हुआ यानी कि भारतेंदु युग में। भारतेंदु युग से पहले पद्य रचनाएं ही हिंदी साहित्य में होती थीं। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के बाद देश की यथार्थ स्थिति को बयां कर पाना कठिन हो गया। रचनाकारों को अभिव्यक्ति के लिए नई विधा की आवश्यकता महसूस हुई। इस प्रकार जीवन की कठिनतम सच्चाइयों को खुलकर कहना, कथा साहित्य के माध्यम से संभव हुआ। रामदरस मिश्र कहते हैं, 'पूंजीवादी सभ्यता के विविध जीवन सत्यों को कथा के माध्यम से व्यक्त करने के लिए ही इसकी उत्पत्ति हुई है। यह मात्र कहानी नहीं है। कहानी यानी कथा तो इसका माध्यम है, मूल वस्तु है वर्तमान जीवन की जटिल यथार्थवादिता। जीवन मूल्यों का संक्रमण, समाज के नए संबंधों के निर्मिति, उसके बीच उठते हुए अनेक प्रश्नों को भौतिक या वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझने की आकुलता, नवीन भौतिक सत्यों के बीच बनती हुई मानव चरित्र की नई दिशाएं, यह सारी बातें उपन्यास नामक विद्या के माध्यम से फूट पड़ने के लिए आतुर थी।'[1]

यह उपन्यास वर्तमान जीवन को यथार्थता एवं सूक्ष्मता के साथ व्यक्त करने लगा इसलिए उपन्यास को आधुनिक जीवन का महाकाव्य कहा गया। कहानी का विकास भी इसी आधार पर हुआ जिसमें संपूर्ण जीवन न होकर जीवन की एक घटना, एक दृष्टांत होता है । कहानी कम शब्दों में अपनी बात कहती है ।

हिंदी कथा साहित्य में अनेकों साहित्यकार हुए जिन्होंने कथा साहित्य को समृद्ध बनाया । प्रेमचंद कथा साहित्य के समुद्र तल हैं । प्रेमचंद के नाम पर संपूर्ण कथा साहित्य को प्रेमचंद पूर्व, प्रेमचंद युगीन, प्रेमचंदोत्तर काल में बांट दिया गया। जिसमें देवकीनंदन खत्री, ठाकुर जगमोहन, प्रेमचंद से लेकर जैनेंद्र, इलाचंद्र जोशी, अज्ञेय और 21वीं सदी में मधु कांकरिया, मृदुला गर्ग, मैत्रयी पुष्पा, गीतांजलि श्री, अल्पना मिश्र, जय श्री राय, राजी सेठ, रोहिणी अग्रवाल, वंदना टेटे, सुधा अरोड़ा, अनीता भारती,शरद सिंह आदि तक चला आया है। जिनके साहित्य में समकालीन कथा के विकास क्रम को समझा जा सकता है। समकालीन लेखिकाओं ने आज के जीवन की परिवर्तनशीलता और नारी जीवन के परिवर्तित मूल्यों को अत्यंत मार्मिकता के साथ अपनी रचनाओं में रेखांकित किया है। भूमंडलीकृत समाज में अपने अस्तित्व को बनाए रखने की जो छटपटाहत स्त्री रचनाकारों में दर्ज हुई है वह समकालीन दौर में स्त्री लेखन को विशिष्ट स्थान प्रदान करती है। शरद सिंह ने भी हिंदी कथा साहित्य में अपना योगदान दिया है। शरद सिंह समकालीन कथा साहित्य लेखिका हैं। शरद सिंह का जन्म 29 नवंबर 1963 को पन्ना मध्य प्रदेश में हुआ। यह किशोरावस्था से ही साहित्य सृजन से जुड़ी हुई हैं। इन्होंने खजुराहो की मूर्ति कला पर पीएचडी की है। शरद सिंह ने आकाशवाणी दूरदर्शन एवं यूजीसी के लिए पटकथा लेखन, धारावाहिकों का लेखन एवं फिल्म संपादन भी किया है। शरद सिंह के कथा साहित्य में नई खोज की तड़प दिखती है।वे विषय भी समाज के अहम हिस्से हैं। उन विषयों को उठाना लेखिका के कथा साहित्य की सामाजिक चेतना को दिखाता है। सामाजिक चेतना यानी कि सामाजिक संरचना, समाज में स्त्री की स्थिति, समाज में पिछड़े तबकों की दशा, बदलते सामाजिक संबंध, थोथी नैतिकता पर चोट, स्त्री-पुरुष संबंध आदि विषयों के प्रति जागरुकता। यदि हम केवल चेतना शब्द को समझें तो हिन्दी विश्वकोश के अनुसार 'चेतना जीवधारियों में रहने वाला वह तत्व है जो उन्हे निर्जीव पदार्थों से भिन्न बनाता है। दूसरे शब्दों में हम उसे मनुष्य की जीवन क्रियाओं को चलाने वाला तत्व कह सकते हैं। चेतना स्वयं को और अपने आसपास के वातावरण को समझने तथा उसकी बातों का मूल्यांकन करने की शक्ति का नाम है।'[2] वही डॉ रमेश कुंतल मेघ के अनुसार -'चेतन में नाना भाँति की क्रियाएं शामिल हैं जैसे संवेदना, प्रत्यक्षीकरण, अवधारणा, चिन्तन अनुभूति और संकल्प। इस तरह यह मन, बुद्धि, अहंकार का संश्लेष है। इसे 'चिति' भी कहते हैं। चेतन एक चिंतात्मक अभिवृत्ति का द्योतक है जो व्यक्ति को स्वयं के प्रति तथा विभिन्न कोटि की स्पष्टता तथा जटिलता वाले पर्यावरण के प्रति जागरुक करता है।'[3] यही चेतना समाज के परिपेक्ष्य में सामाजिक चेतना है। जहाँ समाज के विषयों को लेकर चिंतन होता है। वह उन विषयों को अपना कथ्य बनाती हैं जो प्राय अछूते हैं जैसे इनका पहला उपन्यास सीपिछले पन्ने की औरतें' (2009) में मध्य प्रदेश के सागर जिले तथा उसके आसपास बसे बेड़िया जनजाति की कथा को उद्धृत किया है। बेड़िया जनजाति की औरतें जो सदियों से वेश्यावृत्ति करने को मजबूर हैं इसे समाज में एक

परंपरा के रूप में देखा गया है। उपन्यास बताता है कि कैसे राई लोक नृत्य के माध्यम से बेड़िनियों का यौन शोषण हो रहा है।

'हिंदी साहित्य में पिछले पन्ने की औरतें ऐसा प्रथम उपन्यास है जिसका कथानक बेड़ियों के जीवन को आधार बनाकर प्रस्तुत किया गया है। इस उपन्यास की शैली भी हिंदी साहित्य के लिए नई है। यह उपन्यास अतीत और वर्तमान की कड़ियों को बड़ी ही कलात्मकता से जोड़ते हुए इसे पढ़ने वाले को वहां तक पहुंचा देता है जहां बेड़नियों के रूप में औरतें आज भी अपने पैरों में घुंघरू बांधने के लिए और अपने देह का सौदा करने के लिए विवश है'[4] प्रस्तुत उपन्यास में नचनारी बेड़नी जोकी एक ठाकुर की रखैल थी। उसे ठाकुर ने एक उससे जो कहा वह समाज और समाज में स्त्री और उसमें भी बेड़नियों की स्थिति को बयां करती है।

'ठाकुरों का वीर्य अमृत की बूंद होता है उसे किसी न किसी स्त्री की योनि में ही जाना चाहिए। स्त्री की जाती हो सकती है योनि कि नहीं।'[5] समाज में स्त्री की यह दशा दिखती है कि वह समाज कितना पीछे है जहां किसी समुदाय की महिला महज शरीर है। उपन्यास के रिपोतार्ज कि पैनी शैली से पता चलता है की बेड़ियां समुदाय में स्त्री प्रधान है। बेटी के जन्म पर खुशी मनाई जाती है क्योंकि बेटियां आगे चलकर देह व्यापार और राई नृत्य के माध्यम से धनार्जन करेंगी। इस उपन्यास के संबंध में परमानंद श्रीवास्तव लिखते हैं–'पिछले पन्ने की औरतें उपन्यास लिखित से अधिक वाचिक इतिहास पर आधारित है। इस बेलगाम कथा को श्लील–अश्लील का आरोप संभव नहीं है। अश्लील दिखता हुआ ज्यादा नैतिक दिख सकता है। भद्रलोक की कुरूपताएं छिपी नहीं रह गई हैं।'[6]

शरद सिंह का यह उपन्यास सामाजिक सरोकार रखता है। उपन्यास के पात्र आत्मचेतस हैं विशेषकर स्त्री पात्र। वह अपनी परिस्थितियों की कमोवेश समझ रखती हैं। शरद सिंह 'दैनिक जागरण' को दिए साक्षात्कार में स्वयं कहतीं हैं–'चूंकि मैं कल्पना से अधिक यथार्थ को आधार के रूप में चुनती हूं, इसलिए मुझे विषय से संबंधित तथ्य जुटाने के लिए जमीनी स्तर पर भाग–दौड़ भी करनी पड़ती है.. और यह भाग–दौड़ मुझे कभी थकाती नहीं है।'[7]

लेखिका यह कथ्य उनके उपन्यास और कहानियों के कथ्य पर सटीक बैठता है। वे अपने पात्रों को ज़मीन पर उतरकर समाज के कटु सत्यों से ढूढ़कर लाती हैं। ऐसे ही शरद सिंह का नवीनतम उपन्यास 'पत्तों में कैद औरतें' में श्रमिक एवं साहसिक औरतों के जीवन वृत्त को उकेरा यह औरतें बीड़ी उद्योग के लिए तेंदू पत्तों के संग्रहण का काम करती हैं और उन पत्तों से बीड़ी बनती हैं। यह पुस्तक ऐसे समाज के स्त्रियों की जीवन कथा कहती हैं जिससे मन उद्वेलित हो उठता है। मालाबाई जैसे अनेक स्त्रियां हैं जो अपनी स्त्रियोचित समस्याओं से जूझते हुए अपना जीवन निर्वाह कर रही हैं। जैसा कि सामाजिक चेतना से परिपूर्ण रचनाकार होता है वैसा ही है शरद सिंह का रचना संसार। इन्होंने समाज के पिछड़े से पिछड़े समुदायों से लेकर आधुनिक वैचारिक समाज तक की बात कही है। आदिवासियों से लेकर मेट्रोपॉलिटन शहर तक की कथाएं इनकी कथा साहित्य का हिस्सा हैं। इनके उपन्यास 'कस्बाई सिमोन' में सहजीवन या लिव–इन रिलेशनशिप से उत्पन्न समस्या को उकेरा गया है। उपन्यास की नायिका सुगंधा कस्बे में रहने वाली लड़की है। उसके दफ्तर के अकाउंटेंट सिकरवार के शब्दों में, 'तुम नीना गुप्ता, सुष्मिता सेन या करीना कपूर नहीं हो तुम कस्बे की और मध्यवर्ग की लड़की हो यह सब पैसे वालों और महानगरों के जीने के तरीके हैं तुम जैसी लड़कियां दुख ही पाती हैं। चैन, सुकून, अधिकार और सम्मान नहीं। आगे तुम समझदार हो'[8] शरद सिंह प्रस्तुत उपन्यास के माध्यम से समाज की मानसिकता को दिखाना चाहती हैं कि कैसे वह रिश्तों को लेकर दोहरा चरित्र रखता है–'यहां बंद दरवाजे के पीछे बनने वाले रिश्ते प्रतिकूल मानी होते हैं, खुली सड़क पर बनने वाले अनुकूल रिश्ते नहीं'[9] फिर भी शरद सिंह के पात्र चेतना संपन्न है जैसे इस उपन्यास में सुगंधा है। उसका लिव–इन में रहने का निर्णय उसके समाज के लिहाज से साहसिक कहा जाएगा ।

शरद सिंह के कथा साहित्य के विषय समाज के प्रति उनकी संवेदनशीलता को दिखाते हैं। वह स्त्री की समस्याओं को दिखाती हैं तो पुरुष के भी। वह खुद कहती हैं, ''मैं पुरुष विरोधी नहीं किंतु उस विचारधारा की विरोधी हूं जिसके अंतर्गत स्त्री को मात्र उपभोग की वस्तु के रूप में देखा जाता है।''[10] पुरुष भी यदि कहीं उपभोग की वस्तु बनता है तो शरद सिंह की दृष्टि उधर भी है जैसे पचकौड़ी उपन्यास में पचकौड़ी के साथ हुआ बलात्कार लेखिका की समतावादी दृष्टि को दिखाती है। लेखिका कहती हैं–'यहां यह तथ्य मन को भीतर तक कुरेदता है कि दैहिक स्तर पर शोषित स्त्रियां तो हैं ही पुरुष भी हैं । कमोवेश जो निर्बल हैं, लाचार हैं और जिसमें अपना स्वतंत्र अस्तित्व स्थापित करने की उत्कृष्ट इच्छा है उसे किसी न किसी रूप में हर कदम पर शोषण का शिकार होना पड़ता है।'[11]

निर्बल के प्रति होते शोषण को शरद सिंह अपने रचना संसार में अंकित करती हैं। उपन्यास 'पचकौड़ी' में पचकौड़ी मुख्य पात्र है जो बचपन में ही अनाथ हो जाता है। अपने सगे संबंधियों की उपेक्षा के चलते वह उनसे भागता है तब ट्रक वाला उसे अपने साथ ले जाता है खाना खिलाता है और उस बच्चे का शारीरिक शोषण करता है। लेखिका इस घटना के माध्यम से समाज की उस विकत मानसिकता को दिखाना चाहती हैं जहाँ स्त्री तो छोड़िए पुरुष और बच्चे भी सुरक्षित नहीं हैं। उनकी कहानी भी इन्हीं समस्याओं को इंगित करती हैं। उनकी कहानी संग्रह तिली तिली आग की प्रथम कहानी मरद की मुख्य स्त्री पात्र सुंदरा जागरूक, साहसी एवं चेतनासंपन्न महिला है। उसमें अपनी परिस्थित को लेकर आक्रोश है। जिसे वह व्यक्त भी करती हैं। सुंदरा शेरनी की तरह दहाड़ रही थी अपनी साड़ी का छोर कमर पर कसे हुए वह खाटी बुंदेली गलियों की बौछार कर रही थी।'[12]

सुंदरा आधुनिक स्त्री है जो अपनी बेटी को जमीदार की कुदृष्टि से बचाना चाहती है साथ ही बेटी के खुले में शौच के लिए जाने से चिंतित है । इस संग्रह की दूसरी कहानी तीली तीली आग में दो पात्र हैं वक्ता और प्रीतो। वक्ता आधुनिक होते समाज के हिसाब से अपनी चेतना विकसित करता है एवं प्रीतो के माध्यम से कहानी आधुनिक प्रेम संबंधों पर प्रकाश डालती है । इसी तरह इस कहानी संग्रह की अन्य कहानियां स्त्री की समस्याओं उनके शोषण, उनके द्वंद पर आधारित है। जैसे आठ गुना सुख, पांच लड़कियां और उनके ससने, किस–किस को कटवाओगे, केशू, घोघो रानी कित्ता पानी, सूअर बाड़े की जान्दी, एक अदत प्यार के लिए। शरद सिंह के अन्य कहानी संग्रह बाबा फरीद अब नहीं आते, गिल्ला हनेरा, राख तरे के अंगार (बुंदेली कहानी संग्रह) आदि हैं

उपसंहार:–कथा साहित्य की विशेषता ही है कि यह सामाजिक सरोकार रखेगा ही। शरद सिंह का कथा साहित्य तो इन सरोकारों से भरा पड़ा है। इनके कथा साहित्य के पात्रों में विद्रोह है, अकुलाहट है जो उनके चेतना संपन्न होने को बयां करते हैं। चाहे वह 'पिछले पन्ने की औरतें' की नचनारी हो या 'कस्बाई सिमोन' की सुगंधा या फिर 'मरद' की सुंदरा। यह सभी पात्र हमारे समाज के व्यक्तियों के प्रतीक हैं। इन पात्रों की चेतना, शरद सिंह के कथा साहित्य की सामाजिक चेतना को व्याख्यायित करते हैं।

संदर्भ सूची:–

1. रामदरश मिश्र, हिंदी उपन्यास एक अंतर यात्रा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2016, पृष्ठ सं 12
2. हिन्दी विश्वकोश , खण्ड 4, पष्ठ संख्या 84
3. रमेश कुन्तल 'मेघ', आलोचना, जनवरी–मार्च 1976
4. शरद सिंह, पिछले पन्ने की औरतें, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली,

संस्करण 2016, कवर पृष्ठ से
5. वही, पृष्ठ सं 28
6. वही, आवरण पृष्ठ परमानंद श्रीवास्तव अन्यथा
7. https://www.jagran.com/sahitya/literary-works-some-facts-about-sharad-singh-11330484.html
8. शरद सिंह, कस्बाई सिमोन, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2012, पृष्ठ सं 98
9. वही, पृष्ठ सं 117
10. शरद सिंह, पिछले पन्ने की औरतें, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2016, आवरण पृष्ठ से
11. शरद सिंह, पचकौड़ी, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2011, आवरण पृष्ठ से
12. शरद सिंह, तिली तिली आग, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2010, पृष्ठ सं 15

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

महाविद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों की भावनात्मक परिपक्वता का अध्ययन

एकता वर्मा

शोधार्थी, शिक्षाशास्त्र विभाग, राधागोविन्द महाविद्यालय, रामगढ़, झारखण्ड

शोध सार:- अध्ययन का विषय ´´ महाविद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थीयों की भावनात्मक परिपक्वता का अध्ययन´´ का एक अध्ययन है। प्राचीन समय में शिक्षा का उद्देष्य था कि छात्रो का सर्वागिण विकास करना। इसका मतलब यह हुआ कि छात्रों के भीतर नैतिकता, आध्यामिकता, शारीरिक स्वास्थ्य, भावनात्मक परिपक्वता के साथ-साथ समाजिकता का विकास से है। अधुनिक युग परिवर्ततशील है, क्योंकि परिवर्तन ही प्रकृति का नियम है। आज सभी पाश्चात्य संस्कृति की ओर झुके जा रहे है। पाश्चात्य संस्कृति के कारण छात्रों में नैतिकता, शारीरिक स्वास्थ्य मानसिक स्वास्थ्य, एवं भावनात्मक परिपक्वता में भारी कमी है।

हमारे जीवन काल में बहुत सारे विकास होते है जिसमे से मानसिक अथवा बौद्धिक विकास को जरूरी मानते है परन्तु बौद्धिक विकास से भी ज्यादा जरूरी हमारा भावना का विकास हैं। भावनात्मक परिपक्वता के विकास से हम सुख-शांति हासिल करने और सफल व सार्थक जीवन जीने में सक्षम हो पाते हैं। अतः हमे भावनात्मक परिपक्वता के विकास के लक्ष्य पर ध्यान देना जरूरी है तथा इसके द्वारा छात्र अपने भावनाओं पर नियंत्रण नियमन कर सके। उदाहरण के तौर पर हम समझ सकते है कि जैसे किसी भी घर तथा बहुमंजिले भवन और इमारतों की नींव का मजबूत होना बहुत जकरी होता है ढीक उसी प्रकार भावनात्मक परिपक्वता हमारे जीवन में नींव का काम करती है। हमारे जीवन में भावनाओ का नियंत्रण मे होना भी काफी जरूरी है और भावना जितनी सकरात्मक होगी छात्र अपने जीवन को उतना सरल, सफल और सार्थक बना पाएगें। भावना का अनियंत्रित होना और सकारात्मक नही होने से जीवन डगमगाने और लड़खडाने लगता है तभी हम देख सकते है कि आजकल भावनात्मक समस्याएँ बढती जा रही है। छात्रों के व्यवहार में भावनाएँ जैसे-क्रोध, ईष्या, उल्लास, खुशी, निराशा, पीड़ा कैसे अभिव्यक्त होती है, इसका सीधा प्रभाव छात्र के अवचेतन मन पर पडता है। छात्र दूसरे किसी अन्य की बातो पर किस तरह का व्यवहार करते है। इससे भी छात्रों के भावनात्मक परिपक्वता का पता चलता है। आज के युवा छात्रों मे यह गंभीर समस्या और चिंता का विषय बन गया है कि छात्रों को अपनी भावनात्मक परिपक्वता पर नियंत्रण नहीं है। भावनात्मक परिपक्वता निष्चित रूप से दुख को रोकती नही हैं हांलाकि छात्र किस प्रकार अनावश्यक कष्ट से बचें। उदाहरण के लिए जब कोई छात्र बिना प्यार के रहता है, तो उच्च भावनात्मक परिपक्वता बुद्धिमता वाला छात्र उस कहानी को भुलने तथा परिस्थिति को स्वीकार करने और पृष्ट को मोडने का निर्णय लेता है और ठीक इसके विपरित वह व्यक्ति जो स्वयं को धोखा देता है इस चिंता की स्थिति को तब तक जारी रखता है जब तक कि यह पुरानी न हो जाए, भावनात्मक परिपक्वता होने की क्षमता है उत्कृष्टता की उँचाई, जीवन की रोजमर्रा की चुनौतियों में, समस्यों में, दोस्ती में, प्यार में, परिवार में एवं वर्तमान के उद्देश्यों मे रखता है।

बीज शब्द:- महाविद्यालय, विद्यार्थीयों, भावनात्मक परिपक्वता इत्यादि।

परिचय:-भावनात्मक परिपक्वता से आषय यह है कि छात्रो मे भिन्न-भिन्न प्रकार के भावना की परिपक्वता का विकास कैसे होता है, किन घटकों या तत्वों द्वारा उनका विकास प्रभावित होता है, किस पैटर्न पर भावना छात्रों मे विकसित होते है, भावना का प्रभाव छात्रों पर किस प्रकार पडता है आदि-आदि। शिक्षा मनोवैज्ञानिको द्वारा भावनात्मक परिपक्वता मे उन सभी पक्षों का भी अध्ययन किया जाता है जिनसे हमें यह पता चल सके कि भावना का महत्व शिक्षक एवं छात्रो के लिए क्या है?

प्रत्येक छात्र अपने जीवन में समय-समय पर क्रोध, भय, हर्ष, घृणा, प्रेम, वासना, लोभ आदि भावों का अनुभव करता है, इन्हे भावना करते है। मानव जीवन में भावनाओं का अत्यधिक महत्व है, मनुष्य को भावना के द्वारा विभिन्न कार्यो को करने की प्रेरणा शक्ति मिलती है। भावना के उदय होने पर छात्रो में अतिरिक्त शक्ति का संचार होता है तथा वह ऐसे-ऐसे कार्य कर दिखाता है जो सामान्य स्थिति मे उसके लिए सम्भव प्रतीत नहीं होते हैं। भय की स्थिति मे कभी-कभी छात्र अपने से शक्तिशाली छात्र को परास्त कर देता है। भावनाओं का सम्बध छात्र के जीवन के भावनात्मक पक्ष से होता है। सुखद वस्तु को देखकर प्रसन्न होना, डरावनी वस्तु को देखकर डर जाना, इच्छा के विपरीत कार्य होने पर क्रोधित होना, खराब वस्तु को देखकर घृणा आना तथा दूसरो को अभावग्रस्त देखकर दया आना आदि भावनात्मक स्थिति के कुछ उदाहरण है। भावना के उत्पन्न होने पर छात्रो की मानसिक तथा शारीरिक स्थिति में परिवर्तन आ जाता है। भावना वास्तव में मानसिक उपद्रव की अवस्था होती है, जिसमे व्यक्ति के व्यवहार पर अंकुष नहीं रह जाता है तथा उसे उचित- अनुचित का ज्ञान नहीं हो पाता है। एक ओर जहाँ भावनाओं की सहायता से छात्र साहसिक एवं प्रशंसनीय कार्य करता वह दूसरी ओर भावनाओं में वशीभूत होकर कभी- कभी वह पशुवत निदंनीय व्यवहार कर पाता है। क्रोध मे छात्र माता- पिता अथवा अध्यापकों के साथ अभद्र व्यवहार कर जाता है, काम वासना से वशीभूत होकर व्यक्ति नीचता का कुकर्म कर बैढता है। भावना वास्तव मे व्यक्ति को बिना सोच- विचार के कार्य करने को उतेजित करते है तथा उस उत्तेजना में व्यक्ति प्रशनीय तथा निदंनीय दोनो ही प्रकार के कार्य करता है। भावना मानव के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होते है। प्रत्येक समाज कुछ रहन-सहन और जीवन-यापन की पट्टटियाँ और पराम्पराएँ स्थापित करता है। नियम कानून बनाता है। मान्यताएँ एवं मानक

निष्चित करता है ताकि व्यक्ति और समाज सुसंस्कृत हो सके, व्यक्तियों में आपसी विरोध कम हो सके तथा व्यक्ति और समाज मे संतुलन बना रहे। इस प्रक्रिया में व्यक्ति की कुछ आवष्यकताएँ इच्छाएँ पूरी होती है तो कुछ को उसे बदलना पडता है अर्थात उसे अपने समाज मे समन्वय और समायोजन करना पडता है तथा कुसमायोजित होने से उनमें चिंता, तनाव, संघर्ष आदि उत्पन्न हो जाते है, किन्तु यदि बालक भावनात्मक रूप से परिपक्व होते है तो वे इन विपरीत परिस्थितियों मे भी अपने आप को समाज में उचित रूप से समायोजित करने को प्रयास करते है तथा मानसिक तनाव दूर करते है, तभी वे मानसिक रूप से स्वस्थ होते है। समायोजन के लिए व्यक्तिगत का सर्वांगिण विकास होना आवश्यक है। शिक्षा को व्यक्ति के व्यक्तित्व के सर्वांगिण विकास के लिए एक आदर्श, आवश्यक प्रक्रिया एवं माध्यम माना गया है। आज का बालक वर्ग जिस तरह के असामान्य व्यवहारों, मारपीट हिंसा, उदण्डता और उच्छन्खृलता का प्रदर्शन कर रहा है, जिस तरह से उनके नैतिक मूल्यो और सोच में परिवर्तन हो रहा है तथा इन व्यवहारों का जो प्रभाव उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर पड रहा है, वह हमें एक बार अपने सम्पूर्ण समजिक ढाँचे और व्यवस्था पर दृष्टि डालने के लिए बाध्य करता है और शिक्षा संस्थानों में व्याप्त कमियों तथा इन प्रवृितियों को बढाने वाले प्रेरकों की समीक्षा करने के लिए प्रेरित प्रेरित करता है।

भावनात्मक परिपक्वता का विशेषताएँ:-

भावनात्मक परिपक्वता का विशेषताएँ इस प्रकार है:-

तीव्रता:-भावना में अत्यधिक तीव्रता का गुण पाया जाता है और वह बालको में एक प्रकार का तूफान उत्पन्न कर देता है। पर इस तीव्रता की मात्रा में अन्तर होता है। उदाहरणार्थ, अशिक्षित व्यक्ति की अपेक्षा शिक्षित व्यक्ति में, जो अपने भावना पर नियंत्रण करना सीख जाता है, भावना की तीव्रता कम होती है। इसी प्रकार, बालकों की अपेक्षा वयस्को में और स्त्रियों की अपेक्षा पुरूषो में भावना की तीव्रता कम पाई जाती है।

व्यापकता:-स्टाउट के अनुसार, निम्नतर प्राणियों से लेकर उच्चतर प्राणियों तक एक ही प्रकार के भावना पाये जाते है। इसका तात्पर्य यह है कि भावना में व्यापकता होती है और वह सब प्राणियों में समान रूप से पाया जाता है, जैसे- बालकों की आलोचना करने पर, बालक की किसी प्रिय वस्तु को छीनने पर क्रोध आ जाना।

वैयक्तिकता:-भावना में वैयक्तिकता का गुण पाया जाता है अर्थात विभिन्न प्रकार के मनुष्य एवं बालको में अपनी भावना को प्रकट करने की क्षमता या योग्यता एक जैसी ना होकर अलग- अलग होती है।

भावनात्मक मनोदशा:-स्टाउट का कथन है एक निष्चित संवेग उसके समरूप भावनात्मक मनोदशा का निर्माण करता है, इसका तात्पर्य यह हुआ मनोदषा के कारण व्यक्ति उसी प्रकार का व्यवहार करता है जैसा कि उसके साथ व्यवहार किया गया है। उदाहरण के लिए किसी परिवार में पिता के द्वारा मॉ को डॉटा गया हो तो मॉ अपने गुस्से को बच्चो के द्वारा बाहर निकालती है।

भावनात्मक सम्बंध:-स्टाउट ने लिखा है किभावना का अनुभव किसी निश्चित वस्तु के सम्बंध में ही किया जाता है। इसका तात्पर्य है कि भावना की दशा में हमारा किसी बालक, या वस्तु या विचार से सम्बंध होता है, उदाहरण हमें किसी व्यक्ति, वस्तु, विचार या कार्य के प्रति ही क्रोध जाता है। इनके अभाव में क्रोध के संवेग का उत्पन्न होना असम्भव है।

विकास की विभिन्न अवस्थाओं में भावनात्मक परिपक्वता का विकास इस प्रकार है:-

शैशवावस्था में भावानात्मक विकास:-शैशवावस्था में भावनात्मकता की अभिव्यक्ति में निरन्तर अलग- अलग भावना विकसित होती है। इस अवस्था में बच्चो में भावना जितनी विकसित होनी चाहिए उससे कम मात्रा में होती है। इस अवस्था में बालको की भावना को केवल मॉ ही समझ पाती है और बाद में धीरे- धीरे बालको द्वारा घर के अन्य लोग एवं बाहरी लोग बाह्य लक्षणों से पहचाना जा सकता है। इस अवस्था में बालक रोना, चिल्लाना, रूसना आदि द्वारा अपनी भावना को व्यक्त करता है।

बाल्यावस्था में भावनात्मक विकास:- जैसा कि बालक शैशवावस्था में अपनी भावना को व्यक्त रोना, चिल्लाना आदि द्वारा करता है ठीक इसके विपरीत बाल्यावस्था में बालक चीखना- चिल्लाना और हाथ पैर चलाना कम हो जाता है। बाल्यावस्था में बालक को अपनी भावनाओ को व्यक्त करने के लिए भाषा का माध्यम मिल जाता है।

किशोरावस्था में भावनात्मक विकास:-किशोरावस्था को अत्यधिक पूफान एवं तनाव की अवस्था कहा जाता है, इस अवस्था में शैशवावस्था एवं बाल्यावस्था दोनो से अधिक इस, अवस्था में बालको को अपनी भावनाओ पर नियंत्रण नहीं होता है। इस अवस्था में बालको की भावनाओ को समझना थोडा मुष्किल है। इस अवस्था में बालको से त्रीव गति से शारीरिक, मानसिक वृद्धि होती है। इस अत्यधिक वृद्धि होने के कारण वे अपनी भावनाओं पर नियंत्रण नहीं रख पाते है। इस अवस्था में बालक अपनी भावनाओ को अत्यधिक गुस्सा करके, चिल्लाना, खाना ना खाना, जरा- जरा सी बात पर बिगड पड़ना, आत्महत्या पर उत्तारू हो जाना, एक- दुसरे को दिल दे बैढना, द्वारा व्यक्त करता है।

भावनात्मक परिपक्वता को प्रभावित करने वाले कारक:-

बालको का भावनात्मक परिपक्वता अनेक कारको द्वारा प्रभावित होता है जो इस प्रकार है:-

1. स्वास्थ्य एवं शारीरिक विकास
2. बुद्धि
3. पारिवारिक वातावरण और आपसी सम्बंध
4. विद्यालय का वातावरण और अध्यापक

भावनात्मक परिपक्वता का छात्रों पर प्रभाव:-

भावनात्मक परिपक्वता का छात्रों के व्यक्तित्व पर दो तरह के प्रभाव देखने को मिलते हैं:-

1. धनात्मक प्रभाव। 2. ऋणात्मक प्रभाव।

छात्रों के भावनात्मक परिपक्वता में अध्यापक की भूमिका:-

छात्रों के भावनात्मक परिपक्वता में अध्यापक की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण है, जो इस प्रकार है:-

1. भावनात्मक परिपक्वता के लिए बालको का ब्लूम के अनुसार तीन पक्षो का ज्ञानात्मक पक्ष, भावनात्मक पक्ष और मनोगति पक्ष का विकास होना चाहिए। ये तीनों पक्षो का विकास अध्यापकों के द्वारा ही छात्रों में किया जाता है।
2. भावनात्मक परिपक्वता के लिए अध्यापक की महत्वपूर्ण भूमिका है अध्यापक ही व्यक्ति है जो छात्रो की उपलब्धि एवं कमजोरियों को जान पाते है, और उनकी समस्याओ का समाधान करता है।
3. अध्यापक ही है जो विद्यालय परिसर के वातावरण को बच्चों के अनुकूल बनाता है जिससे कि बच्चे विद्यालय के वातावरण में समायोजन आसानी से कर लेता है।
4. अध्यापक को बालकों के अभिभावको के साथ सम्पर्क करके

उनकी शारीरिक कमजोरियो न्यूनताओं एवं आदि से अवगत कराना चाहिए तथा उनके निराकरण के लिए घर, विद्यालय और चिकित्सालयों द्वारा उचित प्रबंध की व्यवस्था होनी चाहिए।

भावनात्मक परिपक्वता को कैसे सुधारें:-

भावनात्मक परिपक्वता को निम्न तरीकें से सुधारा जा सकता हैं, जो इस प्रकार हैं:-

1. विकास की मानसिकता विकसित करें
2. स्वस्थ सीमाएँ निर्धारित करें
3. अपनी भावनाओं को समझें
4. अपनी गलतियाँ स्वीकार करें
5. एक मॉडल की भूमिका

निष्कर्ष:-निष्कर्ष के रूप में हम यह कह सकते है कि भावनात्मक परिपक्वता विकास का एक गैर-शारीरिक रूप है जिसकी हमें स्वस्थ, पूर्ण विकसित, वयस्क बनने के लिए आवश्यकता होती है हालांकि यह जानना महत्वपूर्ण है कि विद्यार्थी भावनात्मक रूप से एक ही दूर से परिपक्व नहीं होते है। हमारे पालन-पोषण का तरीका और बचपन में हमारे अनुभव इस बात को प्रभावित कर सकते है कि हम विद्यार्थी भावनात्मक परिपक्वता तक कब पहुँचते है।

सन्दर्भ सूची:-

1. शर्मा आर0 ए0 2014/15 शिक्षा अनुसंधान, आर0 लाल बुक डिपो।
2. मुखर्जी डॉ0 के0 2014/15 शिक्षा मनोविज्ञान, अग्रवाल पब्लिकेशन्स
3. पाठक पी0 डी0 (2009) ''भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ'' विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
4. मिर्जा, मंजु, (2008), ''शिक्षा के मनोवैज्ञानिक एवं समाजिक के आधार।
5. पाठक, पी0 डी0 ए0 एस0 डी0 त्यागी (2006), ''शिक्षा के सिद्धान्त'' विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
6. भटनागर, सुरेश (2002), आधुनिक भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ गणपति प्रिन्टर्स, मेरठ।
7. पाठक पी0 डी0 शिक्षा मनोविज्ञान, अग्रवाल पब्लिकेशन्स

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

जनचेतना की कसौटियों पर हिन्दी के लोक नाट्य

नन्दिता देवी
डॉ. रागिनी राय

1. शोधार्थी, राजा श्री कृष्ण दत्त स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जौनपुर, सम्बद्ध – वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर, उ. प्र.
2. शोध निर्देशक, राजा श्री कृष्ण दत्त स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जौनपुर, सम्बद्ध – वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर, उ. प्र.

'लोक नाट्य' भारतीय प्रागैतिहासिक, ऐतिहासिक और परम्परागत रूढ़ियों में वर्णित जीवन–पद्धति, जीवन प्रकृति और प्रवृश्रि के स्वरूप को सुनिश्चित करने में सहायक सिद्ध होते हैं। लोक नाट्य की शैलियों में लचीलापन है। स्वांग, नौटंकी, ख्याल आदि कथानकों व प्रसंगों द्वारा वर्तमान समस्याओं का समावेश होता रहता है, जिससे इसकी प्रासंगिकता और जीवन्तता बनी रहती है। लोक नाट्य का अपना रचना विधान है, जिसके निरन्तर प्रयोग से ही इसका विकास होना सम्भव हो पाया है। भारत की समृद्ध नाट्य परम्परा की जीवन्तता और निरन्तरता को आधार देने में सर्वाधिक महश्र्वपूर्ण योगदान लोक नाट्यों का ही रहा है। लोक मानस की स्वाभाविक अभिव्यक्ति इन समस्त नाट्य रूपों को एकसूत्र में जोड़ती है। ''लोक नाट्य जीवनानुवर्ती कला है, जिसमें लोक जीवन के सुख–दुःख से उत्पन्न अवस्थाओं का अभिनय रहता है।''[1]

लोक नाट्य लोक–मानस की अनुकरणमूलक प्रवृश्रियों का सहज प्रतिरूप है, मानव जब नागरिक सभ्यता से दूर राजा–रानी के रूप में प्रस्तुत करता है, मुखौटे लगाता है, तब यही अभिनय लोगों के मनोरंजन की स्थायी निधि बन जाता है। लोक नाट्य परम्परा का विकास भी जनमानस के उल्लास को अधिक सबल रूप में व्यक्त करने के लिए हुआ। लोक नाट्य परम्पराओं का विकास लोक भाषाओं से ही हुआ। वर्तमान में भारत में लोक नाट्य का सबसे प्राचीन व प्रचलित रूप 'रासलीला' है। लोक नाटक लोक चेतना को प्रबुद्ध करने वाले शक्तिशाली माध्यम हैं। लोक नाट्य एक विकासशील प्रक्रिया है, उसमें परिवर्तन स्वतः होता है। लोक नाटकों की पृष्ठभूमि मध्य युगीन सामाजिकता को लेकर अधिक रही, किन्तु आज गाँव एवं नगर की सीमाएँ गिरती जा रही हैं। मानव स्वभाव नवीनताप्रिय है और वह विविध रुचियों व संस्कारों में अधिक रुचि लेता है। यही कारण है कि आज शिष्ट समाज लोक कला के प्रति उदार दृष्टिकोण रखता है तथा ग्रामीण व्यक्ति सिनेमा के प्रति अधिक जिज्ञासु प्रतीत होता है। मनुष्य द्वारा जब अपनी सुख–दुःखात्मक अभिव्यक्तियों के लिए भावों का सहारा लिया गया तो उसे किसी–न–किसी रूप में मंचित किया गया, जिससे कि लोक नाट्य का विकास हुआ। गाँव व देहातों में जन–सामान्य का मनोरंजन करने वाले किसी भी स्थल को लोकमंच कहा जाता है, जिससे लोक नृत्य व लोक नाटक दिखाये जाते हैं। उदाहरणस्वरूप ''मदारी गली के नुक्कड़ पर झोला रखकर बड़े ही नाटकीय ढंग से तमाशा शुरू करता है, जिसमें लोग एकत्रित होते हैं और एक मंच बँध जाता है। लोक नृत्य, लोक गीत व लोक नाट्य से सम्बन्धित संस्कार जन–साधारण में लोकधर्मी रूढ़ियों के रूप में प्रवाहमान रहते हैं। इसलिए लोकमच वह अमर बेल मानी गयी है, जो जनसाधारण से रस खींचकर सदैव हरी–भरी रहती है।''[2] हम यदि भारतीय लोक नाट्य परम्परा के अन्तर्गत मालवा, जो कि लोक–साहित्य की दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है, के लोक नाट्य 'माच' की बात की जाये तो इस लोक नाट्य को उज्जैन में जन्म मिला है। 'माच' शब्द का सम्बन्ध संस्कृत मूल मंच से है। माच के क्षेत्र में उज्जैन में अनेक घराने बने, जिन्होंने अपने–अपने ढंग से माच को नयी ऊर्जा या गति दी। 'माच' की उत्सभूमि शिप्रा तट स्थिति पुरातन नगरी उज्जैन मानी जाती है। इस लोक नाट्य के खेलों से अभिनय, स्वांग–नकल, प्रदर्शनी, हास–परिहास, चुटकुले–व्यंग्य आदि को बढ़ावा देकर इस शैली को रंगमयता प्रदान की। 'माच' की शैली के आरम्भकर्ता गुरू गोपाल जी को माना जाता है, यह मूलतः राजस्थान के रहने वाले थे, किन्तु बाद में मालवा में जाकर बस गये। इन्हें यहाँ राजस्थान की तरह ख्याल जैसा कोई नाट्यरूप नहीं मिला, तत्पश्चात् वे स्थानीय संगीत और लोक कला के रूपों का समावेश करके 'माच' की शुरुआत की, जो संवर्धित होता गया। 'माच' लोक नाट्य में जनचेतना का विस्तृत प्रवाह मिलता है।

'विदेसिया' नाटक में भिखारी ठाकुर ने उन तमाम विरहिणी नारियों की मनोदशा का चित्रण किया है, जिनके कंत पूरब में चाकरी करने गये पर लौटे नहीं। वस्तुतः पश्चिम बंगाल के जूट मिलों को चलाने के लिए बिहार एवं पूर्वी उश्रर प्रदेश के मजदूर वहाँ अपने घर में अकेली नव–विवाहिता पत्नी को छोड़कर चले जाते थे। घर में रहने वाली अकेली औरत अपने पति के वियोग में रात–दिन जहाँ एक तरफ आँसू बहाने को विवश थी, वहीं आर्थिक अभाव के कारण भी उसे कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था। गाँव के मनचले युवकों की भी उस पर बुरी निगाहें थीं, ऐसे में वह दिन–रात पति की चिन्ता में तिल–तिलकर मरने को विवश थी। भिखारी ठाकुर ने अपने नाटकों में समाज में घुट–घुटकर मरने वाली स्त्री की सामाजिक दुर्दशा को संजीदगी के साथ उठाने का प्रयास किया है। इनके नाटक 'बेटी बेचवा' में बेमेल विवाह में स्त्री के उस दास्तान को उजागर किया है। ''नाटक में एक कमसिन युवती का विवाह एक वृद्ध, रोगों से ग्रस्त लाचार व्यक्ति के साथ चंद रुपयों के लिए कर दिया जाता है। वह स्त्री एक पशु के समान पिता के घर के खूँटे से खोलकर एक बूढ़े व्यक्ति के ब्याहरूपी खूँटे में जकड़ दी जाती है।''[3] नाटक में यह दिखाया गया है कि समाज को औरत होने का एहसास नहीं है। उस बूढ़े व्यक्ति से ब्याही गयी लड़की न तो पत्नी बन सकती है और न ही जननी। पुत्री के रूप में उसके सपनों को पहले ही उसके लालची पिता के द्वारा गला घोंटकर समाप्त कर दिया गया है।

भिखारी ठाकुर की इस नाटक की प्रेरणा उन्हें अपने इलाके में ही घटी एक वास्तविक घटना को देखने के बाद मिली थी। इतिहास इस बात का प्रमाण है कि भिखारी ठाकुर के 'बेटी बेचवा' एवं 'बेटी वियोग' नाटक में प्रचारित–प्रसारित होने के बाद बेमेल शादियों में कमी देखने को मिली और

समाज में भी ऐसा करने वाले लोगों के प्रति घृणा का वातावरण बना। कालान्तर में भारतीय स्वाधीनता के एक लम्बे अरसे के बाद हिन्दू विवाह संशोधन अधिनियम–1956 (शारदा एक्ट) के रूप में देखने को मिला। इस बिल में स्त्री–पुरुष विवाह के लिए उम्र–सीमा को कानूनी रूप से निर्धारण कर दिया गया। इस कानून निर्माण के पूर्व ही भिखारी ठाकुर के नाटकों ने सामाजिक क्रान्ति के द्वारा बेबस स्त्री को मुक्त करने का प्रयास किया था। इनके नाटक 'भाई विरोध' में भी स्त्री की भूमिका के कारण ही भाई–भाई में बँटवारा होता है, क्योंकि आर्थिक विषमता का मार्ग झेलने वाली स्त्री अपने पति से संयुक्त परिवार से अलग रहकर जीवन–यापन की गुजारिश करती है। ''जिस वैयक्तिक परिवार का निर्माण पश्चिम यूरोप में पहले हो चुका था, उसका कुप्रभाव भी भारतीय समाज में संयुक्त परिवार के टूटने के रूप में दिखलाई पड़ता है, जिसके मुख्य कारक में स्त्री ही अग्रणी भूमिका निभाती है।''[4] इन नाटकों में जनचेतना की पक्षधरता स्पष्ट दिखाई पड़ती है। 'स्वांग' लोक नाट्य में लोक मानस कावास्तविक प्रदर्शन होता है, यह ठेठ ग्रामीणों के मनोरंजन का साधन है। इसका कथानक पौराणिक, धार्मिक, ऐतिहासिक एवं सामाजिक विषयों पर आधारित होता है। यह मात्र मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि इसके माध्यम से धार्मिक मान्यताओं, रूढ़ियों में परिवर्तन की आकांक्षा तथा भारतीय संस्कृति की विशिष्टताओं को भी प्रस्तुत किया जाता है। इसके माध्यम से सामाजिक समस्याओं पर कटाक्ष भी किया जाता है, साथ ही इसका लक्ष्य जनचेतना का विकास भी होता है। प्रहसनात्मक स्वांग में प्रहसन अर्थात् व्यंग्य और परिहास के माध्यम से पाखण्डी, तपस्वी, भिक्षु और दुराचारियों की वेशभूषा और चेष्टाओं की नकल की जाती है। अभिनय के माध्यम से सामाजिक कुरीतियों, दुष्प्रवृश्रियों पर भी चोट की जाती है। व्यक्ति–विशेष के दुराचार पर व्यंग्य एवं कटाक्ष करके हास्य–रस की उत्पश्रि की जाती है। साथ ही समाज को ऐसा न बनने की प्रेरणा भी प्रदान की जाती हैं एक प्रमुख स्वांग 'रांझू और फूल्मु का स्वांग' चंबा क्षेत्र की घटना पर आधारित है, ''रांझू और फूल्मु नाम के दो प्रेमी एक–दूसरे से प्रेम करते हैं, परन्तु जाति बन्धन एवं ऊँच–नीच के भेद के कारण दोनों का विवाह नहीं हो पाता। रांझू का विवाह उसके पिता द्वारा ऊँचे खानदान में तय कर दिया जाता है। परिणामस्वरूप एक ओर से रांझू की डोली जाती है तो दूसरी तरफ फूल्मु की अर्थी। रांझू अपनी डोली रूकवाकर फूल्मु का दाह–संस्कार अपने हाथों से करती है।''[5] इस मार्मिक कथा के द्वारा समाज में व्याप्त जाति–बन्धन एवं ऊँच–नीच के भेद पर कटाक्ष किया जाता है। 'भवाई' गुजरात और राजस्थान दोनों में प्रचलित लोक नाट्य है। कई दृष्टियों से इसे एक लोक नृत्य भी माना जाता है। एक मत है कि गुजरात की ओर से जो जन–प्रवाह राजस्थान और मालवा में बहा, उसी ने 'भवाई' का प्रसार किया। भारतीय लोक नृत्य के अध्येता देवीलाल सामर भवाई की उत्सभूमि राजस्थान और मालवा ही मानते हैं। इस संदर्भ में एक कथा का उल्लेख भी आता है, जिसके अनुसार 400 वर्ष पूर्व राजस्थान के गाँवों में भी ऊँच–नीच के भेद–भाव बढ़े। ''शौर्य और वीरता के पुजारी राजपूतों और जाटों ने नृत्य–नाट्य गान की कला को विलास और व्यभिचार समझा। इन्हीं जाटों में एक नागा जी नामक जाट को बचपन से ही नाचने का शौक था। यह बात जाटों को अच्छी नहीं लगी। उन्होंने नागा को नगाड़ा, भूंगल, माला, जाजिम आदि देकर जाति से निकाल दिया और कहा–तू आज से हमारी का भाँड–भवाई है।''[6] इस प्रकार भवाई जाति नाचने–गाने के लिए निकाली गयी तिरस्कृत जाति थी, जो सामन्ती व्यवस्था से उत्पन्न वर्ग भेद का परिणाम थी। ये लोग गाँव–गाँव में नाना प्रकार के स्वांग, ख्याल–तमाशे तथा कलाबाजियाँ कर जनता का दिल बहलाते रहे। धीरे–धीरे इस पद्धति का अनुसरण अनेक जातियों ने किया। ''जन–जीवन की कड़वी–मीठी अनुभूतियाँ भवाई के वेश (नाटिकाओं) की विषय–वस्तु बनती गयी और टोला (अर्थात् भवाई कलाकार दल) द्वारा उन्हें मंचित किया जाने लगा। इन नाटकों में समाज की रूढ़ियों, जाति भेद, नारी विवशता आदि को प्रस्तुत किया जाता है।''[7]

छत्तीसगढ़ के प्रमुख लोक नाट्य 'नाचा' में ठेठ ग्रामीण मुहावरों और लोकोक्तियों के माध्यम से हास्य–व्यंग्य ओत–प्रोत प्रसंगों को प्रस्तुत किया जाता है। बाल–विवाह का रोकथाम, विधवा–विवाह का प्रचलन, छुआछूत उन्मूलन और सामन्ती शोषण–उत्पीड़न के विरूद्ध आवाज उठाना 'नाचा' लोक नाट्य की मुख्य कथावस्तु है। इसके कथानक के ढाँचे इन्हीं विषय–वस्तुओं के इर्द–गिर्द खड़े किये जाते हैं। इस लोक नाट्य के माध्यम से धार्मिक, सामाजिक आडम्बरों, कुप्रथाओं और झूठी नैतिकता आदि पर गहरी चोट की जाती है। राजस्थान में प्रचलित 'गवरी' लोकनाट्य का प्रत्येक स्वाँग–स्वरूप मनोरंजन से भरपूर होता है, यह लोक मंगल के कल्याणकारी पक्ष को भी महश्र्वपूर्ण रूप से प्रस्तुत करता है। प्रस्तुतीकरण की प्रत्येक लोकधर्मी कला अनवरत रस की बूँदें सरसाती हुई देखी जाती है। इसकी समस्त पृष्ठभूमि में लोकानुरंजन की जबरदस्त पीठिका है, जो सभी को स्वतः ही अपनी ओर आकर्षित करती है। ऐसा रंजन अन्य तमाशबीनों, करिश्मों तथा जादूटोनों से प्राप्त नहीं होता। ''गवरी लोक नाट्य में सामाजिक जीवन–चेतना की सच्ची तस्वीर देखने को मिलती है। गवरी का रंगमंच सामान्य जीवन का एक ऐसा चौराहा है, जहाँ बैठकर पंच–पटेल समस्त अग–जग की आपबीती–जगबीती बातें भी कह लेते हैं। बीड़ी–तम्बाकू का कस खींचते हुए घर–गृहस्थी तथा अपना वर्ग–समाज का सर्वेक्षण भी कर लेते हैं।''[8]

अतः कहा जा सकता है कि लोक नाट्य–परम्परा मूलतः धार्मिक रही है, वहीं हिन्दी क्षेत्र में प्रचलित लोक नाट्य रूपों में आश्चर्यजनक विविधता है। कथानक और शिल्प प्रक्रिया दोनों ही स्तरों पर हिन्दी क्षेत्र के लोक नाट्य जीवन के विविध प्रसंगों को कई चटकीले रंगों में अभिव्यक्त करने में पूर्णतया सक्षम हैं। इस नाट्य परम्परा और उसके विशिष्ट तश्र्वों के बारे में एक बड़ी रोचक बात है कि यह संस्कृत की शास्त्रीय नाट्य परम्परा से स्वतन्त्रता और भिन्न होते हुए भी उसकी रूढ़ियों और तश्र्वों को वहन भी करती है। इनमें जनचेतना का तश्र्व प्रमुख रूप से उद्घाटित होता है।

सन्दर्भ सूची :-

1. बंसल, डॉ0 परमानन्द–हिमाचली लोक नाट्य घज्जा सांस्कृतिक तथा सांगीतिक अध्ययन, संजय प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण–2005, पृ0–41
2. तनेजा, जयदेव–हिन्दी रंगः दशा और दिशा, तक्षशिला प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण–2012, पृ0–126
3. सिन्हा, पंकज कुमार–संपा0–कलरव, वर्ष–15, अंक–29, 'अर्द्ध–वार्षिक', जुलाई–दिसम्बर, 2019, पृ0–9
4. वही, पृ0–10
5. खाँ, जावेद अख्तर–हिन्दी रंगमंच की लोकधारा, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण–2013, पृ0–93
6. वही, पृ0–99
7. भानावत, महेन्द्र–लोक नाट्यः परम्परा और प्रवृश्रियाँ, बाफ्ना प्रकाशन, जयपुर, संस्करण–1971, पृ0–97
8. सिंह, रविनन्दन–संपा0–लोक साहित्यः अभिव्यक्ति और अनुशीलन हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, संस्करण–2016, पृ0–177

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

विजय रंजन के साहित्य का वैचारिक पक्ष

डॉ. शिवम् तिवारी

कृपालम् आवास, सतीगंज, नगर पंचायत अंतू, प्रतापगढ़, उप्र.

सारांश:–विजय रंजन ऐसे साहित्यकार के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं, जिन्होंने जीवन और जगत के विविध पक्षों पर बड़ी गंभीरता से विचार किया है। अपनी विचारधारा को सत्य के निकट ले जाने के लिए उन्होंने विभिन्न क्षेत्रों एवं भाषाओं के महान विचारकों एवं चिंतकों के साहित्य का अत्यंत गंभीर अध्ययन किया है। उन्होंने अपने साहित्य में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा दार्शनिक क्षेत्रों की विभिन्न समस्याओं पर अत्यंत सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत किया है। इस विवेचन और विश्लेषण के सन्दर्भ में उन्होंने विश्व के महान चिंतकों के विचारों से लाभ उठाया है परन्तु इस प्रभाव से उनसे विचारों की मौलिकता पर कोई आघात नहीं पहुँचा है। क्योंकि उनके प्रभाव का उपयोग उन्होंने सीमित मात्र तक ही किया है। यह बिल्कुल यथार्थ है कि उनकी विचारधारा किसी राजनीतिक अथवा दार्शनिक परम्परा की अनुवर्तिनी नहीं है। वर्तमान एवं भविष्य के स्वर्णिम भारत की सत्–संकल्पना एवं आकांक्षा के दृष्टिगत रंजन ने ज्वलंत, सार्थक एवं आवश्यक विषयों पर बड़ा ही गंभीर वैचारिक एवं सैद्धांतिक अभिमत प्रदान किया है, जिनमें राष्ट्रवाद पर विशेष विमर्श, भारतीयता का वस्तुनिष्ठ स्वरुप, भारतीय शिक्षा का सैद्धांतिक विन्यास, भारतीय संस्कृति का वैशिष्ट्य, कविता का मिथकीय स्वरुप, काव्य समालोचना का निकष : नयत्व, महाकवि वाल्मीकि के काव्य–सौष्ठव का तुलनात्मक अध्ययन आदि प्रमुख हैं।

रंजन ने लोकमंगल को मूल में रखकर बड़ी बेबाकी एवं निर्भीकता से अपना विचार रखा है। समकालीन हिन्दी साहित्य के प्रांगण में इतने स्पष्ट एवं निर्भीक विचारक बहुत कम ही हैं। अतः रंजन की वैचारिक देन हिन्दी साहित्य के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। इनका स्थान एक सशक्त कवि, समालोचक एवं दार्शनिक के रूप में हिन्दी साहित्य में अक्षुण्य है ही, पर हिन्दी साहित्य में एक महान विचारक के रूप में भी रंजन का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। ऐसे महान कवि, समालोचक एवं विचारक के समग्र साहित्य के वैचारिक पक्ष का एक क्रमबद्ध विवेचन एवं विश्लेषण करना राष्ट्रोत्कर्ष एवं साहित्योत्कर्ष में अत्यंत उपयोगी एवं प्रासंगिक है। श्रेष्ठ चिन्तक एवं विचारक विजय रंजन के बहुमुखी व्यक्तित्व ने युग चेतना के माध्यम से स्वयं को अभिव्यक्त किया है। उनकी साहित्यिक चेतना राष्ट्रीय एवं अंतर–राष्ट्रीय है साथ ही युगीन एवं चिरंतन है। उन्होंने अपने विचारों को अत्यंत तर्कमयी वाणी में प्रस्तुत किया है। साथ ही उनके विचार सदैव संतुलित, व्यवस्थित तथा निर्भान्त रहते हैं। आज का युग, किसी भी मनीषी द्वारा रचित साहित्य के मूल्यांकन में वैचारिक निकष के प्रयोग को आवश्यक मानता है। साहित्यिक मूल्यांकन के इस नवीन धरातल पर विजय रंजन जैसे युगीन साहित्यकार के साहित्य का अनुशीलन, विवेचन एवं मूल्यांकन विश्व मानवता के हित में है।

'किसी भी युग का साहित्यकार अपने युग की विचारधारा से प्रभावित होता है। वह प्राचीन एवं अर्वाचीन विचारधाराओं से प्रभावित होकर प्रेरणा ग्रहण करता है। वह समकालीन समाज में रहता है और उसकी दृष्टि प्राचीन एवं समकालीन परिस्थितियों के चक्र में से होकर ऊपर उठती है। वास्तव में साहित्य समाज का दर्पण होने के साथ–साथ वह उसको परिवर्तित करने का एक सशक्त साधन भी है। अतः साहित्यकार अपने युग की भावनाओं, विचारों एवं आदर्शों को जनता के सम्मुख रखता है।'[1] विजय रंजन के साहित्य में भी प्राचीनता एवं नवीनता का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। विजय रंजन अपनी सशक्त लेखनी के माध्यम से सामाजिक कुरीति, अनाचार, उत्पीड़न आदि के विनाश, साहित्यिक–सामाजिक उत्थान एवं राष्ट्रीय–अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य पर बड़ी गंभीरता से चिंता व्यक्त करते हैं तथा समाधान खोजने का प्रयत्न करते हैं। 'किर्चें' पुस्तक में उन्होंने नए बिहान एवं नयी आशा वाली रचनाओं के माध्यम से राष्ट्र को एक सार्थक दिशा दिखाने का अनुपम प्रयास किया है। कविता का अंश देखिये–

'सांस में सुर भरो, बाँसुरी गायेगी।
बाँसुरी की भला कितनी औकात है।।'[2]

विजय रंजन न्याय–नय–नीति के माध्यम से जीविकोपार्जन करते हैं। साथ ही वे विद्या व्यसनी भी हैं। उन्होंने काव्य में 'नय' रस एवं 'नयवाद' की स्थापना के लिए साहित्य सागर का मंथन किया है। जैसे सुनार सोने को कसौटी पर कसता है, वैसे ही रंजन ने काव्य को 'नय' तत्व के निकष पर कस कर उसे खरे रूप में प्रस्तुत किया है, जो मनोहर तथा काव्य सौन्दर्यवर्धक है। 'कविता का पश्यंती निकषः नयत्व' पुस्तक का अंश– 'काव्य को वस्तुगततः काव्य रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए काव्य के शास्त्रोक्त अधिलक्ष्यों के वस्तुनिष्ठ संधान के लिए, काव्य के माध्यम से व्यष्टिगत और समष्टिगत समस्त अनृतित्व एवं अपावनता के प्रक्षालन के लिए, अनय–असत्–अशिव–असुंदर की निष्कृति के लिए और इन जैसे अन्यान्य सत्वशील अधिलक्ष्यों के लिए, तदगत अधिलक्ष्यों के समुचित आकलन/परिकलन के लिए औ..र तद्गत संधान/अनुसंधान को परासित करने के लिए काव्य का नयशीलत्व अर्थात नय/ नयत्व को अंगभूत–अंशभूत तत्वों से अशीलित होना अपरिहार्य है।'[3]

भरत के रस सूत्र द्वारा प्रवर्तित 8 रसों से बढ़ते–बढ़ते हम 11 रसों तक मध्यकाल (16 वीं शती तक) में पहुँच गए थे। इस बीच जीवन–जगत में जो परिवर्तन आया है, उससे कई रस–परिकर उपस्थित हो गए। विजय रंजन ने वही कार्य सत्साहसपूर्वक किया है। रसवाद और नय रस पुस्तक में रंजन जी का विचार दृष्टव्य है–'वर्तमान दौर में भौतिकतावाद की

ललक से केवल मानव ही नहीं, वरन मानव रचित काव्य/ साहित्य/ गद्य/ पद्यसब आग्रस्त हो चुके हैं; अब वर्तमान में सत्य, ऋत में 'नय' अंशभूत नहीं वरन नय-न्याय में सत्य, ऋत, शिव, सत्व वर्तमानतः अंशभूत है; इसी आधार पर अधुना न्यायशास्त्र प्रकल्पित है। तदेव, जिस तरह समाज और राष्ट्र को समुचित दिशा प्रदान करने हेतु 'न्याय-विधान', 'न्यायशास्त्र/ नयशास्त्र' की प्रथम आवश्यकता है, उसी परिपाटी में 'काव्य' को भी सद् दिशा प्रदान करने हेतु 'सहितस्य भाव' की प्रथम वांछा 'साहित्यिक नयवाद' है और उसी परिणाम में काव्य-परिमापन के लिए आवश्यकता है 'नय' रस की।'[4] 'विजय रंजन मात्र मृण्मय भारत के चितेरे नहीं, भारतत्व और भारतीत्व के शाश्वत चिन्मय के विद्वत गर्वित पुजारी हैं। वह सार्थक, सटीक, अकाट्य तर्कों से भारत के पुण्य-गौरव को प्रतिष्ठापित करना चाहते हैं। भारत एवं भारतीयता पर उनका विचार भावसाध्य और श्रमसाध्य दोनों ही है। इस सम्बन्ध में रंजन की पुस्तक 'क्या है भारत क्या है भारतीयता' में उद्धृत विचार इस प्रकार है -'भारत को इंडिया या हिंदूस्थान या हिन्दुस्तान/ हिन्दोस्थान/ हिन्दोस्तान के बजाय पुनः 'भा+रत' और इन्डियन के बजाय 'भारतीय' को 'भारती+य' सह 'भा+रतीय' बनाया जाए; प्रत्युतः भारतीय राष्ट्रीय चारित्रिक विशेषताओं वाली वस्तुनिष्ठ भारतीयता को सम्यकतः प्रज्वलित भी किया जाए और इस प्रयाण में विभ्रम की आपेक्षक धूल को पूर्णतया निराकृत किया जाए। तब संभव है कि भारत/ भारतीयता आदि के सम्बन्ध में सदियों से जो विभ्रम कारित किये गए हैं- वे तिरोहित हो सकें। अन्यथा की दशा में सत्वशील रचनाधर्मी ज्ञान-निरतता अर्थात भारतत्व एवं भारतीत्व से भारत/ भारतीय को विच्छिन्न कर देने पर या कि चिन्मय भारतीयता के विनष्ट होने पर भारत का 'भा' कुप्रभावित होगा अवश्य, प्रत्युत त..ब न 'भा+रत' बचेगा, न 'भारती+य'!'[5]

विजय रंजन के साहित्य का प्राण तत्व है राष्ट्रीय भावना। देवी भारती के भारतीत्व से सहयुजित 'भारतीय राष्ट्रवाद' शान्तिशील, सत्वशील और सार्वकल्याणक है। भारतीय राष्ट्रवाद को विवेचित करते हुए रंजन जी कहते हैं कि-'विश्व गुरु का दंभ या कि अतीत के गौरवगान का मोह एक किनारे कर दें तो भी सम्प्रति सम्यक राष्ट्रीय गति-प्रगति के साथ-साथ वैश्विक संस्तर पर 'सर्वम् शांतिपूर्ण विकासयात्रा' को अबाधित रखने के निमित्त 'ज्ञानशील, सत्वशील, ऋतशील, नयशील भारत' तथा तद्वत 'भारतीय राष्ट्रवाद' को जीवंत बनाया जाना औ..र सर्वदा जीवंत बनाए रखना आवश्यक है। तदैव प्रसंगित लक्ष्य की पूर्ति हेतु भी हमें भारतत्व, भारतीत्व एवं समग्र भारतीयत्व वाले भारत की संप्रतिष्ठा उपर्युक्त इंगितों के अनुपालन के रूप में पुनर्प्रतिष्ठित करनी ही होगी।'[6] रंजन जी का मानना है कि जो लोग भारती के गुणों से जुड़ें हैं, वही भारतीय हैं।

रामराज्य की संकल्पना का विस्तृत विवेचन भारतीय संस्कृति और राम राज्य पुस्तक में देखने को मिलता है। पुस्तक की लेखक मालती शाकल्य कहती हैं कि-'गोस्वामी जी ने धर्म के जिस स्वरुप का विवेचन किया है वह अत्यंत व्यापक और मानवीय-प्रेम पर आधृत है। रामराज्य में राजा-प्रजा धार्मिक संस्कारों से युक्त होते हैं, जिसमें पवित्रता को विशिष्ट महत्ता दी जाती है। राज्य में भक्ति करने का समाज के सभी वर्गों को सामान अधिकार प्राप्त है। समाज में विभिन्न सम्प्रदायों के जितने भी दर्शन हैं, वे भी मनुष्य को श्रेष्ठतम ढंग से जीने का सन्देश देते हैं। विभिन्न सम्प्रदायों में कहीं किसी प्रकार का तनाव नहीं है। सभी सम्प्रदायों के लोग परस्पर मिल-जुल कर प्रेमभाव से रहते हैं। इस प्रकार की धार्मिक-भावना यदि वर्तमान भारतीय समाज में व्याप्त हो तो, अवश्य ही सुराज्य की स्थापना की जा सकती है।'[7] विजय रंजन ने गहन शोध, गंभीर मंथन और विशष्ट विवेचन कर तर्कपूर्ण मौलिक धार्मिक मान्यताओं की स्थापना की है। इनकी प्रबुद्ध प्रज्ञा का ही परिणाम है कि उन्होंने प्रकृत प्रकरण में विविध कोणीय समीक्षा कर आक्षेप करने वालों को निरुत्तर कर दिया है। 'राम पर आक्षेप ~ कितने अनुचित कितने उचित' पुस्तक में उन्होंने लिखा है कि-'वर्तमान में मेरी दृष्टि में वाल्मीकीय राम के सदाचार, राम के अनयनिरोधन-संकल्प, तद्वत सक्रिय कर्मठता, समन्वयवादी सूझ-बूझ और भेदभावरहित सर्वहितकारी आदर्शशीलता, साथ ही राम की राष्ट्रवादिता सदृश रामीय सद्गुण (रामत्व समग्र) आज परमावश्यक प्रतीत हो रहे हैं। तेनेव, अन्यान्य देश-काल के सापेक्ष आज के वर्तमान में वाल्मीकीय राम के रामचरित का सम्यक अवगाहन और रामत्व का सदाशयीमनसा-वाचा-कर्मणा अंगीकार सर्वाधिक वांछनीय है। प्रतीततया आज के वर्तमान में वाल्मीकीय राम और उनका रामत्व हमारी राष्ट्रीय आवश्यकता है, इसलिए कि आज राम और रामत्व का कोई विकल्प लभ्य नहीं है।'[8]

कथाकार विजय रंजन सामाजिक समरसता के प्रबल पक्षधर हैं। उनकी कहानियां परिवार, समाज और उससे बढकर मनुष्य और मनुष्य के बीच के रिश्तों को रेखांकित करने वाली हैं। इनकी कहानियों में केवल अनुभव ही नहीं, समाज की आलोचना भी है। डॉ. महेश दिवाकर द्वारा संपादित पुस्तक 'समीक्षा के निकष पर विजय रंजन' में रंजन का वैचारिक पक्ष कुछ इस प्रकार है-'रचनाकार-साहित्यकार का काम केवल समस्याओं को बताना-दिखाना नहीं बल्कि उसका कुछ सटीक समाधान भी प्रस्तुत करना है। कथाकार रंजन अपनी कहानियों द्वारा एक सामाजिक समस्या, जो आज के पढ़े-लिखे समाज के हस्तक्षेप के बाद भी ज्यों की त्यों या कुछ परिवर्तित रूप में विद्यमान है, का समाधान देते हैं। यह समाधान कोरा उपदेशात्मक नहीं है। वहां व्यावहारिकता है।'[9]

समाज एवं साहित्य के आपसी संबंधों के विषय में विजय रंजन कहते हैं कि 'समाज, समाज-हित, सामाजिक विषय, संस्कृति, सद्संस्कार, विशेषकर नैतिकतावादी लोकहित सह लोकहितवादी नैतिकता सदृश विन्यास-व्यास से विच्छिन्न क्षेत्र नहीं है साहित्य का। साहित्य वास्तव में समाज के उन्नयन हेतु आक्षरिक आराधना का प्रथम उपस्कर है।.... भूतम् भव्यम् की सर्जना तो तभी संभव होगी, जब कवि, साहित्यकार सम्पूर्ण समाज की हितरक्षा के लिए समाजहितभाव, सहितभाव से सुयोजित करें स्वयं को। ऐसे भाव के सहारे ही प्रादुष्कृतमन्यथा, शिवेतरक्षतय, व्यवहारविदता आदि को साकार करते हुए वास्तविक अर्थों में नानृषिक कर्म अर्थात कवि-कर्म की सर्जना की जा सकती है। ऐसा ही किये जाने का लक्ष्य साहित्य को, साहित्यकार को समाजोन्मुखी और समाज-हितसंरक्षक के स्वरुप में स्वतः स्थापित करता है।'[10]

सामान्य विषय से हटकर उन्होंने बड़ी गंभीरता से राष्ट्र एवं साहित्य के लिए सर्वाधिक उपयोगी विषयों पर अपनी लेखनी चलाई है, यथा – कविता संग्रह – हाशिये से (1986), किर्चें (2009), दर्पण तीरे (2021) कहानी संग्रह – सूरज की आग (1981), उभरते बिम्ब (2013), समालोचना – साहित्यिक तुला पर बाल्मीकि-रामायण (2012), रसवाद औज्र नयरस (2014), कविता का पश्यंती निकष : नयत्व (2014), कविता क्या है (2015), क्या है भारत क्या है भारतीयता (2019), राम पर आक्षेप : कितने अनुचित कितने उचित (2020), भारतीय राष्ट्रवाद का क ख ग

(2022)7 रंजन की दो संपादित पुस्तकें – नवकहानियाँ (1981), प्रश्नोत्तर (काव्य संग्रह, 1990) हैं। शीघ्र प्रकाश्य मौलिक कृतियाँ (पांडुलिपित) – आदि महाकवि बाल्मीकि के 10 अप्रतिम साहित्यिक अवदान, भारतीय राष्ट्रवाद : एक विशिष्ट विमर्श, साहित्य का क ख ग, भारतीय शिक्षा व्यवस्था : सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक पक्ष, विश्वविजय पथ पर हिन्दी, भारतीय संस्कृति : एक विशिष्ट विमर्श, गोस्वामी तुलसीदास का स्वान्त:सुखाय, रामत्व औ...र हमारा समय, वातायन से सनातन धर्म सर्वश्रेष्ठ क्यों, भारतीय संस्कृति के आदि-महागायक वाल्मीकि का कालखंड।

'जन भावना की मनोरम अभिव्यक्ति, स्वाधीनता की पीठिका और सद्भावों की प्रेरणामयी वाणी ही पत्रकारिता है, जिससे मानव जीवन में अभूतपूर्व क्रान्ति उपस्थित है। अज्ञानियों को ज्ञान, असहायों को संबल तथा दिग्भ्रमित को सद्बुद्धि देने वाली पत्रकारिता अपनी ओजस्विनी, निर्भय, न्यायपरायणा-प्रवृत्ति के चलते सर्वत्र पुण्य का संचार कर रही है।'[11] शिक्षा एवं कर्म से कानून को जीविकोपार्जन बनाने वाले विजय रंजन जीवन के लगभग 5 दशक तक पूरे समर्पित भाव से पत्रकारिता में सन्नद्ध होकर साहित्य जगत को एक नया विस्तार एवं आयाम प्रदान किया है। '02 अक्टूबर 1976 से 'अवध-अर्चना' मासिक समाचार पत्र का सम्पादन-प्रकाशन, जनवरी 1977-89 में 'अवध-अर्चना' साप्ताहिक समाचारपत्र का सम्पादन-प्रकाशन, अप्रैल 1995 से अद्यतन 'अवध-अर्चना' त्रैमासिक का अनवरत सम्पादन करके साहित्य एवं पत्रकारिता के उन्नयन हेतु भागीरथ प्रयास किया।'[12]

अयोध्या स्थित उनके 'आश्रम' आवास पर 04 अक्टूबर 2024 को मेरे द्वारा विजय रंजन से लिए गए साक्षात्कार के दौरान मेरे प्रश्न – 'साहित्य क्या है? एवं नवागत साहित्यकारों के लिए आपका मार्गदर्शन क्या है?' का उत्तर देते हुए विजय रंजन ने कहा कि-'साहित्य को मैं साधना मानता हूँ। सहितभाव की साधना, समाजहित की साधना, नैतिकतावादी लोकहित सह लोकहितवादी नैतिकता की साधना, अक्षर-ब्रह्म की साधना, सत्यम्-शिवम्-सह सहज सुन्दरम् की सम्वेत की साधना, स्वयं को परिष्कृत करने की साधना, व्यक्ति एवं समाज को बेहतर बनाने की साधना, प्रादुष्कृतमन्यथा की साधना, लोकयात्रा के सुप्रवर्तन की साधना, लोक विश्रांति की साधना, अपनी आत्मा को चिति से आवरित करने की साधना जैसी अनेक साधनाओं का उपक्रम है साहित्य। ये साधनाएं सिद्धि भी देती हैं और प्रसिद्धि भी, लेकिन हड़बड़ी में हम साहित्य से कुछ पा नहीं सकते। उसके लिए चिंतन-मनन-निदिध्यासन की आवश्यकता होती है और लम्बे समय तक साधना करनी पड़ती है। दुर्भाग्य से हमारे आज के लेखक भौतिकतावादी चकाचौंध में या सुखवाद की ललक में बहुत कुछ हड़बड़ी में पा लेना चाहते हैं, जो साहित्य साधक के लिए किसी रूप में उचित नहीं है।'

पूर्वापर के विशेषांक में प्रकाशित डॉ. सत्यप्रकाश त्रिपाठी द्वारा लिए गए साक्षात्कार में रंजन नवागत साहित्यसेवियों के लिए सन्देश देते हुए कहते हैं कि 'मैं स्वयं को अभी विद्यार्थी ही मानता हूँ, अतएव स्वयं को इस स्थिति में नहीं पा रहा कि किसी को कोई सन्देश दे सकूं। फिर भी वरिष्ठ होने के नाते नवागत के लिए मैं ज्ञानवरिष्ठ विद्वान स्व. आचार्य विष्णुकांत शास्त्री का सन्देश दोहराना चाहूंगा कि-पढ़ो अधिक, लिखो कम, बोलो बहुत कम। इसमें अतिरिक्तया सुझाव दे सकता हूँ कि जो कुछ लिखो उसे भी लेखक, कवि बनने की हड़बड़ी में येन-केन प्रकारेण प्रकाशित करने से बचो। रचना में बल होगा तो देर-सबेर आपको रचनाकार माना ही जाएगा, इसके लिए हड़बड़ाहट उचित नहीं है।'[13]

'सारस्वत तपस्वी साहित्य-भूषण विजय रंजन' लेख में डॉ. सुशील कुमार पाण्डेय 'साहित्येन्दु' ने लिखा है कि 'जब वे कविता की परीक्षा दैवीय आधार पर करते हैं, तब उनकी परा प्रतिभा चमत्कृत हो उठती है। जब वे कविता की परीक्षा तात्विक आधार पर करते हैं तब लगता है कि विजय रंजन वैदिक ऋषियों प्राचीन भारतीय काव्यशास्त्रियों के आधुनिक संस्करण हैं।'[14] देश-दुनिया के विभिन्न साहित्यकारों ने रंजन जी के व्यक्तित्व-कृतित्व पर अपना बहुमूल्य अभिमत व्यक्त करके साहित्य एवं राष्ट्र के लिए उनके साहित्यिक अवदान को इंगित किया है। वर्जीनिया (अमेरिका) से मंजु श्रीवास्तव 'मन' लिखती हैं कि 'श्रीरामचंद्र जी पर लगे आक्षेपों का बड़ा तार्किक उत्तर प्रतुत किया है। सभी शंकावों का निर्मूल सिद्ध करने में वे सफल हुए हैं। मर्यादापुरुषोत्तम राम के लोक-कल्याणकारी स्वरुप के पक्ष में लेखक का वक्तव्य सटीक है। भाषा-शैली, शब्द संयोजन, भाव-प्रवणता उत्कृष्ट कोटि की है'[15] राजेश श्रीवास्तव लिखते हैं कि 'रंजन जी को यदि हिन्दी साहित्य जगत का वाल्मीकि कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।'[16] प्रो. व्यासमणि त्रिपाठी लिखते हैं कि 'गंभीर गवेषणा का प्रतिफलन है – क्या है भारत क्या है भारतीयता। यह भारत और भारतीयता को समझने के लिए महत्वपूर्ण साधन है।'[17] केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के पूर्व उपाध्यक्ष डॉ. कमलकिशोर गोयनका लिखते हैं कि 'भारत और भारतीयता शब्द इधर सबसे चर्चित और विवादास्पद है और आपने सप्रमाण इनके इतिहास तथा स्वरुप का उदघाटन किया है।'[18]

साहित्यभूषण विजय रंजन का कृतित्व देखकर यह कहा जा सकता है कि उनका जन्म ही साहित्य-साधना के लिए हुआ है। उनके जैसा लेखन किसी साहित्यिक तपस्वी के लिए ही संभव है। साहित्य के ब्रह्माण्ड में रंजन अपनी साहित्यिक साधना के यज्ञ से जो साहित्यिक उन्नयन वाली विलक्षण साहित्यिक प्रस्थापनाएं सृजित की हैं, वे उनके साहित्य प्रताप को सदियों तक गुंजायमान अवश्य रखेंगी। उनके साहित्यिक, सामाजिक एवं सैद्धांतिक अवदान इतने विशद ज्ञान वाले हैं कि यदि रंजन को हिन्दी साहित्य जगत का महर्षि कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

सन्दर्भ सूची:-

1. दिनकर की कविता में विचार तत्व, अन्नपूर्ण प्रकाशन विशाखपट्टनम, 1981, डॉ. एस. शेषारत्नम, पृष्ठ संख्या – 24
2. किर्चे, अवध-अर्चना प्रकाशन, फैजाबाद, 2009, विजय रंजन, साँस में सुर भरो, पृष्ठ संख्या 43
3. कविता का पश्यंती निकष : नयत्व, भारती पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर, 2014, विजय रंजन, पृष्ठ संख्या 232
4. रसवाद औज्र नय रस, भारती पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर, 2014, नय रस : क्या..क्यों.. कैसे, विजय रंजन, पृष्ठ संख्या 118-119
5. क्या है भारत क्या है भारतीयता, आचार्य विश्वनाथ पाठक शोध संस्थान फैजाबाद, 2019, विजय रंजन, पृष्ठ संख्या 149
6. भारतीय राष्ट्रवाद का क ख ग, विकल्प प्रकाशन दिल्ली, 2022, विजय रंजन, पृष्ठ संख्या 362
7. भारतीय संस्कृति और रामराज्य, साहित्य भारती दिल्ली, 1997, मालती शाकल्य, पृष्ठ संख्या 155-156

8. राम पर आक्षेप : कितने अनुचित कितने उचित, आपस पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर, फैजाबाद, 2020, विजय रंजन, पृष्ठ संख्या 156
9. समीक्षा के निकष पर विजय रंजन, विश्व पुस्तक प्रकाशन, 2021,संपा – डॉ. महेश दिवाकर, पृष्ठ संख्या 210–211
10. समीक्षा के निकष पर विजय रंजन, विश्व पुस्तक प्रकाशन, 2021, संपा – डॉ. महेश दिवाकर, पृष्ठ संख्या 299
11. हिन्दी पत्रकारिता और काशी, संजय बुक सेंटर वाराणसी, 1999, हिमांशु शेखर सिंह, प्राक्कथन, अर्जुन तिवारी
12. अप्रतिम साहित्यसेवी विजय रंजन, ब्लूजे बुक्स, दिल्ली, 2024, संपा – पवन बख्शी, पृष्ठ संख्या 22–23
13. पूर्वापर, पूर्वापर प्रकाशन, अप्रैल–जून 2022, अंक 60, संपा– डॉ. सूर्यपाल सिंह, डॉ. सत्यप्रकाश त्रिपाठी द्वारा लिया गया साक्षात्कार, पृष्ठ संख्या 51–52
14. अप्रतिम साहित्यसेवी विजय रंजन, ब्लूजे बुक्स, दिल्ली, 2024, डॉ. सुशील कुमार पाण्डेय 'साहित्येंदु' का लेख, पृष्ठ संख्या 37
15. समीक्षा के निकष पर विजय रंजन, विश्व पुस्तक प्रकाशन, 2021, संपा – डॉ. महेश दिवाकर, मंजु श्रीवास्तव 'मन' के विचार, पृष्ठ संख्या 276
16. समीक्षा के निकष पर विजय रंजन, विश्व पुस्तक प्रकाशन, 2021, संपा – डॉ. महेश दिवाकर, राजेश श्रीवास्तव के विचार, पृष्ठ संख्या 245
17. समीक्षा के निकष पर विजय रंजन, विश्व पुस्तक प्रकाशन, 2021, संपा – डॉ. महेश दिवाकर, डॉ. व्यासमणि त्रिपाठी के विचार, पृष्ठ संख्या 143
18. समीक्षा के निकष पर विजय रंजन, विश्व पुस्तक प्रकाशन, 2021, संपा – डॉ. महेश दिवाकर, डॉ. कमलकिशोर गोयनका के विचार, पृष्ठ संख्या 100

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025

MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

दर्शन की वैज्ञानिकता - एक चिन्तन

डॉ. प्रीतिरञ्जन माझी

असिस्टेंट प्रोफेसर, पीजी डिपार्टमेंट ऑफ संस्कृत, फकीर मोहन विश्वविद्यालय, बालासोर, ओडिशा

सारांश :–इस ब्रह्मांड के बारे में जो ज्ञान प्राप्त करके मनुष्य खुद को श्रेष्ठप्राणी के पद पर अधिष्ठित किया है , इस क्षेत्र में सबसे पहले अग्रदूत दार्शनिक थे। उन्होंने ही प्रथम व्यक्तिपरक चिंतन और ब्रह्मांड में घटनाओं के वस्तुनिष्ठ विश्लेषण द्वारा सृष्टि के रहस्यों की जांच करने का प्रयास किया। दर्शनशास्त्र मनुष्य के बारे में हमारे ज्ञान का आधार रहा है और मनुष्य की संरचना एक तर्कसंगत इकाई के रूप में न केवल एक भौतिक शरीर के रूप में है, बल्कि एक मन और एक मार्गदर्शक आत्मा से संपन्न है जो सभी मानव प्रयासों को गहराई से प्रभावित करती है। आलोच्य लघुप्रबन्ध का मूल उद्देश्य विज्ञान की क्षेत्रों में दर्शन का बहुधा क्रियान्वयन की व्याख्या को प्रस्तुत करना औरदर्शन की वैज्ञानिकता का प्रतिपादन करना है। जिससे भारतवर्ष की ज्ञानचर्चा के क्षेत्र में नवीन आयाम का योग हो सकेगा।

कूट शब्द :–मूल्यबोध, चिकित्सा, ज्ञान, विज्ञान, विचार, दार्शनिकता।

उपक्रम :–ज्ञान वैचारिक और तथ्यात्मक दोनों है। जीवन में घटनाओं का ज्ञान अवधारणाओं के विकास को जन्म देता है। इन अवधारणाओं से दार्शनक विचार विकशित होते हैं। वैचारिक ज्ञान दर्शनशास्त्र के दायरे में है जबकि तथ्यात्मक ज्ञान प्राकृतिक दर्शन या पदार्थ के दर्शन का उत्पाद है, और इसलिए विज्ञान का क्षेत्र है। वास्तविकता के द्रष्टाओं के अपना दर्शन होता है जिसके सिद्धान्तों पर वे जीवन निर्वाह करते और जीवन की वास्तवता को देखते हैं। यह दर्शनही था जो उनकी गतिविधियों में प्रेरक शक्ति था और उनकेजीवन में घटनाओं की बेहतर समझ लाता था। सभी श्रेणियों के वैज्ञानिकों से लेकर मानव गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में भी एक दार्शनिक अंतर्धारा गतिशील है जिसके विना दुनिया वैसी नहीं होती जैसी आज है।

इस ब्रह्मांड के बारे में जो ज्ञान प्राप्त करके मनुष्य खुद को श्रेष्ठप्राणी के पद पर अधिष्ठित किया है , इस क्षेत्र में सबसे पहले अग्रदूत दार्शनिक थे। उन्होंने ही प्रथम व्यक्तिपरक चिंतन और ब्रह्मांड में घटनाओं के वस्तुनिष्ठ विश्लेषण द्वारा सृष्टि के रहस्यों की जांच करने का प्रयास किया। दर्शनशास्त्र मनुष्य के बारे में हमारे ज्ञान का आधार रहा है और मनुष्य की संरचना एक तर्कसंगत इकाई के रूप में न केवल एक भौतिक शरीर के रूप में है, बल्कि एक मन और एक मार्गदर्शक आत्मा से संपन्न है जो सभी मानव प्रयासों को गहराई से प्रभावित करती है। पूर्वी और पश्चिमी दोनों दर्शनशास्त्रों ने ब्रह्मांड की उत्पत्ति और सृष्टि के पीछे एक परम तत्त्व पर अनुमान लगाया है। हम भारतीय इसे ईश्वर, परमात्मा, परम पुरुष, ब्रह्म इत्यादि कहते हैं। दार्शनिकों ने बहुधा स्वीकारा है सारा ज्ञान, सारा विज्ञान उसी से उत्पन्न होता है और उसी में समाप्त होता है। अधिकन्तु दार्शनिकों नेमन के विकास, इसके विभिन्न आधारों, इसकी गतिविधि के क्षेत्रों, इसकी प्रवृत्ति और मनुष्य और ब्रह्मांड के बीच के अंतर–संबंध और भगवान के सार्वभौमिक सिद्धांतों का गहराई से अध्ययन किया। वास्तविकता के द्रष्टाओंके अपना दर्शन होता है जिसके सिद्धान्तों पर वे जीवन निर्वाह करते और जीवन की वास्तवता को देखते हैं। यह दर्शन था जो उनकी गतिविधियों में प्रेरक शक्ति था और उनकेजीवन में घटनाओं की बेहतर समझ लाता था। मौलिक रूप से यद्यपि दर्शन मानव गतिविधियों के सभी क्षेत्रों का आधार है, लेकिन यह मुख्य रूप से मन और आत्मा की व्यक्तिपरक दुनिया से संबंधित है।

उद्देश्य :–दर्शनशास्त्र मानव व्यवहार, आचरण और मूल्यों के मानदंडों को प्रतिपादित करता है। इसका उद्देश्य जीवन के उच्चतम लक्ष्य को साकार करने के लिए मानव समाज का एक व्यवस्थित, विकास करना है, अर्थात् उन रहस्यों को उजागर करना जो मनुष्य को न केवल जन्म और मृत्यु का रहस्य का ज्ञान करा सके उपरन्तु इस चक्र के परे किसी वृहत्तर तत्त्व का सन्धान दे सके। वास्तव में दर्शन की यह प्रवृत्ति विज्ञान की प्रवृत्ति की भाँति इतनी व्यवस्थित ओर सन्तुलित है किजव यह दर्शन जीवन के किसी भि क्षेत्र में अन्वित होता है तव वह विश्वकल्याण का विषय वन जाता है। आलोच्य लघुप्रबन्ध का मूल उद्देश्य भारतवर्ष में विज्ञान की विविध क्षेत्रों में दर्शन का बहुधा क्रियान्वयन की व्याख्या को प्रस्तुत करना और दर्शन की वैज्ञानिकता का प्रतिपादन करना है।

विज्ञान और दार्शनिकता :–ज्ञान वैचारिक और तथ्यात्मक दोनों है। जीवन में घटनाओं का ज्ञान अवधारणाओं के विकास को जन्म देता है। इन अवधारणाओं से दार्शनक विचार विकशित होते हैं। वैचारिक ज्ञान दर्शनशास्त्र के दायरे में है जबकि तथ्यात्मक ज्ञान प्राकृतिक दर्शन या पदार्थ के दर्शन का उत्पाद है और इसलिए विज्ञान का क्षेत्र है। इन द्रष्टाओं, संतों, विश्व के महान धर्मों के संस्थापकों, राजाओं, राजनेताओं, इतिहासकारों, योद्धाओं, कलाकारों, मूर्तिकारों, इंजीनियरों, डॉक्टरों और सभी श्रेणियों के वैज्ञानिकों से लेकर मानव गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में एक दार्शनिक अंतर्धारा गतिशील है जिसके विना दुनिया वैसी नहीं होती जैसी आज है। साक्ष्य पर आधारित व्यवस्थित पद्धति का अनुसरण करते हुए प्राकृतिक और सामाजिक विश्व के विशिष्ट ज्ञान को विज्ञान शब्द से परिभाषित किया जाता है। यह एक व्यवस्थित अनुशासन है जो विश्व के बारे में परीक्षण योग्य परिकल्पनाओं के रूप में ज्ञान का निर्माण और आयोजन करता है। दृष्टान्त के लिए हम कतिपय विषय पर प्रकाश डाल सकते हैं जिन विषयों पर आज का विज्ञान या कहें साइन्स अपना सर्वोत्तमता जाहिर करता है। चिकित्सा एक विज्ञान है क्योंकि यह मानव शरीर, उसके कार्यों, सामान्य कार्यों से उसके विचलन, रोग पैदा करने वाले कारक या कारण, रोग से उत्पन्न अंगों में परिवर्तन, रोग के लक्षण आदि का

अध्ययन करता है। स्थूल अर्थ में यह शरीर का अध्ययन करता है। भारतीयशास्त्रों में शरीर को उच्चस्थान मिला है चुंकि शरीर हि जागतिक व्यवहार का आधार तथा धर्मादि के कारकहै । रोगग्रस्त मनुष्य किसी भि क्षेत्र में पूर्णतः प्रवीण नही हो सकता। प्रयोगशाला में अध्ययनों की सहायता से आधुनिक चिकित्साविज्ञान मानव शरीर का वस्तुनिष्ठ अध्ययन और विश्लेषण करता है।अन्ततःजो तथ्य भौतिक शरीर के संदर्भ में चिकित्सा विज्ञान का आधार बनते हैं, उनमूल्यवान तथ्यों को एकत्र करता है, तथा तदनुसार उपशम का उपाय निश्चित करता है।

चिकित्साविज्ञान में दार्शनिकताः-प्राचीन चिकित्सापद्धति को देखें तो आयुर्वेत्ताओं का मानना है कि लोग एक विशेषता के साथ पैदा होते हैं, जिसे प्रकृति कहा जाता है। गर्भाधान के समय से प्रकृति को शारीरिक और मनोवैज्ञानिक विशेषताओं के एक अनूठे संयोजन के रूप में देखा जाता है जो प्रत्येक व्यक्ति के कार्य करने के तरीके को प्रभावित करता है। एक व्यक्ति की अंतर्निहित प्रकृति जो कि सत्त्व, रजस् और तमस् हैयह एक जैसी रहती है। यही चेतना को शरीर के साथ जोडे रखती है। हालाँकि, किसी की प्रकृति लगातार विभिन्न आंतरिक, बाहरी कारकों से प्रभावित हो सकती है। यह प्रभाव मनुष्य को न केवल व्यवहारिक रूप से, वल्की आत्मिक स्तर पर परिवर्तित करने में सक्षम है। इसका एक दूसरा आयाम भी है जो पूर्णतः शरीर तथा शारीरिक तत्वों को विषय करता है। जिसे विद्वानों ने धातु तथा दोष के नाम से परिभाषित किया है। यह शारीरिक स्वस्थता के कारणस्वरूप वात, पित्त और कफ हैं। रक्तमांसादि शारीरिक तत्व वात, पित्त और कफ नामक तीन धातुओं के साथ अविभाज्य रूप से मिश्रित हैं, शरीर मे वात वायवीय तत्व है, पित्त आग्नेय और कफ जलीय तत्व है। वात का सामान्य कार्य शरीर का सन्तुलन बनाए रखना और शरीर की हर तरह की क्रिया को शुरू करना है। यह मन को अवांछनीय वस्तुओं की ओर जाने से रोकता है और उसे वांछित वस्तुओं की ओर ले जाता है; यह ध्वनि, स्पर्श आदि की अनुभूति को वहन करता है। शरीर में पित्त की स्वाभाविक गर्मी का उत्पादन जीवन-प्रक्रिया का आधार कहा जाता है।प्राण,मांसपेशियों की ताकत, ऊर्जा, चमक आदि सभी जीव के अंदर की पित्ततत्व की सन्तुलन पर निर्भर हैं। जब शरीर की गर्मी असामान्य हो जाती है, तो रोग उत्पन्न होता है; जब यह समाप्त हो जाती है, तो जीवन का अंत हो जाता है। कफ शरीर का जलीय तत्व है। यह भारी, और आकर्षक गुणों वाला होता है। यदि कफ अपने सामान्य स्तर से कम हो जाता है, तो सिर बहुत हल्का लगता है। वात की सक्रियता के विना पित्त और कफ को पङ्गु कहा जाता है। वात स्वयं पित्त और कफ से प्रभावित होता है। जब तीनों धातुएँ नियन्त्रण में होती हैं, तो परिणाम स्वस्थता है, असामान्य संतुलन विकारों या दोषों को जन्म देता है। इसलिए दोष और धातु समानार्थी हैं। दोनों ही कर्म और गुणों से संपन्न हैं, जबकि उनके मूल घटक पंचभूत और जीवात्मा हैं।यदि तीनों तत्वों में से कोई भी असंतुलित हो जाए तो यह मानसिक विषमता पैदा करता है और मन को प्रभावित करने वाले दो तत्वों रजस् और तमस् को प्रभावित करता है । पहले तीन तत्वों के विकार से शरीर बीमार होता है और दूसरे दो के विकार से मन प्रभावित होता है। मन सत्व, रजस् और तमस् से बना होता है जब ये संतुलन की स्थिति में होते हैं, मन उचित क्रम में कार्य करता है और जब उनमें से कोई एक प्रबल होता है तो यह रोगग्रस्त हो जाता है। अतः वात, पित्त और कफ न केवल शारीरिक संचालन करते हैं, बल्कि विभिन्न प्रकार के बौद्धिक संचालन भी करते हैं। यह मानसिक और शारीरिक प्रक्रियाओं की मनो-शारीरिक समानता के कारण है।

चूंकी मानसिक विकार वात, पित्त और कफ के असंतुलन के अनुरूप हैं।इसीलिए शास्त्रों के अनुसार मन और शरीर दोनों का कल्याण चिकित्सक की मुख्य चिंता है।कई कारक असंतुलन का कारण बन सकते हैं, जिसमें खराब आहार, बहुत अधिक या बहुत कम शारीरिक या मानसिक परिश्रम, रसायन या कीटाणु शामिल हैं। इसीलिए चिकित्सा शास्त्र बीमारी की रोकथाम पर बहुत जोर देता है, और दैनिक और मौसमी आहारों का पालन करके स्वास्थ्य बनाए रखने की सलाह देता है। अव प्रश्न है-जव दोषों के दुष्प्रभाव से शरीर अस्वस्थ हो जाए और यह शारीरिक विकृति मन की आरोग्य के लिए प्रतिकूल हो जाए तव क्या भौतिक दवाओं से मानसिक विक्रियाओं के समाधान हो सकता है? जिन औषधियों से वात-पित्त-कफ समता को प्राप्त होते हैं मन की स्थिति पर उनकी क्या भूमिका है ? क्या इसका आकलन आधुनिक उपकरणों से किया जा सकता है?

वास्तव में आधुनिकविज्ञान उन विषयों पर आधारित है जिनको भौतिक स्तर पर जाना जा सकता है और जिन पर परीक्षण किया जा सकता है। लेकिन मन या आत्मा जैसे अतिभौतिक विषयों का विवेचन भौतिक साधनों से सम्भव न होने के कारण आधुनिकविज्ञान उसको विषय नहीं करता। प्राचीन भारतीय चिकित्साविज्ञान में यह विपरीत है। उस काल में विद्या के सारे विभाग एक नैतिक सिद्धान्त को मान कर विकशित थे की भौतिक विषय किसी भी चर्चा का लक्ष्य नहीं हो सकता। अतः प्रायशः सभी भारतीय शास्त्र चाहे वो काल्पनिक काव्य हो , पूर्वघटित का इतिहास हो , या चिकित्साविज्ञान हो धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष को परम लक्ष्य मानते हैं। विष्णुधर्मोत्तरपुराण मे कहा गया है-

धर्मार्थकाममोक्षाणां शास्त्रं स्यादुपदेशकम्।
पूर्वैराचरितं सद्भिर्धर्मार्थसाधकम्।।
मोक्षस्य यत्रोपन्यास इतिहास स उच्यते।
तदेव काव्यमित्युक्तम्...।।

भारतीय मनीषिऔं ने तो पेड लगाने को भी मोक्ष को साधन मानते थे। इसके अन्तराल में एक महत् उद्देश्य था जो भौतिक विषयों को भी अतिजागतिक तत्वों से युक्त रखता था। यह संयोग निरर्थक या अंधविश्वास कह कर नकारा नहीं जा सकता। मनुष्य एक जटिल जीव है जो लाखों वर्षों से क्रम में विकसित हुआ है। इसमें न केवल एक भौतिक शरीर है, बल्कि भावनाओं, इच्छाशक्ति और एक मन भी है। दवाई भौतिक शरीर, उसके संरक्षण, स्वास्थ्य के रखरखाव और इलाज तक ही सीमित है।बीमारियाँ यदि शरीर के साथ साथ मन, भावना, इच्छाशक्ति को प्रभावित करती हैं, तो उन्हें नियंत्रित करने के लिए मन के दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है। एक दयालु शब्द, एक सहानुभूतिपूर्ण स्पर्श, रोगी को एक आश्वासन, एक स्नेहपूर्ण देखभाल, ये सभी उपचार की कला का निर्माण करते हैं। यह मनोविज्ञान के दायरे में आता है जो फिर से दर्शन का एक उत्पाद है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अशांत मन और अशांत भावनाओं को शांत करने के लिए दवाएंहैं, लेकिन लंबे समय में उनका दायरा सीमित है। हम विज्ञान द्वारा की गई प्रगति के आलोक में समस्या की जांच कर सकते हैं। जब तक कोपरनिकस ने यह नहीं कहा कि ब्रह्मांड का केंद्र होना तो दूर पृथ्वी एक तारा भी नहीं और यह केवल हमारे सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करने वाला एक छोटा ग्रह है पाश्चात्य लोगों में यह भ्रम था कि ब्रह्मांड का केंद्र हमारी पृथ्वी ही है। गैलीलियो द्वारा घूमती हुई पृथ्वी की घोषणा करने से पहले तक यह दृढ़ विश्वास था कि पृथ्वी सदैव स्थिर है। किन्तु भारतीय परिप्रेक्षी में यह चिजें अनेकों के लिए

अमीमांसित होते हुए भी भ्रमात्मक नहीं रहा। ऋषियों के वचनों में वैज्ञानिकता लुक्कायित रूपमें थी जो आज शोध का विषय वना हुआ है। हम वेदों में भोतिकविज्ञान का प्रमाण देख सकते हैं ।

उपसंहार:–जिस आधार पर विज्ञान पर मनुष्य को अमानवीय बनाने का आरोप लगाया जाता है, वह यह है कि यह समग्र रूप से मनुष्य को छोड़कर वस्तुओं और घटनाओं पर सबसे अधिक जोर देता है। मनुष्य की अंतरतम भावनाएँ, उसकी प्राथमिकताएँ, तुच्छ इच्छाओं से ऊपर उठने का उसका शाश्वत संघर्ष, नैतिक मूल्यादि दर्शन के क्षेत्र में चले गए हैं, जिन्हें आधुनिक विज्ञान ने पद्धतियों के द्वारा संसाधित करने से असमर्थ होकर उपेक्षा करता है। अवहमारे अस्तित्व के लिए सत्य और प्रासंगिक माने जाने से पहले विषयों को ज्ञात मानक द्वारा मापी और मूल्यांकन की जाती हैं जो सर्वदा सफल नहीं होता। यदि हम वैज्ञानिक प्रगति के चरणों की अनंत श्रृंखला से पीछे जाते हैं, तो हम अंततः आदिम मनुष्य के द्वारा उसके आसपास की दुनिया में देखी गई घटनाओं की तार्किक मानसिक तस्वीर को समझने और बनाने के पहले सचेत प्रयास पर पहुंचेंगे। यह सब अपरिहार्य निष्कर्ष की ओर ले जाता है कि हम अपनी वैज्ञानिक नीति को निर्धारित करने और अपनी आगे की प्रगति को एक निश्चित दिशा देने में व्यक्तिपरक कारकों के प्रवेश के द्वार को बंद नहीं कर सकते हैं।

भारतवर्ष के अतीत के चिकित्सक भारतीय चिकित्सा के जनक चरक और सुश्रुत भी दार्शनिक थे। आधुनिक एलोपैथिक चिकित्सा के जनक हिप्पोक्रेट्स पहले दार्शनिक थे और फिर चिकित्सक। उन्होंने डॉक्टरों के लिए एक आचार संहिता निर्धारित की है जो सही विचार, सही आचरण, सही कार्य और सही जीवन के महत्व पर जोर देती है।इससे शरीर, मन और आत्मा के विकास में सामंजस्य होता है। क्षणभंगुर वस्तुओं के साथ खुद को पहचानने की मानवीयप्रवृत्तिआँ तब तक जारी रहेंगे जब तक कि वह यह नहीं जान लेता कि वह शरीर नहीं है और न ही वह मन है। बल्कि कुछ ऐसा जो इनसे परे है, वह सार्वभौमिक चेतना के अनुरूप है। भारतीय ज्ञानपरम्परा की यह उदारता विश्व को एक नयी दिशा दे सकती है जिसका अधिकतम प्रसार होना चाहिए। इसके माध्यम से भारत पुनः भा–रत (ज्ञान में रत) हो सकता है।

संदर्भ सूची :–

1. Campbell. Norman, What is science, London: Methuen & Co. Ltd., 1991.
2. Dasgupta, S.N, A History of Indian Philosophy, Cambridge : University Press. 1922.
3. Kalidasa, Ed. M.R. Kale, Kuma?rasamb hava of Kalidasa, Delhi: Motilal Banarasidas, 1981
4. Shah. Priyabala. Ed. Visnudharmottarapurana. ThirdKhanda, Vol-1, Baroda : Oriental Institute, 1958.
5. Surukkhai. Sunder, What is science. New Delhi: National Book Trust, 2002
6. Swami Vivekananda, Raja Yoga: Conquering the Internal Nature, Kolkata :AdvaitaAshrama, 2016.
7. अन्नंभट्ट, संपा। नर्वदेश्वर तिवारी, तर्कसंग्रह, वाराणसी भारतीय विद्या प्रकाशन, 1989।
8. आर्ष। प्रियरत्न, क्रियात्मक मनोविज्ञान, लाहौर ़ लालजीदास।
9. उपाध्याय। बलदेव, संस्कृत वाङ्मय का बृहद इतिहास, सप्तदश खण्ड, लखनऊ : उत्तरप्रदेश संस्कृतसंस्थान।
10. गुप्त। अत्रिदेवजी,सम्पा.,अनु.। चरकसंहिता, प्रथमखण्ड। वनारस : भार्गव पुस्तकालय, 1948।
11. द्विवेदी। कपिलदेव, वेदों में विज्ञान, ज्ञानपुर विश्वभारती अनुसन्धान परिषद्, 2014।
12. भामह, संपा.। शङ्कर्राम शास्त्री। काव्यालंकार। माद्रास द श्रीवालमनोरमा प्रेस, 1956।
13. श्री बृहद् भागवतामृतम् 2.1.110 का दिगदर्शिनी टीका, भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी,
14. श्रीवास्तव। सन्तनारायण, चरकसंहिता की दार्शनिक पृष्ठभूमि, इलाहाबाद : पीयूष प्रकाशन, 1983।
15. सिद्धान्तशिरोमणि। विश्वेश्वर, मनोविज्ञान–मीमांसा, दिल्ली : आत्माराम एण्ड सन्स, 1959।
16. सुरपाल, संपा। श्रीकृष्ण जुगनू। वृक्षायुर्वेद। वाराणसी चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, 2018।

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

कुमाऊँ की अर्थव्यवस्था में सिंचाई सुविधाओं की स्थिति (हवलबाग विकास खण्ड के विशेष संदर्भ में)

डॉ. श्वेता आर्य

असिस्टेंट प्रोफेसर, (गेस्ट फेकल्टी), अर्थशास्त्र विभाग, पं. बद्री दत्त पांडेय केंपस, बागेश्वर, एस. एस. जे. विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड

किसी भी राज्य अथवा क्षेत्र के विकास में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान हो सकता है। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। देश का आर्थिक विकास बिना कृषि विकास के सम्भव नही हो सकता, क्योकि अनेक प्रकार के उद्योगों को कच्चा माल कृषि द्वारा ही प्राप्त होता है।कृषि का विकास हम सिंचाई साधनों के बिना कर पाना संभव ही नही है। सिंचाई साधनों के लिए कृषक अधिकांश वर्षा के जल पर ही निर्भर है। किन्तु बदलते परिवेश मे कृषक सिंचाई के लिए वर्षा पर निर्भर नही रह सकता है। इसलिए वर्तमान समय में सिंचाई की सुविधाओं निर्भरता व उपलब्धता पर शोधार्थी द्वारा अध्यन किया जाएगा। प्रस्तुत शोध पत्र में शोधार्थी द्वारा यह जानने का प्रयास किया जाएगा कि सिचाई की वर्तमान स्थिति का अध्ययन किया जाएगा। व साथ ही यह जानने का प्रयास किया जाएगा कि सिंचाई सुविधाओं का कैसे बेहतर किया जा सकता है, जिससे कि कृषि में विकास किया जा सके व कृषि में संलग्न लोगों को अधिक आय प्राप्त हो सके व खाद्य सुरक्षा को भी सुरक्षित किया जा सके।

समस्या का कथन: किसी भी राज्य अथवा क्षेत्र के विकास में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान हो सकता है। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। पिछले दो दशको की अवधि में औद्योगिकरण के संगठित प्रयास के बावजूद कृषि का गौरवपूर्ण स्थान बना हुआ है। कृषि की उपयोगिता को देखते हुए उसके लिए आवश्यक दशाओं की स्थिति किस प्रकार कि है, जिसमें सर्वप्रथम सिंचाई की भूमिका महत्वपूर्ण है। सिंचाई के बिना हम कृषि कार्य की कल्पना भी नही कर सकते। कृषि मेंसिंचाई की महत्ता को समझते हुए पर्वतीय कृषि में सिंचाई की सुविधाओं के अध्ययन का महत्व बढ़ जाता है। जिससे उत्तराखण्ड राज्य के पर्वतीय क्षेत्र में सिंचाई की सुविधाओं को अध्ययन के फ़लस्वरूप विकसित किया जा सकता है।

प्रस्तावित अध्ययन का महत्व–प्रस्तुत अध्ययन कुमाऊॅ के पर्वतीय अर्थव्यवस्था में कृषि में सिंचाई की समस्याओं से सम्बन्धित है। जिससे कि सिंचाई सविधाओं में विकास होने से कृषि की उत्पादकता में बढोत्तरी होने के साथ–साथ उस क्षेत्र के लोगो को भी रोजगार के अवसर प्रदान हो सकते है। रोजगार के अवसरो के साथ–साथ उस क्षेत्र की अर्थव्यवस्था का भी विकास सम्भव हो सकता है।

अध्ययन का उद्देश्य:

1. कुमाऊॅ क्षेत्र में सिंचाई साधनों का अध्ययन।
2. न्यादर्श क्षेत्र में सिंचाई सम्बन्धि समस्याओं का अध्ययन।
3. सिंचाई सुविधओं के लिए सरकारी प्रयास का अध्ययन।

समंको का संकलन–प्रस्तुत अध्ययन के लिये तथ्यों के संकलन हेतु प्राथमिक व द्वितीयक स्रोत्रों का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक समंको के लिए जहॉ शोधार्थी ने प्रश्नावली बनाकर उत्तरादाताओं से भरवाकर उनका उपयोग किया है वही द्वितियक समंको के लिए प्रमुख पत्र–पत्रिकाऐं, पुस्तकें, सामाचार पत्र, वेबसाइट तथा अनेक प्रकार के प्रकाशित व अप्रकाशित स्रोतों का प्रयोग किया गया है।

परिकल्पना: अनुसंधान कार्य हेतु समस्या का चयन करने क उपरान्त अनुसंधानकर्ता का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य अनुसंधान परिकल्पनाओं का निर्माण करना होता है। परिकल्पना अनुसंधान समस्या के समाधान के बारे में एक अनुमान प्रस्तुत करती है, जिसे आनुभाविक साक्ष्यों के आधार पर परीक्षित किया जाता है। परिकल्पना को एक सम्भावित समाधान, प्रस्तावित उत्तर, परिगणित अनुमान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

- सिंचाई सुविधाओं की कमी के कारण कृषि के प्रति लोगों का लगाव कम हुआ है।
- सिंचाई का कृषि उत्पादन में प्रभाव पड़ता है।

शोध प्रविधि:–प्रस्तुत शोध कुमाऊॅ में अल्मोड़ा जनपद के विकासखण्ड हवालबाग पर केन्द्रित होगा। अध्ययन क्षेत्र विकासखण्ड हवलबाग का चुनाव उद्देश्यपूर्ण निदर्शन प्रणाली द्वारा किया जाएगा। हवालबाग विकासखण्ड कृषि क्षेत्र में अधिक सम्पन्र व आर्थिक रूप से विकसित है।
विकासखण्ड हवालबाग से दैव निदर्शन प्रणाली का उपयोग करते हुए पॉच (5) गॉवों का चयन किया जाएगा। प्रत्येक गॉव से चुने हुए कृषक परिवारों की संख्या तीस (30) होगी। इस प्रकार विकासखण्ड़ से 5 गॉवों में से 150 परिवारों का प्रश्नावली विधि द्वारा प्राथमिक सर्वेक्षण व अध्ययन किया जाएगा।
हवालबाग विकासखण्ड में न्यादर्श ग्राम –

क्र0 सं0	ग्रामों के नाम	विकासखण्ड हवालबाग में चयनित परिवार
1.	सुनौला	30
2.	स्यालीधार	30
3.	सरसों	30
4.	पड्यूला	30
5.	मटैला	30

प्रस्तावना:–किसी भी राज्य अथवा क्षेत्र के विकास में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान हो सकता है। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। पिछले दो दशको की अवधि में औद्योगिकरण के संगठित प्रयास के बावजूद कृषि का गौरवपूर्ण स्थान बना हुआ है। देश का आर्थिक विकास बिना कृषि विकास के सम्भव नही हो सकता, क्योकि अनेक प्रकार के उद्योगों को कच्चा माल कृषि

द्वारा ही प्राप्त होता है। परन्तु समय के साथ देश की राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान निरन्तर घटता जा रहा है, जहाँ स्वतंत्रता के बाद कृषि का सकल घरेलू उत्पाद में हिस्स 56.46 प्रतिशत था, वही वर्ष 2014–15 में 14.1 प्रतिशत रह गया है। परन्तु देश में रोजगार की दृष्टि से कृषि के प्रतिशत में कोई भी कमी नही आई है। अर्थात आज भी देश की 52 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से कृषि कार्य में संलग्न है और कृषि की कल्पना हम बिना सिंचाई के नही कर सकते है। यदि हमें कृषि क्षेत्र में विकास करने के लिए सर्वप्रथम सिंचाई सुविधाओं का विकास करना होगा। सभी जीवों को जीवित रहने के लिए जल की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार पौधो व फसलों को उगने और जीवित रहने के लिए पानी की जरूरी है। मनुष्य व पशु सीधे पानी को पीकर अपनी पानी की आवश्यकता को पूर्ण कर सकते है, परन्तु जल के गतिशील होने के कारण वे अपनी पानी की आवश्यकता को खुद से पूर्ण नही कर सकते है। हॉलाकि वे अपनी जड़ो के द्वारा जमीन से पानी के अणुओं को लेते है, लेकिन फसलों को विकसीत होने के लिए उन्हें पानी के बाहरी श्रोत की आवश्यकता है। खेती, रखरखाव और पुर्नवीकरण के लिए फसलों को निश्चित समय के बाद पानी की आपूर्ति करने की प्रक्रिया को सिंचाई कहा जाता है।

सिंचाई:–सिंचाई के लिए जल का उपयोग मानव प्राचीन काल से ही कर रहा हैं। सिंचाई के लिए मानव आधिकतर वर्षा पर ही निर्भर ही रहा है। परन्तु धीरे–धीरे उस समय से लेकर वर्तमान समय तक सिंचाई की विधियों में निरन्तर विस्तार हुआ है, जिसके लिए वह नदियों, झरनों, झीलों, तालाबों व भूमिगत जल का उपयोग करता रहा हैं। मानव कृषि सिंचाई हेतु जल दो श्रोतों प्राप्त करता है, जिसमें प्राकृतिक तथा कृत्रिम प्रमुख है। सिंचाई के लिए मानव पूर्णरूप से वर्षा पर निर्भर नही रह सकता इसलिए उसे कृत्रिम साधनों का सहारा लेना पड़ता हैं।

सिंचाई के प्रमुख साधन:–कुमाऊँ क्षेत्र कृषि के लिए वर्षा पर निर्भर है, परन्तु यहाँ पर अन्य साधनों द्वारा अल्प मात्रा में सिंचाई की जाती हैं। जैसे – नहरों द्वारा, नलकूपों पम्पसेट, निजी नलकूपों, हौज निर्माण, गूलों के निर्माण द्वारा भी सिंचाई कार्य सम्पन्न किया जाता हैं।

नहरों द्वारा सिंचाई:–कुमाऊँ मण्डल के प्रत्येक जनपद में नहरों द्वारा भी कृषि कार्य किया जाता हैं। चूँकि पर्वतीय क्षेत्र पर्वतीय क्षेत्र में नहरो के समीप स्थित खेतों में आसानी सिंचाई की जाती है परन्तु जो खेत दूर स्थित होते है वहॉ पर सिंचाई करना कठिन हो जाता हैं। इसलिए वहॉ पर विभिन्न उपयोगो द्वारा कृषि कार्य सम्पन्न किया जाता हैं।

(क) **शारदा नहर प्रणाली** –यह नहर बनवसा (चम्पावत) से निकाली गई हैं। इसका निर्माण वर्ष 1928 में शारदा (काली) नदी में कराया गया था। यह नहर कुमाऊँ क्षेत्र के चम्पावत, ऊधमसिंह जनपदों में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध कराती हैं।

(ख) **भीमताल**–यह कुमाऊँ सबसे बडी झील मानी जाती हैं। इस झील से कई छोटी–छोटी नहर निकालकर सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराई है, जिसमें नैनीताल जिले के कुछ क्षेत्र शामिल हैं।

(ग) **जमरानी बाँध परियोजना**–कुमाऊँ क्षेत्र के नैनीतल व ऊधमसिंह नगर जनपदो में इस परियोजना द्वारा सिंचाई की सुविधा उपलब्ध कराई गई हैं।

(घ) **नानक सागर बाँध नहर परियोजना**–यह बाँध कुमाऊँ क्षेत्र में स्थित है व नहटोर नदी पर यह बाँध स्थित हैं। इस बाँध से निकाली गई नहरो गई नहरों द्वारा ऊधमसिंह नगर व नैनीताल जनपदों में सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराई गई हैं।

(घ) **अन्य साधन**–कुमाऊँ क्षेत्र कके पर्वतीय जनपदों में हौज निर्माण, गूल निर्माण कराकर सिंचाई की व्यवस्था का प्रयास धीरे–धीरे हो रहा है, जिससे कृषि का अधिक बेहतर बनाया जा सके।

सिंचाई सुविधओं के लिए सरकार द्वारा किए गए प्रयास–राज्य में सिंचाई की सुविधाओं के लिए सरकार द्वारा कई प्रयास किए जा रहे है, जिससे कि राज्य में कृषि को बढ़ाया जा सके और राज्य का विकास किया जा सके। राज्य में सिंचाई विभाग द्वारा कृषको को दी जाने वाली सुविधाओं में मुख्य रूप से नहरों एवं नलकूपों के कमाण्ड क्षेत्र में विभिन्न फसलों के मानक अनुसार सिंचाई हेतु सस्ती दरों पर जल उपलब्ध कराना है, जिससे कृषक अपनी उपज बढ़ाकर स्वयं को स्वावलम्बी बन सकें।

- सिंचाई के लिए गूल, हौज, हाईड्रम, आर्टीजन व बोरिंग पंपसेट जैसे सिंचाई संसाधों का निर्माण व रखरखाव किया जा रहा है।
- अनुसूचित जाति व अनूसूचित जनजाति के कृषकों को सिंचाई सुविधाएं उपलब्ध कराना।
- प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना के तहत सिंचाई गूल, सिंचाई हौज व छोटे ग्रेटेड वियर बनाना।
- नहर व गूलों की जगह एचडीपीई पाइपों का उपयोग किया जाना।
- जल दुर्लभ क्षेत्रों में दाले और तिलहन जैसी फसलों के लिए कृषकों को बढ़ावा देना।
- जलवायु अनुकूल बारानी कृषि परियोजना के तहत पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि को बेहतर बनाना।
- जल स्रातों में पानी की उपलब्धता बढ़ाने के लिए स्प्रिंगशेड मैनेजमेंट योजना पर काम करना।
- ड्रिप सिंचाई स्प्रिंकलर जैसी सिंचाई तकनीकों का उपयोग करना।
- वर्षा के जल का संचयन, चेक डैम व लिफ्ट सिंचाई जैसी वैकल्पिक स्रोतों का उपयोग करना।

न्यादर्श विकासखण्ड हवालबाग का सामान्य परिचय:–26 जनवरी 1995 को हवालबाग विकासखण्ड की स्थापना हुई थी। हवालबाग विकासखण्ड 198.76 वर्ग किमी में फैला हैं। इसके पूर्व में लमगडा विकासखण्ड, ताडीखेत पश्चिम में, द्वाराहाट उत्तर में व नैनीताल जिला दक्षिण में हैं। यह विकासखण्ड जिला मुख्यालय (अल्मोड़ा) से मात्र 15 किमी0 की दूरी के कारण यह आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक दृष्टि से विशेष स्थान रखता हैं। आर्थिक विकास की दृष्टि से यह विकासखण्ड अग्रणी हैं। इस विकासखण्ड में ही उत्तरखण्ड राज्य की प्रसिद्ध विवेकानन्द कृषि अनुसंधानशाला व हिमालयन पर्यावरण संस्थान स्थित हैं। इस विकासखण्ड में विवेकानन्द कृषि अनुसंधानशाला भी हैं। वर्तमान में इस विकासखण्ड में कुल 137 ग्राम पंचायत है, जिसमें 17 न्याय पंचायत व 127 ग्राम पंचायत हैं। हवालबाग विकासखण्ड में 218 आबाद ग्राम व 14 गैर–आबाद ग्राम, कुल 232 ग्राम है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार इस विकासखण्ड में कुल 67447 जनसंख्या है, जिसमें 32697 पुरूष व 34750 महिलाएं है। दुग्ध व्यवसाय, शाक–सब्जि उत्पादन तत्संबधी व्यवसाय इस विकासखण्ड की अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार हैं। कृषि के उत्पादन हेतु सिंचाई सुविधाओं का होना अति आवश्यक है। सिंचाई साधनों की स्थिति को विकासखण्ड हवालबाग मेंनिम्न तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका संख्या -1

क्र0 सं0	वर्ष	सिंचाई साधन नहरों की लम्बाई (किमी0 में)	भूस्तरीय पम्पसेट (संख्या में)	हौज निर्माण (संख्या में)	गूल निर्माण (किमी0 में)	हाईड्रम (संख्या में)
1.	2006-07	26	18	130	75	32
2.	2007-08	26	18	141	81	32
3.	2008-09	26	18	172	86	32
4.	2009-10	28	25	186	94	36
5.	2010-11	28	25	245	96	40
6.	2011-12	28	25	252	99	40
7.	2012-13	29.46	-	261	101.59	40
8.	2013-14	31.11	28	265	101.71	40
9.	2014-15	31.11	28	274	102.68	40
10.	2015-16	31.11	28	274	104.91	40

विकासखण्ड हवालबाग में सिंचाई साधनों एवं श्रोतों की स्थिति

स्रोत: सांख्यिकी पत्रिका - 2017, अर्थ एवं संख्या विभाग जनपद अल्मोड़ा

उपरोक्त तालिका संख्या 1 से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र हवालबाग विकासखण्ड में विगत 10 वर्षो में नहरों, भूस्तरीय पम्पसेट, हौज, गूल व हाईड्रम द्वारा सिंचाई कार्य किया जाता है, सिंचाई के लिए नहरों की लम्बाई में प्रतिवर्ष थोडी बहुत बढ़ोतरी हुई और जहॉ वर्ष 2007-08 में 26 किमी0 द्वारा सिचाई की जाती थी वही वर्ष 205-16 में यह 31.11 किमी0 हो गई। भूस्तरीय पम्पसेटों की संख्या, जहॉं वर्ष 2006-07 18 थी, वही 2015-16 यह बढ़कर 28 हो गई। वही विकाखण्ड में हौज का निर्माण इन 10 वर्षो के मध्य 130 से बढ़कर 274 किया गया। सिंचाई के लिए गूल निर्माण जहॉं वर्ष 2006-07 में 75 किमी0 था, वह बढ़कर वर्ष 2016-17 तक 104.91 किमी0 तक हो गई। साथ ही हाईड्रम की संख्या जहॉ वर्ष 2006-07 में 32 थी, वही वर्ष 2016-17 में इनकी संख्या बढ़कर 40 कर दी गई।

तालिका संख्या-2

सिंचाई में प्रयुक्त साधन	सिंचाई में प्रयुक्त साधनों का प्रयोग परिवारों द्वारा	सिंचाई में प्रयुक्त साधनों का प्रयोग (प्रतिशत में)
नहर/गूल	-	-
वर्षा आधारित	124	82.66
तालाब	-	-
दोनों (नहर/गूल और वर्षा)	12	8
नल के पानी और वर्षा पर आधारित	10	6.66
कुछ भी नही	4	2.66
	150	(100)

न्यादर्श विकासखण्ड हवालबाग में सर्वेक्षित परिवारों में सिंचाई के साधनों का वर्गीकरण

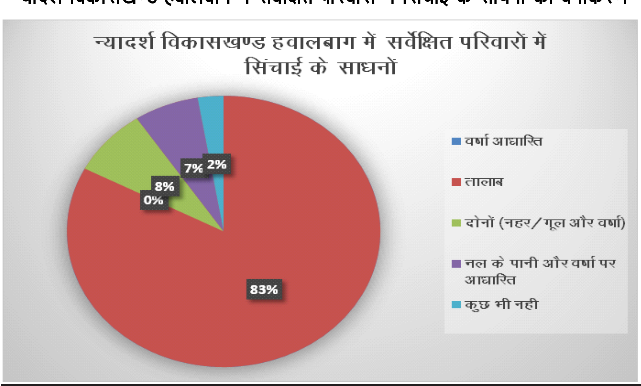

स्रोत- प्राथमिक सर्वे के आधार पर (सर्वेक्षण वर्ष फरवरी 2018)

शोधार्थी द्वारा विकासखण्ड हवालबाग में कृषको के सिंचाई में प्रयुक्त साधनों का अध्ययन किया गया, क्योकि सिंचाई साधनों के बिना कृषि की कल्पना भी नही की जा सकती है। उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि सर्वेक्षित परिवारों में से 82.66 प्रतिशत परिवार सिंचाई के लिए वर्षा पर निर्भर है, जबकि 8 प्रतिशत परिवार (नहर/गूल और वर्षा) दोनों का प्रयोग करते है। 6.66 प्रतिशत परिवार नल के पानी व वर्षा दोनों पर निर्भर रहते हैं। 2.66 प्रतिशत परिवारों के द्वारा सिंचाई का कार्य नही किया जाता हैं।

निष्कर्ष:- 1. पर्वतीय क्षेत्रों में सिंचाई साधनों की व्यवस्था नही के बराबर है, कृषको को सिंचाई के लिए वर्षा पर निर्भर रहना पडता यदि बारिश समय पर नही होती है तो वे अपनी फसलों की सिंचाई समय पर नही कर पाते, जिसके कारण उनकी फसल समय पर तैयार नही होती है। इसलिये पर्वतीय कृषि को बढ़ाने व कृषकों को आर्कषित करने के लिए सिंचाई के उचित प्रबन्ध किए जाने चाहिए।, 2. सिंचाई के लिए गूल, हौज, आर्टीजन वेल व बोरिंग पंपसेट जैसे नए-नए श्रोतों का निर्माण किया जाना चाहिए।, 3. वर्तमान समय में खत्म होते श्रोतों का जीर्णोद्वार किया जाना चाहिए।, 4. पर्वतीय क्षेत्र में शटरयुक्त चेकडैम बनाकर छोटे-छोटे गधेरों के पानी का जमा करके सिंचाई का कार्य किया जाना चाहिए।, 5. ड्रिप सिंचाई च स्प्रिंकलर जैसी आधुनिक तकनीकों का उपयोग किया जाना चाहिए।, 6.जिन क्षेत्रों में सिंचाई सुविधाओं का अभाव है वहॉ कम पानी वाली फसलों जैसे - दाले व तिलहन को उगाने के लिए किसानों को प्रेरित करना चाहिए।, 7.प्राकृतिक जल श्रोतों का संरक्षण किया जाना चाहिए।, 8. सीमित जल संसाधनों के हिसाब से वैज्ञानिक तरीके से सिंचाई प्रणालियों को बनाना चाहिए।, 9. वर्षा के जल के संचयन के लिए चेकडैम का निर्माण किया जाना चाहिए।

संदर्भ सूची:-

1. माथुर, डॉ0 बी0 एन0 (2012): कृषि अर्थशास्त्र, अर्जुन पब्लिकेशन हाऊस, प्रहलाद गली अंसारी रोड दरियागंज, नई दिल्ली।
2. मैठानी, प्रो0 डी0 डी0 व प्रसाद, डॉ0 गायत्री व नौटियाल, डॉ0 राजेश (2015): उत्तराखण्ड का भूगोल, शारदा पुस्तक भवन इलाहबाद।
3. दासगुप्ता, ऐ0 के0: ''एग्रीकल्चर एण्ड इकोनोमिक डिवलपमैण्ट'', एशोसियेट पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली, 1973।
4. पुरी, वी0 के0 व मिश्रा, एस0 के0 (2015): भारतीय अर्थव्यवस्था, हिमालया पब्लिकेशन।
5. ममोरिया, सी0 बी0 व त्रिपाठी, बी0 बी0: एग्रीकल्चर प्राब्लम ऑफ इण्डिया, किताब महल, थार्नहिल रोड़, इलाहबाद, 1982।
6. सांख्यिकी पत्रिका - 2016, अर्थ एवं संख्या विभाग, उत्तराखण्ड।
7. Singh, S.P. : Irrigation and Input Use Efficiency in Agriculture, The Bussiness Review, Vol. 5
8. www.google.com
9. www.wikipedia.com

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

दिनकर की दृष्टि में आधुनिकता

डॉ. आरती कुमारी

बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल, मप्र.

भारतीय साहित्य में अपनी विशिष्ट पहचान के कारण जन-जन की मानस पटल पर अपनी अमिट छाप छोड़ने वाले प्रतिभा सम्पन्न रचनाकारों में सर्वश्रेष्ठ हैं- रामधारी सिंह 'दिनकर'। दिनकर ने भारतीय साहित्य के साथ-साथ संस्कृति, समाज, अध्यात्म, विज्ञान, काम, प्रेम, राजनीति, भाषा, विवाह, संस्कार, संस्कृति और आधुनिकता प्रभृति विषय विमर्श का क्षेत्र रहा है। हिन्दी साहित्याकाश में सूर्य के समान तेजस्वी एवं विलक्षण साहित्यकार हैं। उन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से मनुष्य की सुसुप्तावस्था को जागृत करने का बखूबी प्रयास किया है।

दिनकर संघर्षकाल के संक्रमणकालीन सर्जक हैं। उनका साहित्य उनके विचारक एवं चिन्तक व्यक्तित्व का प्रतिबिम्बन है। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से परंपरा का पुनरावलोकन किया है तो इतिहास का अनुशीलन भी। जब भी कोई काल करवटें लेता है और नयी चेतना से युग उद्वेलित होता है, तो अतीत और वर्तमान में, परंपरा और प्रगति में, भावना और बुद्धि में, धर्म और अध्यात्म में, साहित्य और विज्ञान में टकराहटें होती है। ऐसे संकटग्रस्त समय में दिनकर जैसी प्रतिभाएँ प्रादुर्भूत होती है, जिससे वैचारिक बोध और सृजनकर्म से युग को दृष्टि मिलती है।

दिनकर की दृष्टि में आधुनिकता का व्याप्त अर्थ है। उनकी दृष्टि में आधुनिक कई विचारधाराओं के सम्मिलिन का स्वरूप है। आधुनिकता में हृदय नहीं बुद्धि की सत्ता काम करती है। उनकी दृष्टि में भावुकता के बजाए बौद्धिकता का प्राबल्य होता है। उन्होंने औद्योगीकरण को आधुनिकता की पहचान माना है। उन्होंनें लिखा है -

''जिसे हम आधुनिकता कहते हैं वह कई बातों का एक सम्मिलित नाम है, औद्योगीकरण आधुनिकता की पहचान है। साक्षरता का सर्वव्यापी प्रसार आधुनिकता की सूचना देता है। नगर-सभ्यता का प्राधान्य आधुनिकता का गुण है। ... आधुनिक समाज में उन्मुक्तता होती है, उस समाज के लोग अन्य समाजों से मिलने-जुलने से नहीं घबराते, न वे उन्नति का मार्ग खास-खास गोत्रों के लिए ही सीमित रखते हैं। आधुनिक समाज का एक लक्षण यह भी है कि उसकी हर आदमी के पीछे होने वाली आय अधिक होती है, हर आदमी के पास कोई धंधा या काम होता है और अवकाश की शिकायत प्रायः हर एक को रहती है।''[1]

दिनकर ने भारत में आधुनिकता के प्रभावों से होने वाले परिवर्तनों के दुष्प्रभावों का उल्लेख किया है। विज्ञान के प्रभावों के कारण भारत में हो रहे परिवर्तन को आधुनिकता की दृष्टि से उसके दुष्परिणामों को व्याख्यायित किया है। आधुनिकता के कारण मनुष्य के जीवन में पड़ने वाले प्रभावों के बारे में दिनकर ने लिखा है- ''आधुनिकता से मनुष्य का सुख तो बढ़ा है, लेकिन उसकी शांति घट गयी है, बल, बुद्धि और अहंकार तो बढ़ा है, मगर करूणा और विनम्रता घट गई है।''[2]

दिनकर ने आधुनिकता के महत्व को रेखांकित करते हुए, उसे एक प्रक्रिया मात्र मानते हैं कि यह अंधविश्वास से निकलने की प्रक्रिया है, नैतिकता और वर्णभेद को मिटाने का साधन मात्र है। जाति गोत्र के आधार पर नहीं बल्कि कर्म के आधार पर या मनुष्य की ऊँचाई और उसकी बुद्धि को मापा जाता है। ''जिसे हम आधुनिकता कहते हैं, वह एक प्रक्रिया का नाम है। यह प्रक्रिया अंधविश्वास से निकलने की प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया नैतिकता में उदारता बरतने की प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया बुद्धिवादी बनने की प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया धर्म के सही रूप पर पहुँचने की प्रक्रिया है। आधुनिक वह है, जो मनुष्य की ऊँचाई, उसकी जाति या गोत्र से नहीं, बल्कि उसके कर्म से नापता है। आधुनिक वह है, जो मनुष्य-मनुष्य को समान समझता है।''[3] विदेशी सभ्यता और संस्कृति का वरण करने वालो के प्रति दिनकर ने रोष प्रकट किया है। उन्होंने कहा है कि आधुनिकता का वरण अति आवश्यक है, भारत के विकास के लिए साथ ही इस बात पर भी जोर दिया है कि भारतीय एकमात्र इस कारण से आधुनिकता का वरण न करें कि विदेशों में किया जा रहा है बल्कि अपनी बुद्धि और भारत की अवस्था को परखते हुए इसका वरण करें। उन्होंने लिखा है -'' आधुनिकता का वरण किए बिना भारत का कोई भविष्य नहीं है, यह बात मैं जोर से कहना चाहता हूँ। किन्तु आधुनिकता के प्रचार के लिए बेचैन रहनेवालों से मेरा यह भी निवेदन है कि कोई खेल इसलिए मत खेलिए कि वह विदेशों में कहीं खेला जा रहा है, कोई काम इसलिए मत कीजिए कि वह विदेशों में किया जा रहा है, बल्कि अपनी आधुनिक बुद्धि का प्रयोग भारत की अवस्था पर कीजिए और तब देखिए की आधुनिक बनने का भारत का स्वाभाविक मार्ग क्याहै। इस प्रयोग से आधुनिकता का जो रूप निखरेगा वह भारत के परम अनुकूल होगा। तभी भारत आधुनिक भी होगा और वह भारत भी रहेगा।''[4] भारत के अस्तित्व को उजागर करते हुए यहाँ दिनकर ने आधुनिकता को दर्शाने का प्रयास किया है। वे कहना चाहते हैं कि आधुनिकता को अपनाना चाहिए लेकिन उसके साथ ही भारतीय जनता की परिस्थिति और बुद्धि के अनुकूल कार्य करना चाहिए। तभी भारत आधुनिकता के साथ-साथ अपनी मूल स्थिति में रह सकता है। पाश्चात्य सभ्यता से सीख लेनी चाहिए न कि उस सभ्यता को अपना कर अपनी मूल सभ्यता और संस्कृति को नजरअंदाज कर देनी चाहिए।

दिनकर की दृष्टि में आधुनिकता शाश्वत मूल्य नहीं है यह सतत् प्रवाहमान चेतना है। यह भारतीय संस्कृति की रक्षणीय तत्वों का नवीन चिंतन है। प्राचीनता और परंपरा का खण्डन नहीं है बल्कि आधुनिकता के साथ-साथ

परंपरा का रक्षण है। आधुनिकता पर विचार करते हुए कार्य–कारण संबंध में दिनकर ने उल्लिखित किया है– ''संसार में जब भी कोई नया युग आरंभ होता है, वह युद्ध के कारण आरंभ नहीं होता, पराजय या विजय के कारण आरंभ नहीं होता, क्रांति के कारण आरंभ नहीं होता, न देश का नक्शा बदलने से आरंभ होता है। नयायुग बराबर नए प्रयोग के लोगों के जन्म के साथ उदित होता है। वैसे जिसे हम आधुनिकता कहते हैं, वह कई बातों का एक सम्मिलित नाम है। औद्योगिकीकरण आधुनिकता की पहचान है। साक्षरता का सर्वव्यापी प्रसार आधुनिकता की सूचना देता है। नगर–सभ्यता का प्राधान्य आधुकिनता का गुण है। सीधी–सादी अर्थव्यवस्था मध्यकालीन का लक्षणहै। आधुनिक देश वह देश है, जिसकी अर्थव्यवस्था जटिल और स्वभावतः ही प्रसरणशील हो, जो 'टेक ऑफ' की स्थिति को पार कर चुकी है।''[5]

दिनकर ने बुद्धिवादी और वैज्ञानिक दृष्टि की उपयोगिता को रेखांकित किया है। उन्होंने एक नए विश्व की कल्पना किया है, जो केवल सुख, सुविधा या स्वतंत्रता की दृष्टि से ही नहीं बल्कि शांति और संतोष की दृष्टि से भी परिपूर्ण हो। उन्होंने इसका उल्लेख करते हुए लिखा है– ''आधुनिकता के जो औद्योगिक और सामाजिक पक्ष हैं, प्रवृत्तिमूलक और पुरूषार्थबोधक पक्ष हैं, उन्हें हम स्वीकार करेंगे और सर्वत्र स्वीकार करेंगे। जहाँ तक बुद्धिवाद और वैज्ञानिक दृष्टि का प्रश्न है, हम उनकी उपयोगिता स्वीकार करते हैं, किन्तु इन बातों को स्वीकार करते समय हमें इसका भी ध्यान रखना है कि हम जो नया विश्व बनाएँ, वह प्राचीन और मध्यकालीन विश्व से, सचमुच ही श्रेष्ठ हो, केवल सुख, सुविधा, स्वतंत्रता और भोग की दृष्टि से ही श्रेष्ठ नहीं हो, बल्कि उसमें शांति और संतोष का भी प्राचुर्य हो।''[6] दिनकर आधुनिकता के संदर्भ में वैश्विक भावना को रेखांकित करते हैं, साथ ही समाज में व्याप्त संकीर्णता को भी मिटाने की चेष्टा करते हैं। दिनकर की दृष्टि में आधुनिकता जातिवाद, गोत्रवाद जैसी अवधारणा से उन्मुक्त समाज की स्थापना करना है। प्रस्तुत उद्धरण के माध्यम से दिनकर रूढ़िवादी समाज को सचेत करने की चेष्ट करते हैं। ''बंद समाज वह है, जो अन्य समाजों से प्रभाव ग्रहण नहीं करता, जो अपने सदस्यों को भी धन या संस्कृति की दीर्घा में ऊपर उठने की खुली छूट नहीं देता, जो जाति–प्रथा और गोत्रवाद से पीड़ित है, जो अंधविश्वासी, गतानुगतिक और संकीर्ण है। बन्द समाज मध्यकालीनता का समाज होता है। आधुनिक समाज में उन्मुक्तता होती है, उस समाज के लोग अन्य समाजों में मिलने–जुलने में नहीं घबराते, न वे उन्नति का मार्ग खास जातियों और खास गोत्रों के लिए ही सीमित रखते हैं। आधुनिक समाज का एक लक्षण यह भी है कि उसकी हर आदमी के पीछे होनेवाली आय अधिक होती है, हर आदमी के पास कोई धंधा या काम होता है और अवकाश की शिकायत प्रायः हर एक को रहती है।''[7]

आधुनिकता और आधुनिकीकरण में अंतर मानते हुए दिनकर ने कहा है– 'मॉडर्निटी' आधुनिकता है तो 'मॉडनाईजेशन' आधुनिकीकरण। इसमें ठीक वैसा ही भेद माना है– जैसा सभ्यता और संस्कृति में। विज्ञान के विकास के साथ–साथ सुख सुविधाओं में वृद्धि हुई है। अनेक ऐसी वस्तुओं का आविष्कार हुआ है, जिसे हम सभ्यता की श्रेणी में मानते हैं लेकिन सुख के संसाधन और आधुनिक वस्तुएँ जो हमारे पास है वह सभ्यता कहलाती है, लेकिन संस्कृति वह है जो हम स्वयं हैं। 'मॉडर्निटी' और 'मॉडर्नाइजेशन' को स्पष्ट करते हुए दिनकर ने आधुनिकता की असली बारीकियों को रेखांकित किया है। ''आधुनिकता और आधुनिकीकरण– मॉडर्निटी और मॉडर्नाइजेशन– में भेद है और यह भेद लगभग वैसा ही है, जैसा भेद हम संस्कृति और सभ्यता में मानते हैं। मोटर, महल, हवाई जहाज और कल–कारखाने– ये सभ्यता के उपकरण हैं। संस्कृति इनसे कहीं बारीक चीज का नाम है। सभ्यता वह है जो हमारे पास है, संस्कृति वह है जो हम खुद हैं। मॉर्डनाइजेशन सभ्यता है, मॉर्डनिटी संस्कृति है। जहाँ तक मॉर्डनाइजेशन का प्रश्न है, भारत को आधुनिक बनना ही पड़ेगा और इस क्षेत्र में भारत के आधुनिक होने से भारतीयता नष्ट ही हो जाएगी, ऐसा मेरा विचार नहीं है। गरचे धोती, कुर्ता, अचकन और चादर को हम भारतीयता से संबद्ध मानते आए हैं, किन्तु भारत की जो आत्मा है, भारत का जो असली धर्म है, वह पोशाकों में नहीं बसता, उसका निवास भारतीयों के मन में है, चिन्तन की पद्धति में हैं, सृष्टि को देखने वाली दृष्टि में है।''[8]

आधुनिकता के स्वीकार–नकार संबंधी मत को भारतीय संदर्भ में इसकी वास्तविकता और ऐतिहासिक अवधारणा के सूत्रों को सुलझाने पर दिनकर ने बल दिया है। रोमानियता और आस्तिकता को यूरोपीय जीवन–दर्शन समझकर इसका विरोध करना संकीर्णता का सूचक है। दिनकर ने इसका उल्लेख किया है–''जिसे हम आधुनिकता कहते हैं, वह एक प्रक्रिया का नाम है। यह प्रक्रिया अंधविश्वास से निकलने की प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया नैतिकता में उदारता बरतने की प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया बुद्धिवादी बनने की प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया धर्म के सही रूप पर पहुँचने की प्रक्रिया है। आधुनिक वह है, जो मनुष्य की ऊँचाई, उसकी जाति या गोत्र से नहीं, बल्कि उसके कर्म से नापता है। आधुनिक वह है जो मनुष्य–मनुष्य को समान समझता है। इस अर्थ में आधुनिकता का आरम्भ भारत में बुद्ध के समय हुआ था और वह धारा तब से भारत में बराबर बहती आ रही है। सरहपा, नहपा आदि सिद्ध साधुओं ने जिस धर्म का आख्यान किया, वह पारंपरिक धर्म की अपेक्षा अधिक बुद्धिसंगत और नवीन है। कबीरदास, तुलसीदास के पूर्व हुए थे, किन्तु वे तुलसी की अपेक्षा आज के चिन्तन के अधिक समीप है।''[9]

दिनकर ने आधुनिकता के प्रभाव के कारणहमारे समाज और परिवार पर पड़ने वाले दुष्परिणामों का भी उल्लेख किया है। मनुष्य इस प्रकार आधुनिकता के वशीभूत हो गया है कि वह परिवार, समाज के साथ–साथ अपने नैतिक मूल्यों का भी परिष्कार करता जा रहा है। प्रेम जैसे पवित्र शब्द के भी मतलब बदल चुके हैं। विवाह का आधार अब प्रेम नहीं बल्कि आपसी सहमति मात्र बन गई है। आधुनिकता के इस दुष्परिणामों का रेखांकन दिनकर ने किया है। ''दुनिया का जो भाग आधुनिकता के आलोक से सबसे अधिक आलोकित है, वहाँ परिवार समाज की सबसे पवित्र इकाई नहीं है। विवाह का आधार दम्पति का व्रत नहीं, आपसी रजामंदी है। नारियाँ विशेष रूप से रक्षणीय नहीं है, इसीलिए, वे पूजा की भी अधिकारिणी नहीं है। धर्म के व्यर्थ हो जाने से मूल्यों की दीर्घा में जो जगह खाली हुई, उस सौन्दर्यबोध ने आसन जमा लिया और सौन्दर्यबोध का मुखौटा पहनकर दुनिया के मन पर शासन असल में, कामदेव कर रहा है। व्यावहारिक मनुष्य के लिए ईमानदारी कोई अनिवार्य गुण नहीं है। प्रेम भावुक लोगों की बीमारी का नाम है। सिधाई, सच्चाई, वीरता और बलिदान उतने अच्छे नहीं हैं, जितनी अच्छी चालाकी हो सकती है और जब सभी लोग चालाकी से ही जीते हैं, तब वीरता और बलिदान बेवकूफी की बातें नहीं, तो और क्या है? मूल्यों का पचड़ा बेकार है। सबसे बड़ा मूल्य वह है, जिसके सहारे गाड़ी चलती रहती है।''[10]

दिनकर आधुनिक साहित्य की आधुनिकता के पीछे नवीन मनोवृत्तियों और स्वच्छंद मनोदशा का उल्लेख किया है। किसी भी साहित्यकार का साहित्य नवीन विषयों के काराण आधुनिक नहीं होता है बल्कि उसी

मानसिकता में नवीनता होनी चाहिए।

''आधुनिक साहित्य आधुनिक इसलिए नहीं है कि उसके सारे विषय नवीन है। आधुनिक वह इसलिए है कि उसके पीछे काम करनेवाली मनोवृत्ति नवीन है, मनोदशा, मानसिकता और दृष्टि नवीन है। लेखक की दिलचस्पी विषय में न होकर उसे देखनेवाली नई दृष्टि में है और पाठक भी उसी नवीन दृष्टि का प्रेमी होने के कारण इस साहित्य की ओर उन्मुख होता है।''[11] आधुनिकता के कारण साहित्य पर विज्ञान का प्रभाव पड़ा। वैज्ञानिक युग का साहित्य प्राचीन एवं मध्यकाल के साहित्य से पूर्णतः भिन्न है। विज्ञान और टेक्नोलॉजी के प्रचार से साहित्य का परिवेश परिवर्तित हो गया। विज्ञान के प्रभाव से साहित्य का रूपक, बिम्ब, प्रतीक आदि ही नहीं बदले बल्कि उसकी शैली में भी परिवर्तन हुआ है। विज्ञान के सारी सृष्टि को एक यंत्र के रूप में स्वीकृत किया है। ईश्वर की कल्पना मिथ्या मानी जाने लगी। डारविन का 'जीवों की उत्पत्ति' नामक ग्रंथ में मनुष्य को ईश्वर की संतति नहीं मानकर बंदर से विकसित होना घोषित किया। तब मार्क्स आए उन्होंने धर्म, नैतिकता, कला और अध्यात्म आदि मूल्यों को समाप्त कर, स्थापना किया मूल्यों का विकास समाज की अर्थ-व्यवस्था के अनुसार हुआ और सबके बाद फ्रायड का मनोविज्ञान आया। उन्होंने यह सिद्ध किया कि मनुष्य प्रत्येक कार्य अचेतन में दबी अगणित अदम्य वासनाओं की प्रेरणा के कारण सम्पादित करता है। इसको रेखांकित करते हुए दिनकर ने विवेचन किया है।

''डारविन ने मनुष्य से उसका देवत्व छीन लिया था। मार्क्स ने उसकी सदाश्यता की जड़ खोद डाली थी और फ्रायड ने यह सिद्ध कर दिखाया था कि आदमी का अपने को बुद्धिवादी समझना बिल्कुल फालतू बात है।''[12] स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में आधुनिकता का परिदृश्य बदला। कवियों का दृष्टिकोण बदलने लगा। उनकी रचनाओं की शैली में बदलाव आने लगा। यूरोपीय आधुनिकता की प्रवृत्ति के अनुसार भारत में भी बदलाव आया। अतः दिनकर आधुनिकता को गुण मानते हैं, दोष नहीं। उन्होंने भारत में इसकी अनिवार्यता को अपने विचारों के माध्यम से रेखांकित किया है। उन्होंने आधुनिकता, साक्षरता, समानता, नारी-सशक्तिकरण, आर्थिक समानता और वैज्ञानिक विकास पर बल दिया है तथा अंधविश्वास, पाखण्ड, जातिवाद, गोत्रवाद, रूढ़िवादिता, अनुशासनहीनता, उच्छृंखलता आदि पर चोट किया है। दिनकर के आधुनिक भारत की कल्पना समन्वयशील एवं विकासशील है, जो ''राममोहन राय से लेकर महात्मा गाँधी तक भारत के जो भी महान विचारक हुए हैं, उनकी कल्पना यह थी कि भारत को अपनी संस्कृति के सर्वश्रेष्ठ अंश को भी बचाना है और पाश्चात्य संस्कृति के भी सर्वोत्तम भाग को स्वीकार करना है। भारत की विशेषता अध्यात्म और पाश्चात्य जगत् की विशेषता विज्ञानहै। हम इन्हीं दो तत्वों का समन्वय करना चाहते हैं।

''एक हाथ में कलम, एक में धर्मदीप्त विज्ञान
लेकर उठनेवाले हैं धरती का हिन्दुस्तान।।''[13]

सन्दर्भ सूची:-

1. दिनकर रचनावली (खण्ड-8) (सं.) नंदकिशोर नवल और तरूण कुमार, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, (उ.प्र.), 2011, पृ.-196
2. उपरिवत् (खण्ड-8), पृ.-205
3. उपरिवत् (खण्ड-6), पृ.-82
4. उपरिवत् (खण्ड-8), पृ.-190-190
5. उपरिवत् (खण्ड-8), पृ.-195-196
6. उपरिवत् (खण्ड-8), पृ.-203
7. उपरिवत् (खण्ड-8), पृ.-196
8. उपरिवत् (खण्ड-8), पृ.-198
9. उपरिवत् (खण्ड-6), पृ.-82-83
10. उपरिवत् (खण्ड-6), पृ.-86-87
11. उपरिवत् (खण्ड-6), पृ.-105
12. उपरिवत् (खण्ड-6), पृ.-87
13. उपरिवत् (खण्ड-8), पृ.-208-09

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

मानवाधिकारों के लिए महात्मा गांधी के चिंतन की प्रासंगिता

शैलेष मिश्रा

सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शासकीय नवीन महाविद्यालय, सोनहत, जिला – कोरिया, छ.ग.

शोध सारांश:–मानवाधिकार आधुनिक विश्वन की सर्वाधिक लोकप्रिय एवं चर्चित शब्दावलियों में से एक है जो नागरिको के लिए जितना अधिक उपयोगी है राज्य के लिए उतनी ही ज्या दा चुनौतीपूर्ण है।1948 में मानवाधिकार के लिए संयुक्त राष्ट्र की घोषणा किए जाने से लेकर वर्तमान तक विश्व में राजनीतिक विकास में अनेक परिवर्तन हुए हैं लेकिन इस घोषणा का क्रियान्वयन करने में आधुनिक राज्य कितना सफल रहे हैं यह प्रश्न बहुत संतोषजनक उत्तर प्रस्तुरत नहीं करता है और इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि मानवाधिकार की घोषणा तक पंहुचाने वाली परिस्थितियों का विश्लेषण के महत्वक को हम समझें और इस दिशा में महात्मॉ गांधी का चिंतन एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। महात्मॉ गांधी ने साध्य के लिए साधनों की पवित्रता का जो संदेश भारत के स्वाधीनता संग्राम में दिया और अहिंसा के रूप में जो साधन पद्धति विकसित की उसने विश्वस के सभी हिस्सों में राज्यों के विरूद्ध नागरिकों समूहों एवं मानवाधिकार के लिए संघर्षशील नेतृत्व को मार्गदर्शन एवं प्रेरणा प्रदान की है, प्रस्तुद आलेख मानवाधिकारों के प्रश्न को केंद्र में रखकर महात्मॉ गांधी के तत्का्लीन चिंतन की सामयिक प्रासंगिकता का विमर्श प्रस्तुत करता है।

प्रमुख शब्द:–मानवाधिकार, महात्मॉा गांधी औपनैवेशिक शासन, अहिंसा राज्य।

शोध आलेख:–10 दिसंबर 1948 को संयुक्तराष्ट्र के मंच से मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा मानव के राजनीतिक विकास की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण उपलब्धि है जब राजनीतिक़, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृ‍तिक विविधता के होते हुए भी राज्यों के सबसे बड़े एच्छिक समूह ने प्रत्ये क मनुष्य के जीवन एवं उसके विकास की संभावना को प्रभावित करने वाली राजनीतिक व्यवस्था् में मानव गरिमा और आत्मसम्मान को स्वीकार किया एवं उसके लिए कार्य करने का संकल्प लिया। कालांतर में राज्यों् के इस समूह में व्यापक वृद्धि हुई है और वर्तमान में इसमें 190 से ज्यादा देश शामिल हैं। राज्यो के विकास की दृष्टि से यह बहुत लंबी राजनीतिक यात्रा का परिणाम है। इस घोषणा तक पंहुचने में यूरोपीय शक्तियों के औपनेविशिक साम्राज्य,दो दो विश्वयुद्ध,फासीवाद – नाजीवाद जैंसी विचारधारों का उदय एवं अंत, मार्क्सवाद का उदय एवं विस्तादर जैंसे अनेक कारक विद्यमान रहे हैं। इनमें वैश्विक स्तपर पर फैले हुए औपनैवेशिक शासन एवं उसके विरूद्ध विभिन्त्र देशों में चले स्वाधीनता संघर्ष की सर्वाधिक भूमिका है, मानवाधिकार घोषणा ने न केवल राष्ट्र राज्यं की आधुनिक धारणा के विकास में महती भूमिका का निर्वाह किया है बल्कि इन राज्यों के जन समूह को मानवाधिकारों के विकास के लिए आवश्यक परिस्थितियों के विकास के लिए कार्य करने के लिए भी प्रेरित किया है। मानवाधिकार का चिंतन सतत् राजनीतिक जागरूकता की मांग करता है। किसी भी अन्य शासन व्यवस्था की तुलना में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाी मानवाधिकारों के अनुकूल वातावरण को प्रोत्साहित करती है क्योंकि इसमें आलोचना का सत्ता परिवर्तन के आवश्यक तत्व के रूप में स्वीकार किया जाता है। तीसरी दुनिया के अधिकांश देशों में 1950 के दशक के प्रारंभ हुई स्वाधीनता एवं राजनीतिक विकास की यह यात्रा पूर्णतः सफल नहीं रही है और अनेक प्रकार की शासन व्यवस्थाओं के प्रयोग इन देशों में हुए हैं, तीसरी दुनिया के सर्वाधिक महत्वपूर्ण देशों में से एक भारत में लोकतांत्रिक विकास की यात्रा न सिर्फ अनेक अर्थों में सफल रही है बल्कि युरोप एवं पश्चिमी जगत के लिए आश्चर्यजनक भी रही है। तीसरी दुनिया के अनेक देशों की तरह भारत में ब्रिटेन का औपनैवेशिक शासन लगभग 200 वर्षों तक रहा है और जब भारत ने ब्रिटेन से राजनीतिक स्वाधीनता प्राप्त की तो ब्रिटेन की संसदीय शासन व्यवस्था को ही आंशिक संशोधनों के साथ लोकतांत्रिक मॉडल के रूप में अपनाया है। इसलिए भारत की सफल लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थां के बीज भारत के ब्रिटेन के विरूद्ध चलाए गए स्वाधीनता संग्राम में ढूढ़े जा सकते हैं और जब हम भारत के ब्रिटिश औपनैवेशिक साम्राज्य के विरूद्ध संघर्ष की बात करते हैं जो प्रमुख नेतृत्वंकर्ता के रूप में महात्मॉ गांधी की भूमिका सर्वाधिक उल्ले्खनीय हो जाती है। गांधी, जिन्हें डाइटर कॉनराड ने 'ओरिएंटल सेंट' कहा था, बीसवीं सदी के महान राजनीतिक व्यक्तियों में से एक थे, तथा अहिंसक शांतिवाद के सबसे प्रभावशाली समर्थक थे।' महात्मॉ गांधी के नेतृत्व में ब्रिटिश राजनीतिक सत्ता के विरूद्ध जो राजनीतिक संघर्ष भारत में चलाया गया उसकी सबसे बड़ी विशेषता है उसका व्यापक रूप से अहिंसक स्व रूप का होना।' गांधीजी ने अहिंसा को इसके संस्कृत मूल 'अहिंसा' से समझा है। अहिंसा का अंग्रेजी में अर्थ केवल अहिंसा है, लेकिन इसका अर्थ केवल शारीरिक हिंसा से बचना नहीं है। अहिंसा का अर्थ है पूर्ण अहिंसा, कोई शारीरिक हिंसा नहीं, और कोई निष्क्रिय हिंसा नहीं। गांधीजी अहिंसा का अनुवाद प्रेम के रूप में करते हैं।' अहिंसा शोषण के विरूद्ध संघर्ष की भाषा हो सकती है और व्यापक रूप से जनसमूह शासन सत्ताप के विरूद्ध इसका प्रयोग कर सकते हैं महात्मॉ गांधी के राजनीतिक उदय के पूर्व इस विचार को असंभव ही माना जाता लेकिन महात्मॉर गांधी ने न सिर्फ अहिंसा का वैश्विक संदेश सफलतापूर्वक अपने जीवनकाल और साधनापद्धतियों द्वारा प्रदान किया बल्कि आने वाले समय में भी राजनीतिक आंदोलनकारियों को अहिंसा की शक्ति से परिचित कराया इसलिए मार्टिन लूथर किंग, नेल्सन मंडेला से लेकर एक बड़े राजनीतिक वर्ग को महात्मॉ गांधी का चिंतन प्रभावित करता रहा है।' लूथर किंग के अनुसार

गांधीवादी दर्शन 'स्वतंत्रता के संघर्ष में उत्पीड़ित लोगों के लिए खुला एकमात्र नैतिक और व्यावहारिक रूप से सही तरीका था।'विश्व के अधिकांश औपनैवेशिक संघर्ष हिंसात्मक स्वारूप के रहे हैं और वर्तमान में विश्व में तीसरी दुनिया के अनेक देशों में सत्तां का हस्तांतरण एक जटिल चुनौती है। महात्मॉ गांधी के राजनीतिक नेतृत्व में भारत में अहिंसा का राजनीतिक अस्त्रं के रूप में व्यापक स्तर पर प्रयोग द. अफ्रीका में उनके सत्याग्रह के सफल प्रयोगों का विस्तााार था। अहिंसात्म्क आंदोलनों की यह श्रंखला चंपारन, असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन और भारत छोड़ो आंदोलन जैंसे अनेक आंदोलनों में विस्तार पाती है।1920 में चलाए गए पहले व्यापक आंदोलन असहयोग आंदोलन की चौरी-चौरा हिंसा के बाद वापसी महात्मॉ गांधी के सत्याग्रह के संदेश का पहला व्यापक उदाहरण है जब आंदोलन अपने उभार पर था लेकिन महात्मॉ गांधी ने पाया कि समाज औपनैवेशिक सत्ता के विरोध के लिए अहिंसात्मनक संघर्ष के लिए पूरी तरह तैयार नहीं है और इसलिए लोकप्रिय मत के विरूद्ध जाकर उन्होंने इसकी वापसी का निर्णय लिया। सत्याग्रह सत्य के लिए आग्रह है और सत्यो के साधक के लिए यह आवश्यक है कि वह निरंतर आत्मविश्लेषण करते हुए सत्य के मार्ग का अवलंबन करे।' सत्याग्रह निष्क्रिय प्रतिरोध से इस प्रकार भिन्न है कि यह उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी ध्रुव है। उत्तरार्द्ध को कमज़ोर लोगों के हथियार के रूप में माना जाता है और इसमें अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के उद्देश्य से शारीरिक बल या हिंसा के उपयोग को बाहर नहीं रखा जाता है, जबकि पूर्व को सबसे मजबूत लोगों के हथियार के रूप में माना जाता है और इसमें किसी भी आकार या रूप में हिंसा के उपयोग को बाहर रखा जाता है 'सत्याग्रह के मार्ग में साधक को निरंतर आत्मसुधार करते हुए स्वयं को विश्व हित के साथ एकाकार करना होता है।'सं.रा.संघ महात्मॉ गांधी के अहिंसा संदेश की वैश्विक शांति के लिए प्रासंगिकता को स्वीकार करता रहा है।' मानवाधिकार के लिए आवश्य क पर्यावरण की जब बात होती है तो प्रथम आवश्यकता संवाद की होती है और महात्मॉ गांधी की अहिंसा इस संवाद के लिए आवश्यक पर्यावरण को तैयार करती है। संभवतः विश्व में भारत अकेला ऐसा देश है जहॉ ब्रिटेन से राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद ब्रिटेन के विरूद्ध किसी भी प्रकार के स्थापित आंतरिक द्वेष की भावना नहीं पायी जाती है। महात्मॉं गांधी का स्पष्ट मत था कि विरोध अन्याय का होनो चाहिए और प्रत्येंक व्य क्ति में सत्य अहिंसा के मार्ग पर चलने की शक्ति विद्यमान है,जब तकर सत्याग्रह के मार्ग के सैनिक अपने आंतरिक दोषों से मुक्त नहीं होते है तब तक उनके सत्याग्रह और अहिंसा पर सफलता पूर्वक चलने की संभावना कम रहती है। 'महात्मॉ गांधी विश्व के सर्वाधिक प्रभावशाली एवं प्रेरक व्यक्तित्वों में से एक हैं 'और उनकी विश्व को सर्वाधिक महत्वपूर्ण देन हैं नागरिकों को राज्य सत्ता् के विरूद्ध संघर्ष् का अहिंसात्मक मार्ग। आधुनिक राज्य शक्ति के आधार पर खडे हुए हैं और हिंसा इस शक्ति का अंतिम प्रयोग है महात्मॉ गांधी का अहिंसा मार्ग राज्य की हिंसा की शक्ति का नागरिकों पर प्रयोग बहुत कठिन बना देती है और राज्यह के समक्ष औचित्यपूर्णता का संकट खडा हो जाता है। कोई भी आधुनिक राज्य औचित्यपूर्णता के प्रश्न पर अपने आप को आलोचना से बचाना चाहेगा और इसीलिए सभी राज्य अपने समस्त संसाधनों के प्रयोग से अपने कार्यों को औचित्य का जामा पहनाते हैं और स्वयं को जनहित का प्रतिनिधि माने जाने का दावा करते हैं। आधुनिक राज्यों के लिए हिंसात्मंक विरोध से निपटना अहिंसात्मक विरोध की तुलना में बहुत ज्यादा आसान है जब तक कि उसमें राज्यो की सुरक्षा के लिए संकट नहीं है जबकि अहिंसात्म्क विरोध प्रचार के साधनों के विकास के कारण राज्यं एवं सरकार के समक्ष संवाद की दुविधा उत्प न्नस करता है।' मानव समाज ने सहस्राब्दियों से जो नियंत्रण और संतुलन विकसित किया है, वह अब खत्म हो रहा है, क्योंकि प्रौद्योगिकी इतनी तेजी से विकसित हो रही है कि संस्थाएं न तो इसके प्रभाव को समझ पा रही हैं और न ही इसे विनियमित करने के लिए समय पर प्रतिक्रिया दे पा रही हैं', इंटरनेट-सोशल मीडिया के विकास ने राज्यों के समक्ष नागरिकों के दमन को कठिन बना दिया है और तकनीकि विकास की यह यात्रा नागरिकों को राज्यो के दमनकारी स्वरूप के विरूद्ध निरंतर मजबूत बना रही है और राज्यो को निरंतर नियंत्रण के साधनों के विकास के लिए कार्य करना पड़ रहा है।

उपनिवेशवाद के विरूद्ध विभिन्न देशों में चलाए गए स्वाधीनता संघर्ष वास्ताव में मानवाधिकारों के लिए चलाए गए पहले व्यापक जागरूकता आंदोलन हैं। अमेरिकी क्रांति(1776), फ्रांसीसी क्रांति(1789) हो या सोवियत रूस की क्रांति(1917) या विश्व की अन्य क्रांतियॉ, इनके प्रभाव बहुत व्यापिक रहे हैं और समस्त विश्व में इन क्रांतियों के संदेश प्रसारित हुए हैं और समस्त विश्व में नागरिक अधिकारों के लिए, सामाजिक न्याय के प्रश्न के लिए नागरिकों एवं राजनीतिक नेतृत्व को संबल प्राप्त हुआ है। जब एक राज्य में औपनैवेशिक शक्ति से स्वा्धीनता की बात राजनीतिक नेतृत्व द्वारा की जाती है तो वह नेतृत्वं अपने समाज के सभी नागरिकों एवं वर्गों के की स्वाधीनता-आत्मसम्मा्न के प्रश्न की अवहेलना नहीं कर सकता। यही कारण है कि हम देखते हैं भारत में स्वा्धीनता आंदोलन के प्रश्न के साथ ही नागरिक अधिकार, जमींदारी सुधार, कृषि सुधार सामाजिक न्याय, वंचित वर्गों के लिए अधिकार, अल्पसंख्यक अधिकार आदि अनेक प्रकार के प्रश्न साथ साथ चलते हैं और महात्मॉ गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस एवं अन्य संगठन अपने अपने स्तनर पर ब्रिटिश सरकार से बात करते हैं एवं इन प्रश्नों पर आपसी संवाद करते हैं। नागरिकों के मध्य विद्यमान सामाजिक आर्थिक एवं अन्यत प्रकार की सभी असमानता को दूर किए जाने की मांग के बिना समाज के सभी वर्गों को औपनैवेशिक सत्ताव के विरूद्ध संघर्ष के लिए संगठित नहीं किया जा सकता है। समाज के सभी वर्गों की एकता का यह प्रश्न मानवाधिकार के चिंतन को भी स्वाधीनता आंदोलनों के केंद्र में खड़ा कर देता है। भारत के स्वा्धीनता आंदोलन में इसीलिए नेहरू रिपोर्ट (1928) एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है जब नागरिकों के लिए मौलिक अधिकारों की बात की गई।' ग्रैनविले ऑस्टिन ने अपनी पुस्तक इंडियाज कॉन्स्टिट्यूशनः कॉर्नरस्टोन ऑफ ए नेशन में इस बात पर प्रकाश डाला है कि रिपोर्ट का मौलिक अधिकार वाला भाग 'संविधान [भारत, 1950] के मौलिक अधिकारों का निकट पूर्ववर्ती था... 19 उप-खंडों में से 10 पुनः प्रकट हुए, भौतिक रूप से अपरिवर्तित, और नेहरू के तीन अधिकार निर्देशक सिद्धांतों में शामिल किए गए'।

राज्यों के लिए अपने नागरिकों को मानवाधिकार की उपलब्धता वर्तमान में सबसे बड़े वैश्विक प्रश्नों में से है और इसमें कई स्तरों पर चुनौतियॉ विद्यमान हैं एक तरफ असमान आर्थिक विकास की चुनौती है तो दूसरी तरफ समाज मं विद्यमान सामाजिक असमानता की स्थिति है। महात्मॉ गांधी ने अपने राजनीतिक सामाजिक आर्थिक चिंतन में न सिर्फ इन सभी प्रश्नों को शामिल किया वरन् समाज के सभी वर्गों की स्वाधीनता संग्राम में सहभागिता हो इसके लिए भी प्रयास किया। महात्मॉ गांधी निरंतर सत्याग्रह की बात करते हैं और इसी सत्यांग्रह के लिए अहिंसा की साधन पद्धति के रूप में समाज के सभी

वर्गों के लिए यह संभव हो पाता है कि वे अपना योगदान अपनी क्षमता एवं शक्ति के अनुसार स्वतंत्रता आंदोलन में प्रदान कर सकें। महात्मॉ गांधी के नेतृत्वा में भारत का राष्ट्रीय आंदोलन केवल राजनीतिक उद्देश्यों तक सीमित नहीं थी बल्कि सामाजिक आर्थिक जागरण एवं जीवन शैली में सुधार के सभ पक्षों तक विस्तृत था। किसी भी समाज में होने वाले परिवर्तन एक क्षेत्र तक ही सीमित नहीं रहते हैं बल्कि जीवन के सभी क्षेत्रों में परिवर्तन की स्थिति विस्ता रित होती है। महात्मॉ गांधी द्वारा सत्ता के विरोध एवं स्वतंत्रता एवं अधिकारों की मांग के लिए जो अहिंसात्मक संघर्ष पद्धति विकसित की गई उसने कालांतर में वैश्विक स्तर पर शोषित समाज के लिए समर्पित नेतृत्व को प्रभावित किया है और उनका मार्गदर्शन किया है। भारतीय समाज में पुरूष प्रधान सामाजिक स्थिति रही है एवं इसके साथ ही समाज में जातिवादी उंच नीच की स्थिति ने समाज के एक बहुत बड़े वर्ग के विकास की संभावना को लंबे समय तक बाधित रखा है। महात्मॉ गांधी ने अपने राजनीतिक-सामाजिक चिंतन में महिलाओं के एवं समाज के कमजोर वर्गों के अधिकारों के लिए सतत् प्रयास किया और महात्मॉ गांधी के इस चिंतन ने भारतीय संविधान के निर्माण एवं उसके क्रियान्वयन के स्तसर पर भारत के राजनीतिक नेतृत्व को लगातार प्रभावित किया है और भारतीय राज्ए के लोककल्याणकारी स्वरूप को जनता के कमजोर वर्गों के लिए कार्य करने के लिए प्रभावित किया है। महात्मॉ गांधी का स्व राज राष्ट्रीय स्तनर तक सीमित नहीं है बल्कि ग्राम स्वराज तक विस्तृत है 'महात्मॉ गांधी के अनुसार स्वतंत्रता की शुरुआत नीचे से होनी चाहिए। इस प्रकार, हर गांव एक गणतंत्र होगा जिसके पास पूर्ण शक्तियाँ होंगी।' भारतीय चिंतन परंपरा में सर्वे भवन्तु सुखिनः एक स्था पित विचार रहा है और औपनैवेशिक सत्ताम के विरोध में महात्मॉ गांधी का चिंतन इस विचार को पुनः पल्ल वित एवं पोषित करता है जब महात्मॉ गांधी कहते हैं कि धरती विश्वं की समस्तं नागरिकों की आवश्यकता को पूरा कर सकती है लेकिन एक व्यक्ति के लालच को पूरा नहीं कर सकती। महात्मॉ गांधी के चिंतन में सत्याग्रह-स्वराज-अहिंसा-ट्रस्टीशिप सिद्धांत-सामाजिक समरसता आदि सिद्धांत अलग अलग नहीं है बल्कि एक ही चिंतन प्रणाली के विभिन्नक स्तर हैं इसलिए महात्मॉ गांधी के चिंतन को यदि हिंद स्वराज के स्थानि पर विश्व स्वराज कहा जाए तो शायद महात्मॉ गांधी भी इससे सहमत होंगे।

संदर्भ सूची :-

1. Gandhi and World Peace: A Federation of the World | Peace, Nonviolence & Conflict Resolution | Articles on and by Mahatma Gandhi. (n.d.). https://www.mkgandhi.org/articles/gandhi-and-world-peace.php
2. What is Satyagraha? | The Voice of Truth | The Selected Works of Mahatma Gandhi. (n.d.-b). https://www.mkgandhi.org/voiceoftruth/satyagraha.php
3. Gandhi, Mohandas K. (n.d.). The Martin Luther King, Jr. Research and Education Institute. https://kinginstitute.stanford.edu/gandhi-mohandas-k#:~:text=A%20testament%20to%20the%20revolutionary,(Papers%204%3A478) .
4. Indian National Congress. (2023, January 6). Indian National Congress. https://inc.in/congress-sandesh/tribute/gandhi-and-congress-party
5. What is Satyagraha? | The Voice of Truth | The Selected Works of Mahatma Gandhi. (n.d.). https://www.mkgandhi.org/voiceoftruth/satyagraha.php
6. United Nations. (n.d.). International Day of Non-Violence | United Nations. https://www.un.org/en/observances/non-violence-day
7. Mahatma Gandhi: Imperishable gift to humanity| National Portal of India. (n.d.). https://www.india.gov.in/spotlight/mahatma-gandhi-imperishable-gift-humanity#tab=tab-1
8. Iyer-Mitra, A., & Iyer-Mitra, A. (2021, June 4). State vs social media. Open the Magazine. https://openthemagazine.com/cover-stories/state-vs-social-media/
9. Constitution of India. (n.d.). Nehru Report (Motilal Nehru,1928) Archives - Constitution of India. https://www.constitutionofindia.net/historical-constitution/nehru-report-motilal-nehru1928/
10. Gandhi and the Indian Constitution: Realising the idea of a village-based polity | Relevance of Gandhi Articles?: On and by Gandhi. (n.d.).
11. https://www.mkgandhi.org/articles/Gandhi-and-the-Indian-constitution.php#:~:text=Gandhi%20represented%20India%20in%20the,Congress)%20to%20discuss%20constitutional%20reforms.
12. Balch, O. (2013, February 18). The relevance of Gandhi in the capitalism debate. The Guardian. https://www.theguardian.com/sustainable-business/blog/relevance-gandhi-capitalism-debate-rajni-bakshi#:~:text=%22The%20world%20has%20enough,quarters%20of%20a%20century%20ago.

शिवलीलामृतमहाकाव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. देवाशिषशमिश्रः

सहायकाचार्यः, संस्कृविभागः, फकीरमोहनविश्वविद्यालयः, व्यासविहाः, वालेश्वरम्, ओडिशा

शोधसारांशः-अग्निचित पंडित नित्यानंद कृत शिवलीलामृत महाकाव्य 1978 में ओडिशा राज्य के पर्यटन, सांस्कृतिक व्यापार और उद्योग निर्देशालय, भुवनेश्वर से श्री भगवान पण्डा द्वारा प्रकाशित। नित्यानन्द के चतुः काव्य जो की अत्यन्त प्रसिद्धि लाभ किया है। यथा. शिवलीलामृतम् श्रीकृष्णलीलामृतम्, नीलाद्रिनाथशतकम् और आरतध्वंसनम्। इन चारों में से उपरोक्त विभाग ने तीन को प्रकाशित किया है। इनमें से भगवान शिव पर आश्रित शिवलीलामृतम् महाकाव्य समस्त शैव भक्तों तथा साहित्यिकों के द्वारा अनुगृहीत हुआ है। जो कि ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से वहुत महत्त्वपूर्ण काव्य रूप में परिगणित है। इस दश सर्ग विशिष्ट महाकाव्य प्राचीन काव्य एवं पुराण को अनुसरण कर के शिव तथा पार्वती उभय का प्रणयरीति को अत्यन्त माधुर्य शैली में वर्णन किया गया है। एतत् अतिरिक्त इसमें संगीतशास्त्र का वहुत सठीक माध्यम से प्रयुक्त हुआ हैए जो की संगीतानुरागी निमन्ते अतीव आकर्षणीय काव्य है। इस काव्य में कवि नित्यानन्द अपने साहित्यिक पारदर्शिता को दर्शाते हुए विविध अलङ्कार, रस इत्यादि का समिचीन रूप में प्रस्तुत किए हैं।

उत्कलीय परम्परा की गरीमा को प्रतिष्ठित करते हुए इस काव्य में गीतगोविन्द शैली आधारित प्रबन्ध संगीतों का समावेश्टित हुआ हैए जो की भक्त जनों निमन्ते भक्ति मार्ग में अग्रसर हेतु प्रेरणादायी है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह काव्य अत्यन्त चमत्कारी हैए क्योंकी इसमें वर्णित एकाम्रक्षेत्र का महत्व तथा तत् पार्श्ववर्ती स्थल ऐतिहासिकों को आकर्शित करता है। उपरोक्त तथ्यों आधारित कर यह शोध प्रबन्ध चरित्र-चित्रण,इसके संगीतिक मूल्यबोध, शैली और अन्य बिंदुओं की सूक्ष्म आलोचना प्रस्तुत करता है।

कूटशब्दः-महाकाव्यम्, शैवलीला, उपासना, गीतगोविन्द, श्रीजगन्नाथ, परमभागवत, परमवैष्णव, गंगवंश।

प्रस्तावनाः-अग्निचित पंडित नित्यानंद का महाकाव्य शिवलीलामृत 1978 में ओडिशा राज्य के पर्यटन, सांस्कृतिक-व्यापार और उद्योग निर्देशालयए भुवनेश्वर द्वारा सम्पादक श्री भगवान पांडा द्वारा प्रकाशित किया गया है। सर्ग के अन्तिम पर्याय में लेखक का नाम नित्यानन्द उल्लेख किया गया है। उदाहरणस्वरूप- इति श्रीमदग्निचित्रित्यानन्दपण्डितकृते शिवलीलामृतमहाकाव्ये पार्वतीसम्भवो नाम प्रथमसर्गः। पुस्तक के अंतिम छंद में कवि का नाम भी शामिल है, यथा- 'नित्यानन्दकवेर्निवेदितमिमं संशोधयध्वं बुधाः।' नित्यानंद ने स्वयं इस महाकाव्य की रचना की और इसे अपने संरक्षकए राजा गदाधर मांधातु (1657-89) को समर्पित किया। इनका समय 1660-1761 ई. के मध्य है। नित्यानन्द कृत चतुः महाकाव्य जो की संस्कृत साहित्य को रुद्धिमन्त करता है। यह चार महाकाव्य यथा- शिवलीलामृतम्, श्रीकृष्णलीलामृतम्, नीलाद्रिनाथशतकम् और आरतध्वंसनम् के रूप में प्रसिद्ध है। सौभाग्य से ओडिशा सांस्कृतिक-व्यापार विभाग ने उनमें से तीन को प्रकाशित किया है। श्रीकृष्णलीलामृतम् और नीलाद्रीनाथशतकम् से ज्ञात होता है कि कवि श्रीजगन्नाथ का भक्त और वैष्णव सम्प्रदाय के थे। कवि ने भगवान महादेव को संतुष्ट करने के लिए एक काव्य की भी रचना की। उनके संरक्षक गदाधर जो की नयागड के निकटवर्ती शरणकुल के प्रसिद्ध लडुकेश्वर शिव के उपासक थे।

दीनानाथदयावशम्वदतया ख्यातः क्षितौ जग्मुषो
देशे यस्य वरीवृतीति भगवान् श्रीलड्डुकेशः शिवः।
तीव्राराधनसुप्रसन्नमनसाङ्गल्यमुन्मीलय.
त्रित्यंराज्यधुरधन्धरत्वमुखरीकुर्वाण एष प्रभुः।।'[1],

नित्यानंद ने अपने समर्थक को संतुष्ट करने और भगवान शिव के प्रति अपनी भक्ति का संचार करने के लिए यह काव्य की रचना की है। उल्लेखनीय है कि कवि ने 'हरिहर' की उपासना पद्धति को स्वीकार किया है। हरिहर की पूजा का विधान समन्वयवाद का प्रतीक है। पार्वती एक अत्यंत प्राचीन देवी हैं और शिव एक प्राचीन एवं प्रसिद्ध देवता हैं। पार्वती को दुर्गा, अंबिका, चंडिका और अन्य नामों से पूजित होते हैं, जबकि शिव को रुद्र और पशुपति जैसे नामों से पूजा जाता है। इस देश में शैव और शाक्त परंपरा बहुत प्राचीन है। वैदिक देवता विष्णु धीरे धीरे श्रीकृष्ण को उपासना किया गया है और लक्ष्मी का सार भी राधा के सार में स्थापित हो गया है। धीरे धीरे शैव और वैष्णव धार्मिक सिद्धांतों के बीच सामञ्जस्य स्थापित हो गया। वैष्णव पुराण मेंए जिसमें कृष्ण की संपूर्ण लीलाएँ शामिल हैं, उसमें भगवान शिव का भी लीलाएँ प्राप्त होता है, जैसे-'ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वदेहीनाम्'[2], 'रुद्रं त्रैलोक्यैकगुरुं नमामि शिरसा मुनिः'[3], इत्यादि। वहां शिव को श्परमभागवतश् और श्परमवैष्णवश् के रूप में वर्णित किया गया है। हरिहररू पूजा का मूल सूत्र वहीं है। यह परंपरा उत्कल में गंगवंश के शासनकाल के समय में प्रसारित हुआ था। भगवान शिव के मंदिर में भगवान विष्णु तथा भगवान विष्णु के मंदिर में भगवान शिव एक साथ विराजते थे और पूजा-अर्चना की जाती थी। भुवनेश्वर के भगवान लिंगराज की पूजा हरिहर मंत्र द्वारा निर्धारित है, जिसकी पूजा उत्कल में कई स्थानों पर एक साथ की जाती है।'[4], कवि नित्यानन्द इसी मत के समर्थक थे। कवि गीतगोविन्द की शैली का अनुसरण करते हैं, परन्तु राधा और कृष्ण की लीलाओं के व्यतिरेक वह महाकाव्य शिवलीलामृत में पार्वती और शिव की लीलाओं का वर्णन करते है। 'गीतगिरीश', 'गीतदिगम्बर', 'गीतगंगाधर', और 'गीतशंकर' जैसे ग्यारह ग्रंथ भी हैं।'[5], यह शोध प्रबन्ध साहित्यिक मूल्याङ्कन पर आश्रित होकर चरित्र-

चित्रण, इसके संगीतिक मूल्यबोध, शैली, रस, अलंकार और अन्य बिंदुओं की सूक्ष्म आलोचना प्रस्तुत करता है।

कथानक का मूलाधार:–महाकाव्य शिवलीलामृत का कथानक विभिन्न पौराणिक आख्यानों से एकत्र किया गया है। महाकाव्य की समीक्षा से ज्ञात होता है किए कवि ने निम्नोलिखित पाठों से प्रेरणा ली। उदाहरण उदाहरणस्वरूप शिवपुराण का उत्तरखंड, कुमारसंभवम्, सारला–महाभारत का वनपर्व, एकाम्रपुराण, कपिलसंहिता और स्वर्णादिमहोदया।

ग्रन्थ का साहित्यिक विश्लेषण:–शिव की लीलाएँ अमृत हैं, या जिस महाकाव्य में शिव की लीलाओं का अमृत वर्णित है, उसे शिवलीलामृत महाकाव्य कहते हैं। कवि ने स्वीकार किया कि यह एक महाकाव्य है। यहां गीतगोविन्द शैली मुख्य रूप से अपनाई गई है। श्री राधा और कृष्ण की पारंपरिक रासक्रीडा का वर्णन करने के व्यतिरेक, कवि यहाँ अपने संरक्षक और पूज्य देवता नटराज शिव की लीलाओं और प्रसन्नता का विस्तार से वर्णन करते हैं। यह महाकाव्य में भगवान शिव की लीलाओं को आधारित करके दससर्ग में समावेश किया गया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह कविता अपने इतिहास, नायक, नायिका, रुचि, ऋतु, विवाह, पुत्रोदय, युद्ध, चंद्रोदय, सूर्योदय, जल क्रीड़ा, नदियों, झीलों, तीर्थों, सर्ग में प्राप्त छन्दों का प्रयोग, भविष्य के सर्ग की आधार पर महाकाव्य की उत्कृष्टता को धारण करता है। विभिन्न राग और लय निबंधों के संयोजन और संगीतात्मकता की उत्कृष्ट भावना के कारण, शिवलीलामृत एक गीतात्मक महाकाव्य या संगीतमय महाकाव्य रूप में प्रतीति होता है।

1. नायक और नायिका:–काव्य के नायक लीलामय भगवान शिव हैं। यहाँ भगवान की धीरोद्दात गुण का प्रस्फुटित हुआ है। वह कैलासाधिपति, महायोगी तथा महेश्वर हैं। वह रूपवन्त कन्दर्प को जलाकर राख कर दिया। वह पूर्व में सुंदर पार्वती की प्रेम को अस्वीकार करदेते हैं और अनन्तर उनकी प्रेम की गहराई के विषय में जिज्ञासा रखते हैं। तपस्वी भगवान शिव, पार्वती की तपस्या से संतुष्ट होकर उनसो विवाह करने की इच्छा रखते हैं। वह पार्वती को अपने शरीर का आधा भाग दे देते हैं। नटवर चन्द्रमौली ब्रह्मचारी की भी धारण करते हैं। ऐश्वर्यशाली भगवान महेश्वर अपने विवाह समारोह के लिए सभी देवताओं और यजमानों के साथ बड़ी धूमधाम से हिमालयी शहर में आते हैं। कार्तिक के जन्म के बादए संहारक रुद्र अनजाने में अपने पुत्र, द्वारपाल को मार देते हैं और पार्वती के अनुरोध पर, वह उसे जीवन देते हैं और उसे 'गणपति' (गणेश) नामसे सभी जानते हैं। यह शापित जया की इच्छा पूरी करते हैं। अपने प्रिय की इच्छाओं के वशीभूत होकर, वह कभी हिमालय की नगरी में, कभी काशी में, कभी अयोध्या में और कभी एकाम्रतीर्थ में निवास करते हैं। इससे प्रियतम के मन की पीड़ा दूर हो जाती है। वह कीर्ति और वासा की हत्या के लिए सहमति देता है। उन्होंने बिंदुसागर का निर्माण किया है। वह पार्वती और अन्य महिलाओं के साथ रास–लीला करते हैं और एकाम्रतीर्थ के सुगंधित जल में पानी के साथ खेलते हैं। भुवनेश्वर में लिंगराज मन्दिर शिव मन्दिर के रूप में विश्वप्रसिद्ध है। इस महाकाव्य में उनका प्रयोग भीमकांत के रूप में किया गया है। वह बहुत क्रोधित रुद्र हैं, फ्रि भी अपनी लीलाओं में वे शांत, प्यारे और आकर्षक हैं। वे अपने भक्तों के अधीन हैं, दीर्घकाल तक संतुष्ट रहने वाले, अत्यंत बुद्धिमान, ज्ञान देने वाले, योगी, परम दयालु और परम वैभवशाली देवताओं के स्वामी हैं। वह लंबे समय तक सभी देवताओं, मनुष्यों, गंधर्वों और किन्नरों द्वारा पूजित थे और लंबे समय तक शुभता से परिपूर्ण थे। इस महाकाव्य के नायिका पार्वती है। वह रानी मेनका और पहाड़ों के राजा हिमालय की सबसे प्रतिष्ठित बेटी हैं। वह एक मुग्धा नायिका के रूप में इस काव्य में प्रसिद्ध है। वह अतुलनीय सौन्दर्य की धनी युवती थी एवं उनके भाई का नाम मैनाक था। अपने पिछले जन्म में, उन्होंने अपने पति भगवान शिव को दक्ष की पुत्री के रूप में पाया था। नारद के आदेश के अनुसार, उसने मन ही मन भगवान शिव को अपने पति के रूप में चुना। मदन की राख को देखकर, उसने अपनी राज संपत्ति त्याग दी और 'तपसा किं न साध्यते' के आदर्श के अनुसार अपनी सखिओं के साथ तपस्या की। एकांत के प्रति उनकी भक्ति के कारण वे उनकी तपस्या के लिए आदर्श स्थान बन गए। वह पतिविहीन हो गयी। साधु–संत उससे मिलने आते थे। भगवान शिव, जो छद्मवेश में थे, उनके निंदनीय शब्दों के कारण भी वह उनसे नजरें नहीं चुरा पाईं। अपनी तपस्या के बल पर उन्होंने भगवान शिव को प्राप्त कर लिया और उनकी अर्धांगिनी बन गई। यह उनकी कर्तव्यनिष्ठा एवं दृढ़ निष्ठा का परिचायक है। उनके एकाग्रचित्त अभ्यास ने उसे एक दुर्लभ पुरस्कार दिया। गौरवशाली भगवान शिव के साथी के रूप में, उन्होंने देवताओं की सेना के सेनापति कार्तिकेय को जन्म दिया। पार्वती अपने शरीर के प्रति आकर्षण से एक बच्चे को जन्म दिया और भगवान शिव की दया से उसे भगवान गणेश नाम से प्रसिद्धि मिली। वह अपने पति के साथ काशी में रहती हैं और अकाल और भुखमरी पर काबू पाकर अन्नपूर्णा के नाम से जानी जाती हैं। जब वह अपनी परिचारिका मित्र की दूषित मनोदशा से परिचित हुआ, तो उसने उसे शाप दे दिया। यह सुनने के बाद भी कि उनके पति शिव ने जया (सत्यवती) की इच्छा पूरी की है और उन्हें दो बेटे दिए हैं, उन्होंने उन्हें बधाई दी। यह उनके उदार हृदय का परिचय है। जया ने नंदी और भृंगी नामक दो पुत्रों को अपने पुत्र के रूप में गोद लिया एकम्रतीर्थ में, लस्यामयी देवी ने एक गोपालिनी वेश की में अपने स्वामि की पूजा की। अपने जादू की शक्ति से अपने स्वामी की अनुमति से उसने प्रसिद्धि को नष्ट कर दिया। अपने प्रेमी से अलग हो चुकी पार्वती के भावों से उनके पति के प्रति गहरी भक्ति और उनकी उन्नत सौन्दर्य चेतना का पता चलता है। उनकी तृषार्त बुझाने के लिए एक झील बनाई गई वह अपने पति के साथ गन्धवती के तट पर विचरण कर रही है। वह अन्य स्त्रीयों के साथ भगवान शिव की महान लीलाओं का आनंद लेती है। वह रेत के लिंग की पूजा करते हैं। सब कुछ उसकी नेक भावना का द्योतक है।

2. रस :–इस काव्य में मुख्य रस रूप में श्रृङ्गार रस को स्वीकार किया गया है। वीररस और शांतरस को गौण के आधार पर गृदीत हुआ है। श्रृङ्गार रस पार्वती और शिव के मिलन में, जया के साथ महान भगवान के संभोग के वर्णन में, एकामक्षेत्र में महारास की रचना में, जलक्रीड़ा में और देवी की घटना में पूरी तरह से प्रकट होता है। श्रृङ्गार रस का अतीव चमत्कार वर्णन, यथा–

अभिमतनायकस्य सङ्गसुखापि करणे कलं कलयन्तम्।
अभिनवं दधती मधुरं न.न.नेति कृतापि समिव निवसन्तम्।।'[6],

अन्यत्र.

नमयसि किमपि मुखं रुचिरम्।
लिखसि भुवं च नखेन चिरम्।।'[7],

अथवा महारास के वर्णन में.

काचन मनसिजविभ्रमशिथिलितसकुसुमकुन्तलभारा।
चञ्चलकनकघटस्तननिपतितवर्त्तुलनिस्तुलहारा।
रासे पुररिपुणा सह विललास निपुणा।।'[8],

श्रृङ्गार रस अनुपयुक्त आलम्बन और उद्दिपन विभाव सह अनुभाव एवं व्यभिचारी भावनाओं का एक संयोग होता है। श्रृङ्गार रस, माधुर्य और गुणों

के अनुकूल शब्दों का प्रयोग भी ध्यान देने योग्य है। जैसा.
ततः कुञ्जे कुञ्जे नवकुसुमपुञ्जे विरचितः
स्वतश्चचामीकरनिकररोचिरुचिरया।
पराधीनस्येव स्मरनिगमपारङ्गमतया
या शम्भोरासीद्वतविधिसम्भोगललितम्।।'[9],
पुनश्चमञ्जुलतरवञ्जुलदरदलितललितसुमनसम्
मृदुलगीतमधुपपीतकुसुममधुरमधुरसम्।
विकचकुन्दसुन्दरकीर्तिवितत शोभनम्
लोकय जन नयन मदन.मुदुपतिमति लोभनम्।।'[10],

3. प्रबन्धसङ्गीतम्ः-शिवलीलामृतमहाकाव्य में 40 प्रबंधन गीत 20 रागों और 11 लय में निबद्ध हैं। यहां कल्याण, आहारी, मुखवारी और मारू जैसे रागों का नया प्रयोग किया गया है। इसमें अड्ड, आड्डी, कुड्डक, सरिमान्देढी, पडी और मठादि जैसी लय का नया प्रयोग हुआ है। कवि नित्यानंद ने संगीत के अनुशासन में स्वतंत्र पारदर्शिता प्राप्त की है। शिवलीलामृतमहाकाव्य में अपने कृती में उन्होंने झम्पक ताल, भैरव, कामदी, वसंत, मंगला और गुज्जरी जैसे रागों का विशेष उपयोग किया है। सप्तम सर्ग के उनतीसवें (29वें) निबंध में कवि सुडप्रबन्ध, निःसारी, मन्ठ, सिंहनन्दन, झम्पक, त्रिपुटान्तरायति, अड्ड, सप्तकला, दढीपडी, ढेंकी (पंचकला), सारिमान, कुड्डक, चाचपुट और नलकूवर तालों का व्यवहार को दर्शाता है। प्रबंध गीत सर्वत्र अष्टपदी वाले नहीं होतेए कहीं-कहीं दसपदी वाले भी मिलते हैं। प्रबंध गीतों की भावनाएँ बहुत सूक्ष्म हैं और भाषा सुकोमल और कानों के लिए मधुर है, क्योंकि यह संगीत का विषय है। उदा-

दलितललितकुङ्कुमरसचर्चितमङ्गरागम्
सघनसारगन्धसारलम्भितपरभागम्।
यवतीततिरिहजनयति भृशमुपचितकामम्
ध्यायति हृदि दयितसततसङ्गमभिरामम्।।'[11],
अथवा
दर्शय वदनसुधाधरविम्बम्। नाशय हृदयतिमिरमविलम्बम्।
मधुरमधरमधुपाययकामम्। पूरय नो न चिरादिव कामम्।।'[12],
पुनश्च-
सुकुसुमपुञ्जसुषमपुञ्जमन्दमलयमारुतम्।
मण्डयदलममलपूतमेकचूतकाननम्
चण्डिकिरणखण्डनरुचिरुचिरतरदिगाननम्।।'[13],

प्रथमसर्ग के पहली गाथा में नटराग पर आधारित 'मान' का रूप निम्न प्रकार का प्रतीत होता है, यथा-

1. सा सा सरिगमरिगम पधनसि रिगनिगमपधनिमपधस पसनिसरिग। दूसरे गाथा गीत में गुज्जरी राग पर आधारित मान का स्वरूप इस प्रकार है।

2. सा सा सारिगम रिगमरि गमपधनि मगपरिपधपनि सा सा सा।

देश नामक राग पर आधारित चौथी गाथा में इस प्रकार है।

3. सा सा रिगमरि गम पधनि निसा निगमग सा सा सा।

सातवे प्रबन्ध में भी यही बात है। इसी तरह तालों के भी निपुणता प्राप्त होता हैं। प्रथम प्रबन्ध में, दितलाधारित वर्णन का इस प्रकार है-

क. पझेक्रिणे धां धां धुग धुग धौ कट द्रें कं तिदक् दिक् ता तेनां तेनां तेनां तेना तेना तेना तेना।

द्वितीय प्रबन्ध में, यति ताल पर आधारित, जैसे-

ख. त्रिपुट-थाङ्ग थोङ्ग द्रिकिद्रिमिङ्कटे थो। क्रिणां क्रिणां सा सा सा।

पुनः तेना तेना तेना ते तेना तेना तेना तेना तेना इआ।

चतुर्थ प्रबन्ध मेंए सारिमन-मण्ठताल पर आधारित उल्लेख है, उदाहरण के लिए-

'झक्रेण क्रिटि द्रिमिङ्कट तेना इआ'।

इस प्रकार सप्तम प्रबंध में, अड्डताल पर आधारित गीत प्राप्त होता है। प्रथम सर्ग के द्वितय प्रबन्ध में भोग को 'ध्रुवपद' शब्द से निर्देशित किया गया है। अष्टम प्रबंध के अंतिम भाग में कवि नित्यानंद ने अपने प्रबंध को 'ललित-स्वर-पाट-तेना-ज्ञानकरागबन्धं शङ्करप्रियङ्करं प्रबन्धं सहृदयानन्दम्' ्के रूप में आख्यायित किये हैं। दसम सर्ग के षष्ठ श्लोक में, कवि प्रबंध को 'पाट-ताल-स्वर- विरुदपदातानतेनोपबन्धंष्(10.3) के रूप में संदर्भित करते हैं। कवि उत्कल में केवल प्रसिद्ध कुड्डुक ताल का ही उल्लेख करता है। 29वें प्रबंध में 'सुडप्रबन्ध' का प्रयोग किया गया है। 23वीं, 27वीं, 34वीं और 41वीं गाथाओं में रागों की लय का उल्लेख नहीं है।

4. शैलीः-कवि ने पाठ की रचना में दोहरी शैली का पालन किया। कहीं श्रृङ्गार कला वैदर्भी है, कहीं गौड़ी तथा अन्य शैलियों का प्रयोग आवश्यकतानुसार किया जाता है। प्रबंध गीत में कई स्थानों पर समस्त पद का उपयोग दिखता हैं, जैसे-

चलदलकलयसि किलशशिचूडम्, परिहृतपरिजनमत्र निगूढम्।
क्वन विजने केलिवनेए विलयसि पशुपतिरिह गहने।।'[14],
पुनश्च-
कलय कलावती दलितलवङ्गमलयनिलमनिलं सुखसङ्गम्।
यो वितनति पुलकमयमङ्गं जीवयतीव परेतमङ्गम्।।'[15],

वह एक समस्त पद के साथ एक पाद की रचना करके दीर्घ समास का उपयोग दिखाते हैं। जैसा.

मृदुलमृणालभुजारुणकुवलयमञ्जुलकरतलशोभा।
संहतमिथुनरथाङ्गधृतस्तनकनककलशसदाभा।।'[16],

सूर्यास्त के वर्णन में गौड़ी का प्रयोग उल्लेखनीय है. मार्तण्डे जगदण्डदीपकलिकार्यातिदिष्टे चिरादासीदुर्द्धवकपालपालिकलितं यत्कज्जलं श्यामलम्। नीरन्ध्रसमभारितेन गगनं व्याजान्धकारात्मनाए यत्रोन्मीलितनिर्विवेकवद.भून्नोतारतम्यस्थितिः।'[17],

5. भक्तिः-यह महाकाव्य शैव सम्प्रदास का द्वारा अत्यधिक पूजनीय है। अग्निचित्रित्यानंद के संरक्षक जो की नौ दुर्गाओं के स्वामीए गदाधरमंधाता लडुकेश्वर भगवान शिव के परम भक्त थे। नित्यानंद स्वयं एक वैष्णव और शैव थे। कवि और उनके संरक्षक भुवनेश्वर (एकाम्र तीर्थ) तथा पार्श्ववर्ती स्थान दोनों के निवासी थे। कवि ने गीतगोविंद की पारंपरिक शैली में भगवान राधाकृष्ण की लीलाओं का वर्णन करने की पारंपरिक शैली में भगवान शंभु की भक्तिपूर्ण काव्य की रचना की। उस समय में उत्कल में शैव और वैष्णव धर्म का एक साथ प्रसार और दोनों धर्मों का समन्वय हुआ करता था। भगवान शिव की भक्ति पर कवि के श्लोक और प्रबंध बहुत रूचिपूर्ण हैं और भक्तों को भक्ति की प्रेरणा देता हैं। महाकाव्य की प्रारम्भ में भवानी और शंकर को श्रद्धांजलि अर्पित करने वाले श्लोक की एक सूची है। जैसा-

शोणां पाणितले कलेवरिमदं गौरं गले श्यामलम्
विद्युत्पिङ्गलमीक्षणे निटिलगे नेत्रद्वये पाटलम्।
राजत्कुण्डलिराजकुण्डलमलं शीतांशुखण्डोज्ज्वलम्
वन्दे किञ्चन शैलभूपतनया सौभाग्यभोग्यं महः।।'[18],

ग्रन्थ के प्रत्येक अध्याय में, भगवान शिव को समर्पित संगीत देखा

जाता है, जैसे महाप्रभुलिंगराज की स्तुति–
मधुसमयकुसुममयवल्लिपुञ्जेए लिङ्गराजं नौमि राजतमेकान्तकुञ्जे।
कोदकिलावलीकलितकाकलीकेए लिङ्गराजं नौमि मधुलोलमधुपावलीके।।'[19],

6. ग्रन्थाशय–शिवलीलामृत की विषयवस्तु, भाव, भाषा आदि पूर्ववर्ती कवियों की झलक स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं। यहां हम श्रीमद्भागवत के दसवें अध्याय में वर्णित रासलीलाओं का अनुसरण करते हैं। इसमें कालिदास कुमारसंभवम् और जयदेव के गीतगोविंद की स्पष्ट छाया मिलता है। श्रीमद्भागवत में भगवान कृष्ण ने गोपियों का मन बहलाने के लिए बांसुरी बजाई थी। यहां शिवलीलामृत महाकाव्य में भी कृष्ण की तरह शिव भी बांसुरी बजाते हैं। जैसे–
तासां प्रसदयांमुख्यादथ प्रख्यातवैभवः।
दिदर्शयिषुरात्मानं वेणुमक्कणयद्भवः।।'[20],
पुनश्च–
निपीय मुरलिनादं प्रसादं गिरीशस्य ताः।
ततश्चकितनेत्रान्तास्तत्कान्तास्तर्कमब्रुवन्।।'[21],
पुनश्च–
मृद्विका ध्रुवधारया विरचिता मृद्वी न वणोरियम्।'[22],

कविता में बांसुरी की ध्वनि अप्रस्तुत अलंकार के माध्यम से उसकी प्रशंसा की गई है। श्रीमद्भागवत की सदृश इसमें भी अरण्यविहार, पार्वती और शिव के अन्तर्ध्यान, विरहिणीओं के द्वारा शिव के अन्वेषण, विलापए शिव की पुनः उपस्थिति, रास क्रीड़ा और जल क्रीड़ा का वर्णन किया गया है। यहां शिवपुराण की भी स्पष्ट छाया है।'[23], भगवान शिव को गोपालिनीवल्लभ (10.1) नटवर, रासरसिक (42 प्रबंध) कहा जाता है। वह श्याम.शङ्करो बन कर बांसुरी बजाते हैं। यहां पार्वती एक गोपी का रूप धारण करती हैं और एकाम्रतीर्थ में छद्मवेश में भ्रमण करते हैंए जो कि कवि की भगवान कृष्ण के प्रति भक्ति का सांकेतिक अर्थ को प्रकटित करता है। यथा–
पान्ती तापात् पिपशतवधगामगादथयोगाद।
गोपीरूपं विपिनममुना ताः सवत्सा न्यरोत्सीत्।।'[24],
पुनश्च–
दुग्धं स्वयं नवदुग्धं दुग्धं भुवनाधिनाथलिङ्गस्य।
अङ्गे सिञ्चती सा कश्चन मनसः प्रसादमगादुमा।।'[25],
पुनश्च–
त्रिभुवननायककलिङ्गादैशानीमास्थितामाशाम्।
प्रमथमहीपतिमहीषीं तदवधि गोपालिनीति गायन्ति।।'[26],
और इसी तरह नीलकण्ठ गोपालकृष्ण के रूप मे वर्णित हुए हैं.
अथ तत्र शिखण्डमण्डनस्तडिदम्वरस्तदनुविडम्वितामवुदः।
वनमाभारि हृदस्थलः कलस्वनवशमागमदमाप्रियङ्करः।।'[27],
इकतीसवें प्रबंध में निम्नलिखित मंजुल विवरण विद्यमान होता है.
नीलकण्ठशिखण्डमण्डनचारुकेशम् ।
मौलिमञ्जुलकुशुमसञ्चयसंनिवेशम् ।।

जैसा कि भागवतपुराण में कृष्ण विरहित में गोपिओं का अवस्था हुआ है, इस महाकाव्य में भी गोपियाँ रात में जंगल में शिव को नहीं देखते हैं और जंगल के पेड़ों, हिरणों और अन्यों से उनके बारे में पूछते हैं–
अथ तास्त्रिनयनवनितान्तरतापं प्रलापगिरम्।
पृच्छन्ति स्म पुरःस्थान् वनतरुवीरन्मगान्मृग्यमाणाः।।
पुनश्च–
चलदलकलयसि किल शशिचूडम्ए परिहृतपरिजनमत्र निगूढम्।।'[28], इत्यादिः।

मध्यकालीन भारत में राधा और कृष्ण की लीलाएँ व्यापक रूप से प्रसारित हुआ है। मराठों के शासन में, उत्कल में भगवान कृष्ण भक्ति की प्राधान्य प्रबल थी। उस समय भक्ति के स्रोत और राधा और कृष्ण की लीलाओं से प्रेरित होकर, कवि नित्यानन्द ने कृष्ण के चरित्र के अनुसार भगवान शिवलीलामृत महाकाव्य रचना की है। कालिदास के कुमारसम्भवम् में पार्वती के जन्म से आरम्भ कर और कार्तिकेय जन्म और तारकासुर की मृत्यु पर्यन्त वर्णित हुआ है। शिवलीलामृत में कुमारसम्भव सदृश मदनदहन से आरम्भ कर पार्वती तप ओर सिद्धान्त आदिओं का वर्णन किआ गआ है। कुमारसम्भवम् के पञ्चम सर्ग की कथावस्तु शिवलीलामृत महाकाव्य के द्वितीय सर्ग में वर्णित है। कुमारसम्भवम् के पञ्चम सर्ग के श्लोक 3,5,28,30,83 की तुलना शिवलीलामृत के श्लोक 6,10,13,14,18 से की जानी चाहिए। पुनः कालिदास ने श्व कृती में ब्रह्मचारी द्वारा पार्वती से तपस्या के विषय में पूछे गए प्रश्न (5.33.50) और पार्वती की सखि के उत्तर (5.51.61) का वर्णन किया है और नित्यानंद ने शिवलीलामृत के द्वादश और त्रयोदश प्रबन्ध में इसका वर्णन किया है। कालिदास को अनुकरण कर (8.3.4) शिवलीलामृत में विवाह बंधनए शृंगारविलासों का वर्णन इस प्रकार है–
कम्बुना वितरणाम्बु संभृतं वेपथुश्लथकराम्बुजच्युतम् ।
खेसपूरपरिपुरणात् सन्दधे पुनरलक्षितं हरः ।।'[29],
पुनश्च–
विन्धुन्वाना नानाकरकिशलयं कोपनपरा
निषेन्धन्ती कान्तं दृढतनुपरीरम्भरभसम् ।
दधत्यन्तः सन्तोषणमपिमनोजन्मवशगा
नवोढा वोढारं तमरमयतैव प्रियतमा ।।

कवि मुख्यतः गीतगोविन्द की शैली का अनुसरण करता है, इसलिए छायाग्रन्थ में इसका आभास सर्वत्र होता है । प्रबंधों और श्लोकों में भाव और भाषा का सामंजस्य विद्यमान है। गीतगोविन्द में वसंत वर्णन की छाया यहां दृश्यमान होता है (1.7)–
वसन्ती वासन्ती सरभसपरीरम्भचटुले
रसाले सारभं सुदति कलकण्ठी निगदती।
समासङ्गेऽनङ्गे परिचरिता कान्तं प्रियतमा
न मानस्य श्रीमानयमवसरः पुष्पसमयः ।।'[30],

पुनः (1.8) 'दरविदलितमल्लीवल्लीचञ्चत् पराग' जैसे गीतगोविन्द के श्लोक की छाया शिवलीलामृत में विद्यमान है–
स्फुटन्मल्लीवल्लीमधुरिमधुरीणो मधुरसौ
वनोद्देशोऽप्येषोऽनुपदहृदयानन्दजनकः ।
सुधामूर्तिश्चायं प्रवलितमनोजन्मविभवो
नवोदश्चद्भावप्रणयिनिमनश्चश्चलयति ।।'[31],

गीतगोविन्द के चतुर्थ एवं द्वितीय प्रबन्ध की तुलना क्रमशः शिवलीलामृत के 38वें और 42वें प्रबंध से की जा सकती है ।

7. एकम्रक्षेत्रप्रीतिः–जब पार्वती शिव से जनाकीर्ण वाराणसी के जनशून्य जंगल में भ्रमण के लिए संकेतित छिपे स्थानों के बारे में पूछते हैं, तो शिव उन्हें ष्एकचूतम्ष् अथवा 'एकाम्रक्षेत्रम्' को निर्देश करते हैं। पुरी, जो दारुब्रह्म (जगन्नाथ) का निवास स्थान है और विरजा क्षेत्रों के बीच स्थित उत्कल का 'गुप्तवाराणसीक्षेत्रम्', जो जैमिनी खंड में एकाम्रक्षेत्र के रूप में वर्णित किया गया हैए उस स्थान पर भगवान (अनन्त–वासुदेव) का निवास है। गंधावती

नदी की सुगंधित वायु द्वारा जंगल के पत्तों और फूलों सञ्चालित होने लगते हैं। ऋषियों के शांतिपूर्ण निवास के रूप में इसे जाना जाता है। वहाँ साँपों एवं नेवलोंए बाजों और पतंगोंए बाघों और गिद्धों आदि के परिवारों के बीच कोई शत्रुता नहीं हैए जिसका वर्णन कवि ने किया है–

नागानां नकुलैर्भवेन्नकलहो यस्मिन् प्रशान्तात्मभिः
श्यनोऽप्येन उपाददीत पतगालम्भार्जितं यत्र न ।
निर्वैरैः प्रशमायनैर्मुनिजनैरध्यासिते दृश्यते
प्रीत्या यत्र समं कुरङ्गशिशुभिः शार्दुलविक्रीडितम् ।।'[32],

शार्दुलविक्रीड़तिम् छन्द में 'शार्दुलविक्रीड़तिम्' पद के प्रयोग का अभूतपूर्व संयोग यहां उल्लेखनीय विषय है। देवी पार्वती ने 'देवीपादहरा' और शिव ने 'बिन्दुसरोवर'् की रचना की है। गंधवती के तट के वन का वैशिष्ट्य वर्णन किया गया है। यथा–

सुगन्धिभिर्गन्धवतीसमुद्भवैर्नवैःसरोजैरधरधिवासितान्तरम् ।
तरङ्गसङ्गातितुषारमारुतवनप्रियव्रतमधुव्रतारुतम्।।'[33],

अष्टम सर्ग के 33वें निबंध में गंधावती नदी को एक युवा महिला के रूप में वर्णित किया गया है–

सुन्दरदलदरविन्दुमुखीमुखरभ्रमरध्वनिगीता ।
शैवलकोमलनालकलापवतीरससम्पदुदिता ।।

कपिल संहिता अनुसार कलियुग में गंगा गंधवती के रूप को धारण कर प्रवाहित होता है। जैसा–

काननोद्भपुष्पाणां केतकीनां लतान्तरे
केशराणां च पद्मानां चम्पकानां विशेषतः।
फ्लानां वायुसंगार्द्गन्धार्थाभान्महीतले
नाम्ना गन्धवती गङ्गे भवैकाम्रवने शुभे ।।'[34],

लिंगराज के 40वें प्रबन्ध में कोटितीर्थ ;तीर्थैः कोटिभिरुत्तमैरभिदधुर्या गुप्तवाराणसीम्–(7.21) और ब्रह्मलिंग या ब्रह्मेश्वर ;एकान्ते ब्रह्मलिंगं प्रणयभरनतं कन्धरं संददर्श–(10.23) का वर्णन है । लिंगराज की भव्य स्थिति इस प्रकार है–

मधुसमयकुसुममयवल्लिपुञ्जे। लिङ्गराजं नौमि राजतमेकान्तकुञ्जे।।
इत्यादि।

लिंगराज का वर्णन यहाँ पुनर्वार किया गया है.

तत्रासौ चन्द्रचूडं सितललितमुखं नागयज्ञोपवीतं।
र्त्यिक्षं शार्दुलसाराजिनवसनधरं कुन्दकर्पूरगौरवम्।।
गौरीवामाङ्कदेशं वरपरशुमृगाभीतिहस्तं महेशं।
रत्नालङ्कारवेशं सरसिरुहसमासीनमालोकते स्म।।'[35],

8ण् कवि के पाण्डित्य

विद्वान् कवि नित्यानन्द विशाल ज्ञान से संपन्न थे। शिव की अमृतमयी लीलाओं में कवि की विद्वता के अनेक उदाहरण हैं।

(क) अलङ्कारप्रयोग– कवि अपनी विद्वता सिद्ध करने के लिए विभिन्न अलंकारों का प्रयोग करते हैं। कवि को अनुप्रास अलङ्कार सर्वाधिक प्रिय है। काव्य में अनुप्रास एवं यमक जैसे शब्द अलंङ्कार का बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है, जैसे.

संसार सारनायिका लतालतानन चारवम्
ससारतारलोचना प्रसारिकोकिलारवम्।
अनन्तपुरषोत्तमप्रभुप्रभावपालितं
वनं तदेकचूतकं नवप्रवाललललितम्।।'[36],

पुनश्च–

सुगन्धिना गन्धवतीनभस्वता वनं तदा धूनितसूनपल्लवम्।
ददर्श संक्रन्दननन्दनादपि प्रति प्रतीकाद्भुतमद्रिनन्दता।।'[37],

काव्य में जैसे श्लोक 8.6 में उपमाए श्लोक 8.4 में मालोपमा, श्लोक 8.3, 5.13 दोनों में उत्प्रेक्षा और 9.8, 4.27 में विरोधाभास विद्यमान है । 29वें प्रबंध में निरोष्ठ्य गीत इस प्रकार है–

शतकिरणकिरणराजरञ्जिते गीततालकङ्कणगणशिञ्जिते।
ललितललितसदनराजदङ्गणे रतिरसचलजन इह ललनागणे।।'[38],

सभी लघु पद का उदा–

सुदति सुदति विषम विशिखवितितिभिरति.
विरहियुवतिहृदयमदयरतिपतिरिहसमय उदयति।
अपि मुनिजनतपचितवनविहरिणरतिं रचयतिसति
मधुरमधुरजनिरनिभृतपरभृतविरुति।।

इस प्रकार अन्य अलंकार भी हैं।

उपसंहारः–शिवलीलामृत काव्य से यह स्पष्ट है कि कवि नित्यानंद उत्कलीय परंपरा से प्रभावित प्रतीत होते हैं। अतएव तदनुसार शिव के चार पुत्र थे। ब्रह्मपुराण में जया को वर्णशक्ति और पार्वती की सखी बताया गया है। भगवान शिव के मिलन से नंदी और भृंगी के जन्म की कहानी सुनने के बावजूद उदार हृदय से पार्वती बिना ईर्ष्या के जया और भगवान शिव के मिलन को क्षमा कर देते हैं और स्वीकार करती हैं। यह भक्ति सेवा के स्वाद के लिए शिवस्मार्तों के योगदान को भी एकत्र करता है। इसमें कविता, संगीत और धर्म का मिश्रण है। यह विद्वानों और सामान्य लोगों दोनों के लिए गंभीर अर्थ वाली मधु वर्षा की शब्दावली का उपयोग करता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि भगवान शिव की लीलाओं को समर्पित यह पूर्ण लंबाई वाली गीतिकाव्य अपने क्षुद्र शरीर से भिन्न होते हुए भी अत्यंत सराहनीय गीतिकाव्य है।

सहायकग्रन्थसूचीः–

1. गीतगोविन्दम्, डॉ. भगवानपण्डा, ओडिशाराज्यसंस्कृति निर्देशालयः, भुवनेश्वरम्,1989
2. मुकुन्दविलासितमहाकाव्यम्, डॉ. भगवानपण्डा, ओडिशाराज्यसंस्कृतिनिर्देशालयः, भुवनेश्वरम्, 1981
3. संस्कृतसाहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, वाराणसी, 1980
4. संगीतमकरन्द, सम्पादक–मङ्गेश रामकृष्ण तेलाङ्ग, ओरिएण्टाल इन्स्टिच्युट्, बरोदा, 2019
5. संगीतपारिजात, सम्पादक–श्रीकृष्ण जुग्नू, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2018
6. श्रीजयदेव एवं गीतगोविन्द, श्रीप्रफुल्लचन्द्रत्रिपाठी, भुवनेश्वरम्
7. श्रीचैतन्यचरितामृतम्, श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद, भक्तिवेदान्त बुक ट्रष्ट, बम्बई, 2013
8. शिवपुराणम्, उत्तरखण्डम्, पोथिसंख्या–पृ.45
9. शिवलीलामृतमहाकाव्यम्, डॉ. भगवानपण्डा, ओडिशाराज्यसंस्कृतिनिर्देशालयः, भुवनेश्वरम्, 1978
10. श्रीमद्भागवतमहापुराणम्, गीताप्रेस
11. Glimpses of Vaishnavism in Orissa, Banamali Rath, Kalyani Prakasan, Berhampur, Orissa, 1983

12. The Indian Historical Quarterly Journal, Vol.-XXV, pp.95-101, Dr. V.W.Karmbelkar
13. Kapila Samhita, Pramila Mishra, New Bharatiya Book Corporation, New Delhi.

संदर्भ सूची :-

1. शिवलीलामृतमहाकाव्यम्, 1.14
2. श्रीमद्भागवतमहापुराणम्, 12.10.8
3. तत्रैव, 12.10.14
4. See, Glimpses of Vaishnavism on Orissa
5. See, The Indian Historical Quarterly Journal, Vol.-XXv, pp.99-101, Dr V.W. Karmbelkar
6. शिवलीलामृतमहाकाव्यम्, प्रबन्धः ए 18
7. तत्रैव, प्रबन्धः ए35
8. तत्रैव, प्रबन्धः ए 38
9. तत्रैव, 9ण्15
10. तत्रैव, प्रबन्धः ए 29
11. तत्रैव, प्रबन्धः ए 29
12. तत्रैव, प्रबन्धः ए 37
13. तत्रैव, प्रबन्धः ए 30
14. तत्रैव, प्रबन्धः ए 36
15. तत्रैव, प्रबन्धः ए 29
16. तत्रैव, प्रबन्धः ए 33
17. तत्रैव, 8.30
18. तत्रैव, 1.3
19. तत्रैव, प्रबन्धः ए 30
20. तत्रैव, 9.28
21. तत्रैव, 9.29
22. तत्रैव, 9.30
23. Siva Purana, O.S.M. Mass, Part-iii, Ch.-XXVIII
24. शिवलीलामृतमहाकाव्यम् 7.32
25. तत्रैव, 7.33
26. तत्रैव, 7.34
27. तत्रैव, 8.8
28. तत्रैव, प्रबन्धः ए 36
29. तत्रैव, 3.18
30. तत्रैव, 9.13
31. तत्रैव, 9.6
32. तत्रैव, 7.25
33. तत्रैव, 10.27
34. कपिलसंहिता, 17.82
35. शिवलीलामृतमहाकाव्यम्, 10.27
36. तत्रैव, 7.23
37. तत्रैव, 7.24
38. तत्रैव, प्रबन्धः ए 29

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' के उपन्यासों में लोकगीत

किरण बाला कराड़ा

शोधार्थी, हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.

शोध सारः-साहित्य मानव जगत का सजीव चित्रण करने वाली वह महतवपूर्ण कला है जो मानव स्वप्नों और कल्पनाओं को भी रूप प्रदान करती है। इसका एक सशक्त रूप उपन्यास विद्या है व जिसके द्वारा संपूर्ण समाज का यथारूप चित्रण प्रस्तुत करना संभव होता है। प्रेमचंदोत्तर साहित्य परंपरा के समर्थ कथाकारों में यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द' का नाम आदर से लिया जाता है आपने अपने युग परिवेश का स्पष्ट आईना पाठक वर्ग को दिखाया है। राजस्थान की मरूभूमि बीकानेर में जन्मे 'चन्द्र' ने राजस्थानी और हिन्दी कथासंसार में अपनी अलग पहचान बनाई है। इनका कथा साहित्य साधारण व्यक्ति के सरोकारों और मानवीय संवेदनाओं को व्यक्त करता है, जिसका सशक्त माध्यम 'चन्द्र' ने लोकगीतों को बनाया। उन्होंने अपने उपन्यासों में लोकगीतों को यथास्थान प्रयुक्त कर जनसाधारण के भावों को अभिव्यक्ति प्रदान की। लोकगीतों की यह परंपरा हमें जमीन से जोड़ती है। 'चन्द्र' की पारखी दृष्टि ने इसी परंपरा को अपने उपन्यासों में जीवित रखा है।

बीज शब्दः-लोकगीत, परंपराएं, परिवेश, विरहगीत, धार्मिक मान्यताएं, श्रृंगार, धरोहर, सांस्कृतिक उत्थान।

मूल आलेखः-भारतीय संस्कृति विभिन्नताओं को संजोए हुए है। यहॉ ं के कण-कण में लोक संस्कृति की सौंधी महक सदा महकती रही है। इस महक को महकाने का सबसे सरल माध्यम क्षेत्र विशेष के लोकगीत है। लोकगीत मूलतः सामान्य जनमानस द्वारा गाए जाने वाले ऐसे गीत है जो विभिन्न पर्वों एवं जीवन के महत्वपूर्ण अवसरों पर खुशियों को दुगना कर देते है। लोकगीतों के संदर्भ में लोक साहित्यकार विद्या चौहान का मानना है कि ''लोकगीत मानव हृदय की नैसर्गिक अभिव्यक्ति है जिसमें भाव, भाषा और छन्द की नियमता से मुक्त रहकर स्वच्छन्द रूप से निःसृत होने लगता है।[1] कोई पर्व त्यौहार, क्षेत्र विशेष के लोकगीतों के बिना अधूरे है। इन्हीं लोकगीतों की महक से 'चन्द्र' ने अपने उपन्यासों को सराबोर किया है जिससे राजस्थानी परिवेश उभरकर सामने आया है।लोकगीत मूलतः सामान्य जनमानस द्वारा गाए जाने वाले वह गीत है जो विभिन्न मनोभावों को सहर्ष व्यक्त करते है। 'चन्द्र' ने अपने कथासंसार में व्यक्ति के मन के समस्त दशाओं को लोकगीतों के माध्यम से व्यक्त किया है।

15 अगस्त 1932 को राजस्थान के बीकानेर में जन्मे कथाकार यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' ने अपने उपन्यासों में अपने क्षेत्र विशेष के मारवाड़ी परिवेश को लोकगीतों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। उन्होंने यथास्थान मारवाड़ी संस्कृति, लोककला, लोकगीतों का प्रयोग कर उपन्यासों को आंचलिकता की कसौटी पर कसा है। 'चन्द्र' ने नारी मनोदशा को प्रमुखता से अपने उपन्यासों में लोकगीतों का आधार बनाकर उपन्यासों की सांस्कृतिक प्रतिष्ठा में वृद्धि की है।

नारी मन की विरह व्यथा को गुलाबड़ी उपन्यास में रुकमण' द्वारा व्यक्त किया गया है-

''सूती ही रंग महल में
सूती नै आयौ ए जंजाल
भंवर सुपना में आयो जी....
आई थी सासू जी के पास
सासू जी मन्नै सुपनों आयौ जी
सुपना में थारौ जायोड़े ने देख्यौ जी...''[2]

चन्द्र ने यह मारवाड़ी बिंदनी की व्यथा को व्यक्त किया है जिसका पति व्यापार करने परदेश गया है और वह सपने में अपने पति के दर्शन करती है। वह अपनी सास को यह बात बताती है कि आपका बेटा मेरे सपने में आया था। इस लोकगीत में प्रेम और विरह का चित्रण प्रस्तुत किया गया है।

इस लोकगीत के माध्यम से गुलाबड़ी अपनी बर्तन बनाने की चाक को चलाते हुए उसे अपनी गीत से चलने का आह्वान कर रही है।

''चाल रे चाक म्हाँरी चाल
दे सबनै रोटी अर दाल....''[3]

इस गीत के द्वारा कथाकार ने मरूक्षेत्र में स्थित गरीब तबके की स्थिति का चित्रण किया है। इसमें एक ओर तो स्त्री की गरीबी का चित्रण है तो दूसरी ओर भारतीय नारी की कर्मनिष्ठता का चित्रण है, जो भूखे पेट भी अपना कार्य पूरी तल्लीनता के साथ कर रही है।

कर्मनिष्ठ विधवा नारी का एक अत्यंत सहज जीवन होता है, वह अपने जीवन का आधार खो देने के बाद मीरा की तरह कृष्ण से प्रेम करती है -

''माई री म्हांगो लियो गोविन्दो मोंल
कोई लेवे मैंगो अण कोई लेवे सैंगो
म्है तो लियो रे तराजू रो तोल।''[4]

गुलाबड़ी कृष्णभक्ति में अपना जीवन व्यतीत करती है। कभी वह अपने बच्चे को यशोदा माता की तरह दुलारती हुई गाती है -

''गीगा घड़ी एक सो जा रे
लाला घड़ी एक सो जा रे
तन्ने दादो-सा लाड लडावै
तन्ने दादी सा लाड़ लडावै
गीगा घड़ी एक सो जा रे.....''[5]

गुलाबड़ी वात्सल्य की गंगा अपने हृदय से बहाकर उसमें अपने पुत्र

को नहलाती है। अपने उपन्यसों में 'चन्द्र' ने नारी की हर मनोदशा का चित्रण प्रस्तुत किया है। एक स्थान पर नारी मन की व्याकुलता का चित्रण किया गया है। मारवाड़ी बिंदनी का पति जब परदेश से वापस आने वाला होता है, तब उसकी मनोदशा अत्यंत कोमल हो जाती है,वह विरह वेदना से मुक्ति पाकर श्रृंगार करती है और गाती है -

''पलक मींच मन में मिलै मनडै हंदौ मीत
अंतर हो जावै चानणौ, सांसा गावे गीत
पल-पल पलकाँ पीव बिन, सावन झड़ी लगाय
पलट पिंछणी प्रीतड़ी सखर लागी लाया.....'' [6]

इस तरह बिंदनी सूरसती गाती हुई कहती है कि जिस तरह आग सावन के बरसने से बूझ जाती है उसी तरह मेरे हृदय की विरह अग्नि भी मेरे में परमेश्वर के आगमन से बूझ रही है।

श्रृंगार से सराबोर ऐसा ही एक गीत उपन्यास 'मैं रानी सुप्यार दे' में भी ढोलन द्वारा गाया गया है। विवाह के अवसर पर ढोलन लोकगीत का सुर छेड़ती है -

''काली-काली काजलिया री रेख रे
हाँजी कालोडी कांठल में चिमकै बिंजली
जुग जियो म्हाँरी मूमल हलौ नी
ए आली जा रे देस...
होंडला मूमल रा रेसरियां तार ज्यूँ
हाँजी दाँतड़का उजलदंती तार ज्यूँ
म्हाँजी हरियाली ए मूमल हालौनी
रसिया रे देस...'' [7]

इस लोकगीत में उपमाओं द्वारा वर और वधु की श्रृंगारिक प्रशंसा की गई है। वधू के नैनों की प्रशंसा की गई है, वहीं उसके मुख की दमक को बिजली की चमक की उपमा दी गई है। वही दूल्हे की प्रशंसा करते हुए ढोली कहता है कि दूल्हे के होठ रेशम के तार की तरह है और दांत ऐसे चमक रहे है जैसे अंधकार में बिजली चमकती है।

'चन्द्र' ने रेगिस्तान में पानी भरती पनियारियों का वर्णन करते हुए उसका सजीव चित्रण अत्यंत मनमोहक रूप में प्रस्तुत किया है। जिसमें पनियारियाँ सूर्य से प्रार्थना करती है कि थोड़ा मंद हो जा हमारा गौरा रंग और नाजुक अंग तेरी तपिश सह नहीं सकता।

''ताबड़ों धीमी पड़ जा रे
बादली गैरी घुट जा रहे
गोरी रो नाजुक जीव
सुरज बादल मा घुपजा रे...
ताबडों धीमो पड़ जा रे....[8]''

मारवाड़ी परिवेश में जब बेटी विदा होकर अपने ससुराल जाती है तो एक पिता का हृदय भर आता है जिसका करूण चित्रण 'गुरु गरिमा' उपन्यास में 'चन्द्र' ने किया है,

''वनखण्ड की ए कोयल
वनखण्ड छोड़ कठै चाली
सूना कर बाबूल रा घर द्वावार
कोयल कठै चाली री...'' [9]

बाबुल का घर बेटी के बीना वनखण्ड हो जाता है, जिस आंगन में वह बड़ी होती है, उसे एक दिन छोड़कर चली जाती है। बेटी की विदाई का हृदय विदारक चित्रण 'मैं रानी सुप्यार दे' उपन्यास में भी मिलता है। जब एक साहुकार पिता अपनी बेटी को विदा करते समय उसके सम्मान में किले के डूंगर को झुकने को कहता है, सूर्य को धीमा पड़ने को कहता है ताकि उसकी राजकुमारी को यात्रा में कोई समस्या ना आए।

''कोयल ऐ कोयल बैरण पिऊ-पिऊ बोल,
चढ़ती बाई ने ये शब्द सुणवाजे,
डूंगर रे डूंगर राजा नीचों सो झुक जाय
जावती बाइ री री दीखे रंग री चूनड़ी
सूरज ओ सूरज राजा मोड़ो सो उग जाय,
चढ़ती बाई रे होसी सामों ताबड़ो
बादली ए माता म्हारी सूरज सामी आव
चढ़ती बाई सा रो तिड़कै दंती चूडल्यौ जी'' ..[10]

विरहणी नायिका अपने प्रियतम को याद करती हुई गाती है,

''नागा नागर बैल है, पसरे पण फूले नहीं
बालपण री प्रीत है, बिछड़े पण भूले नहीं''. ....[11]

अपने बचपन के बिछड़े मीत को याद करती हुई वह उसे नहीं भूलने की प्रार्थना करती है।

श्रृंगार में सराबोर एक गीत जो सुप्यार दे और कवली गाती है -

''मधुवन रो अे, आंवो मोरियो
ओ तो पसरयो ओ, सगली मारवाड़
सहेल्या ओ आंवो मोरियों
बहूं महला सू उतरी
आतो कर सोला सिणगार
सहेल्या ओ आंबो मोरियों...'' [12]

संयोग श्रृंगार में नायिका का मन मोर की भांति नाच रहा है, जिस तरह मोर महल के आंगन में नाच रहा है वैसे ही मन तू भी प्रिय के आगमन पर नाच और सौलह श्रृंगार कर।

ढोली-ढोलन द्वारा मनोविनोद पूर्ण लोकगीत उपन्यास 'हजार घोड़ों का सवार' में प्रस्तुत है जो नायक-नायिका को प्रस्तुत करता नजर आता है-

''भंवर म्हाँरे बागां आवो जी
बागाँ फिरूं अकेली, पपैयो बोल्यो जी
सुंदर गोरी किण विध आवाँ जी
म्हाँरी परणी करै लड़ाई
पपैयो बाल्यो जी...
बागाँ बगीचा म्हैं फिरूं रे जूरी
लाई चम्पे के रो फूल
सूंध्यों तो होत ए,
भँवर म्हाँरो बागां में आवो जी...'' [13]

विरह वेदना में घिरी नायिका अपने प्रियतम के आगमन के लिए प्रार्थना करती है। कौए से कहती है जब मेरा प्रियतम घर आएगा तब मैं तुझे खीर-खांड खिलाउंगी, तेरी चोंच में सोना जड़वाउंगी, अभी तू चला जा जब पियाजी आएंगे तब आना।

उड़-उड़ रे म्हाँरा काला कागला
जद म्हाँरा पीवजी घर आवै
जद खीर-खाँड से जिमण जिमावूं,

सावन में चोंच मढाऊँ कागा

जद म्हांरो पीवजी घर आवै जी.....

अतः लोकगीत हमें किसी देश की प्राचीन सभ्यता, संस्कृति, आचार-विचार से अवगत कराते है। इनके संग्रहण से साहित्य कोष में वृद्धि होती है। लोकगीतों के माध्यम से सामाजिक समरसता बढ़ती है। जीवन के प्रत्येक शुभ संस्कार में लोकगीतों का अपना विशेष महत्व है। यहां तक कि 16 संस्कारों में से आखरी 'अंतिम संस्कार' भी क्षेत्र विशेष के लोकगीतों के बिना अधूरा है। विभिन्न संस्कृतियों को संजोये ये लोकगीत हमारी संस्कृति और सभ्यता के संरक्षक होने के साथ एकता का संदेश भी देते है। लोकगीतों का साहित्य में प्रवेश निश्चित रूप् से हमारे साहित्य जगत को समृद्ध बनाएगा। इन लोकगीतों को कथाकार ने अत्यंत कुशलता से अपने उपन्यासों में प्रयुक्त कर उपन्यासों की मूल्यवृद्धि की है।कथाकार के उपन्यासों में व्यक्त मारवाड़ी परिवेश और लोकगीत हमें राजस्थान की संस्कृति से अवगत कराते है; जिसे 'चन्द्र' ने बड़ी ही बारीकी से अपने कथा संसार में पिरोया है। लोकगीतों की परंपरा हमें जमीन से जोड़े रखती है। 'चन्द्र' ने लोकगीतों की इस परंपरा के द्वारा राजस्थान के मारवाड़ की सभ्यता, संस्कृति, रीति-रिवाज आदि से साहित्य जगत को अवगत कराया है। अपनी सभ्यता संस्कृति का संरक्षण प्रत्येक सामाजिक प्राणी का कर्तव्य है जिसका पालन 'चन्द्र' ने पूर्ण निष्ठा से किया है इसका पता उनके उपन्यासों के अध्ययन से चलता है वहां नवीन साहित्य साधकों को अपनी क्षेत्रीय संस्कृति को अपने साहित्य में पिरोने की प्रेरणा भी 'चन्द्र' का कथासंसार देता है।

आधुनिकता और विकास के नाम पर हम अंधी दौड़ दौड़े जा रहे है, जिसमें हमारी सभ्यता दम तोड़ रही है। वर्तमान विडम्बना है कि हम न तो हमारे रिती-रिवाजों के प्रति सजग है, ना ही हमारी संस्कृति को बचाने के प्रति तत्पर है। विलासिता का आकर्षण हमें अपनी परंपराओं, संस्कार, संस्कृति से दूर कर रहा है। अनेकता में एकता को संजाऐ भारतवर्ष की संस्कृति ही उसकी प्राणवायु है। यदि समय रहते हमारा ध्यान हमारी सभ्यता और संस्कृति के संरक्षण की ओर नहीं गया तो ये परंपराएं नष्ट हो जाएगी जिसका मूल कारण हम ही कहलाएंगे।

संदर्भ सूचीः-

1. विद्या चौहानः लोक साहित्य, सरस्वती प्रकाशन कानपुर, प्र. स. 45
2. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र': गुलाबड़ी, पुस्तकालय 2/4240-ए अंसारी रोड़, नई दिल्ली, प्र.स. 82
3. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र': गुलाबड़ी, पुस्तकालय 2/4240-ए अंसारी रोड़, नई दिल्ली, प्र.स. 122
4. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र': गुलाबड़ी, पुस्तकालय 2/4240-ए अंसारी रोड़, नई दिल्ली, प्र.स. 21
5. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र': गुलाबड़ी, पुस्तकालय 2/4240-ए अंसारी रोड़, नई दिल्ली, प्र.स. 33
6. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र': गुलाबड़ी, पुस्तकालय 2/4240-ए अंसारी रोड़, नई दिल्ली, प्र.स. 46
7. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र': मैं रानी सुप्यारदे, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.स. 46
8. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र': मैं रानी सुप्यारदे, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.स. 94
9. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र': गुरू गरिमा, मलिक एंड कंपनी चौड़ा रास्ता, जयपुर, प्र.स. 51
10. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र': मैं रानी सुप्यारदे, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.स. 77
11. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र': हम सब कटपुतलियां, अरूण प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.स. 40
12. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र': मैं रानी सुप्यारदे, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.स. 182
13. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र': 'हजार घोड़ों का सवार', शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.स. 140
14. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र': 'हजार घोड़ों का सवार', शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.स. 199

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

गोवा के नोकनृत्यों में ग्रामीण संस्कृति की झलक

डॉ. श्रीमती वैशाली नाईक

एसोसिएट प्रोफेसर, भारतीय भाषा विभाग, धेंपे महाविद्यालय, कला व विज्ञान, मिरामार - पणजी, गोवा

नृत्य कला अत्यंत प्राचीन है। लोक नृत्य वो नृत्य प्रकार है, जो हर क्षेत्र की परंपरा को वहन करता हुआ पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ता है। शैली, चरण और भाषा में भिन्न होते हुए भी सभी नृत्यों में समासिकता के दर्शन होते है। सादगी लोक नृत्य की आत्मा है जिसमें गतियाँ सहज और स्वाभाविक होती हैं। लोक नृत्य प्राकृतिक वातावरण में होते हैं जनता में प्रचलित पारंपरिक नृत्य शैली जीवन में लोगों के प्राकृतिक दृष्टिकोण, विशेष प्राथमिकताओं, सामाजिक-भौगोलिक परिस्थितियों, धार्मिक रीति-रिवाजों और लोगों के दैनिक कार्यों में आंदोलनों को दर्शाते है। आमतौर पर इन लोक नृत्यों का अविष्कार लोक की आश्यकता के अनुसार, उनके नित्य कार्यों के शारीरिक क्रियाओं से निर्मित हुआ होगा। रोजमर्रा के दैनांदिन अनुभवों का यह एक सांस्कृतिक रूप कहलायेगा। यहाँ इस शोध आलेख में गोवा क्षेत्र में प्रचलित विविध लोक नृत्यों में झलकती संस्कृति के दर्शन कराना इसका उद्देश्य रहा है।

लोक-साहित्य प्रत्येक प्रान्त का अपना निजी साहित्य होता है। भारतवर्ष का हर क्षेत्र अपनी सांस्कृतिक विशिष्ट्यता का वहन करता है। गोवा की भी अपनी निजी विरासत है, अस्मिता है, संस्कृति है। इस समाज में रहकर हमें हर एक सामाजिक ढाँचे में ढ़लना पड़ता है ताकि हम इस समाज का एक अटूट हिस्सा बनें। यही लोक-संस्कृति है। संस्कृति हमें परम्परा का पालन करना सिखाती है, जिससे हम इस प्राचीन लोक-साहित्य का हिस्सा बने। कोंकणी जन-समाज की भी अपनी निजी संस्कृति है जिसका मूल लोक-साहित्य में दिखायी देता है। इसी लोक-साहित्य को कोंकणी जन मानस 'लोकवेद' के रूप में जानता है। लोकसाहित्य को कई भागों में बाँटा गया है। लेकिन लोक गीत और लोक नृत्य आज भी व्यवहार में देखे और सुने जाते हैं। लोक नृत्य में लोकगीत और नृत्य दोनों शामिल हैं।लोक नृत्य की एक विशेषता यह है कि इसकी शिक्षा किसी को नहीं लेनी पड़ती। वे देखते ही अनायास आ जाते हैं। पहले के संस्कार और उपयुक्त वातावरण बच्चों के लिए लोकनृत्य सीखना आसान बनाते हैं। लोक नृत्य के कई आविष्कारी रूप, कई देशों में विभिन्न सांस्कृतिक कालखंडों के दौरान बनाए गए थे। नृत्य कई प्रकार के होते हैं, गोवा में भी कुछ विशेष लोक नृत्य है, जैसे-वीरभद्र, जागोर, मुसल नृत्य, धोलो, फुगडी, मोरूलो, तालगडी आदि। इन लोक नृत्यों के बारें में यह भी जानना आवश्यक है कि अधिकतर ये नृत्य गोवा के शिग्मोत्सव के दौरान ही खेले जाते हैं। गोवा के हर क्षेत्र में विभिन्नता से शिग्मो यानी होलीत्सव मनाया जाता है।

वीरभद्र :-भगवान शिव के गण, वीरभद्र के सम्मान में गोवा में प्रस्तुत यह लोकनृत्य शिग्मोत्सव के अंतिम दिनों में किया जाता है। यह नृत्य गोवा के सांगे, फोंड़ा, सावर्डे क्षेत्रों में खेले जाते है।गोवा के साँखलीम क्षेत्र में विठ्ठल मंदिर में चैत्र पुर्णिमा के दिन वीरभद्र होता है। इस नृत्य में वीरभद्र के रौद्र रूप के दर्शन होते है। इस नृत्य में वीरभद्र की वेशभूषा, नृत्य शैली और नारे सभी कन्नड़ शैली में हैं। कर्नाटक के वीरभद्र और गोवा के वीरभद्र में समानताएं हैं। ऐसा माना जाता है कि वीरभद्र प्रकार ऐतिहासिक काल के दौरान किसी समय कर्नाटक से गोवा आया होगा। यहाँ पर और एक बात जाननी आवश्यक है कि वीरभद्र का नृत्य करनेवाला व्यक्ति परंपरागत चले आ रहे उसी घराने का होता है। पौर्णिमा से पहले तीन दिन तक यह व्यक्ति व्रतस्थ रहता है। जिसमें किसी और के व्दारा बना खाना खाना वर्जित है। उपवास करना, जमीन पर सोना आदि नियमों का पालन करना होता है। नृत्य के दौरान वीरभद्र की वेशभूषा भी परंपरागत होती है। पौर्णिमा की मध्यरात में यह व्यक्ति उस स्थान पर जाता है। मंदिर में भगवान को मनाना, मन्नत करना, नारियल फोड़ना आदि विधि के बाद वह जमीन पर सोता है। जहाँ उसकी वेशभूषा परंपरा से नियत व्यक्तिव्दारा ही की जाती है।

केरल के कथकली पध्दति की तरह उसे राक्षस की उग्र मुद्रा से रंगाते है। वेशभूषा में कमर पर घोल बनानेवाल कपड़ा, राक्षस जैसे कपड़े, हाथों में आभूषण और सिर पर मैसूर शैली की पगड़ी होती है। वीरभद्र की पीठ पर कपड़े और कागज से चित्रित एक बड़ा तक्ता-सा होता है। उसके दोनों हाथों में दो नंगी तलवारें। एक बार वीरभद्र का श्रृंगार हो जाने पर पुनः भगवान से मन्नत और चावल फेंकने की विधि होती है। उधर, मंदिर में दक्षयज्ञ ध्वंस की कथा चल रही होती है और उसी समय मंदिर से कुछ दूरी पर सजा- धजा वीरभद्र का जलसा निकलता है। वीरभद्र के साथ-साथ दोनों ओर से कुछ लोग पीछे के तखते को सँभालते हैं। जुलूस प्रातःकाल के आसपास दो मशालों, संगीतकारों और अन्य लोगों की औपचारिक घोषणा के साथ, बाजों के वाद्य में शुरू होता है। यह पंगड्ड एक निश्चित स्थान पर आते हैं और वहीं रहते हैं। उसमें वीरभद्र आगे आता है और घोषणा करता है। इस घोषणा को 'होरावनी' कहा जाता है। घोषणा के दौरान वीरभद्र एक जगह खड़े होकर सिर हिलाता रहता हैं। जब घोषणा समाप्त हो जाती है, तो पंगड्डके तालपर नृत्य शुरू हो जाता है। जब वीरभद्र निश्चित स्थान पर पहुंचते हैं तो मंडप में अभिनय कर रहे पात्र अपनी वेशभूषा उतारकर भाग जाते हैं। नाटक रुकता है, वीरभद्र हाथों में तलवारें नचाते हुए और 'था थैया तक थैया' कहते हुए मंडप में आता हैं। एक एक युद्ध नृत्य है। वीरभद्र एक निश्चित लय में नृत्य करते हुए मंडप में आते हैं। नृत्य की कुछ पुनरावृत्तियाँ पूरी करने के बाद, वीरभद्र एक निश्चित स्थान पर जमीन पर गिर जाता हैं। साथी लोग उसका ख्याल रखते हैं।होश में लाने के लिए उसके चेहरे पर भगवान का तीर्थ छिड़कते हैं। मंदिर में अन्य अनुष्ठान किये जाते हैं और वीरभद्र उत्सव समाप्त होता है। शिगमोत्सव के

दरम्यान अन्यत्र खेला जानेवाले वीरभद्र थोडी-सी हेरफेर के साथ होता हैं। सांगे में यह वीरभद्र कोसांबे परिवार के घरों के सामने खेला जाता है।

जागर:-'जागर' जागरण से मिली-जुली प्रथा है। लोक कला का एक धार्मिक नृत्य है जो पूरी रात जागकर भगवान का नाम जपकर मनोरंजन करता है। जागर सदियों पुरानी विरासत वाला एक लोक नृत्य है। गाँव और गाँवालों को बुरी विपत्तियों और भूतों से बचाने के लिए जागृत रखने के लिए स्थानीय देवताओं को प्रसन्न रखने के लिए, हर साल जागर मनाने की प्रथा हैं। कुछ स्थानों पर जागर होने वाले स्थान को पर साफ-सफाई कर हवन किया जाता है। जागर नृत्य में हिस्सा लेने वाले स्नान करके आग के सामने बैठते हैं और ढ़ोल बजाते हुए 'मंगलचरण' गाते हैं। उनके साथ कुछ लोग थालियां बजा कर साथदेते हैं। उसके बाद, 'जगारियो' देवी-देवताओं की कहानी सुनाते हुए गीत गाते हैं। जब गीत गाए जाते हैं तो नर्तक का शरीर थरथराने लगता है। उनके शरीर देवताओं का वास होता हैं और वे नृत्य करना शुरू कर देते हैं। जागरी के बाद, देवताओं संबंधी आख्यायनगीतों के माध्यम से गाये जाते है और नर्तक उन गीतों के भावों को चेहरे की मुद्राओं के माध्यम से प्रस्तुत करे हैं। सारी रात यही चलता रहता है। जागर कभी एक, तीन और यहां तक कि सात दिनों के भी होते हैं। गोवा में जागरा तीन प्रकार के होते हैं। गावडा जागर, पेरणी जागर और शिवोल क्षेत्र का हिंदू- ईसाई जागर।

धेंडलो:-'धेंडलो; यह उत्सव गुराखी (चरवाहे) दिवाली के पाड़वा के दिन मनाते हैं। इसे 'गोरवांचो पाड़वो' (गोधन पीड़िया) कहा जाता है। कार्तिक शुद्ध पाड़वा के दिन यह उत्सव मनाया जाता है। प्रमुखतः फोड़ा और काणकोण के क्षेत्र में यह उत्सव प्रचलित है। इस उत्सव में एक सजी हुई लकड़ी की पालखी में लकड़ी की कृष्ण प्रतिमा रखकर चरवाहे माथे पर लेकर घर-घर समूह के साथ गाते फिरते हैं। जिस गाँव की आर्थिक परिस्थिति पशु धन पर टिकी होती है। ऐसे ही गाँवों में यह उत्सव मनाया जाने की संभावना की जाती है। यह राखणे (चरवाहें) भगवान को गवळी के रूप में भजते हैं। इस अवसर पर गाये जानेवाले गीत इसप्रकार है-

'धीण धिणुल्यो,
राम पावस शेणुल्यो
घेणल्याची म्हातारी,
शेळे उन खाताली
गोपिका ! गोपिका !
या
म्हातारेच्या घरांत, पणस पिकला
चिमटीभर तांदळात, गवळी लिपला
गोपिका ! गोपिका !
या धिणलो दारांत पावस पडता केरांत.

चरवाहों का जीवन गोधन से जुड़ा है, गोधन के विकास में 'चारगाहों' का हराभरा होना जरूरी है। शायद इसीलिए बारीश अच्छी हो और ये चारगाह पशुओं के लिए उपयुक्त बने इसलिए प्रतिमा की पूजा होती होगी। क्योंकि कृष्ण ग्वाले थे। ये चरवाहें भी 'गवळी' पूजक है। कृष्ण को गोधन के रक्षक के रूप में माना जाता है। इस गीत में 'धिणलो' नाचते हुए ये राखणे चरवाहें कह रहे हैं कि, 'धिणलो' नाचते हुए बरसात का आवहान कर रहे हैं। ये गीत प्रकृति के निकट दिखायी देते हैं। बुढिया के घर में कटहल पक गया है, चुटकी भर चावल में 'गवळी' देव छिपा है। धिणलो दरवाजे पर नाच रहे हैं और बारीश कचरे में गिर रही है।

यहाँ इन पदों का आपस में कोई तुक दिखायी नहीं देता। ये सारे गीत स्वतन्त्र दिखायी देते हैं। इन चरवाहों के अलावा अन्य क्षेत्रों में भी यह पूजा होती है, लेकिन इसका स्वरूप अलग है। गाँवों में गोबर से 'गोठे'गोशाला का प्रतिरूप बनाते हैं। इसी गोशाला में 'कारीट' नामक जंगली फल की गायें बनाते हैं। गोशाला के बाहर रक्षक के रूप में कोई एक मूर्ति रखी जाती है।

'धिंडलो' यह शब्द 'दिणो' शब्द से आया है यानी रक्षा करने वाला ईश्वर 'दिणो' है, रक्षक देवता को 'गवली' भी कहा जाता है। जो अपने पशुधन की रक्षा करता है। पुरानी परंपरा के अनुसार, यह ग्वली देवतास्वरूप है जिसे 'दिणो'कहते है और इसी का पूजन करते हुए यह मनाया जाता है। धेंडलों पर्व के दिन सुबह सबसे पहले मवेशियों की पूजा की जाती है। यह पूजा घर के अभिभावक, बच्चे द्वारा की जानी है। पुजा से पहले मवेशियों को नहलाया जाता है, उनके सींगों को रंगा जाता है और उनके गले में गुलाब की मालाएं पहनाई जाती हैं। फिर उनकी पूजा की जाती है, उनके सिर पर तेल डाला जाता है और उनके गले में नारियल की बाटी बांधी जाती है। उन्हें सान्ना-पोळे(इडली-पोला) खिलाये जातै है और फिर चराने के लिए छोड़ दिया जाता है। गाँव के मवेशियों के जंगल में पहुँचने से पहले सभी चरवाहें जंगल में एकत्र हो जाते हैं। वे मवेशियों के गलोंकीमालाएं उतारते हैं।इसके उपरांत गोबर को एक तक्ते पर रखा जाता है और उस पर संरक्षक देवता के रूप में एक पत्थर रखा जाता है। इस देवता को पूरे वर्ष जंगल में एक निश्चित स्थान पर या पेड़ के तने में रखा जाता है। मवेशियों की गले की मालाओं और दर्भ नामक वनस्पतीसे यह धेंडलों सजाया जाता और फिर प्रत्येक घरोंके व्दार पर पर धेंडलो नृत्य किया जाता है। गांव में हर एक के आँगन में गोबर से बनी 'ग्वाल' या कोई प्रतिमा बनी होती है। इसे 'गोठो' कहा जाता है। ये प्रतिमाएं कटहल के पत्तों या झाडू के तिनके लगाकर बनायी जाती है। इसी प्रकार,चरवाहे के रूप में घास से बनी आकृति रखी जाती है। घर के सबसे छोटे लड़के से यह पूजा करायी जाती है। इसी के सामने यह चरवाहें विशेष तरीके से नृत्य करते हैं। धेंड़लो नचानेवाले चरवाहें को हर घर में नारियल चावल दिये जाते है। सभी घरों में नृत्य करने के बाद रक्षक वापस जंगल की ओर चले जाते हैं। वे वहां एकत्रित नारियल चावल का भोजन पकाते हैं और इसे भगवान को अर्पित करते हैं और फिर खुद खाते हैं। अंत में, मवेशी, बछड़ों की सुरक्षा के लिए भगवान को पुकारते हुए,नदी में स्नान करने जाते हैं और शाम के बाद गाँव लौटते हैं। फिर प्रसाद के रूप में फूल, नारियल की बांटीयाँ बाटी जाती हैं। तब तक घर के व्दार पर बना गोठा चोड़कर उसपर दिया रखा जाता है। ग्वली की प्रतिमा को विर्सजन के रूप में घर के छत पर फेंका जाता है और अगली सुबह सात गोबर के ढेर लगाए जाते हैं। इसी दिन से गोबर थापने के क्रिया शुरू हो जाती है।

मुसळ नृत्य:-'मुसळ नृत्य' गोवा का एक ऐतिहासिक नृत्य का प्रकार है। इसमें हाथों में मुसल लेकर नृत्य करते है। साष्टी जिले के चांदर गांव का यह मुख्य नृत्य है। यह नृत्य शिग्मोत्सव के दरम्यान ही खेला जाता है। चांदर गाँव का मूल नाम हैं चंद्रपुर। यह गोवा के शासनकर्ता कदंब की राजधानी थी। विजयनगर के राजा हरीहर (प्रथम) ने 'चोल' राजा से चंद्रपुर किला जीत लिया। इससंबंध में मान्यता है कि, यह नृत्य उस जीत के जशनस्वरूप (1310 में) किया गया था। यह भी जनश्रुत है कि इस नृत्य के गाने सातवाहन काल के दौरान लिखे गए थे। कालांतर में इसमें शासकों की प्रशस्तियाँ जोड़ी गयी होंगी। इस नृत्य को वहाँ के क्रिश्चियन धर्मीय क्षत्रीय

लोग खेलते हैं। नृत्य के दिन शाम को लोग मांड 'स्थल पर इकटट्ठा होकर दिया जलाते हैं। बाद में क्रॉस के पास प्रार्थना की जाती है जिसे लादीन्य' कहा जाता है। इस नृत्य में इस्तेमाल होने वाला मूसल यानी बॉस की लगभग सात फूट का मोटा लठ्?ठ होता है, जिसे बीचोबीच लोहे के पतले चक्र लगाये जाते हैं. जिसकी आवाज होती है। नृत्य करनेवाले यादव पद्धति की वेशभूषा करते हैं। कमरपर धोती, कमीज और जाकीट, माथे पर पगडी, गले में फूलों की माला पहनते हैं। इसी के साथ काले कपड़े और रीछ का मुखौटा पहने एक पुरुष होता है। वह व्यक्ति हाथ में चाबूक लिए बीच-बीच में रीछ को मारता जाता है। यह खेल प्रमुखत: हिन्दू स्थल के गांववाले और क्षत्रिय लोगों के घरों के सामने खेला जाता है। यह याद रखना होगा कि सौ फीसदी क्रिश्चियन धर्मीय लोगों का यह गाँव होने पर भी सभी भी पारम्परिक विधि-विधानों तथा वेशभूषाओं के साथ ही यह नृत्य क्रिश्चियन क्षत्रियों द्वारा खेला जाता है। साथ में घुमट, कांसळे ढोलक और झांज नामक वाद्य बज्जते हैं। इस अवसर पर पहले प्रार्थना की जाती है। तथा गीत व नृत्य का आरम्भ होता है। यहाँ मूसल नृत्य के गीत का उदाहरण प्रस्तुत है।

'झिला जिला काकणां चोय वाळार
झिला झिला काकणां चोय वाळार।
येदी बेदी सांगशी सांमारीची
तितून आसा सायविण भांगरावी।
मुखारि खेळ खेळता आस्लेयांचो
फाटल्यान खेळ येता मुसळाचों।
मुखारि खेळ खेळता मुसळाचों।

तालगडी:-शिग्मो के दौरान ही खेला जानवाला लोक नृत्य है तालगड़ी।इसमें नर्तक (गड़े) वाद्ययंत्रों की लय पर नृत्य करते हैं। नर्तक के साथ घुमट, कांसाळे, समेळे, ढोल और कुछ स्थानों पर शेनायी और सुर्त जैसे वाद्ययंत्र होते है और 'जोत' प्रकार के गीतों की लय पर नृत्य होता है। आकर्षक कपड़े पहने हुए नाचनेवाले जोडेआपसी समन्वय के माध्यम से गायन नृत्य की लय में एक गोलाकार नाचते हुए नृत्य करते हैं। इस अवसर पर गाये जानेवाले गीतों का विषय पौराणिक कथाओं और स्थानिय देवी-देवताओं से संबंधित होते है।शिग्मोत्सव के दिनों के दौरान हर शाम नमन के बाद, यह गडे मंदिर के सामने या शिग्मो के मांड यानी थल पर,तालगडीनाचते हैं। तालगाड़ी नृत्य करनेवाले अपने साथ एक/पांच नारियल, चावल, पान-सुपारी, चीनी या मिठाई और पानी का एक घड़ा रखते हैं। कालांतर में इसका उपयोग गाँव में सार्वजनिक उत्सवों किया जाता है। गोवा में साश्त और तिसवाडी जिले को छोड़कर बाकी सभी जिलों में तलगाड़ी का नृत्य होता है।

घोडेमोडनी:-बिचोलीम, कुडणे, कसारपाल और मोरजी जैसे उत्तरगोवा के क्षेत्रों में शिग्मोत्सव के अवसर पर 'घोडेमोडनी' का आयोजन किया जाता है। इस नृत्य में कुछ दैवीक अनुष्ठान होते हैं। इस नृत्य को करनेवाले नर्तक ज्यादातर मध्यम वर्ग के श्रमिक होते हैं। यह पहले से ही तय किया जाता है कि लकड़ी के घोड़ों को कौन बांधेगा। मिट्टी, कच्चे माल या लकड़ी से बने घोड़े का मुंह पूरे साल भगवान के बगल में रखा जाता है।घोडेमोडणी की शुरआत से पूर्व भगवान का कौल लेकर, मन्नत माँगकर अनुष्ठान शुरू करने की प्रथा है। भगवान के आर्शावाद के बाद घोड़ों को निर्धारित स्थान पर लाया जाता है। घोड़े के शरीर की तरह बांस से बने गोल को 'गुरमी' कहा जाता है। उसे चार-पांच कपड़ोंया साडियोंव्दारा सजाया जाता हैं। घोड़े का मखौटाउस गरमी से बांध दिया जाता है और फूल चढ़ाये जाते हैं। परंपरा के अनुसार इसमें चार, पांच या छह घोड़ो को नचाया जाता हैं। घुड़सवारों और नर्तकों की वेशभूषा में राजपूत और मराठा का मिश्रण है। उनके नीचे एक सलवार है, उनके शरीर पर कुर्ती,सिर पर एक पगड़ी हैऔर एक रूमाल (फीता) है जो उनके कानों को सिर से ठोड़ी तक ढकता है और कसकर बांधा जाता है। दाहिने हाथ चमकती तलवार होती है। जब घोड़े को सजाया जाता है, तो वे फिर से भगवान का नामस्मरण कर हैं, ढोल, तासो और कंसाळेके सूर पर घोड़े का जुलुस निकाला जाता है। घोड़ों के साथ छत्री, मेहराब, अब्दागिरी होते है। एक मडवळ हाथ में धोती लिये होता है। कभी-कभी इस धोती को एक प्रकार से घोड़े पर डाला जाता है। बाकी लोग माड़ी या पेड़ की शाखाएं लेकर जाते हैं और वाद्ययंत्रों की लय पर घोड़े के साथ नृत्य करते हैं। घोड़े अपने पैरों को उसी प्रकार आगे-पीछे करके नाचने लगते हैं। नृत्य करते समय कमर में बंधी घोड़े की नाल नहीं हिलती। यह नाचते हुए घोड़े जैसा दिखता है।घोड़े नाचते,अपनी तलवारों के साथ तेजी से सीमा पर जाते हैं, सीमा पर नारियल तोड़ा जाता है और बाकी रस्में निभाई जाती हैं। घोड़े जिस प्रकार गए थे उसी प्रकार नृत्य करते हुए अपने मूल स्थान पर वापस आ जाते हैं। कभी-कभी वे लड़ने वाले दो घोड़ों की तरह व्यवहार भी करते हैं। घोड़ामोडणी के नृत्य में कोई विशेष गीत नहीं है। घोड़े के साथ नर्तक अपने मुँह से 'हर हर हर स्स्स्स्स' चिल्लाता है। वे 'हर हर हर हर महादेव' के नारे भी लगाते हैं और अपनी तलवारों से एक दूसरे से लड़ने का नाटक भी करते हैं। चूंकि घोड़ेमोडणी एक अनुष्ठानिक नृत्य है, इसलिए महिलाएं इसमें भाग नहीं लेती।

गोफ:-शिगमोत्सव के दिन जब घर-घर में शिगमो खेला जाता है जब मंडप में 'गोफ' खेलते हैं। आठ नाचने वाले एक हाथ में गोफ की डोर और दूसरे हाथों में रूमाल या दांडिया लेकर नाचते हैं। काणकोण के क्षेत्र में यह खेला जाता है। मजबूती से धोती बाँधे, रंगी शर्ट या कमीज पहने, गले में फूलों की माला, पावों में घुँगरों और माथे पर लाल टीका। 'गोफ' यानी गुँथना इसे राष्ट्रीय एकता का प्रतीक माना जाता है। इस नृत्य पर यह गीत गाते हैं-

'गुरुशी राम राम केला रे
गुरुशी खेळयासी तोणी दिल्या मू
पिंपळा पेडार समई जळे.....

धालो:-पौष महीने की पूर्णिमा से कृष्ण षष्टी तक 'धालोत्सव' मनाया जाता है। 'धालो' में गाये जाने वाले गीत पारम्परिक ही होते हैं। इन गीतों में रामायण तथा महाभारत पर आधारित गीता का प्रचलन दिखायी देता है। इसी में 'फुगड़ी' जैसी नृत्यशैली के अनेक विविध रूपों का दर्शन भी होता है, जैसे पाती, झिम्मा, कचे, फेर-फुगड़ी आदि। 'धालोत्सव' मनाने का धार्मिक उद्देश्य यह भी होता है कि, लोगों की देवी-देवताओं सम्बन्धी विश्वास बनाये रखे।धालो का हम स्त्रियों का खेल भी कह सकते हैं। यहाँ 'मांड' स्थल पर स्त्रियों का वर्चस्व रहता है। कुछ गाँवों में गाँव के मुखिया द्वारा, या माडगुरु, माणदेवता का सम्मान किया जाता है। पर ज्यादातर गाँवों में बूढ़ी स्त्री द्वारा ही ये रीति-रिवाज सम्पन्न होते हैं। पहले दिन 'मांड' स्थल को गोबर से लीपा जाता है। तुलसी स्थल के सामने दीया जलाकर केले, शक्कर और पान-सुपारी से आमंत्रित देवताओं को सन्तुष्ट किया जाता है। किसी-किसी गाँव में तीन, पाँच, नौ या ग्यारह दिनों का धालोत्सव मनाया जाता है। पौष माह के किसी भी बुधवार या इतवार को सुहागिनें, धालो के 'मांड' स्थल पर एकत्रित होती हैं। धालो में नृत्य की विभिन्न क्रियाओं, शैलियों के दर्शन होते हैं। दो पंक्तियों में एक दूसरे के आमने-सामने खड़े होकर, हाथों में हाथ लिये,

या कमर में हाथ डाले हुए. एक ताल पर, सूर पर आगे-पीछे पदन्यास करती है। 'घालो' शब्द मुंडारी भाषा से लिया गया है। इसका अर्थ है, हवा के झौके पर ऊपर नीचे होना। 'घालो' यानी 'झुलना' जैसे हवा के झोके पर पालना झूलता है, वैसे 'झुलना'। पर इस झुलने की क्रिया में भी एकरसता दिखायी देती है। इसलिए 'मांड' स्थल पर आये लोगों का मन भी अपने आप हिलने-डुलने लगता है। दिनभर के परिश्रम से, काम के बोझ से, स्त्रियों को एक राहत मिलती है, उनका मनोरंजन होता है। यही वजह है कि हर एक गाँव की स्त्रियाँ 'धालोत्सव' के दौरान अपने-अपने गाँव के 'मांड' पर एकत्रित दिखायी देती है। पौष महीने की चाँदनी रात में, ठिठुरती शीत ऋतु में 'धालोत्सव' मनाया जाता है। तब प्रकृति की हलचल का एहसास कण-कण से मुखर हो उठता है। अबोली, मोगरे जैसे पुष्यों की सुगन्ध से 'धालो' का 'मांड' स्थल महक उठता है।

श्री धालो गे धालो। धालांनी खेळू येयात गे धाले,
धालांनी खेळू येयात।

आखिरी रात को, देवचर को सूर-रोटी(शराब-रोटी) रखी जाती है। मांडा के आसपास चरू (पाच प्रकार के धान्यों की खिचड़ी) छिड़का जाता है और कुछ स्थानों पर मुर्गियों को भी मार दिया जाता है। आखिरी रात जगना होता है। कुछ स्थानों पर, रथों पर नृत्य किया जाता है, नाटक किए जाते हैं, गीत गाए जाते हैं, प्रात:काल कलश रखा जाता हैं, खेला जाता हैं और रंभाकी फुगड़ी गाई जाती है। फिरमांड पर से गोबर लिपाने के बाद धालो समाप्त हो जाता है।

फुगड़ी:-फुगड़ी, गोवा और कोंकण में महिलाओं द्वारा किया जाने वाला नृत्य है। धालो और चतुर्थी के दौरान गणपति के सामने फुगड़ी खेली जाती है। फुगड़े के दौरान, महिलाएं नववारी साडी पहनती हैं, अपने बालों में आबोली या अन्य फूलों की मालाएँ पहनती हैं और अलंकारों से सजती हैं। हालाँकि इसमें किसी वाद्ययंत्र का उपयोग नहीं किया जाता है, हाथों और कदमों की तालियों में संगीत होता है। कभी-कभी जब महिलाएं नाचने मेंमग्न हो जाती हैं, तो उसे फुगडी लगना कहा जाता हैं। फुगड़ी के उन्माद को हम देख सकते हैं कि फुगड़ी चतुर्थी त्योहारों, नागपंचम, मंगला गौरी और श्रावण गुरुवार को भी खेली जाती है। फुगड़े के दौरान महिलाएं एक घेरे में खड़ी रहती हैं। और वे ताली बजाते और घूमते हुए गीत गाते हैं। फुगड़ी के गीत अधिकतर महिलाओं द्वारा रचित होते हैं। ये कविताएँ अधिकतर महिलाओं की दुनिया में कठिनाइयों के बारे में हैं, लेकिन कभी-कभी स्थानीय देवता राधा और कृष्ण के बारे में भी हैं। फुगड़ी के कई प्रकार हैं, जैसे- साधारण फुगड़ी, एक कलशी फुगड़ी, एक बेबकी फुगड़ी, एक रगड़ो फुगड़ी, बसकी फुगड़ी, उभी खड़ी फुगड़ी इत्यादि ।

'अशी तांबडी बाई भाजी। रोविती मळयावरी भाजी खुंटी मी खुट्याने।
भाजी घाली मी व्होटयेत । भाजी ओती मी दालियेत।
भाजी चिरी मी आदोळेन। भाजी ठेवी मी रान्रीवर।
भाजी खतखत्या हसू लागली। भाजी धाडिली पंढरेसी।
रुकमाबाईच्या दुवाळयाना। सभा बैसती कौरवांची।
भाजी बाढता द्रौपदी। भाजी बाढता द्रौपदी। तिची सुटती साडी गाठ।
तिच्या प्रितीचा कृष्णा देव। तिची मारिता साडी गाठ।
लज्जा गेली त्या पांडवाची। अशी तांबडी बाई भाजी।

निर्ष्कष:-लोकनृत्य, स्थानीय भाषा में किया जाने वाला मनोरंजक नृत्य है, जो अतीत या वर्तमान संस्कृति को दर्शाता है। भारत में लोकनृत्य, संस्कृति का अहम हिस्सा है। सभी अवसरों पर नृत्य किया जात हैं। जीवन चक्र और ऋतुओं के वार्षिक चक्र के लिए अलग-अलग नृत्य का प्रयोजन मिलता हैं। नृत्य, दैनिक जीवन और धार्मिक अनुष्ठानों का अंग है। बदलती जीवन शैलियों के कारण नृत्यों की प्रासंगिकता विशिष्ट अवसरों से भी आगे पहुँच गई है। नृत्यों ने कलात्मक-नृत्य का दर्जा प्राप्त कर लिया है। अब तो प्रत्येक उत्सव या सार्वजनिक आयोजन में इन नृत्यों का दिखाई देना सामान्य बात है।लोक नृत्यों के महत्व की बात करें तो,लोक नृत्य किसी भी संस्कृति का अहम हिस्सा होता है. यह लोगों के इतिहास, परंपराओं, और मूल्यों को सिखाता है।लोक नृत्य, संस्कृति को संरक्षित करने और भावी पीढ़ियों तक पहुंचाने में मदद करता है। लोक नृत्य, रीति-रिवाजों को आध्यात्मिक, जीवंत, और आनंददायक बनाता है.

संदर्भ सूची:-

1. पैंगीणकर अजीत, काणकोणीची लोककला एक दायज,नुजीत प्रकाशन, काणकोण गोवा,2001
2. मयेकर आनंद, गोमंतकीय लोकवेदातील महिला लोकगीते, गोमंतक मराठी अकादमी सेवा, 2004
3. माथुर कमलेश, लोकसंस्कृति के सोपान, जैन पब्लिकेशन, 1998
4. माने वसुधा, गोव्यातील धालो,सकरंद साहित्य,1965
5. वेरेंकर श्याम, धालो,कोंकण टाइम्स पब्लिकेशन, 1984

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

रामायण काव्यों में सीता और अन्य स्त्री चरित्रों का आधुनिक संदर्भ

डॉ. वर प्रसाद वासाला

एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, शासकीय महिला स्नातक महाविद्यालय (स्वायत्त), जगित्याल, तेलंगाना

शोध सार:–*भारतीय संस्कृति के विभिन्न आदर्शों के निर्माण में रामायण की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। विशेष रुप से स्त्री के विभिन्न जीवन मूल्यों को भारतीय जीवन में प्रतिस्थापित करने का श्रेय रामायण को जाता है। रामायण पर आधारित विभिन्न काव्यों में नायिका सीता के साथ–साथ माता कौशल्या, सुमित्रा, कैकेयी, उर्मिला, मंदोदरी, तारा, शबरी, अहल्या, शूर्पणखा, मंथरा, त्रिजटा आदि चरित्रों ने स्त्री जीवन के विभिन्न पक्षों को प्रस्तुत किया है। क्योंकि यह चरित्र रामायण के विभिन्न काव्यों के भिन्न–भिन्न संदर्भों में स्त्री जीवन की स्वतंत्रता, सहिष्णुता, स्वाभिमान, सच्चरित्रता, आत्म सम्मान, आत्मनिर्भरता, अधिकार और समानता के संघर्ष पर चर्चा प्रस्तुत करते हैं, जो कि आधुनिक युगीन स्त्रीयों के जीवन के लिए भी प्रासंगिक हैं। अतएव रामायण काव्यों की सीता और अन्य प्रमुख स्त्री चरित्र आधुनिक युगीन स्त्रीयों को प्रेरित करती है कि वे अपने अन्याय को चुनौती दें, समान अधिकारों की मांग करेंऔर साहस के साथ अपने सपनों को पूरी करने की कोशिश करें।*

भारतीय संस्कृति के विभिन्न आदर्शों के निर्माण में रामायणकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। विशेष रुप से स्त्री जीवन के विभिन्न मूल्यों को भारतीय जीवन में प्रतिस्थापित करने का श्रेय रामायण को जाता है। रामायण के विभिन्न काव्योंमें नायिका सीता के साथ–साथ माता कौशल्या, सुमित्रा, कैकेयी, उर्मिला, मंदोदरी, तारा, शबरी, अहल्या, शूर्पणखा, मंथरा, त्रिजटा आदि चरित्रों ने स्त्री जीवन के विभिन्न पक्षों को प्रस्तुत किया है। यह चरित्र माता, पुत्री, पत्नी और प्रेमिका आदि के रुप में स्त्री जीवन की चारित्रिक विशेषताओं को प्रस्तुत करने में सफल रही हैं। उन में भी विशेष रुप से सीता, उर्मिला, मंदोदरी, शबरी आदि प्रमुख चरित्रों ने स्त्री जीवन की सकारात्मकता को और कैकेयी, मंथरा, शूर्पणखा आदि ने स्त्री जीवन की नकारात्मकता को प्रस्तुत करने का भरसक प्रयास किया है। क्योंकि यह चरित्र रामायण केविभिन्न काव्यों में भिन्न–भिन्नसंदर्भों में स्त्री जीवन की स्वतंत्रता, सहिष्णुता, स्वाभिमान, सच्चरित्रता, आत्म सम्मान, आत्मनिर्भरता, अधिकार और समानता के संघर्ष पर चर्चा प्रस्तुत करते हैं, जो कि आधुनिक युगीन स्त्रीयों के लिए भी प्रासंगिक हैं।

रामायण में केन्द्रीय चरित्र सीता भारतीय स्त्री जीवन का आदर्श है, जो विविध प्रकार की कठिन से कठिन परिस्थितियों का सामना करके भी अपने संयमित जीवन का संदेश आधुनिक युगीन स्त्रीयों के लिए देती है। वह अपने जीवन में राज भवन के भोग और विलास को त्यागकर पति राम के साथ वनगमन का निर्णय लेती है। वह अपने जीवन के द्वारा एक दासी स्त्री जीवन के बदले राम की जीवन यात्रा में सक्रिय रूप से भाग लेने वाली संगिनी स्त्री के चरित्र को प्रामाणित करती है। यथा–

औरों के हाथों यहाँ नहीं चलती हूँ ।
अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ।।[1]

इस तरह सीता का चरित्र पति की संगिनी बनकर पति–पत्नी संबंधों के निर्वाह में त्याग और सेवा का संदेश आधुनिक स्त्री जगत को देती है। रावण के द्वारा छल और कपट से अपहरित होकर सीता जब अशोक वाटिका में कैद होती है तब भीवह रावण के साम, दाम, दण्ड, भेद आदि उपायों से कतय विचलित नहीं होती है। वह अपने पातिव्रत्य का परिचय देते हुए केवल श्रीराम का ही ध्यान करती है। वह रावण को तृण प्राय सिद्ध करते हुए कहती है कि,

तृन धरि ओट कहति वैदेही, सुमिरि अवधपति परम सनेही ।
सुनु दस मुख खद्योत प्रकासा, कबहुँ कि नलिनी करइ विकासा ।।[2]

यहाँ सीता अपनी कठिन परिस्थितियों का सामना अटल साहस के साथ करती है। वह चुनौतियों का सामना करते हुए भी अपने जीवन का संयम नहीं खोती है, जो कि आधुनिक नारी के लिए संघर्षशीलता की प्रेरणा देता है। राम और रावण के युद्धोपरांत अयोध्या लौटते समय सीता अपने चरित्र की पवित्रता पर किए गए संदेहों का सामना करती है। जिससे दुखित वह राम से अपना प्रतिरोध प्रकट करते हुए कहती है कि,

त्वया तु नरशार्दूल रोषमेव अनुवर्तता।
लघुनेव मनुष्येण स्त्रीत्वमेव पुरस्कृतम् ।।[3]

अर्थ है कि पाणिग्रहण के समय मेरे मन में देखे हुए भक्ति और शील स्वभाव को पीछे ढकेलकर आपने ओछे व्यक्ति के समान रोष का अनुसरण किया है।लेकिन अपनी पवित्रता को प्रमाणित करने के लिए सीता का अग्नि परीक्षण का चयन, उसके विश्वास की मजबूत निष्ठा को प्रतिनिधित्व करता है, जो कि आधुनिक नारी को यह सिखाता है कि अपने विश्वासों की रक्षा करना महत्वपूर्ण है, चाहे आपके सामने कितने भी संदेह क्यों न हो। सीता को बिना बताये राम अपने भाई लक्षमण के द्वारा वाल्मीकी के आश्रण के वन में छोडकर आने पर वह अपने प्रति अन्याय को महसूस करती है। वह राम से अलग होकर अपने चरित्र में स्वायत्तता और पुनर्निर्माणशीलता को प्रस्तुत करती है।वह लव और कुश की माता बनकर मातृत्व के धर्म का निर्वाह करती है। वह अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करती है कि –

यदि कलंकिता हुई कीर्ति तो मुँह कैसे दिखलाऊँगी ।
जीवनधर पर उत्सर्गित हो जीवन धन्य बनाऊँगी ।
है लोकोत्तर त्याग अपना लोकाराधन है न्यारा ।
कैसे संभव है कि वह न हो शिरोधार्य्य मेरे द्वारा ।।[4]

वाल्मीकी आश्रम वन में अकेले जीने का संकल्प सीता की आंतरिक शक्ति और संसाधनशीलता को प्रतिनिधित्व करता है। जो कि आधुनिक स्त्रीयों को स्व-पर्याप्त और पुनर्निर्माणशील बनने की प्रेरणा देती है। यह आज की स्त्रीयों को सचेत करता है कि वे अपने अधिकारों और स्वतंत्रता की के लिए संघर्ष करें।

अंत में सीता अपने स्वाभिमान और आत्म सम्मान की रक्षा करते हुए धरती माता की गोद मंत शरण लेती है। यथा -

सर्वान् समागतान् दृष्ट्वा सीता प्राञ्जलिवाक्यमधोदृष्टि
वाङ्?मुखी अब्रवीत्-यथाऽहं राघवादन्यं मनसापि न चिन्तये।
तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हति।।[5]

अर्थ है कि, मैं रघुनाथ के सिवाय किसी दूसरे पुरुष का स्पर्श तो दूर मन से भी चिन्तन नहीं करती हूँ। यदि यह सत्य है तो धरती माँ मुझे अपनी गोद में स्थान दे दे। रामायण में सीता पारंपरिक नियमों और भूमिकाओं की चुनौती देती है। सीता का चरित्र महिलाओं को समाजिक प्रत्याशाओं से मुक्त होने और अपने खुद के मार्ग का पालन करने के लिए प्रेरित करता है। इस प्रकार वह अपने जीवन में कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी सीता अपने जीवन धर्म के प्रति समर्पित है, जो कि आधुनिक स्त्री जीवन में मानसिक दृढता की पुष्टि करता है।

यहीं नहीं रामायण काव्यों मेंअन्य प्रमुख चरित्रों में उर्मिला, मंदोदरी, शबरी आदि स्त्री जीवन की सकारात्मकता को और कैकेयी, मंथरा, शूर्पणखा आदि स्त्री जीवन की नकारात्मकता को प्रस्तुत करने में सफल रही हैं। उर्मिला के चरित्र में त्याग और सहयोग की भावना समाहित है, वह अपने पति लक्ष्मण के वनगमन के निर्णय को महत्व देकर अपने पति से जुडे हुएनीजी सुखों का त्याग करती है। अयोध्या में सेवा के दायित्व को स्वीकार करके, आज की स्त्रीयों को त्याग, आत्म संयम और घर के बडे-बुजुर्गों की सेवा का संदेश देती है। इसी तरह रावण की पत्नी मंदोदरी का चरित्र अपनी बुद्धिमत्ता, समझदारी और साहस के लिए जानी जाती है। रावण के अधर्मी आचरण के बावजूद, मंदोदरी ने अपने पति के प्रति निष्ठा बनाए रखा। उन्होंने कई बार रावण को सही मार्ग दिखाने का प्रयास किया। आज की स्त्री के लिए मंदोदरी ने उस स्त्री शक्ति का प्रदर्शन किया, जो संकट के समय में भी अपने सिद्धांतों और नैतिकता के प्रति दृढ़ रहते हैं। रामायण में शबरी ने आधुनिक स्त्री जीवन के लिए शरणागति, श्रद्धा और भक्ति की निष्ठा की प्रेरणा प्रदान किया है। इनके बाद कैकेयी, मंथरा, शूर्पणखा आदि नकारात्मक स्त्री चरित्रों से आज की स्त्री जीवन के लिए यह संदेश मिलता है कि, स्त्री में अत्याधिक स्वार्थ, बडकाने की प्रवृत्ति और स्वतंत्रता के दुरुपयोग आदि से जीवन की समरसता भंग होती है। मंथरा के बडकाने से कैकेयी में अत्याधिक स्वार्थ राम, सीता और लक्ष्मण को वनवास के लिए बाध्य करता है और वहीं शूर्पणखा अपनी स्वतंत्रता के दुरुपयोग से रावण के द्वारा सीता का अपहरण और राम-रावण के युद्ध में रावण के मृत्यु का कारण बनती है।

अतएवं कहना ना होगा कि रामायण काव्यों में केन्द्रीय स्त्री चरित्र सीता और अन्य स्त्री चरित्रों के माध्यम से आधुनिक युगीन स्त्रीयों को स्टीरियोटाइप्स को चुनौती देने, समान अधिकारों की मांग करने और साहस से अपने सपनों को पूरी करने की प्रेरणा मिलती है।

संदर्भ सूची:-

1. गुप्त, मैथिलीशरण- साकेत, सर्ग 8,पृष्ठ 223
2. तुलसीदास - रामचरितमानस, सुन्दरकांड 9/6-9
3. वाल्मीकी रामायण - युद्ध काण्ड, 116.14
4. वैदेही वनवास, पंचम सर्ग, उद्धृत उन्मेष, संपादक भटनागर, हाडा, गहलोत पृ.22
5. वाल्मीकी रामायण -उत्तरकाण्ड, 97.13-14

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना

डॉ. रीना स्वामी

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, महेंद्रगढ़

रामधारी सिंह दिनकर आधुनिक हिंदी कविता के दैदीप्यमान नक्षत्र हैं। उनकी कविता में एक ओर राष्ट्र प्रेम और समाज के प्रति गहरा जुड़ाव है तो दूसरी ओर श्रृंगार और प्रकृतिका मनोरम चित्रण। दिनकर नव-स्वच्छंद कविता के सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधि ही नहीं अपितु सर्वश्रेष्ठ कवि भी हैं। उनकी कविता में युवा वर्ग के ह्रदय को बांध लेने की क्षमता हैं। सम्प्रेषणीयता उनकी कविता का बहुत बड़ा गुण है। दिनकर में संवेदना और विचार का सुंदर समन्वय देखने को मिलता है साथ ही युग सत्य के प्रति जागरूकता भी। मैनेजेर पाण्डेय ने दिनकर को 'पौरूष के पूंजीभूत ज्वाल' कहा है। इसमें दो बातें महत्वपूर्ण हैं- पहली 'पौरुष' और दूसरी 'ज्वाला'। उनकेकाव्य और व्यक्तित्व को देखने पर वे शक्ति और उर्जा के कवि के रूप में सामने आते है।

दिनकर की कविता का प्रथम स्फुटनराष्ट्रीय कविता के रूप में हुआ। उनका पहला काव्य संग्रह 'विजय सन्देश' इसका प्रमाण है। उनकी कवि प्रतिभा की पहली अभिव्यक्ति राष्ट्रप्रेम के रूप में ही हुई। कवि ने स्वयं लिखा है 'सारे देश का एक कर्तव्य था ,जो स्वातंर्त्य - संग्राम को सबल बनाने का कर्तव्य था और सारे देश की एक मनोदशा थी ,जो क्रोध से क्षुब्ध, आशा से चंचल और मजबूरियों से बैचेन थी...मैं अपने समय के हाथ में निश्छल वंशी बनकर पड़ गया।'[1] उनका राष्ट्रीय काव्य दो भागों में बांटा गया-स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान लिखा गया काव्य और स्वतंत्रता के बाद लिखा गया काव्य। ऐसा नहीं था कि केवल दिनकर ने ही राष्ट्रीय चेतना से युक्त काव्य लिखा है। पहले भी राष्ट्रीय कविता लिखी गयी लेकिन पूर्ववर्ती कविता में राष्ट्रीयता के स्वर की प्रमुखता सतही थी। इसे गहराई आगे चलकर पहले माखनलाल चतुर्वेदी ने बाद में दिनकर ने दी।

दिनकर जिस समय हिंदी कविता के क्षेत्र में आए वह दौर छायावाद का था। छायावादी कविता एक ओर तो जनता से दूर थी दूसरी तरफ उसकी भाषा जीवन व्यवहार से दूर काव्य भाषा थी 'यह स्वाधीनता आन्दोलन का दौर था,जनता लड़ रही थी,मर रही थी और अपने समय की कविता में अपनी जिन्दगी की वास्तविकताओं, आकांक्षाओं और संघर्षों की आवाज सुनना चाह रही थी। वह ऐसी भाषा में सुनना चाहती थी जो उसके दिलों -दिमाग को छुए। ऐसे समय में दिनकर जी हिन्दी कविता में आए।'[2] उनकी कविता में सर्वत्र खुलापन है,सहजता है,लोकोन्मुखता है। उनकी कविता में 'छायावाद या उत्तर -छायावादी वैयक्तिक कविता की कुंठा, अतिरिक्त अवसाद तथा निराशा के घिराव के स्थान पर प्रसन्नता और सर्वत्र सौन्दर्य के प्रति स्वस्थ मानवीय प्रतिक्रिया दिखायी पड़ती है।'[3] दिनकर राष्ट्रीय चेतना के कवि है। इसके पीछे अनेक राष्ट्र भक्तों के बलिदान की प्रेरणा थी। उनकी राष्ट्रीय चेतना गहन से गहन होती चली गयी। जनता उन्हें 'राष्ट्रकवि' तक कहने लगी। उन्होंने लगातार जनता के बीच राष्ट्रीय मूल्यों को प्रक्षेपित किया। दिनकर की राष्ट्रीयता उग्र राष्ट्रीयता थी। उनकी कविता में ऐसा ओज है जो पाठकों में उत्साह,जूनून और बेचेनी पैदा कर दे। उनकी शुद्ध राष्ट्रवादी कविता की कुछ पंक्तियाँ हैं-

'धुंधली हुई दिशाएँ , छाने लगा कुहासा।
कुचली हुई शिखा से आने लगा धुआँसा।
कोई मुझे बता दे ,क्या आज हो रहा है?
मुंह को छिपा तिमिर में क्यों तेज रो रहा है?
प्यारे स्वदेश के हित अंगार मांगता हूँ
चढती जवानियों का श्रृंगार मांगता हूँ।'[4]

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कविता का यही उद्देश्य माना है। उन्होंने लिखा है 'कविता मनोवेगों को उत्तेजित करने का एक उत्तम साधन है ...कार्य -प्रवृति के लिए मन में वेग का आना आवश्यक है।'[5] स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान भारतीय जनता को जिस उत्साह , उमंग ,जूनून एवं प्रेरणा की आवश्यकता थी वह दिनकर की 'रेणुका',' 'हुंकार','सामधेनी' में दिखाई पड़ती है। दिनकर की कविता में बैचेनी है,छटपटाहट है लेकिन निराशा नहीं है। कवि की यह बैचेनी भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन के शिथिल पड़ जाने से उत्पन्न होती है। भारतवासियों को जगाने के लिए वे कह उठते हैं- 'प्यारे स्वदेश के हित अंगार मांगता हूँ'/'रे प्रवासी,जाग,तेरे देश का संवाद आया'। दिनकर जनता के कवि है। उन्हें पता था कि भारत की स्वाधीनता जैसे बड़े लक्ष्य को जनता के सहयोग के बिना नहीं प्राप्त किया जा सकता। वे जनता का आह्वान करते हैं -

मंगल - मुहूर्त ; रवि ! उठो , हमारे क्षण ये बड़े निराले है
हम बहुत दिनों के बाद विजय का शंख फूंकनेवाले है।[6]

दिनकर भारत - भूमि को 'मोहिनी' कहते है जो दिनकर की राष्ट्र के प्रति गहन आत्मीयता को रेखांकित करता है। यह आत्मीयता उनके सम्पूर्ण राष्ट्रीय काव्य में देखते को मिलती है। राष्ट्रीयता दिनकर के काव्य की मूल प्रवृति है। दिनकर 'असमय आह्ववान' कविता में लिखते है-

समय - असमय का तनिक न ध्यान
मोहिनी, यह कैसा आह्वान?[7]

दिनकर की राष्ट्रीयता के केंद्र में केवल भारत ही नहीं है अपितु सम्पूर्ण विश्व है। वे संकुचित राष्ट्रीयता के पक्षधर नहीं थे। वे विश्व मैत्री एवम् शांति के समर्थक थे। हिटलर की विचारधारा के केंद्र में राष्ट्रीयता थी। हिटलर के चलते युगीन समय में 'राष्ट्रीयता' एक बदनाम शब्द बनकर रह गया था। दिनकर इससे भली - भांति परिचित थे। उन्होंने बाद के समय में 'राष्ट्र देवता

का विसर्जन' कविता लिखी। इसमें उन्होंने लिखा 'यदि राष्ट्रीयता अंतर्राष्ट्रीयतासे विरोध पालती है,तो अच्छा है किवह विदा हो जाए।'[8] दिनकर की राष्ट्रीयता धर्मनिरपेक्ष भी थी। इसका सबसे अच्छा प्रमाण उनकी 'दिल्ली' शीर्षक कविता में देखने को मिलता हैं। इसमें उन्होंने शेरशाह से लेकर औरंगजेब तक के शासन को अपना माना। वे लिखते हैं–

दुर्गादास– प्रताप बलि का प्यारा राजस्थान नहीं है
चढ़ें अश्व पर सेंक रहे रोटी निचेक्र भालों को
खोज रहा मेवाड़ आज फिर उन अल्हड़ मतवालों को।[9]

दिनकर की राष्ट्रीयता में सामाजिकता का स्वर प्रबल था क्योंकि उनके अनुसार राष्ट्र का मतलब होता है, उसमें रहने वाली जनता 'कवि ने राष्ट्र को उसकी तत्कालीन घटनाओं, यातनाओं,विषमताओं आदि के रूप में नहीं बल्कि उनकी संश्लिष्ट सांस्कृतिक परम्परा के रूप में पहचाना है।'[10] उनकी 'कविता की पुकार', 'हाहाकार' जैसी कविताओं में ग्रामीण समाज के सौन्दर्य और संस्कृति के दर्शन होते है–'स्वर्णाचंला अहा! खेतों में उतरी संध्या श्याम परी... चौपालों में कृषक बैठे गाते 'कंह अटके बनवारी'? समाज का एक महत्त्वपूर्ण वर्ग है–स्त्री। लम्बे समय से समाज की मुख्यधारा से वंचित रही। वह समाज द्वारा सदियों से उपेक्षित, अपमानित एवम् पीढ़ित होती रही है। दिनकर 'रजा रानी' कविता में समाज में स्त्रियों की अवस्था पर प्रकाश डालते है–

राजा वसंत, वर्षा ऋतुओं की रानी,
लेकिन,दोनों की कितनी भिन्न कहानी।
राजा के मुख में हंसी, कंठ में माला,
रानी का अंतर विकल, दृगों में पानी।[11]

उनकी कविता में केवल काल्पनिक अनुभूतियां नहीं है अपितु समाज एवम् राष्ट्र के साथ गहरा जुडाव एवम् रिश्ता भी देखने को मिलता है। स्वतंत्र भारत का जो स्वप्न दिनकर की आँखों ने देखा था उसे फलित होते देखने का सौभाग्य उन्हें प्राप्त हुआ। स्वतंत्र भारत में दिल्ली को केंद्र में रखकर दो कविता लिखी– 'हढ़ की पुकार','भारत का यह रेशमी नगर'लेकिन जल्दी ही उनका मोहभंग हो गया। स्वतंत्र भारत में आम जनता की पीड़ा, अभाव ,गरीबी ने उनके मन को पीड़ा से भर दिया। जनता के प्रति सरकार की उपेक्षा ने उनके मन को आहत कर दिया। कवि ने क्षुब्ध ह्रदय से लिखा–
है विकल देश सारा अभाव के तापों से दिल्ली में सुख से सोयी है नरम रजाई।[12]
युगीन भारतीय नेताओं के भोग – विलास , आडम्बर एवम् भ्रष्टाचार ने दिनकर के मन को न केवल क्षुब्ध किया अपितु राष्ट्रीय स्वर को कड़वा बना दिया। उनकी 'प्रथम वर्षगाठ'कविता में इसका उल्लेख है–

आजादी खादी के कुरतेकी एक बटन
आजादी टोपी एक नुकीली तनी हुई
फैशन वालों के लिए नया फैशन निकला
मोटर से बांधों तीन रंग वाला चिथड़ा
औ गिनो कि आँखे पढ़ती है कितनी हम पर
हम पर यानी आजादी के पैगम्बरपर।[13]

आचार्य हजारी प्रसाद द्वेवेदी ने दिनकर को इस काल का सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधि माना है। इसका प्रमुख कारण है कि उनकी कविता में उमंग और मस्ती के साथ सामाजिक मंगलाकांक्षा का भी प्राधान्य है । विजयदेवनारायण साही ने उत्तर–छायावादी कवि को अगंभीर माना और कहा इसी कारण उनकी कविता में मस्ती थी 'उन्होंने इस अगम्भीरता का सम्बन्ध तत्कालीन राजनीति में व्याप्त अनिश्चय की स्थिति से जोड़ा'[14] लेकिन ऐसा नहीं था यह दशक बहुत उथल पुथल वाला था। इन कवियों ने गम्भीर होकर इन परिस्थितियों को वाणी दी और इसे विश्व यथार्थ से जोड़ा। दिनकर ने युद्ध और शांति तथा हिंसा और अहिंसा को विषय बनाकर 'कुरुक्षेत्र' जैसा विशाल काव्य लिखा। उन्होंने अहिंसा को एकमात्र मूल्य के रूप में कभी स्वीकार नहीं किया। इसका प्रमाण है कि जब चीन ने भारत पर आक्रमण किया तो उन्होंने 'परशुराम की प्रतीक्षा' कविता लिखी। इसमें उन्होंने हिंसा और अहिंसा सम्बन्धी अपना दर्शन पुरे तर्क के साथ प्रस्तुत करते हुए लिखा ' मैं जीवन–भर गाँधी और मार्क्स के बीच के बीच झटके खाता रहा है। इसीलिए उजले को लाल से गुणा करने पर जो रंग बनता है, वही रंग मेरी कविता का रंग है।'[15]

दिनकर राष्ट्रीय चेतना के कवि है। उनकी कविता में जितना आवेश है उतनी ही गहन वैचारिकता भी। उनकी भाषा सहज है तथा जनता के करीब है। उनकी भाषा में फैलाव है लेकिन शिथिलता बिल्कुल नहीं। भाषा उनकी कविता को संभाले रखती है, संतुलन बनाये रखती है। नव–स्वछंद कविता पर जो अगंभीर होने का आरोप लगाया जाता है दिनकर की कविता उसका खंडन करती है। दिनकर की कविता समकालीन के साथ – साथ सर्वकालिक भी है। मैनेजेर पाण्डेय ने लिखा है 'दिनकर का काव्य हमारे सामने कुछ सवाल रखता है। एक सवाल तो यही है कि हमें कैसी कविता चाहिए। ऐसी जो सोये हुए को जगा दे या ऐसी जो जगे हुए को सुला दे।'[16] दिनकर की कविता हमें सुलाती नहीं है अपितु जगाती है। महान कवि नव– सृजन की प्रेरणा देते है। दिनकर भी प्रेरणा देते है–नये समाज को रचने की एवम् नये साहित्य को रचने की।

संदर्भ सूची :-

1. आधुनिक कविता का इतिहास,नंदकिशोरनवल,वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली,प्रथम संस्करण 2023,पृष्ठ संख्या 274
2. हिंदी कविता का अतीत और वर्तमान ,मैनेजेरपाण्डेय,वाणी प्रकाशन , नयी दिल्ली ,प्रथम संस्करण 2013,पृष्ठ सं 83
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ.नगेन्द्र एवम् हरदयाल, मयूरपेपर बैक्स,संस्करण 2015 , पृष्ठ सं. 604
4. हिंदी कविता का इतिहास, नंदकिशोर नवल, पृष्ठ सं.275
5. चिंतामणि,रामचंद्रशुक्ल,भाग –3, पृष्ठ सं. 91 92
6. दिनकर अर्धनारीश्वर कवि, नंदकिशोर नवल ,राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली , प्रथम संस्करण , पृष्ठ सं. 16
7. वही,पृष्ठ सं.16
8. हिंदी कविता का इतिहास,पृष्ठ 277
9. वही,पृष्ठ सं. 275
10. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ.नगेन्द्र एवम् हरदयाल,पृष्ठ सं.604
11. हिंदी कविता का इतिहास,नंदकिशोरनवल,पृष्ठ सं.278
12. वही,पृष्ठ सं.277
13. वही,276
14. वही,पृष्ठ सं.255
15. वही,पृष्ठ सं.280
16. हिन्दी कविता का अतीत और वर्तमान, मैनेजेर पाण्डेय ,पृष्ठ सं.88

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

एक देश एक चुनाव : एक समसामयिक अध्ययन

मनोज अहिरवार

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रसाशन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.

प्रस्तावना:-लोकतंत्र की अनिवार्य शर्त है, स्वतंत्र और निष्पक्ष रूप से निर्वाचनों का आयोजन करना। एक देश एक चुनाव लोकसभा और राज्यों की विधानसभाओं का चुनाव एक साथ करवाने का वैचारिक उपक्रम है। एक देश एक चुनाव के विचार के तहत देश में चुनाव चक्र को इस तरह से संरक्षित करने का प्रस्ताव है, जिसमें लोकसभा राज्य विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराए जाएंगे। जब एक देश एक टैक्स लागू किया जा सकता है, तो एक देश एक चुनाव के विचार को भी आगे बढ़ाया जा सकता है। एक देश एक चुनाव या एक साथ सभी चुनाव कराने का विचार नया नहीं है, क्योंकि 1952, 1957, और 1962 में पहले के तीन लोकसभा चुनाव के समय चुनाव एक साथ ही हुए थे, फिर राज्यों के पुनर्गठन और सरकार की बर्खास्तगी के चलते धीरे-धीरे यह क्रम बदलता गया। वहीं साल 1970 आते-आते साथ-साथ चुनाव कराने की परंपरा पूरी तरह से खत्म हो गई। निश्चित ही ऐसी परिस्थितियों में एक देश एक चुनाव विचार पहली नजर में अच्छा प्रतीत होता है, पर यह व्यावहारिक है या नहीं इस पर विशेषज्ञों की राय अलग-अलग है। दक्षिण अफ्रीका, इटली, बेल्जियम और स्वीडन जैसे यूरोपीय देशों में भी एक साथ चुनाव का प्रावधान है।

शोध पद्धति:-प्रस्तुत शोध पत्र सामाजिक विज्ञान और मानविकी विषयों से संबंध रखता है। शोध पत्र में अनुभवमूलक विश्लेषणात्मक और वर्णनात्मक अनुसंधान विधि का प्रयोग कर इसे क्रमागत तरीके से प्रस्तुत किया गया है।

तथ्य संकलन:-तथ्यों का एकत्रीकरण द्वितीयक स्रोतों से निष्पक्षता एवं शुद्धता के साथ किया गया है। इसमें भारत सरकार की कुछ रिपोर्ट, पुस्तकें, जर्नल्स, समाचारपत्र-पत्रिकाओं तथा इंटरनेट आदि का उपयोग किया गया है।

उद्देश्य:-

- एक देश एक चुनाव क्यों चर्चा में है? और इसके क्या लाभ हैं? इसका पता लगाना ।
- एक साथ चुनाव करवाने में क्या-क्या चुनौतियां हैं? इसका अध्ययन करना।
- एक देश एक चुनाव का इतिहास क्या रहा? इसका अध्ययन करना।
- वर्तमान चुनावी प्रक्रिया और एक देश एक चुनाव में क्या अंतर है? इसका अध्ययन करना ।
- देश में इससे क्या परिवर्तन होंगे इसका अध्ययन करना ही इस शोध के उद्देश्य हैं।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि:-भारत में लोकसभा एवं विधानसभाओं के चुनाव एक साथ किया जाना नया नहीं है। भारत में स्वतंत्रता के बाद से ही 1952, 1957, 1962 और 1967 में लोकसभा एवं विधानसभाओं के चुनाव लगातार साथ-साथ किए जा चुके हैं।1968-69 में कुछ राज्यों की विधानसभाओं के समय से पहले विघटन के कारण और राज्यों के पुनर्गठन के कारण यह चुनाव अलग-अलग होने लगे। तब से अभी तक भारत में लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के चुनाव पृथक-पृथक होते हैं। चुनाव आयोग की वार्षिक रिपोर्ट 1983 में भी इन चुनावों को एक साथ करने के लिए कहा गया था। वर्ष 1999 में विधि आयोग ने भी अपनी 170वीं रिपोर्ट में लोकसभा और विधानसभा चुनावों को एक साथ करने का विचार प्रस्तुत किया था। सन 2018 में विधि आयोग ने एक साथ चुनाव का समर्थन किया, और मसौदा रिपोर्ट पेश की जिसमें चुनावी कानून में बदलाव की बात कही गई थी। विधि आयोग का सुझाव था कि, एक साथ चुनाव संविधान में प्रमुख संशोधनों के द्वारा ही संपन्न कराए जा सकते हैं । तथा कम से कम 50% राज्यों को इसके लिए सहमति देनी होगी ।

कोविंद समिति:-एक देश एक चुनाव की रूपरेखा बनाने के लिए सितंबर 2023 में पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद की अध्यक्षता में एक उच्च स्तरीय कमेटी बनाई गई थी । जिसमें अध्यक्ष के अतिरिक्त साथ सदस्यों को भी शामिल किया गया था। सदस्यों में अमित शाह, अधीर रंजन चौधरी, गुलाम नबी आजाद, एन के सिंह, सुभाष कश्यप, हरीश साल्वे एवं संजय कोठारी थे। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट 14 मार्च 2024 को राष्ट्रपति श्रीमती द्रौपदी मुर्मू को सौंप दी थी । 191 दिन तक विशेषज्ञ एवं हितधारकों से चर्चा के बाद कमेटी ने 18,626 पन्नों की रिपोर्ट दी है। इसमें सभी राज्यों की विधानसभाओं का कार्यकाल 2029 तक बढ़ाने का सुझाव दिया है। जिससे लोकसभा चुनाव के साथ ही उनके चुनाव कराए जा सकें। पहले चरण में लोकसभा और विधानसभा के चुनाव एक साथ कराए जाएं तथा 100 दिन के भीतर स्थानीय निकायों के चुनाव कराए जा सकते हैं। इसके लिए चुनाव आयोग लोकसभा विधानसभा तथा स्थानीय निकायों की एक ही मतदाता सूची तैयार कर सकता है। रामनाथ कोविंद समिति द्वारा परामर्श किए गए 8 में से सात राज्यों के चुनाव आयुक्तों ने इस विचार को सहमति प्रदान कर दी है। समिति ने 47 राजनीतिक दलों से परामर्श किया था, जिसमें से 32 दलों ने समर्थन किया, तथा 15 ने विरोध किया इसमें से 5 दल की विभिन्न राज्यों में सत्ता है।

चुनौतियां:-एक देश एक चुनाव के लिए 2019 से नए चुनावी चक्र को चिन्हित करने के लिए आगामी चुनाव के बाद एक नियत तिथि निर्धारित करना। इसके लिए उन राज्य विधानसभाओं का कार्यकाल बढ़ाने की आवश्यकता होगी जो इस तिथि से पहले समाप्त होने वाली हैं। और उन अन्य विधानसभाओं को समय से पहले भंग करना होगा जिनका कार्यकाल इस तिथि से आगे बढ़ता है। संविधान में कुल 18 संशोधनों की आवश्यकता है। जिसमें सबसे महत्वपूर्ण अनुच्छेद 83 (संसद के दोनों सदनों से संबंधित)और अनुच्छेद

172(राज्य विधानसभाओं की अवधि के संबंध में) है। राज्यों को संसद द्वारा पारित अनुच्छेद 324 ए (पंचायत और नगरीय निकायों में एक साथ चुनाव के लिए) अनुच्छेद 325 (राज्य चुनाव अयोगी की सहायता से एक समान मतदाता सूची और पहचान पत्र बनाने के लिए भारत के चुनाव आयोग को सशक्त बनाने के लिए) में संशोधन का अनुसमर्थन करता है।

समर्थन में तर्क :-

- केंद्रित शासन यह सरकार को एक बार चुनाव संपन्न हो जाने के बाद शासन पर ध्यान केंद्रित कर सकने में सक्षम बनाता है । वर्तमान में देश के किसी न किसी हिस्से में चुनाव होते ही रहते हैं, जिससे देश का पूरा ध्यान इन चुनावों पर ही केंद्रित हो जाता है। प्रधानमंत्री से लेकर केंद्रीय मंत्री मुख्यमंत्री, राज्य के मंत्री सांसद, विधायकों से लेकर पंचायत के सदस्यों तक हर कोई इसी में संलग्न हो जाता है।
- चुनावी लागत में कमी इसके माध्यम से राजकोष में भारी बचत होगी। राजनीतिक भ्रष्टाचार का एक मुख्य कारण है, बार-बार होने वाले चुनाव । प्रत्येक चुनाव में भारी धन की आवश्यकता पड़ती है। एक साथ चुनाव कराने पर सरकार एवं राजनीतिक दलों का चुनावी खर्च काफी हद तक काम हो सकता है।
- सुरक्षा बलों और प्रशासनिक तंत्र की तैनाती में कमी चुनाव को शांतिपूर्ण संपन्न करने के लिए बड़ी संख्या में पुलिस और सेना की तथा शिक्षकों और कर्मचारियों, अधिकारियों की तैनाती एक ही बार करनी होगी। बार-बार नहीं करनी पड़ेगी। यह अपने कार्यों को ठीक से कर पाएंगे।
- अगर भारत को एक मजबूत लोकतांत्रिक देश के नाते विकास की दौड़ में दुनिया के अन्य देशों से मुकाबला करना है तो बार-बार होने वाले चावन से निजात पानी होगी।
- काले धन पर लगाम तथा संसाधनों की बचत।

विरोध में तर्क :-

- क्षेत्रीय पार्टियों का अस्तित्व खतरे में अगर एक साथ चुनाव होते हैं, तो केंद्रीय दलों या बड़े राष्ट्रीय दलों को ही फायदा होगा छोटे दल या क्षेत्रीय दल खत्म हो जाएंगे ।
- राष्ट्रीय हितों के मुद्दे प्राथमिकता में होंगे जबकि राज्य चुनाव स्थानीय मुद्दों पर आधारित होते हैं। एक साथ चुनाव होने पर राष्ट्रीय मुद्दे राज्य के मुद्दों पर हावी हो सकते हैं ।
- सरकार को वापस बुलाए जाने के डर के बिना एक निश्चित कार्यकाल का प्रावधान निरंकुश प्रवृत्तियों को जन्म दे सकता है।
- सरकार की जनता के प्रति जवाबदेही कम हो सकती है, क्योंकि नियमित चुनाव के कारण सरकार लोगों की इच्छा सुनने के लिए बाध्य होगी।
- एक साथ चुनाव के लिए सरकार पर बहुत अधिक खर्च आएगा 2019 में चुनाव कराने के लिए 53.76 लाख वैलिट यूनिट और ईवीएम की 38.67 लाख कंट्रोल यूनिट तथा 41.65 लाख वीवीपैट की जरूरत होगी। जिस पर करीब 9284.15 करोड़ खर्च होंगे। यह मशीन हर 15 साल बाद बदलनी पड़ेगी और उनकी स्टोरेज करने के लिए भी बहुत बड़े खर्च की जरूरत पड़ेगी।

निष्कर्ष :-एक देश एक चुनाव जो भारतीय स्वतंत्रता के समय से ही होता रहा है ।राज्यों के पुनर्गठन और कई राज्यों की विधानसभाओं के समय से पहले विघटन होने के कारण यह चक्र कई टुकड़ों में बंटता गया। जिसकी वजह से भारत में किसी न किसी राज्य में चुनाव चलते रहते हैं। भारत को बार-बार चुनावी मोड़ से निकालने के लिए एक देश एक चुनाव अब एक बार फिर से चर्चा का विषय बन गया है। इसकी रूपरेखा बनाने के लिए पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद की अध्यक्षता में एक उच्च स्तरीय समिति का गठन किया गया था। जिसने अपनी रिपोर्ट में इसका समर्थन किया और कई सुझाव भी दिए। भारत में लोकसभा एवं विधानसभा के चुनाव एक साथ करने में बहुत सारी चुनौतियां भी हैं। जिनमें प्रमुख संविधान में संशोधन तथा साथ ही विधानसभाओं के कार्यकाल को आगे बढ़ाना या समय से पहले भंग करना। और यह कर पाना बहुत कठिन है। भारत बहुत बड़ा लोकतांत्रिक देश है, इसके कई राज्य तो बहुत से देश से भी बड़े हैं। क्या ऐसे में एक साथ चुनाव कर पाना संभव है? जहां कुछ राज्यों के चुनाव एक साथ नहीं हो पाए ।इन सभी चुनौतियों का सामना करके ही यह व्यवस्था लागू हो सकती है ।इस विचार का समर्थन करने वालों का मानना है कि, इससे प्रशासनिक लागत और समय की बचत होगी जबकि विरोधियों का तर्क है कि, इससे चुनाव प्रक्रिया में विविधता और लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व प्रभावित हो सकता है। संक्षेप में एक देश एक चुनाव का मुख्य उद्देश्य संसाधनों की बचत और चुनावी प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित करना है। इसकी व्यावहारिकता और प्रभावशीलता पर दोनों पक्षों में बहस जरूरी है।

संदर्भ सूची :-

1. सुभाष कश्यप : भारत का संविधान, संवैधानिक विकास और स्वाधीनता संघर्ष, 1972
2. राय डॉ. एम.पी. : भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, कॉलेज बुक डिपो जयपुर, 1987
3. जैन, डॉ. पुखराज : भारतीय राजव्यवस्था, 1984
4. https://www.sanskritiias.com/hindi/current-affairs/one-nation-one-election-27
5. https://onoe.gov.in/
6. https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/one-nation-one-election
7. https://www.google.com/amp/s/navbharattimes.indiatimes.com/india/one-nation-one-election-implementation-process-in-detail/amp_articleshow/113478681.cms
8. https://www.jagran.com/news/national-ncr-one-nation-one-election-implementation-is-not-easy-know-here-what-is-gov-plan-jprime-23801556.html
9. https://www.aajtak.in/topic/one-nation-one-election
10. https://www.google.com/amp/s/navbharattimes.indiatimes.com/education/gk-update/what-is-one-nation-one-election-kya-hai-ek-desh-ek-chunav-history-in-india/amp_articleshow/113463383.cms
11. https://www.google.com/amp/s/www.bhaskar.com/amp/national/news/one-nation-one-election-will-be-implemented-in-modi-30-133648457.html

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में स्त्री के सामाजिक और पारिवारिक परिदृश्य का यथार्थ चित्रण

ज्ञानेश्वर दयाल
डॉ. अमित कुमार

1. शोधार्थी, हिन्दी विभाग, जवाहरलाल नेहरू मेमोरियल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बाराबंकी, उ. प्र.
2. एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, जवाहरलाल नेहरू मेमोरियल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बाराबंकी, उ. प्र.

मैत्रेयी पुष्पा समकालीन हिन्दी कथा साहित्य की सशक्त हस्ताक्षर है। उनके कथा साहित्य गाँव के परिवेश में ही लिखे गये है। उन्होंने अपने कथा–साहित्य में उपेक्षित, पीड़ित एवं हाशिए पर रखे गये लोगों को केन्द्र में रखकर उनका प्रणयन किया है। जिसके फलस्वरूप उनकी रचनाएं खासतौर से कथा साहित्य भारतीय समाज में प्रचलित रुढ़ियों एवं परम्पराओं पर तीखा प्रहार करती हुई दिखाई देती है। पुष्पा जी ने अपने उपन्यासों के माध्यम से भारतीय समाज में व्याप्त रीति–रिवाज एवं धर्म के नाम पर स्त्री के शोषण का यथार्थ चित्रण किया है। सामान्यतः उपन्यास यथार्थ परिवेश में मानव–जीवन की अभिव्यक्ति बनकर मनुष्य की आन्तरिक शक्तियों का अन्वेषण करके मानवता की प्रतिष्ठा तथा मानव मूल्यों की मर्यादा सुनिश्चित करता है।

मैत्रेयी पुष्पा का कथा साहित्य समकालीन लेखिकाओं से वैचारिक दृष्टि से अलग है। 'नारी विमर्श' को ध्यान में रखकर समकालीन लेखिकाओं ने अपने साहित्य में विचार व्यक्त किये हैं। लेकिन सभी लेखिकाओं में मैत्रेयी पुष्पा अपनी अलग पहचान रखती हैं। सदियों से नारी जिस प्रकार हमारे भारतीय समाज में उपेक्षित रही है, उसकी वास्तविक स्थिति से परिचित कराने का कार्य मैत्रेयी पुष्पा जी ने किया है। वे समाज में प्रचलित नारी की उस नवीन छवि को जन्म देती है जिससे पाठक एवं श्रोता उनसे जुड़ते चले जाते हैं और तब–तक जुड़े रहते हैं जब तक अपने लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर लेते। उनके साहित्य में परम्परावादी विचारधारा को लेकर सामाजिक और पारिवारिक परिदृश्य का यथार्थ चित्र दिखाई देता है।

परिवार समाज की महत्वपूर्ण इकाई है। परिवार की एकता सदस्यों के आपसी सम्बन्धों पर निर्भर रहती है। मैत्रेयी जी ने अपने सभी उपन्यासों में इसका चित्रण किया है। अल्मा कबूतरी' उपन्यास में मंसाराम के परिवार में कदम बाई के आ जाने से पारिवारिक सम्बन्धों में कटुता उत्पन्न हो जाती है। मंसाराम की पत्नी आनन्दी को अपने पति के दूसरी स्त्री से सम्बन्ध का पता चला तो वह क्रोधित हो गई। वह कदमबाई के बेटे राजा पर भौकते हुए कुत्ते को छोड़ देती है। मंसाराम का बड़ा बेटा जोधा अपनी माँ की हालत देखकर अपने पिता पर हाथ उठाने के लिए तैयार हो जाता है। मंसाराम को पत्नी का दुःख देखकर दुःख भी होता है लेकिन वह कदमबाई के आकर्षण के कारण एवं बेटे राणा का मोह उसे कबूतरा बस्ती की ओर आकर्षित करता रहता है। आनन्दी अपने पति मंसाराम को सुधरता न देखकर यह ऐलान कर देती है ''जोधा अब इस घर में तेरा बाप रहेगा या हम, क्योंकि घर की पटरानी बनने कदमबाई कबूतरी आ रही है।'' बात इस तक बढ़ जाती है कि जमीन का बँटवारा कर दिया जाता है।

आजादी के बाद जमींदारी प्रथा समाप्त होने के बावजूद भी सामन्ती प्रथा गाँवों में आज भी प्रचलित है। स्त्री को घर की चार–दीवारी तक सीमित कर दिया गया है तथा पति का आदेश ही उसके लिए ब्रह्म वाक्य है जिसकी अवहेलना करना उसका सबसे बड़ा अपराध माना जाता है जिसके कारण उसे पति से सम्बन्ध को हमेशा के लिए तोड़ना पड़ता है और इस स्थिति में वह असहाय होकर दर–दर की ठोकरें खाने के लिए विवश हो जाती है। 'चाक' उपन्यास की नायिका एवं मुख्य स्त्री पात्र सारंग नैनी अपने पति रंजीत का सहयोग न मिल पाने के कारण वह रेशम के हत्यारे डोरिया को कानूनी सजा दिलाने के लिए श्रीधर मास्टर के सहयोग से कानूनी लड़ाई लड़ती है तथा श्रीधर के विचारों से प्रभावित होकर वह उससे प्रेम करने लगती है। जिसके कारण समाज में उसकी चर्चा एवं आलोचना होती है। क्योंकि किसी स्त्री का पति के जीवित रहते अन्य पुरुष को उस नजर से देखना भी पाप माना जाता है। लेकिन सारंग नैनी इसकी परवाह नहीं करती है। वह समाज से टककर लेती है। इस पवित्रता सम्बन्धी धारणा के सम्बन्ध में ओमवेट लिखते हैं ''पारिवारिक पतिव्रता, पुरुष की एकल निष्ठा के आधार पर नहीं बल्कि स्त्रियों की एकल निष्ठा निर्धारित की जाती है। इसीलिए स्त्रियों को घर के अन्दर कैद रखा जाता है, पुरुष जाति ने इसी अंधविश्वास के कारण स्त्रियों के साथ अधिक अन्याय किया है।''[2]

'चाक' उपन्यास की नायिका सारंग अन्य शोषित स्त्रियों की तरह समझौता नहीं करती है न ही इस सामंती प्रथा को मानकर घर की चारदीवारी में बैठती है बल्कि वह अपनी बहन रेशम के न्याय के लिए स्वयं सक्रिय रहती है। ऐसा करने में वह समाज, परिवार एवं पति की अनुमति की परवाह भी नहीं करती है। श्रीधर मास्टर के साथ रहकर वह सही–गलत का भेद जान लेती है। वह अन्याय के विरुद्ध अपने पति रंजीत से भी उलझ जाती है। जब वह चुनाव का पर्चा भरने जाती है तो वह सोचती है कि मुझ जैसी बेशर्म औरत और कोई नहीं होगी। लेकिन तभी उसे एहसास होता है, ''ऐसा क्या करने जा रहे हैं कि जान हथेली पर.......क्या हम इस सबके हकदार नहीं है? छीन रहे हैं किसी का अधिकार या चोरी कर रहे हैं।?''[3]

हमारे समाज में स्त्री को ऐसी आजादी कहाँ है जिसमें वह स्वयं निर्णय ले सके। अरविन्द जैन की मान्यता है, ''समाज व राजसत्ता के सभी क्षेत्रों में स्त्रियों की स्थिति न के बराबर है। निर्णय लेने मैं प्रायः सभी मुख्य केन्द्रों पर पुरुषों का अधिकार सुरक्षित हैं। जिसकी वजह से स्त्री के हिस्से में सिर्फएक अंधेरा कोना ही बचा रह गया है।''[4] अर्थात् ऐसी परिस्थितियों में एक ग्रामीण समाज में सारंग नैनी का अपने पति के विरुद्ध चुनाव लड़ना कितना बड़ा संघर्ष है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि परिवार के नियम, कानूनी मान्यताएं स्त्री के अनुकूल नहीं पितृसत्ता का एक मात्र लक्ष्य हैं स्त्रियों को पारिवारिक मूल्यों के नाम पर उत्पीड़न के घेरों में जकड़ना। परिवार की संरचना सामंती है जिनमें स्त्री कैद है ऐसी ही रीति–रिवाज एवं मान्यताएं

अगनपाखी उपन्यास की भुवन को नियंत्रित करती है।

भुवन को भारतीय समाज की सामन्ती प्रथा का शिकार होना पड़ा है। पिता की मृत्यु के कारण भुवन पढ़ाई छोड़कर माँ की सहायता के उद्देश्य से बाहर जाती है। भुवन की माँ सामन्ती प्रथा की अवहेलना कर उसे घर से बाहर भेजती है लेकिन जब वह लड़कों की तरह व्यवहार करने लगती है तो उसकी माँ को ही अच्छा नहीं लगता है। भुवन की माँ यह नहीं चाहती है कि भुवन लड़कों जैसा व्यवहार करे, क्योंकि वह पैतृक मूल्यों एवं उनके विचारों को ओढ़े हुए थी जिसमें लड़कियों के व्यवहार को बचपन से ही अनुशासित किया जाता है। लेकिन भुवन इस अनुशासन को स्वीकार करने से इंकार कर देती है। इस सम्बन्ध में कोण्ठपुणी निर्मला का कथन उल्लेखनीय है–''यह लिंग भेद हमें बचपन से ही अनुशासित करता आया है जिस समाज में तर्क का गला घोट दिया गया है। रूप कुबेर को सती बनाया जा रहा है। हम रीति–रिवाजों के नाम पर तकलीफों को झेलते रहते हैं। हमें महावारी के वक्त अछूतों की तरह देखा जाता है। रिवाजों के नाम पर स्त्री ही मरती रहती है।''[5]

मैत्रेयी पुष्पा जी ने अंगनपाखी उपन्यास द्वारा रीति–रिवाज या धर्म के नाम पर विधवा स्त्री को किस प्रकार शोषित किया जाता है। इसका मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया गया है। 'अगनपाखी' उपन्यास की नायिका भुवन केवल अनमेल विवाह की ही शिकार नहीं होती, बल्कि वह विधवा के नाम पर सती जैसे षड़यन्त्र का शिकार होते–होते बचती है। उसका जेठ कुबेर अजय सिंह जायदाद के लालच में अपने भाई कुंवर विजय सिंह की मृत्यु के बाद भुवन की हत्या हेतु सती प्रथा के नाम षड़यंत्र रचता है लेकिन मन्दिर के पुजारी एवं चन्दर की सहायता से वहाँ से भाग जाती है।

'झूला नट' उपन्यास की पूरी कथा ही पारिवारिक समस्या पर आधारित है। परिवार हमेशा तनाव में रहता है। तनाव के एक छोर पर शीलों, दूसरे छोर पर माँ। बालकिशन इस तनाव का सबसे अधिक शिकार होता है। माँ इस बात से सतर्क रहती है कि वह सास है और मौजूदा परिवार की प्रधान है, इसलिए उसके अनुसार ही शीलों को रहना चाहिए इसके साथ–साथ बालकिशन को भी इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि शीलों माँ के अधीन रहे। इसके विपरीत शीलों सावधान ही नहीं तत्पर भी है कि पूरे परिवार पर उसका शैव रहे, बूढ़ी ज्यादा उछल–कूद न करे। इन दोनों के इस कार्यशैली के बीच में बालकिशन पूरी तरह से पिसता है। समय–समय माँ और शीलों का संतुलन बिगड़ता है लेकिन बालकिशन का ऐसा बिगड़ता है कि वह घर से भाग जाता है।

मैत्रेयी पुष्पा जी ने बुन्देलखण्डी आंचलिक परिवेश में उर्वशी की व्यथा को कुछ इस प्रकार औपन्यासिक रचनाव दिया है कि वह नारी पात्र के रूप में सहने, झेलने और जूझने की कहानी बन गई है। इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय उक्ति सार्थक जान पड़ती है–

''अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी'
आंचल में दूध और आँखों में पानी।''

इसका प्रत्यक्ष उदाहरण 'बेहता बहती रही' उपन्यास की नायिका उर्वशी के चरित्र में दिखाई देता है। यह उर्वशी का अपना जिआ हुआ सच है। उसकी भीषणता और उसके कुपरिणामों के गरल को उसने स्वयं पिया है। अतः विजय की युवा विधवा के प्रति उसके मन में गहरी सहानुभूति और चिन्ता स्वाभाविक है। बचपन से ही परिवार की मान–मर्यादा के प्रति अभ्यस्थ उर्वशी अन्याय के विशेष कुछ नहीं बोल पाती जब बोलती है तो उसे धीमी गति से असर करने वाला जहर देकर मार दिया जाता है। 'बेतवा बहती रही' उपन्यास के सम्बन्ध में प्रसिद्ध आलोचक डॉ0 रामचन्द्र तिवारी का कथन उल्लेखनीय है– ''बेतवा बहती रही' एक गरीब परिवार में जन्मी, बहुत कम पढ़ी–लिखी स्त्री उर्वशी की सहर्ष गाथा है।''[6] उपन्यास में जब बरजोर सिंह अपने पुत्र विजय की मृत्यु के बाद एक वर्ष के अन्दर ही अधिक दहेज मिलने पर अपने दूसरे बेटे उदय का विवाह करना चाहते हैं तो उर्वशी कहती हैं–''उदय की शादी के लिए जो लोग आए हैं, पइसा वाले हैं, अपनी बिटियाँ के लिए आसानी से उदय जैसा वर खोज लेंगे, लेकिन हमारे विजय की बहू, कहाँ जायेगी वह? कौन ब्याहने आयेगा उसे? तुमने कबहूँ सोची से बात।''[7]

वस्तुतः उदय, दाऊ, उर्वशी, दादी, मीरा, शशि, रंजन आदि जीते जागते चरित्र होने के साथ–साथ न्याय, सहयोग, अपनत्व, परहित आदि जीवन मूल्यों के संवाहक भी है। जिनके प्रति ग्रामीण जी वन पर लिखने वाले अधिकतर कथाकारों का ध्यान आकर्षित हुआ है। मैत्रेयी पुष्पा जी के लिए उपन्यास महज एक विधा न होकर पुरुष प्रधान समाज के विरुद्ध स्त्री के प्रतिरोध एवं सहर्ष का मार्मिक दस्तावेज है। इसी कड़ी में उनके उपन्यास 'विजन' को उनकी साहित्यिक यात्रा का नया पड़ाव माना जा सकता है। इस उपन्यास में मैत्रेयी जी ने शहरी परिवेश को चुना है। इस उपन्यास का नाम विजन इसलिए रखा गया क्योंकि यह दृष्टि जगत की कहानी है तथा इसमें नेत्र–चिकित्सा के क्षेत्र में सक्रिय महिलाओं के प्रति समाज या परिवार के बजरिए का अन्वेषण है। 'विजन' उपन्यास में लेखिका ने दो जगह हस्तक्षेप किया है। एक तरह तो वह आधुनिक शिक्षा प्राप्त लड़कियों के उस द्वन्द्व को उभारती है जहाँ उन्हें सिर्फ स्त्री होने के साथ आगे बढ़ने के रास्ते गँवाने पड़ते हैं और अपनी प्रतिमा को कुंठित करना पड़ता है। दूसरी तरफमैत्रेयी जी नेत्र–चिकित्सा जगत में प्राइवेट आई सेण्टर्स के प्राणघाटक मकड़जाल और सरकारी अस्पतालों में भ्रष्टाचार एवं सुविधाओं के अभाव के दुष्चक्र को उजागर करती है। यह उपन्यास समाज व शिक्षा जगत के दो पहलुओं से मुखातिव है, जो एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। उपन्यास मुख्य रूप से डॉ0 नेहा पर केन्द्रित है। लेकिन पाठकों की मुलाकात कामों वेष हर मोड़ पर हो जाती है। डॉ0 आभा से मैत्रेयी जी ने डॉ0 नेहा के माध्यम से अभावों में पली–बढ़ी मध्यवर्गीय चेतना के नब्ज को बखूबी पकड़ा है, जो सुख–वैभव पाकर खुद को धन्य समझने लगती है। विवाह के बाद नेहा ससुराल की सम्पन्नता में इतना बह जाती है कि अपने मायके को भूलने लगती है। ''गृहस्थी के कामों से लेकर सेण्टर को दिन भर के प्रोग्राम में पसीना–पसीना होती रहती है और रात को नहा–धोकर सुन्दर नाइट गाउन में महकती हुई लहराते बाल खोलकर अजय के साथ सुख सेज कर रही होती।''[8] लेकिन इन सारे सुख के बावजूद वह नहीं भूल पाती है कि वह मूलतः एक डॉक्टर है। वह उसे चैन नहीं लेने देती। हलांकि वह लगातार कोशिश करती थी कि इस उबलते असंतोष को दबा ले जाये।

डॉ. आभा हर स्तर पर अपनी दावेदारी का एहसास करती चलती है। चाहे वह अस्पताल का मोर्चा हो या फिर घर। उससे गलत बात बर्दाश्त नहीं होती। विवाह उसके लिए सुखद नहीं रहा, क्योंकि उसे सम्भालने की तमाम कोशिशों के बावजूद अपने कैरियर एक आत्म–सम्मान का बलिदान करने के लिए तैयार नहीं होती। अमीर घर की बेटी आभा द्वारा गरीब डॉक्टर से विवाह करना गले की फांस बन जाता है और अन्त में दोनों को एक दूसरे से अलग होना पड़ता है। यहाँ मैत्रेयी पुष्पा जी डॉ0 आभा और डॉ0 नेहा के अनुभवों से इस सच्चाई के साथ सामने लाती है कि हर परिस्थिति में औरत को ही कारण माना जाता है। अब भी भारतीय परिवार चाहे ऊपर से कितने भी आधुनिक क्यों न बन जाये लेकिन स्त्री को स्वतन्त्रता करने के लिए सहमत नहीं हो पाते।

मैत्रेयी पुष्पा जी ने 'त्रिया हठ' उपन्यास में विधवा स्त्री की पीड़ा को व्यक्त किया है। जिसमें एक विधवा को अपने जीवन में समाना करने वाले प्रश्नों को चित्रित किया गया है। सर्वदमन की मृत्यु के बाद उर्वशी विधवा हो जाती है। उर्वशी का बेटा देवेश है मीरा के पिता बरजोर सिंह ज्यादा शराब पीते हैं जिसके कारण उनका लीवर खराब हो जाता है उर्वशी उनकी सेवा करती है। यही समाज द्वारा स्त्री खासतौर पर विधवा स्त्री पर बर्बरता पूर्ण व्यवहार को तो और भी बंधन, पराए आदमी के साथ चली आई अकेले दुकेले रास्ता डगर में। बताओं, कोई क्या कहेगा।''[9]

इस प्रकार परिवार एवं समाज की मान्यताएं सिर्फ स्त्री जाति का दमन, शोषण एवं उत्पीड़न ही करती है उन सबका दमन एवं शोषण करना समाज अच्छी तरह से जानता है। मैत्रेयी पुष्पा जी ने समाज और परिवार में विधवाओं की स्थिति का यथार्थ चित्रण बेतवा बहती रही। एवं त्रिया हठ में किया है। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में स्त्री के सामाजिक और पारिवारिक परिदृश्य का यथार्थ चित्रण के सम्बन्ध में डॉ0 रामचन्द्र तिवारी का कथन उल्लेख है–''मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों पर विचार करते हुए हमारा ध्यान उनकी कुछ सामान्य विशेषताओं की ओर बरबस ही चला जाता है। उनके उपन्यास में अंचल विशेष के रंग में रंगे होने पर भी आंचलिक नहीं है। उनमें गाँव का मनुष्य अकेला नहीं है। उसके साथ प्रकृति है, पारम्परिक संस्कार है।''[10]

सन्दर्भ सूची:–

1. मैत्रेयी पुष्पा, चाक (उपन्यास) संस्करण, 2016, किताब घर प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 07
2. वही पृष्ठ–403
3. अरविन्द जैन, स्त्री मुक्ति का सपना संस्करण–2016, पृ0 14
4. कोण्डपुड़ी निर्मला, पूर्वाग्रह, पृष्ठ–92 संस्करण–2012
5. मैत्रेयी पुष्पा, झूलावह राजकमल प्रकाशन समूह नई दिल्ली संस्करण, 2012, पृ0 99
6. डॉ0 रामचन्द्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, संस्करण, 2020, पृष्ठ–352
7. वही, पृष्ठ 353
8. मैत्रेयी पुष्पा, 'त्रिया हठ' पृष्ठ–25 संस्करण, 2016 किताब घर प्रकाशन नई दिल्ली
9. मैत्रेयी पुष्पा, अल्मा कबूतरी राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली संस्करण, 2016, पृष्ठ 75
10. डॉ0 रामचन्द्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य पृष्ठ–357 विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी संस्करण, 2020

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

मुंशी फकीर बख्श 'विनीत' व्यक्तित्व एवं कृतित्व

डॉ. अनामिका द्विवेदी

एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी, ए. के. पी. डिग्री कॉलेज, खुर्जा

विनीत का जन्मकाल सन् 1913 ई0 है। विनीत का जन्म प्रमाण पत्रों के अनुसार भी सितम्बर 1913 है। यह सतसई की मूल प्रति से भी प्रमाणित होता है। विनीत ने सन् 1930 तक अपनी सतसई पूरी कर ली थी. यह बात उनकी पत्नी द्वारा बताई गयी थी। परन्तु उनकी हस्तलिखित डायरी से भी ज्ञात होता है कि सन् 1930 ई0 में अर्थात 17 वर्ष की अल्पावस्था में ही अपनी सतसई पूरी कर ली थी। सतसई की रचना के समय अर्थात सन 1930 में वे 17 वर्ष के थे। उनकी डायरी के अनुसार उनका जन्म 1913 ई0 ठहरता है। उक्त दोनों प्रमाणों से कवि का जन्म 1913 ई0 सिद्ध होता है।

जन्म, जन्मकाल का निर्धारण :विनीत सतसई के अनुसन्धानकर्ता डॉ0 चन्द्रिकाप्रसाद निदेशक चंददास शोध संस्थान, बाँदा ने विनीत रातसई की रिपोर्ट में मुंशी फकीर बख्श विनीत की जन्मतिथि में सितम्बर 1913 बताई है और इस सम्बन्ध में आपके द्वारा खोजी गयी विनीत से स्कूल सम्बन्धी प्रमाण-पत्र और कवि. को हस्तलिखित डायरी का उल्लेख किया है।[1] इन दोनों प्रमाणों से जन्म तिथि के बारे में कोई सन्देह नहीं रहता। विनीत का जन्मकाल 1913 ई0 (संवत 1970) सुनिश्चित है।

सतसई चन्ददास शोध संस्थान बाँदा के हस्तलेखागार में सुरक्षित हैं, पाण्डुलिपि पुस्तकालय में उनका क्रमांक 34 है। इन प्रमाण-पत्रों में वर्नाक्यूलर फाइनल इक्जानिमेसन का काल 1926 और 1927 हैं, जिनमें फकीर ने क्रमशः प्रथम भाग हिन्दी तथा उर्दू में द्वितीय श्रेणी में वर्नाक्यूलर फाइनल इक्जामिनेशन की परीक्षाएं उत्तीर्ण की है। इन दोनों प्रमाण-पत्रों में फकीर वख्श की जन्मतिथि 1 सितम्बर 1913 लिखी हुई है।

इसी प्रकार विनीत सतसई की मूल प्रति में कवि ने प्रारम्भ में 3.12.28तिथि अंकित की है। 350 दोहों के बाद कवि ने लिखकर 27.7.26 की तिथि अंकित की है।

इसी मूल प्रति में 700 क्रमांक के बाद 60 और दोहों कीरचना की तथा कुछ अन्य और छन्द लिखे हैं, जिनमें 11.10.26 की तिथि पड़ी है। जिससे स्पष्ट है कि 1926 तक सतसई की रचना पूर्ण हो चुकी थी। इसी मूल प्रति में एक राष्ट्रीय कविता सुराज व स्वराज नामकअंकित है जिसमें कवि के हस्ताक्षर हैं और तिथि 31.7.30 पड़ी है तथा इसी कापी पर एक पन्ने पर उन्होंने अपनी रचना के बीच कुछ विद्यार्थियों के नाम लिखे हैं और उनकी फीस जमा की है, जो वर्ष 1630 के महीनों की है। अतः स्पष्ट है कि कवि ने सतसई 30 ई0 में ही पूर्ण कर ली थी। आयु की गणना से प्रमाण-पत्र में अंकित उस समय उनकी आयु 16 वर्ष 7 माह की थी। विनीत की डायरी से भी यही पुष्ट होता है कि उन्होंने 161/2वर्ष की अवस्था में सतसई के भाव पूर्ण कर लिए थे। शुद्ध आयु की दृष्टि से उन्होने 17 वर्ष की अवस्था में सतसई पूर्ण की।

फकीर वख्श के हस्तलेखों की खोज में मुझे कवि की पत्नी से एक हस्तलिखित डायरी भी पेंसिल से लिखी हुई प्राप्त हुई है, जिसके आरम्भ में लिखा हुआ है, 'सप्तशती फकीरवख्श के दोहों के भाव' कवि ने इस डायरी में जिन सात सौ दोहों की रचना करनी थी, पहले उनके मूलभाव को गद्य में अंकित किया, पुनः उन्हीं मूल भावों को काव्य रूप प्रदान किया। इस डायरी के अन्त में कवि ने अपने हस्ताक्षर किए हैं तथा डायरी लेखन की अन्तिम तिथि 2.12.28 अंकित की है। अन्तः साक्ष्य से भलीभांति प्रमाणित होता है कि 'विनीत' यादवेन्द्र जी के समकालीन थे। कवि ने अपनी रचना में महाराजयादवेन्द्र जी का उल्लेख किया है।

'हाथ पसारयो करन् ग्रह यादवेन्द्र ब्रजनाथ ।
हम तो निज ऊँचे लखे यादवेन्द्र के हाथ ।।[2]

जिस यादवेन्द्र का वर्णन विनीत ने किया है, वह पन्ना नरेश तथा छत्रसाल के वंशधर ही हैं

'चिरजीवो भ्रातन सहित युयश सदा प्रतिपाल
यादवेन्द्र अवतंशमणि, वीर वंश छत्रसाल।।[3]

विनीत ने 'पन्ना' के नरेन्द्र महेन्द्र जू का भी उल्लेख किया है।

शशिमुख नारी उरवशी नर सुर मुक्त अनूप
लसत नरेन्द्र महेन्द्र जू पन्ना सुर पुर रूप
न्याय सरोवर के कमल, अमल महेन्द्र नरेश।[4]

विनीत ने यादवेन्द्र से प्रजा पालन का सन्देश दिया है-

'राजनीति नय नीतिमय, यादवेन्द्र अरि जीत
पालत रहिये नित प्रजा, याही विनय विनीत।[5]

ऐतिहासिक ग्रन्थों से यादवेन्द्र (पन्ना नरेश) का काल प्रमाणित होता है, अस्तु विनीत का रचनाकाल भलीभांति प्रमाणित एवं पुष्ट है।

जन्म स्थान :फकीर वख्श 'विनीत' पनगरा के निवासी थे। पनगरा ग्राम बांदा जनपद के नरैनी तहसील के अन्तर्गत बाँदा-नरैनी राजमार्ग पर 23 मील में स्थित है। जनपद के मानचित्रों में पनगरा की यही स्थिति वर्णित है। पनगरा केन नदी के तट पर पंच गिरिमालाओं के बीच स्थित है। 'पनगरा' को पंचगिरा (पांच पर्वत चोटियों) से उद्गमित माना जा सकता है। यहां गांव के निकट ही पांच लघु चोटियां खड़ी हैं ।

नामकरण :प्रमाण-पत्रों के अनुसार 'विनीत' का मूल नाम 'फकीर वख्श' था। 'विनीत' उनका उपनाम था और मुंशी उनके नाम के पूर्व उनके अध्यापक होने के कारण जुड़ गया। इस प्रकार वे 'फकीर वख्श' से मुंशी फकीर वख्श 'विनीत' हो गए।

उनका नामकरण फकीर वख्श उनके पिता मुंशी शालार वख्श द्वारा

किया गया। नामकरण के पीछे एक मर्म यह भी है कि फ़कीर वख्श का जन्म किसी हिन्दू फ़कीर (संत) की दैवी कृपा से हुआ। फ़कीर वख्श के परिवार और उनके शिष्य परम्परा के लोगों से साक्षात्कार करने पर ज्ञात हुआ कि फ़कीर वख्श के पिता शालार वख्श के दो पुत्रियां थीं, दो पुत्र हुए किन्तु वे अल्पकाल के बाद नहीं रहे। शालार वख्श को पुत्र विहीन होने की चिन्ता हुई। परस्यौंजा ग्राम में आए हुए एक सिद्ध हिन्दू सन्त 'शंकर बाबा' के नाम से विख्यात थे। मुंशी शालार वख्श उनसे मिले और रोये। हिन्दू संत ने 6 छुहारे मंगाकर शालार वख्श को दिये और प्रतिमाह एक-एक छुआरा खिलाने के लिये दिये। ठीक नवें माह शिशु का जन्म हुआ। यह नवजात शिशु ही 'फ़कीर वख्श' कहलाया।फ़कीर वख्श ने कविता में अपने नाम का प्रयोग 'विनीत' के रूप में ही किया है

अ- 'कह 'विनीत' जग के गहे भलो कौन विधि होय।[6]

ब- मूढ़ विनीत विपति परे करहि ईश पै रोष।[7]

स- श्री अम्बा सुत सुख करन हरन सूल सिधि भूल
यह'वनीत' विनती सुनहु है, प्रसन्न अनुकूल।[8]

'पनगरा' के लोग आदरपूर्वक उन्हें मुंशी जी के नाम से स्मरण करते हैं। गांव के लोग उन्हें मुंशी रजा के नाम से भी याद करते हैं। और गांव में उनकी चौपाल को मुंशीजी की चौपाल कहा जाता है।

फ़कीर वख्श जब दो तीन माह के थे, तभी शालार वख्श अपने पुत्र के समुचित पालन-पोषण हेतु परसौंजा ग्राम से पनगरा चले आये। क्योंकि शालार वख्श पनगरा के मूल निवासी थे। पनगरा में फ़कीर वख्श का पालन पोषण वशीरिया के द्वारा किया गया, एकलौतेपुत्र होने के कारण फकीर वख्श अत्यन्त लाड़-प्यार के वातावरण में पले। जब वह 5 माह के थे तब अचानक भयंकर रूप से बीमार हो गये। शालार वख्श अपने घोड़े पर सवार होकर बरसाती नदी में नाला पार करते हुए परसौंजा गये। वहीं, के सिद्ध शंकर बाबा ने एक बीही (अमरूद) का डण्डा दिया, जो पांच जगह तांबे के बन्धनों में बंधा था, उसे दूध के साथ घिस कर पिलाने को कहा जिससे वे स्वस्थ हुए।

माता-पिता:-फ़कीर वख्श के पिता शालार वख्श तथा माता रहिमन थीं। शालार वख्श हिन्दी में कविता लिखते थे तथा शायरी भी करते थे। पनगरा के ही 62 वर्षीय श्री रामानन्द जी मिश्र ने बताया कि शालार वख्श पनगरा से उत्तर छः मील गोखिया ग्राम में मुंशी रहे। गोखिया अतर्रा और पनगरा के बीच स्थित है। बाद में गोखिया से पनगरा आ गये थे, उन्होने यह भी बताया कि वे शालार वख्श के विद्यार्थी रह चुके हैं। तथा शालार वख्श एक चरित्रवान, काबिल अनुशासन प्रिय अध्यापक रहे हैं। श्री मिश्र के अनुसार एक बार वे स्वयं शालार वख्श के हाथ पढ़ते समय पिट गये थे। जबकि वे गांव के मुखिया के बेटे थे, और उन दिनों गांव के मुखिया के बेटे को मारना किसी भी अध्यापक के बस की बात न थी किन्तु शालार वख्श इतने निर्भीक थे कि वे पढ़ाते अथवा दण्ड देते समय किसी भी विद्यार्थी को पद अथवा सामाजिक स्थिति के आधार पर माफकरने वाले नहीं थे। शालार वख्श के हाथों पढ़ाये गये उनके एक शिष्य ने यह भी बताया कि वे हुक्का, चिलम पिया करते थे और रामायण के भक्त थे।

दुर्भाग्य से विनीत का परिवार अधिकांश रूप से काल कवलित हुआ। उनके परिवार में पिता का निधन बचपन में ही हो गया था। उनके विवाह के तीन चार साल बाद माता का निधन हो गया, उनका एक मात्र पुत्र अहमद भी नौजवान होकर शादी (विवाह) के बाद नहीं रहा। उनके परिवार में इस समय सिर्फकुछ अभागे सदस्य जो दुर्दिन का जीवन जी रहे हैं, उनमें से एक शाकीरा बेगम और उनकी एक विधवा पुत्री नूरजहाँ है।

शिक्षा:-पनगरा निवासी पं0 रामनाथ द्विवेदी ने बताया कि मुंशी फ़कीर वख्श ने अलिफसे एक, दो, तीन की परीक्षाएं पनगरा से ही उत्तीर्ण की। उन्होंने यह भी बताया कि मुंशी फ़कीर वख्श जब तीसरी जमात में थे तो चौथी कक्षा की परीक्षाएं पास कर ली थी। उस समय चौथा ही प्रारम्भिक परीक्षा का अन्तिम वर्ष माना जाता था, तथा इस परीक्षा में वे प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण हुए। इसी प्रकार उन्होंने पांचवी, छठवीं, सातवीं की परीक्षायें मिडिल स्कूल नरैनी से पास की, उस समय सातवीं की परीक्षाएं भी बोर्ड की परीक्षाएं थीं।

विनीत ने वर्नाक्यूलर टीचर परीक्षा सन् 1939 में उत्तीर्ण की थी उनका अनुक्रमांक 179 था। टीचर परीक्षा सन् 1937 में पास की और उनका रोल नम्बर 2724 था। सन् 1626 में हिन्दी में वर्नाक्यूलर परीक्षा पास की है। उनका अनुक्रमांक 6791 था उनकी प्रथम भाषा हिन्दी थी। सन् 1926 में उन्होने वर्नाक्यूलर फाइनल परीक्षा उर्दू में भी पास की. इस परीक्षा में उनका अनुक्रमांक 7514 था ।

वे अपनी पढ़ाई के लिए बहुत रोया करते थे। उनकी पढ़ाईको जारी रखने के लिए उनकी पत्नी ने अपने गहने बेच डाले परन्तु पढ़ाई को रुकने नहीं दिया। पति की पढ़ाई के लिये जिन गहनों को शाकिरा ने बेंचा था, उनमें ओढ़नी के घुंघरू भी थे जिसे उनके ससुर द्वारा मंगनी के समय दिया गया था. एक चाँदी की हमेल भी पढ़ाई के लिये पन्ना में बेची गयी, इस प्रकार उनकी पढ़ाई अत्यन्त कठिनाइयों के बीच पूरी हुई।

रुचि:-मुंशी फकीर वख्श की रुचियों में सबसे प्रमुख रुचि उनकी कविता की थी। कविता के अलावा वैद्यक से भी रुचि रखते थे। उनके लिए अखबार, पत्रिकाओं को पढ़ना जरूरी था। उनकी अन्य रुचियों में धार्मिक साहित्य का पठन-पाठन भी था।

व्यवसाय:-फकीर वख्श का व्यवसाय था अध्यापन, अध्यापन में इनकी गहन रूचि प्रारम्भ से ही थी, फलतः इन्होने अध्यापन कार्य आरम्भ किया और वे एक अच्छे अध्यापक के रूप में प्रसिद्ध थे। फ़कीर वख्श को अध्यापन की प्रेरणा अपने पिता शालार वख्श से मिली, ये चरित्रवान के साथ-साथ निष्ठावान और अनुशासनप्रिय अध्यापक थे, इन्हीं की पूर्णतः छाप पुत्र पर पड़ी थी। पन्ना में ससुराल होने के कारण तथा ससुर के पन्ना राज हवलदार होने के कारण फ़कीर वख्श का सम्पर्क नरेश यादवेन्द्र से हुआ। कवि पत्नी शाकिरा के अनुसार उनके पिता हवलदार शादी के पहले नहीं थे, अतः यादवेन्द्र के सम्पर्क में आने का कारण कवि हरनाथ थे। जो पन्ना नरेश के राजकवि थे। किसी तरह वे फ़कीर वख्श के सम्पर्क में आये। महाराज यादवेन्द्र के जन्म समारोह के अवसर पर सभी कवि पन्ना दरबार में जाते थे। फकीर वख्श ने 'यादवेन्द्र शतक' नाम की एक रचना भी लिखी है जोयादवेन्द्र को भेंट करनी थी, किन्तु भेंट की या नहीं यह मुझे ज्ञात नहीं है और न ही इसके बारे में कहीं कुछ कहा गया है। इसकी एक हस्तलिखित प्रति पनगरा ग्राम से खोजी गई है, जो सम्प्रति चन्ददास साहित्य शोध संस्थान के हस्तलेखों के भण्डार में सुरक्षित है।

फकीर वख्श को कई बार तो अमीनी, बाबूगीरी, बैद्यगीरी करने का प्रमुख अवसर मिला, वह वैद्यगीरी के माध्यम से अच्छा व्यवसाय चला सकते थे क्योंकि उन्हें कई जड़ी-बूटियों द्वारा दवा बनाने का ज्ञान था तथा उनके द्वारा बनाई गयी दवा से रोगी व्यक्ति पूर्णतः ठीक हो जाता था। परन्तु उन्होंने इसे अपना व्यवसाय न समझकर निःशुल्कसेवा की। और अपने लिए अध्यापन कार्य को ही श्रेष्ठ माना, अध्यापन का कार्य कुछ दिन तक पनगरा में किया, इसके बाद पन्ना में करने लगे और वहां वे अध्यापकों के बीच एक श्रेष्ठ अध्यापक के रूप में माने जाते रहे।वे अपने विद्यार्थियों से किसी प्रकार की सेवा नहीं कराते थे बल्कि स्वयं विद्यार्थियों के कार्यों को सम्पन्न करने में सहायता करते रहे।

कवि के साहित्यिक मित्रों में हनुमान प्रसाद भी थे। चन्द्रभान विभव भी मुन्शी जी के साहित्यिक मित्र थे। जिन्होने 'विभव सतसई' की रचना की थी।–

मृत्यु:–मुन्शी रजा की मृत्यु के सम्बन्ध में जानकारी करने पर पता चला कि वह सन् 1638 में क्वांर विजयदशमी को नहीं रहें। इस तथ्य की पुष्टि करते हुए पं0 बलदेव प्रसाद मिश्र ने भी इसी तिथि को प्रमाणिकता प्रदान की। पनगरा के 62 वर्षीय पं0 रामानन्द मिश्र ने बताया, 'मैं जिस समय 1938 में मिडिल में था, उसी समय मुंशी जी नहीं रहे। मैं उनका शिष्य भी था। रामानन्द के इस कथन से भी उनका निधनकाल 1938 प्रमाणित होता है। कवि पत्नी के अनुसार जिस समय दशहरे में बीरी उठाने का समय था, उसी समय मुन्शी रजा का इन्तकाल हो गया। इस दिन पनगरा में पान नहीं उठाये गये, शोक के कारण सारे गांव वालों ने दशहरे के जलसे को रोक दिया। उनकी पत्नी ने जो विवरण उनकी मृत्यु के सम्बन्ध में दिया है, वह इस प्रकार है–

'क्वार के पितरों में 10 दिन तक बुखार आया और दशहरा के दिन बीरा उठाने के समय (पूरा सूर्य अस्त हो चुका था) हिन्दी का यह तरुण सूर्य भी अस्त हो गया. फिर बीरा नहीं उठा।' मृत्यु के कुछ पूर्व तक उनकी एक ही चिंता थी–सतसई के न छप पाने की। अस्पताल में वह अपने अन्तिम क्षणों में यही कहते रहे। 'हाय मेरी सतसई ! मेरे सामने न छप सकी' ।

सतसई रचना की प्रेरणा:–

'विनीत सतसई' का मूल प्रेरणा स्रोत 'बिहारी सतसई' रही है, कवि ने बिहारी का स्मरण सतसई के प्रारम्भ में किया है।

'नाम बिहारी लाल सौ, मन रागी सब काल ।
करहु सारथक नाम हिय, विहर बिहारी लाल ।।'[9]

विनीत के मंगलाचरण के दोहों में बिहारी लाल श्लेष के द्वारा %कृष्ण' एवं बिहारी सतसई के रचनाकार 'बिहारी लाल' के प्रति सम्पूर्ण कालों में अनुरागी होना बताया गया है तथा कवि बिहारी लाल से हृदय में बिहार करके उनके बिहारी नाम की सार्थकता भी चाहता है।

मंगलाचरण की इसी प्रस्तावना के अनुकूल सम्पूर्ण सतसई में कवि ने कहीं बिहारी के भाव का विस्तार, कहीं लाघव कहीं उसमें पल्लवन किया है। विनीत सतसई के दोहों की रचना का अप्रत्यक्ष क्षेत्र नवदम्पत्ति का स्वकीय प्रेम है, क्योंकि कवि ने स्वकीय प्रेम की सुदृढ़ इमारत सतसई में स्थापित की है।

रचना संसार:–विनीत का रचना संसार एक किशोर कवि का रचना संसार है किन्तु उसमें तारुण्य की भैरवी के स्वर भी हैं। 16 वर्ष की अवस्था से उनकी रचनाएं प्रारम्भ होती हैं, 25 वर्ष की आयु में कवि का निधन हो गया, कुछ अन्य रचनाएं भी कवि ने लिखी हों जो कालकलवित हो गयी हों, तो आश्चर्य नहीं। उपलब्ध रचनाएं इस प्रकार हैं।

विनीत सतसई:–सतसई परम्परा में विनीत की प्रमुख काव्यकृति 'विनीत सतसई' है। कवि ने इसे 'विनीत हीरावली' भी कहा है। मूल प्रति बासी कागज में बगैर रूलदार कापी में 10 बाय 7 के आकार में भूरे रंग के पृष्ठों में नीली स्याही तथा कहीं कहीं पेंसिल से लिखी गयी है जिसमें बीच में कवि के हस्ताक्षर भी हैं। प्रति अत्यन्त जीर्ण अवस्था में चन्ददास शोध संस्थान में सुरक्षित है।[10]

यादवेन्द्र शतक:–विनीत की एक दूसरी रचना यादवेन्द्र शतक है। पन्ना नरेश छत्रसाल के वंशधर महाराज यादवेन्द्र को केन्द्र में रखकर कवि ने शतक परम्परा में सौ दोहों की रचना की है। इसमें छत्रसाल, यादवेन्द्र, अमानसिंह आदि पन्ना के राजाओं की कीर्ति के साथ ही पन्ना की भूगर्भ सम्पदा, हीरों की खान तथा बुन्देलों के शौर्य को भी चित्रित किया है। इसकी रचना 'विनीत सतसई' की रचना के बाद सन् 1933 ई0 में की गयीं।

स्फुट साहित्य:–स्फुट साहित्य के अन्तर्गत विनीत के कुछ छन्द, पद एवं गजलें हैं। विभिन्न रागों को भी कवि ने रागबद्ध किया है। सन् 29–30 के आसपास कवि की लिखी हुई स्फुट रचनाएं गांधी दर्शन, आजादी एवं देशप्रेम की भावनाओं से ओतप्रोत हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की 'हा–हा भारत दुर्दशा न देखा जाई' की भांति विनीत ने 'सुराज व स्वराज्य' नामक कविता की रचना की 'स्फुलिंग कुरीति की कुम्हली लता समाज/भारत निपट अपल्लवित हुआ अपानिभ्राज/हेदीनबंधु दीन का हुआ अमित अकाज / लू चलती है अनीति की कर नीतिमय दुराज / अब छाँह कृपा छाओ सब हिन्द में बृजराज / दंभी अदंभी पापी सज्जन फरेबबाज / विद्या अविद्या मूरख आडम्बरी कुसाज / लेखो न सम विषम हरि दो दान रस स्वराज।' इसी प्रकार 'शान्ति के उपासक हैं क्रान्ति के पुजारी हैं' शीर्षक से 6 कविता एवं पद्माकर और द्विजदेव की शैली में श्रृंगार और विरह की 13 मार्मिक कवित्तों की भी रचना की है।

संदर्भ सूची:–

1. 'विनीत सतसई' , डॉ0 शशिप्रभा, प्रकाशन 1999, पृ0 2
2. 'यादवेन्द्र शतक' , विनीत मौ0, फकीर वख्श , पृ0 41
3. 'विनीत सतसई' ,डॉ0 शशिप्रभा, प्रकाशन 1999, पृ0 15
4. 'विनीत सतसई' , डॉ0 शशिप्रभा, प्रकाशन 1999, पृ0 46
5. 'विनीत सतसई' , डॉ0 शशिप्रभा, प्रकाशन 1999, पृ0 6
6. 'विनीत सतसई', डॉ0 शशिप्रभा, प्रकाशन 1999, पृ0 47
7. 'विनीत सतसई', डॉ0 शशिप्रभा, प्रकाशन 1999, पृ0 55
8. 'विनीत सतसई', डॉ0 शशिप्रभा, प्रकाशन 1999, पृ0 4
9. 'विनीत सतसई', डॉ0 शशिप्रभा, प्रकाशन 1999, पृ0 29
10. 'विनीत सतसई' डॉ0 शशिप्रभा, प्रकाशन 1999, पृ0 29

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

National Education Policy 2020 and Higher Education

Dr. Vibhuti Yadav

Assistant Professor, Pt. Jawaharlal Nehru (P.G.) College, Banda, U.P.

Abstract :-The National Education Policy 2020 has been designed in order to reform the educational system and lay forth a road map for a new India. This policy is aimed at transforming the Indian education system to meet the needs of 21st century. This paper attempts to spotlight NEP 2020 and investigate its overall influence on Indian higher education. This research is exploratory and based on secondary data. The findings are based on a thorough study of the literature.

Keywords : Education, Higher, Knowledge, Policy

Introduction :-The Government of India launched its third National Education Policy 2020 on 29 July 2020 with an aim to introduce several changes in the Indian Education System. The NEP 2020 aims at making " India a global knowledge superpower." This policy focuses on providing quality education and decent employment in pertinence to United Nations Sustainable Development Goals 2030 adopted by India on 2015 as - "Ensure inclusive and equitable quality education and promote lifelong learning opportunities for all by 2030."

This policy proposes the revision and revamping of all aspects of education structure and transforming the society into a vibrant, digitally empowered and knowledge society.

Methodology :-The present study is based on secondary data sources which has been collected through sources with the help of published government reports, news papers, published research papers, related articles, books and government websites.

Objective of the study :-The objective of the study is to spotlight National Education Policy 2020 and examine its overall influence on Indian higher education.

Multidisciplinary Education :-National Education Policy 2020 focuses on transforming Higher Education Institutions into large multidisciplinary institutions which is the most significant step towards ending the fragmentation of higher education. This transformation is of crucial importance as it creates skilled and ingenious human beings. A holistic and multidisciplinary education approach would develop all capacities of individuals in an integrated manner at undergraduate programmes including professional, technical and vocational disciplines. Multidisciplinary Education and Research Universities will be set up for holistic and multidisciplinary education to provide high standards of education across India. The NEP 2020 envisions one multidisciplinary higher education Institution in every district by 2030.

Integration of ICT :-National Education Policy 2020 advocates the integration of ICT in the education system as information and communication technologies are playing a very important and crucial role in transforming the teaching learning environment through providing accessibility of course materials, online repository for digital content and online academic management system. According to NEP 2020 an autonomous body National Educational Technology Forum (NETF) are going to be established to provide a platform for the free exchange of ideas on the utilization of technology to reinforce learning, assessment, planning and administration. This helping in increasing the effectiveness of teaching and learning processes. Therefore integration of ICT in the education sector is an important recommendation of the new education policy and centre and state are working coherently in this direction.

In National Education Policy an emphasis has been laid on the recent trends of information technologies like e-learning , internet of things, virtual reality and use of artificial intelligence in the education sector.

Research and Innovation in Higher Education :-In National Education Policy 2020 higher education's goal is to use systematic analysis to

develop new knowledge or a fresh interpretation of current information. This will optimally solve all of society's issues. Higher education that incorporates research and innovation as a major component generates new intellectual property that may be used to develop new inventive solutions. The NEP-2020 higher education plans shift the focus of higher education from information to new knowledge and innovation.

Autonomy at all Levels :-Higher education institutions with the freedom to innovate in terms of course design, curriculum, pedagogy, examination and assessment may be able to increase the quality of education they provide. Associated institutions under the University affiliation system lack autonomy in teaching - learning and evaluation systems, affecting the quality and motivation of both students and faculty members. For a progress - oriented system, autonomy in education (teaching - learning process), examination and assessment administration and budgetary decisions are needed.

Merit based Student admission, Faculty Selection and Promotion :-NEP2020 emphasises the importance of merit-based student admittance while also emphasising social justice. It also points out that the quality of higher education and research can only be improved if all faculty selections and promotions are based on merit. Reservations and lobbies of all types should be curtailed at the individual institution level by appointing highly competent and established leaders to the Board of Governors. It also emphasises the importance of merit - based appointments at all levels of Higher Education Council policy formulation and regulation.

Establishment of Higher Education Commission :-The most significant highlight of NEP 2020 is the proposal for establishment of Higher Education Commission of India (HECI) for regulation of entire higher education. It will be set up as a single umbrella body for the entire higher education excluding medical and legal education and will replace University Grant Commission and All India Technical Education Council, the present regulatory bodies . Public and private higher education institutions will be governed by the same set of norms for regulation accreditation and academic standards. The primary goal of the Higher Education Commission will be to increase the gross enrollment ratio from the present 26% to 50% by 2030. Also HECI will be having four independent verticals namely :

1. National Higher Education Regulatory Council (NHERC) to regulate higher education except medical and legal studies.
2. National Accreditation Council (NAC) will be a " meta accrediting body " for accreditation to academies and institutions.
3. Higher Education Grants Council (HEGC) for funding and financing of higher education institutions.
4. General Education Council (GEC) which will be responsible for framing a National Higher Education Qualification Framework.

Internationalization :-India has one of the largest education systems in the world with over nine hundred universities and forty thousand colleges across the country. But the gross enrollment ratio is very low in higher education which is 26.3%. According to reports by 2030 India needs more than 1500 new higher education institutions to accommodates the huge number of upcoming students, that is why the new education policy 2020 allows foreign universities to set up their campus in India which aims to make India an attractive global study destination.

Deakin University of Australia has a campus in GIFT city Gujarat and is India's first foreign University campus. Stanford University, California has an existing campus in Delhi's south campus and is also opening a campus in Hyderabad. Recently UK's University of Southampton is planning to open a branch campus in Gurugram, India with academic programmes starting in July 2025.

NEP 2020 also supports Indian Universities in establishing campuses abroad. Memorandum of Understanding (MoUs) have been signed for the establishment of IIT campuses in Zanzibar and Abu Dhabi, reflecting India's global educational outreach.

Multiple Entry and Exit System :-In the new education policy 2020, any undergraduate degree in any institution will be of three or four years duration. One can leave and re-enter within this period of study. If a student exit after one year it gets a certificate, after completion of two years successfully a diploma, after three years a degree and after four years a bachelor's degree with a project based research. As per the new education policy, Academic Bank of credits will be established at state and national level to store the academic scores digitally. This will be helpful for those students who might leave the course midway and wants to continue later on.

Conclusion :-The National Education Policy 2020 is a comprehensive scheme for higher education to achieve access, equity and excellence in college and universities. This policy will also help in improving teaching, learning environment through extensive use

of information and communication technologies at various aspects of education. If the policy is implemented effectively it will definitely uplift the education system of India which will be a remarkable achievement.

References:-

1. Kar B. K. (2020). NEP 2020 : Observation on Higher Education and Research. www.sen tinellassam.com
2. Kurian A. and Chandramana S. B. (2020) : Impact of New Education Policy 2020 on Higher Education. htpp://www.researchgate.net
3. Malik N. 2021 : NEP 2020 : An Effect Towards Transforming India's Education Landscape. htpp://www.researchgate.net
4. Dekha S. J.(2021) NEP 2020 and Higher Education, sentinellassam.com
5. National Education Policy 2020. https://www.education.gov.in
6. Salient Features of NEP 2020: Higher Education 1. The Fundamental Principles of the Policy. http://www.ugc.ac.in
7. National Education Policy 2020 : https/en.wikipedia.org>wki
8. National Education Policy 2020 in Higher Education : https://www.drishtiias.com
9. National Education Policy 2020 For Higher Education : https://www.iitms.co.in

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

Scenario of Kisan Credit Card with Special References of Bihar

Anil Kumar Bharti

Research Scholar, Department of Commerce, Patliputra University, Patna, Bihar

Abstract:- Kisan Credit Card is an important scheme for the farmers through which farmers can fix their miserable life. Kisan Credit Card is like a firefly in the night for the farmers. Loans with heavy interest are given to the farmers who have taken loans from money lenders. It is an irony that some farmers who are unable to repay their loans are ready to commit suicide, but suicide is not a means or a resource what will help one get rid of the debt of money lenders. To help farmers get rid of the debt of money lenders, the government keeps running new schemes, out of which Kisan Credit Card has proved to be beneficial for many farmers, especially in Bihar, many farmers have benefited from Kisan Credit Card and farmers are improving their income.

Kisan Credit Card has been successful in making you prosperous. Kisan Credit Card is a scheme run by the Government of India which is being run in Bihar as well as in the whole of India, which was started in August 1998, which has benefited many farmers.

Introduction:-Sound economic growth it is ?e??ssary to be soft sufficient in every side. Those country having sufficient growth of agriculture no doubt those country will be sound economic growth. Now we a study the economic growth co-related with agriculture. Agriculture is totally business of gambling there is certainty it is totally depend on normal atmosphere and good seasons.

In the study of economic growth, the rule of financial institution on intermediation has been always at centre stage. Well-functioning financial markets by lowering cost of conducting transaction, ensure their capital is allocated to projects that yields the highest return and transfer enhanced the growth rates in the context of new growth. They have laid town the theoretical foundation of the rule of credit market Imperfection on growth was further solidified in a series of articles including but not limited.

This article examines the impact of one important Financial policy Intervention Aimed at addressing this problem the Kisan credit Card (KCC) schemes on a state level per capita income and agriculture productivity.

The (KCC) Kisan credit card was introduced by the government of India in 1998-99 budget to displace a tangled web of other short-term agriculture. Credit scheme that had become increasingly burdensome and inadequate. The earlier system was characterized by a multiple products multiple granary system that varied based on the particular crop input needs, season bise of borrowing and soon what may have seemed like and array of choice, instantly investment a farming having to more multiple loan application for different stages and needs of the farming process.

The Kisan credit card scheme (KCC) introduced to more away from the merge of inefficiency towards a more consolidated system where borrower was subject to fewer parameters and given more freedom to use the credit is in esential a resolving credit like as opposed to the order system of demand loan Before Describing the data and our findings we first discut. The KCC scheme in a little bit more details and the relevant literature. We also briefly survey the already large literature and financial development and economic growth of India

Objective And aim of KCC scheme:-Kisan Credit card (KCC) was introduced in 1998-99 While the scheme centres around a resolving credit line facility, it is not reaching a credit card in the traditional sense. The key features that are supposed to make the scheme user-friendly includes no collateralized requirements, its astringent monitoring of actual use of loans and easy renewal after three years for borrowers in good standing. We Experis on their briefly. One of the key Advantages is to make credit available

without burdensome requirements. In keeping with this farmer do not need to provide a security deposit to quality for the loan. They can quality for the minimum amount on producing to consultation of land possessions certificate

Kisan Credit Card (KCC) is the single largest scheme to introduce short-term unsecured our perception is that as far as sort term unsecured credit is concerned. This is Probably the most ambitious schemes a scheme introduced by the Indian government despite the KCC scheme having become the dominant source of short-term agricultural productivity and other outcome no doubt This KCC is the single largest government, a scheme to introduce short term unsecured credit across the agricultural sector. While the regional in facts of the KCC a scheme have not been studied. There is an intensive Literature on the effects of financial department on agricultural and rural growth.

There Is not surprising in itself since insist of the major policy development productivity particularly. The history of bank is nationalisation in post Independent India have win a structure, keeping agricultural and small-scale industry in mind without going into exclusive detail about this large literature We quickly summarized some of the more recent findings. Weather than word-based trends in credit one also need to the aware of other measure credit Information's during this time period. Our reading of agriculture and rural credit policy suggests them there might be at least two others.

Intervention that might confirmed the effect of KCC. One in serves the bank credit Linkes program given to self-help group has the name suggests this is micro finance based initiative, which involves nationalized banks.

Technically This is not programmes for the agricultural sector but since it is rural in scope it can conceivable Have important general equilibrium effects. However, in terms of magnitude, it is far from less than KCC in the year 2020-21 KCC handling Bas at around nine fifty William while other than much less than kcc.

This kisan credit card scheme introduced 1998-99 aim at providing clock crop loans to farmers in a flexible and cost-effective manner. The scheme is implemented by All scheduled Bank (Commercial) Regional rural bank, a state cooperative bank, Central cooperative banks and primary agricultural cooperative society's beneficiaries under the KCC are issued with a credit card. Scan Facebook introducing the borrowing limit and validity period the credit limit is fixed taxing into account protection credit needs for a fully year, plus ancillary Activities relating to crop production at the decision of reading banks sub limits for credits are fixed. The crop loan is provided in the form of are...

volving cash credit facility involving any number of draws and repayment within the fixed limit.

The KCC issued by banks in Bihar. During the period of 2020-21 to 2022-23 is shown in given Below.

The schedule commercial banks and Regional rural banks the achievements rates work consistently high Beat the achievement rate at 65.5 of and 65.8% respectively in 2014-15 the centra co-operative Banmk lagged very behind their targets their achievement in 2014-15 being early 22.3% the overall achievement for all Bank 2014-15 was 66.4% down from 71.6% a year ago.

For the purpose of the study the period wise agency wise and other secondary data related to the progress of KCC have been collected and analyzed. The data has been taken for the financial year 2017-18 to 2020-21. The progress of KCC in forms of number of cards and amount sanctioned has been calculated by using mean value, coefficient of variation and exponential growth rate and presseded in the form of tables. The data has been accumulated from various report of NABARD and publication of RBI. The by use wise - year wise analysis has been some for commercial Banks, Regional Rural Bank and Co-operative banks in India are Providing Kisan Credit Card scheme during the said period. The details follow by the Table given below :-

Agency – year wise progress of Kisan Credit Card Scheme

Number of Operative KCCs	Amount outstanding under operative KCCs	Number of Operative KCCs	Amount outstanding under operative KCCs	Number of Operative KCCs	Amount outstanding under Operative KCCs
Co–operative KCCs		Regional Rural Banks		Commercial Banks	
35,883	1,122.0	12,271	1,024.2	23,368	4,350.0
33,495	1,24,484.8	12,193	1,13,363.9	23,521	4,30,473.9
30,414	1,27,436.0	12,253	1,27,071.8	23,632	4,132,670.4
28,938	1,36,734.7	12,197	1,36,695.1	24,145	4,23,587.8

Conclusion :- The Kisan Credit Card scheme, launched 1998-99 is a government initiative aimed financial inclusion for farmers. It acts as a single window credit system. It provie farmers wish a pre-sanctioned credit limit in a card for their cultivation post

harvest needs, marketing expenses and even consumption requirements. This user friendly system after access to formal credit at lower interest rates compared to traditional lenders. It thus cases the financial burden an farmers and promotes monistic support throughout the agricultural cycle.

Reference :-

1. Gaikar, V., & Lakhani, S.A. (2020). 'Demographic variables influencing financial investment of urban individuals : A case study (IJAST), 29(05), 962-974
2. Gaikar, V.B. (2014). "The success of poverty alleviation programmes in India. A Case Study of Thane district". In Humanities and Social Sciences Review, 163-176 (2014) by University Publications net. A Consortium of Humanities and Social Publications, Central Connecticut State University, USA.
3. Godara, A.S., Sukuntla, S, & Dhanju K. (2014). Performance of kisan credit card scheme in haryana through regional rural and cooperative banks. Abhinav International Monthly Referred Journal of Research in Management and Technology, 3(9), 47-54.
4. Laxyapati, E.T. (3013). An evaluation of kisan credit card scheme in India and Karnataka. A case study of Gulburaga District. Indian Streams research Journal, .3(7), 1-4.
5. Mehta, D., Trivedi, H., & Meha, N.K. (2016). Indian Kisan credit card scheme. An Analytical Study Brand. Broad research in Accounting Negotiation and Distribution, 6(1), 23-27.
6. Olekar, Ramesh. O. (2012). Effectiveness of kisan credit scheme in Karnataka State : Interntional Journal of Research in commerce & Management, 2(7), 104-109

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

India-China Trade Relations in FY 2023-24 : A Focused Analysis under Foreign Trade Policy (FTP) 2023

Abhishek Shukla
Dr. Smriti Jain

1. Research Scholar, Lokmanya Tilak Science & Commerce College, Ujjain, M.P.
2. Assistant Professor, Lokmanya Tilak Science & Commerce College, Ujjain, M.P.

Abstract:-India-China trade relations remain one of the most significant bilateral trade relationships globally, with China being India's largest import partner and an essential export destination. This paper examines India's month-wise trade performance with China during the fiscal year 2023-24, analyzing exports, imports, and the resultant trade deficit. Furthermore, the findings are contextualized under India's Foreign Trade Policy (FTP) 2023, which aims to enhance exports, reduce import dependency, and address the growing trade deficit.

1. Introduction:-India and China are two of the largest economies in the world, with a complex and multifaceted trade relationship. Over the past two decades, China has emerged as India's largest trading partner, with bilateral trade volumes consistently crossing $100 billion annually. However, this trade relationship is asymmetrical, with India facing a significant and persistent trade deficit. The imbalance is primarily driven by India's heavy dependence on Chinese imports, including electronics, machinery, chemicals, and other intermediate goods, while its exports to China are dominated by low-value raw materials such as iron ore and agricultural products. This trend poses a strategic and economic challenge for India, making trade diversification and self-reliance critical priorities.

The fiscal year 2023-24 marked a significant turning point in India's trade strategy with the launch of the Foreign Trade Policy (FTP) 2023 in April 2023. The FTP 2023 is an ambitious policy framework aimed at achieving $2 trillion in exports by 2030, with a focus on boosting export competitiveness, reducing import dependency, and diversifying trade partnerships. The policy emphasizes key areas such as enhancing production in high-value sectors, promoting digital trade platforms, fostering micro, small, and medium enterprises (MSMEs), and leveraging Free Trade Agreements (FTAs) to open new markets. The policy also aligns with the broader vision of Atmanirbhar Bharat (Self-Reliant India) by encouraging domestic manufacturing and reducing reliance on specific trading partners like China.

This paper focuses on India-China trade during FY 2023-24, analyzing month-wise trends in exports, imports, and the resulting trade deficit. With total bilateral trade reaching significant levels, this analysis sheds light on India's progress toward the objectives of FTP 2023. Key questions explored include:

- How has India's export performance with China evolved under FTP 2023?
- To what extent has India reduced its dependency on Chinese imports?
- What measures are needed to address the persistent trade imbalance?

By examining these questions, the study aims to provide a detailed understanding of the challenges and opportunities in India's trade relationship with China, particularly in the context of the new policy framework. The findings will offer valuable insights for policymakers and stakeholders seeking to balance economic ties while addressing strategic concerns.

2. Methodology:-The study is based on monthly trade data for FY 2023-24, covering exports, imports, and trade deficits between India and China. The total trade data is analyzed in the context of FTP 2023's objectives, with a focus on:

- Export growth and diversification.
- Import dependency on critical sectors.
- The trade deficit as a marker of economic imbalance.

3. Results and Analysis:-

3.1. Export Performance:-

- Total Exports: India exported $16,667 million USD to China during FY 2023-24, reflecting a year-on-

year growth of 8.70%.

◆ Monthly Trends: Exports peaked in December ($1,666.86 million) and hit their lowest point in July ($1,168.65 million), showing fluctuations based on demand cycles.

◆ Policy Implications: The growth indicates a partial success of FTP 2023 initiatives, such as incentives for sectors like engineering, pharmaceuticals, and agriculture.

3.2. Import Performance:-

◆ Total Imports: Imports from China stood at $101,736 million USD, growing modestly by 3.28% compared to the previous year.

◆ Monthly Trends: The highest imports occurred in October ($9,537.75 million), while the lowest were in March ($7,740.03 million).

◆ Dependence on China: Imports were dominated by sectors such as electronics, machinery, chemicals, and intermediate goods, underscoring India's reliance on Chinese products despite ongoing import substitution efforts.

3.3. Trade Deficit:-

◆ Total Deficit: India registered a trade deficit of $-85,069 million USD with China, a recurring concern for policymakers.

◆ Monthly Insights: The deficit was highest in October ($-8,270.05 million) and lowest in March ($-6,181.82 million).

◆ Persistent Imbalance: The deficit highlights India's limited progress in reducing import reliance on China, despite initiatives under FTP 2023.

4. Discussion: FTP 2023 in Action:-The Foreign Trade Policy (FTP) 2023, introduced in April 2023, emphasizes export promotion, import substitution, and trade diversification. However, its impact on India-China trade during FY 2023-24 was mixed:

4.1. Export Promotion:-FTP 2023 aimed to boost India's exports by promoting high-value sectors and market diversification:

◆ Pharmaceuticals, electronics, and engineering goods are targeted for export growth. While export growth of 8.70% is promising, India needs to improve its competitiveness in key sectors.

◆ India must diversify its markets to reduce reliance on China as a key export destination.

4.2. Import Substitution:-India's imports from China continue to dominate in critical sectors:

◆ Electronics and machinery constitute a large share of imports, indicating India's manufacturing deficiencies.

◆ The Production-Linked Incentive (PLI) schemes under FTP 2023 must be accelerated to reduce reliance on Chinese intermediate and finished goods.

4.3. Trade Deficit:_ Addressing the trade deficit remains a significant challenge:

◆ Non-tariff barriers, incentives for local manufacturing, and policies promoting Atmanirbhar Bharat (self-reliant India) are crucial steps in managing the trade imbalance.

5. Policy Recommendations:-Based on the analysis, the following policy measures are proposed to align India-China trade dynamics with FTP 2023 goals:

1. Enhance Export Competitiveness:

o Focus on high-value sectors such as electronics, machinery, and pharmaceuticals.

o Develop bilateral trade agreements with other regions to open new markets for Indian exports.

2. Reduce Import Dependency:

o Strengthen domestic manufacturing capabilities under PLI schemes.

o Promote indigenous R&D in key sectors like electronics and renewable energy.

3. Address Trade Imbalance:

o Implement tariff and non-tariff measures to restrict non-essential imports.

o Incentivize value-added exports to balance trade.

4. Promote MSMEs and E-commerce:

o Encourage MSMEs to participate in global trade using digital platforms and export incentives.

o Leverage FTP 2023's provisions for MSME financing and support.

6. Conclusion:-India's trade with China during FY 2023-24 reflects persistent challenges in export competitiveness, import dependency, and trade imbalance. While FTP 2023 has achieved limited success in boosting exports (8.70% growth), the trade deficit remains a significant concern. Strategic policy implementation, combined with diversification of trade partners and domestic capacity building, is essential to achieve FTP 2023's objectives and ensure a more balanced trade relationship with China.

References:-

1. Ministry of Commerce and Industry, Government of India. (2023). Foreign Trade Policy 2023-28. Retrieved from https://com merce.gov.in
2. Directorate General of Foreign Trade (DGFT). (2023). Monthly trade data, India-China trade statistics.
3. Press Information Bureau, Government of India. (2023). Announcements related to Atmanirbhar Bharat and PLI schemes.

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

"Digital Marketing Trends in the Advancement of Todays Era"

Suman Rani

Research Scholar, Department of Commerce, Patliputra University, Patna, Bihar

ABSTRACT:-There are going to be big changes coming soon in the field of digital marketing. The advancement of digital marketing in today's life is become need of each and every person. Marketing strategies will be optimized by AI-generated content and machine learning algorithms, which can forecast the behavior and preferences of customers. Digital marketing has a bright future ahead of it, full with new chances for innovation, customization, and interaction between customers. In this upcoming era of digital world, it is anticipated that AI-generated material will develop even more challenging the perceptions of its importance and goal. The main aim of this research paper is to know about the future trends of digital marketing and also how AI- generated machines are work to run the businesses successfully. It also focuses on the innovation and creation of digitalization that nowadays many people depend on online mode of marketing as well as the world becoming digital so rapidly.

KEYWORDS:- Digital Marketing, Marketing, Innovation, AI-Generation, Upcoming Era,

1. INTRODUCTION:-

1.1 Rational of the study:-Marketing trends are constantly changing, particularly in light of the growing number of competitors, consumer demands, purchasing power, and platforms. Since internet accessibility began to increase in India, the online platform has established a solid foundation. India now has more internet users than any other country, second only to China, and access has grown significantly since the country's adoption of the 4G network idea. With so many customers, an online market may establish a strong foundation for its operations and offer a competent online market management service to several businesses looking to promote their products online.

Conducting study on the subject matter was imperative in order to identify the contemporary patterns that are impacting consumer behaviour and boosting market growth in today's era. Additionally, the research will assist in determining the fundamental causes of internet traffic and the conversion of visitors into customers.

1.2 Introduction to the study:-Marketing as rightly said by Philip Kotler "the science and art of exploring, creating, and delivering value to satisfy the needs of a target market at a profit. Marketing identifies unfulfilled needs and desires. It defines, measures and quantifies the size of the identified market and the profit potential. It pinpoints which segments the company is capable of serving best and it designs and promotes the appropriate products and services." (Zumbroich, 2020)

The broad goal of digital marketing is to use technology to fulfil the four Ps of marketing. It seeks to advance the proper thing on the appropriate platform at the appropriate time.

There is no set definition for digital marketing; rather, it is the digital implementation of the marketing concept provided by Philip Kotler, the marketing father. Early in the new centuries, digital marketing gained popularity both online and offline. The surface level understanding of digital marketing in the present era is restricted to websites and social media alone.

1.3 Digital Marketing:-Digital Marketing was firstly used in 1990s. Digital marketing means to sell or purchase of goods and services with the help of digital mode or digital channels at anytime and anywhere. Digital marketing is a boon in upcoming era. It highlighted, when the corona virus (COVID-19) pandemic situation arose. People as well as whole world are affected from this pandemic and it increases the level of digitalization of markets. After the pandemic, consumers are shifted from traditional marketing to digital marketing. Due to restrictions of pandemic consumers are shopping digitally instead of traditional shopping. This made the business owner to go wider spreading their business. The main aim of digital marketing is to make the customers interact with various brands through use of technology on internet (KaurArjinder and SandhuGurveen, 2017). Digital marketing is a form of marketing in which it promotes goods and services using internet or via online network.

Digital marketing is extremely important in today's world for several reasons:

- When compared to traditional marketing strate-

gies, digital marketing is remarkably successful. It enables you to reach customers at more reasonable costs and provides a thorough evaluation of the effectiveness of your marketing.

- With digital marketing, you can supply current information about goods and services and reply to changes fast. This makes it possible for companies to react to market movements with greater efficiency and flexibility.
- Social media and the Internet have made it possible for firms to use digital marketing to reach more customers and boost sales.
- Digital marketing makes it possible to analyze advertising campaigns in great depth.

Companies can use metrics like traffic, conversions, and other data to determine which marketing channels are most successful.

- Businesses may communicate with their audience in real time and via a variety of channels thanks to digital marketing. Businesses can better understand their consumers by taking advantage of the feedback opportunities it creates.

After the public gained access to the Internet in the 1990s, research in the subject of digital marketing began to take shape. With the introduction of Google and social media in the 2000s, digital marketing gained even more popularity and became a significant aspect of the operations of many business tactics.

The concept of "digital marketing" is also not well understood in scientific circles, with different scientists proposing many different interpretations. However, as digital technologies continue to advance, there is an increasing need and demand to examine and evaluate the essence of this dynamically formed concept, which is changing over time.

1.4 TOOLS / VARIOUS CHANNELS OF DIGITAL MARKETING

1. Search Engine Optimization(SEO)
2. Search Engine Marketing(SEM)
3. Social Media Marketing (SMM)
4. Content Marketing
5. Pay Per Click Marketing (PPC)
6. Email Marketing
7. Google Display Ads
8. Email Marketing

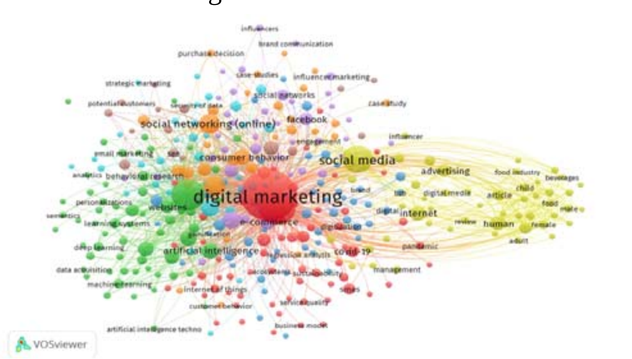

Source:Visualization of the network map of keyword connectivity (2000-02.2023)
constructed by the authors from the Scopus database using VOSviewer

1.5Benefits of Digital Marketing

1.An organization can utilize internet marketing as a useful tool to increase sales.
2. Online retailers are open twenty-four hours a day, seven days a week, 365 days a year.
3.Creating a website is quite inexpensive.
4. A website offers greater flexibility for adding and removing things than brochures and cataloguedo.
5. Because it's online, it might expose you to undiscovered market sectors.
6. There are far more offerings than at a nearby shopping area because customers can findgoodsfrom all over the world.
7. If there is internet access, it is easy to buy and sell goods from anywhere.
8. Online marketing contributes to better customer support.
9. Unrestricted ability to offer information about the majority of online companies.
10. As a result, a variety of promotional materials are released online, 24/7and there may be geographical limitations.

1.6Drawback or Limitation of Digital Marketing

1. There are too many competitors in online marketing.
2. Technology plays a major role in online marketing, and technology can make mistakes.
3. Because the transaction is done online, there is no way to handle or feel the product.
4. Before B2B, EDI standards must be established; small enterprises could find it challenging to adhere to these requirements.
5. Customers now have a doubtful or unfavourable attitude toward internet marketing as a result of online stress.
6. Cybercriminals snoop on financial transactions and create issues for online businesses as well as customers.
7. There is a search annoyance known as "denial of service" that has a lot of pointless

When inquiries are submitted on a portal, legitimate clients are unable to view it.

1.7Latest Trends of Digital Marketing

1. Huge expansion of product options: The range and diversity of products and services available for purchase on the internet is astounding. Better transaction efficiency (e.g., delivery to meet their demands more readily and conveniently than ever before, 24/7 access, etc.
2. Modifying value statements: Customers do longer see value in the same ways because of the internet's efficiency and quickness.For example, customers

now often use travel agencies to help them book flights, cruises, or hotel stays.

3. Customers value:The convenience of online marketing and are reassured that their information is secure and private. Privacy, security, and ethical concerns are also addressed.

4. Growth Opportunities: The internet and other new economy sectors canrevitalize enterprises from the old economy and offer strong development prospects.

5. Dot-com:Merchants like Amazon, web portals like Yahoo! and America Online, firms like Cisco and 3Com, and Wal-Mart, as well as service businesses like Kinko's, depends heavily on the internet for sourcing and selling economy in one way or another.

6. Broadband connection:A good example of online marketing is the increasing use of broadband connections, which are used by 23% of Internet users in Sweden, approximately 50% of users in the US, and an incredible 94% of users in South Korea.

7. Compare between physical and online marketing:Compared to physical marketing, online marketing has simplified, accelerated, and decreased the cost of transactions.

8. Direct Client:Direct client contact is made possible by online marketing, allowing marketers to Disintermediation is the process of distribution routes becoming more expensive or complicated.

9. Additional Costs: There are no additional costs associated with marketing information, and digital goods and services are accessible from anywhere with internet connectivity, offering a truly global reach, round-the-clock availability, and rapid delivery.

RESEARCH MEHODOLOGY:-Research is the rational and systematic search for new and relevant knowledge on a specific topic. It is an effort for knowledge, where knowledge refers to information about issues. It is the process of solving social and scientific problems using objective and methodical analysis. Humans, experience, nature, books, journals, newspapers, and other archives are all possible sources of information. Research allows for advancement in any discipline and can lead to new contributions to knowledge.People received an online questionnaire. Secondary data was also gathered from numerous articles, academic archives, reports, newspapers, journals, and outdated research papers.

2. OBJECTIVE OF THE PAPER

1. To gain insight into market expansion
2. To discover trending marketing strategies
3. To evaluate their impact on consumers
4. To know about consumer perception about dig ital marketing.

3. SCOPE OF THE STUDY:-The study will provide a thorough understanding of emerging marketing trends, their impact on customer behaviour, and the role of market expansion.The study expands to include identifying the most recent trends in the digital marketing sector that are currently influencing customer purchasing behaviour and are responsible for market growth through the use of new online digital marketing technologies. Using the questionnaire and the available knowledge obtained from secondary sources.

4. REVIEW OF LITERATURE

1. According to Neeta Manohar Kedar and Dr. P. V. Sathe (2016)in their paper stated that "The growing number of web based/online marketing service applications offers the tantalizing combination of better service and significant cost saving but still the actual online buying customers are less due to the reasons such as delay delivery, issue of after sale service etc It is said "like it or not the new economy is here to stay notwithstanding the dot-com burst at the dawn of new millennium".[1]

2. Kulraj Suri &Dr. Richa Bhatia(2021) said that "Digital marketing is a multi-channel approach to target the users in paid and unpaid ways to convert a user from a casual visitor to a customer. Customers are now explorative, comparative and possess low temperament and therefore should be handled with care."[2]

3. S. Kajal et.al. (2018), "In their study discuss that the user experience has also become an important part of digital marketing as it enhances the quality of individual's online experience. These new trends of digital marketing give organizations a competitive advantage and also establish a comprehensive marketing strategy which increases visibility within customers and maximize revenue for the organizations." [3]

4. D.K. Gangeshwar (2013), In his journal, "E-Commerce or internet marketing: a business review from Indian Context", remarked that the present developed in online marketing would be a valuable addition to researcher and academicians and useful theory for practitioners, advertisers and entrepreneurs. E-commerce is set to play a very important role in the 21st century, the new opportunities that will be thrown open, will be accessible to both large corporations and small companies.

5. Panchal A, et.al, (2021), The main aim of this paper is to give an overview of research on evolution of digital marketing, Search Engine Optimization and Search Engine Marketing strategies and differentiating amongst various tools and techniques. This paper also highlights that digital marketing trends are moving from passive advertising to active engagement with social networking pages, its quality rather than quantity.

6. Jain S et.al., (2020), The basic study of this paper is to examine the influence of digital marketing on consumer behaviour. The main objective of this paper is to study the relationship between consumer behaviour and digital marketing. This paper also focuses on some advantages of digital marketing that are:

(1) continuously updates with products and services,

(2) clear information about products and services,
(3) Easy comparison with other products,
(4) Time freedom from shopping at any time.

7. Chouhan R. et.al., (2021), "This journal highlights that digital marketing has become a globally popular trending sector. The goal of digital marketing is to connect people with the products through high quality digital media. Innovation that includes digital marketing products is more common, but innovation that does not include digital marketing products is rare.

Conclusion:-Despite the expanding number of web-based and after-sales care etc It's reported that "like it or not the new economy is here to stay notwithstanding the dot-com burst at the dawn of new millennium". To improve online marketing programs offering improved service and cost savings, the number of online buyers remains low due to issues with delivery marketing effectiveness, organizations must address concerns and challenges. Finally, remember that the firm, not the customer, is in control. Traditional digital marketing methods, such as SEOs, SEMs, SMM, EMM, and Content Marketing, have incorporated new platforms that align with AI technology, such as Virtual Assistants and Chatbots, visual searches from Google Lens and similar applicationsand so on.

Referrences:-

1. Neeta Manohar Kedar &Dr. P.V. Sathe, "Online Marketing: Emerging Trends and Issues" 'Research Journey' International Multidisciplinary E-Research Journal', Special Issue I- Emerging Trends & Issues in Research & Development, Global Impact Factor- 0.565(2014) & 0.676 (2015), ISSN: 2348-7143, April- May- June- 2016. Website - www.researchjourney.net
2. Kulraj Suri &Dr. Richa Bhatia (2021), "the New Trends of Digital Marketing and Its Role in Changing Consumer Behaviour and Market Expansion." Department of Commerce Bhopal School of Social Sciences. (NAAC Re- accred ited 'A' Grade Autonomous college).
3. Kajal Sitlani and Udita Agarwal (2018), Innovation in Digital Marketing,"International Journal of Research in Business Studies," Vol. 3 (2), page no :- 43-54.
4. D.K.Gangeshwar (2013), "E-Commerce or Internet Marketing: A Business Review from Indian Context", International Journal of Service, Science and Technology, Volume: 6, Issue: 6, pp:- 187-194.
5. Aarchi Panchal, Akshita Shah, Kansara and Krishna (2021), "Digital Marketing- Search Engine Optimization (SEO), and Search Engine Marketing (SEM)", 'International Research Journal of Innovations in Engineering', Vol. 5, Issue: 12 December 2021, pp: 17-21.
6. Sourabh Jain and Aditya Pandey (2020), "Study of Influence of Digital Marketing on Consumer Behaviour", 'Journal of Emerging Technologies and Innovative Research, Vol. 7, Issue: 4 April 2020, pp: 2349- 5162.
7. Rekha Chouhan and Mahima Singh (2021), "A Study on Emerging Trends in Digital Marketing", Journal of Management & Research, Vol. 10, Issue: 2 September 2021.
8. Visualization of the network map of keyword connectivity (2000-02.2023) constructed by the authors from the Scopus database using VOSviewer

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 8.0
Vol - XXI, Issue - III, January - 2025
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Refereed Journal

Exploring Tribal Tourism Potential in Shivpuri District : A Culture and Sustainable Perspective on the Sahariya Tribe

Dr. Ajay Kumar Yadav

Research Scholar, Geography, School of Social Science, DAVV, Indore, M.P.

Abstract:-The Sahariya tribe, classified as a Particularly Vulnerable Tribal Group (PVTG) in Madhya Pradesh, embodies a rich cultural and ecological heritage. However, the tribal community remains marginalized despite its potential to foster cultural preservation and sustainable development through tourism. This research explores the untapped potential for tribal tourism in the Shivpuri district, focusing on the Sahariya tribe. By analyzing their traditions, rituals, and ecological knowledge, the study proposes strategies for promoting tribal tourism that align with sustainability and cultural preservation goals. The findings highlight how tourism can enhance socio-economic conditions and offer solutions for cultural integration without exploitation.

Keywords:-Sahariya Tribe, Tribal Tourism, Cultural Heritage, Sustainable Development, Shivpuri District, Madhya Pradesh.

1. Introduction:-Tribal tourism offers immersive experiences that provide tourists with insights into the unique lifestyles of indigenous communities. It fosters cultural exchange while supporting local economies. India, home to over 500 tribes comprising 8% of the total population, holds significant potential for tribal tourism. Madhya Pradesh, with its rich tribal heritage, particularly the Sahariya tribe of Shivpuri district, presents a compelling opportunity for sustainable tourism development. This study investigates the Sahariya tribe's cultural and ecological resources, emphasizing their value in promoting tourism. It argues that tribal tourism can bridge socio-economic gaps while preserving cultural identity and promoting regional development.

2. Literature Review:-Previous studies provide valuable perspectives on the potential and challenges of tribal tourism:

Srivastava (2016): Highlights the growing demand for eco-tourism and tribal tourism, emphasizing their role in preserving cultural identity and promoting heritage globally.

Kabra (2003): Examines the socio-economic challenges faced by the Sahariya tribe due to rehabilitation programs, calling for sustainable strategies.

Sati (2015): Focuses on the socio-economic marginalization of the Sahariya tribe and advocates for targeted interventions, including tourism.

Whitford & Ruhanen (2016): Discusses indigenous tourism as a global phenomenon requiring careful balance between economic gains and cultural preservation. These studies underscore the potential of tribal tourism as a tool for cultural preservation and socio-economic upliftment, providing a foundation for this research.

3. Objectives

This research aims to:

1. Explore the cultural and ecological heritage of the Sahariya tribe.
2. Identify opportunities for tribal tourism in Shivpuri district.
3. Analyze the socio-economic and cultural challenges faced by the Sahariya tribe and propose sustainable tourism strategies.

4. Research Methodology:-This study adopts a descriptive approach, relying on secondary data from literature reviews, government reports, and online resources. It analyzes the Sahariya tribe's unique cultural practices and the ecological assets of Shivpuri district to propose a sustainable tourism model.

5. Study Area:-The Shivpuri district, located in northern Madhya Pradesh, is characterized by its forests, hills, and tribal settlements. The Sahariya tribe predominantly inhabits forested regions in the district. Despite its natural beauty and cultural richness, the region remains underdeveloped in terms of tourism infrastructure. Addressing these gaps is crucial to unlocking its tourism potential.

6. The Sahariya Tribe

6.1 History and Identity:-The name "Sahariya" translates to "companion of the tiger," reflecting the tribe's close relationship with the forest. Historically, the Sahariyas have relied on hunting, gathering, and primi-

tive agriculture for survival. However, deforestation and industrialization have disrupted their traditional lifestyle, forcing many into wage labor.

6.2 Cultural Practices:-The Sahariya tribe's cultural heritage is expressed through rituals, festivals, and crafts. They worship natural elements and Hindu deities, blending animistic traditions with mainstream religious practices. Key festivals, such as the Sitabari Fair, and artistic expressions like the Faag and Rai dances, reflect their vibrant cultural identity. Their jewelry, tattoos, and folk songs further exemplify their creativity and traditional values.

6.3 Challenges:-The Sahariyas face significant socio-economic challenges, including poverty, illiteracy, and limited access to resources. Their dependence on forest produce and lack of industrial skills make them vulnerable to exploitation. Urbanization and deforestation have further eroded their cultural identity and economic stability.

7. Tourism Potential

7.1 Cultural Tourism:-The Sahariya tribe's unique traditions, including their rituals, crafts, and festivals, offer immense potential for cultural tourism. Tourists can participate in homestays, experience traditional celebrations, and engage in craft workshops, gaining a deeper understanding of Sahariya culture.

7.2 Eco-Tourism:-Shivpuri's natural attractions, such as the Kuno Wildlife Sanctuary, enhance the region's eco-tourism appeal. The reintroduction of cheetahs in Kuno National Park has drawn significant attention, providing opportunities for wildlife tourism that can benefit the Sahariya community.

7.3 Economic Benefits:-Tourism can create employment opportunities for the Sahariya people in guiding, hospitality, and handicrafts. It can also attract investments in infrastructure, improving connectivity, accommodation, and basic amenities in the region.

8. Key Attractions

8.1 Sahariya Museum, Sheopur Fort:-The Sahariya Museum preserves the tribe's cultural artifacts, serving as both a tourist attraction and an educational resource.

8.2 Kuno Wildlife Sanctuary:-Spanning the Sheopur and Morena districts, the sanctuary is home to diverse flora and fauna. The recent reintroduction of cheetahs has added a unique dimension to its eco-tourism potential, attracting wildlife enthusiasts and researchers.

9. Findings:-Untapped Potential: The Sahariya tribe's cultural and ecological assets remain largely unexplored for tourism development.

Economic Opportunities: Tourism can provide alternative livelihoods, reducing dependence on forest resources and wage labor.

Cultural Preservation: Promoting Sahariya traditions through tourism can prevent the erosion of their cultural identity.

Infrastructure Gaps: Poor connectivity and limited tourist facilities are major obstacles to tourism growth in Shivpuri.

10. Recommendations

10.1 Cultural Preservation:-Document and promote Sahariya rituals, festivals, and crafts to attract cultural tourists. Ensure that tourism initiatives respect and preserve the tribe's cultural integrity.

10.2 Sustainability:-Implement eco-friendly practices in tourism operations. Limit tourist numbers to prevent overexploitation of natural and cultural resources.

10.3 Infrastructure Development:-Improve road connectivity and transportation to Shivpuri. Develop eco-lodges and homestay facilities to accommodate tourists.

10.4 Community Participation:-Involve the Sahariya community in planning and implementing tourism initiatives. Train Sahariya individuals as guides, artisans, and entrepreneurs.

10.5 Marketing and Awareness:-Launch promotional campaigns highlighting Shivpuri as a tribal tourism destination. Use digital platforms to showcase the Sahariya tribe's culture and tourism potential.

11. Sociological Impact:-Tribal tourism can foster a sense of pride among the Sahariya people in their cultural heritage. It can also promote cultural exchange, helping integrate the Sahariyas into mainstream society while preserving their unique identity. Additionally, tourism development can improve their standard of living and access to education and healthcare.

12. Suggestions for Future Research:-Further studies could explore the impact of tourism on Sahariya women and youth, as well as strategies for balancing tourism growth with environmental conservation.

13. Conclusion:-Tribal tourism in Shivpuri, centered on the Sahariya tribe, holds immense potential for cultural preservation and socio-economic development. Strategic planning, sustainability, and community involvement are key to realizing this potential. By investing in infrastructure, promoting Sahariya traditions, and ensuring equitable benefits for the local community, Shivpuri can emerge as a model for indigenous tourism. Such initiatives not only uplift marginalized communities but also enrich India's cultural tourism landscape, creating a unique and sustainable tourism experience.

References:-

1. Yamamoto, R. (2005). Indigenous Tourism Destination Development. IIIEE Master's Theses.
2. Whitford, M., & Ruhanen, L. (2016). Indigenous Tourism Research, Past and Present: Where to from Here? Journal of Sustainable Tourism, 24(8-9), 1080-1099.
3. Patidar, S. (2016). Vernacular to Modern in the Search of Sustainable Development. ITU A/Z, 13(1), 115-126.
4. Sharma, S. N. (2018, November 25). This Tribe in Madhya Pradesh Says Their Vote Is Not for Sale. The Economic Times. Retrieved from https://economictimes. indiatimes.com/news/elections/assembly-elections/madhya-pradesh-assembly-elections/this-tribe-community-in-madhya-pradesh-says-their-vote-is-not-for-sale/articleshow/66787707.cms
5. Wikipedia. (n.d.). Saharia. Retrieved from https://en.wikipedia.org/wiki/Saharia
6. Zee News. (2022, September 17). PM Modi Visit. Retrieved from https://zeenews.india.com/hindi/india/madhya-pradesh-chhattisgarh/mp/live-updates/pm-narendra-modi-17th-september-birthday-tour-madhya-pradesh-cheetahs-welcome-in-kuno-national-park-sheopur-mpap/1354946
7. Chambal Division MP. (n.d.). Sheopur Fort. Retrieved from https://chambaldivisionmp.nic.in/en/tourist-place/sheopur-fort/
8. Russel, R. V., & Hiralal, R. B. (1916). The Tribes and Castes of Central Provinces of India (Vol. 4). London: Macmillan and Company Limited.
9. Shaan. (2022, July 14). India's Tribal Communities: The Sahariya Tribe of Madhya Pradesh. Shaan Academy. Retrieved from https://shaan.academy/indias-tribal-communities-the-sahariya-tribe-of-madhya-pradesh/
10. Periwal, P. (2021, May 28). A Look Into India's Tribal and Ethnic Jewellery. Homegrown. Retrieved from https://homegrown.co.in/article/805474/a-look-into-indias-tribal-and-ethnic-jewellery
11. Srivastava, S. (2016). Indigenous Tourism Development: Case Analysis of Saharia Tribes. Asian Journal of Multidisciplinary Studies, 4, 57-66.
12. Kabra, A. (2003). Displacement and Rehabilitation of an Adivasi Settlement: Case of Kuno Wildlife Sanctuary, Madhya Pradesh. Economic and Political Weekly, 38(29), 3073-3078.
13. Sati, V. P. (2015). Sahariya Tribe: Society, Culture, Economy and Habitation. Annals of Natural Sciences, 1, 26-31.
14. Gurjar, J. S. (2019, May 17). Sahariya Culture Is Seen in This Museum of Sheopur. Patrika. Retrieved from https://www.patrika.com/sheopur-news/sahariya-culture-is-seen-in-this-museum-of-sheopur-4583463/
15. Madhya Pradesh PSC Notes. (n.d.). Scheduled Tribe of Madhya Pradesh. Retrieved from https://madhyapradesh.pscnotes.com/madhya-pradesh-gk/madhya-pradesh-geography/scheduled-tribe-of-madhya-pradesh/
16. Rajasthan Study. (2015, June 28). Sitabari Fair. Retrieved from https://www.rajasthanstudy.co.in/2015/06/sitabari-fair-of-baran-rajasthan.html
17. Koshy, J. (2022, September 17). PM Modi Releases Cheetah in Kuno. The Hindu. Retrieved from https://www.thehindu.com/news/national/pm-modi-releases-namibian-cheetahs-at-madhya-pradeshs-kuno-national-park/article65902065.ece
18. Insights on India. (n.d.). Definition of Scheduled Tribe. Retrieved from https://www.insightsonindia.com/social-justice/issues-related-to-sc-st/definition-of-scheduled-tribe/
19. Indianetzone. (2019, October 18). Sahariya Tribe, Madhya Pradesh. Retrieved from http://www.indianetzone.com/46/sahariya_tribe.htm
20. Nature InFocus. (2021, December 4). Kuno National Park: The Hidden Gem of India's Heartland. Retrieved from https://www.natureinfocus.in/environment/kuno-national-park-the-hidden-gem-of-india-s-heartland
21. The Economic Times. (2022, September 18). Kuno National Park Has Adequate Space, Prey Base to House 20 to 25 Cheetahs: MP Forest Officer. Retrieved from https://economictimes.indiatimes.com/news/india/kuno-national-park-has-adequate-space-prey-base-to-house-20-to-25-cheetahs-mp-forest-officer/articleshow/94277247.cms

स्वत्वाधिकारी,प्रकाशक,मुद्रक डॉ.मोहन बैरागी द्वारा अक्षरवार्ता पब्लिकेशंस से मुद्रित व 43, क्षीर सागर, द्रविढ़ मार्ग, उज्जैन, मप्र,–456006 से प्रकाशित।
सभी विवादों का न्याय क्षेत्र उज्जैन रहेगा। संपादक– डॉ. मोहन बैरागी, संपर्क :–8989547427, **Email- aksharwartajournal@gmail.com**